Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रीतिकाव्य शब्दकोश

डॉ. किशोरी लाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

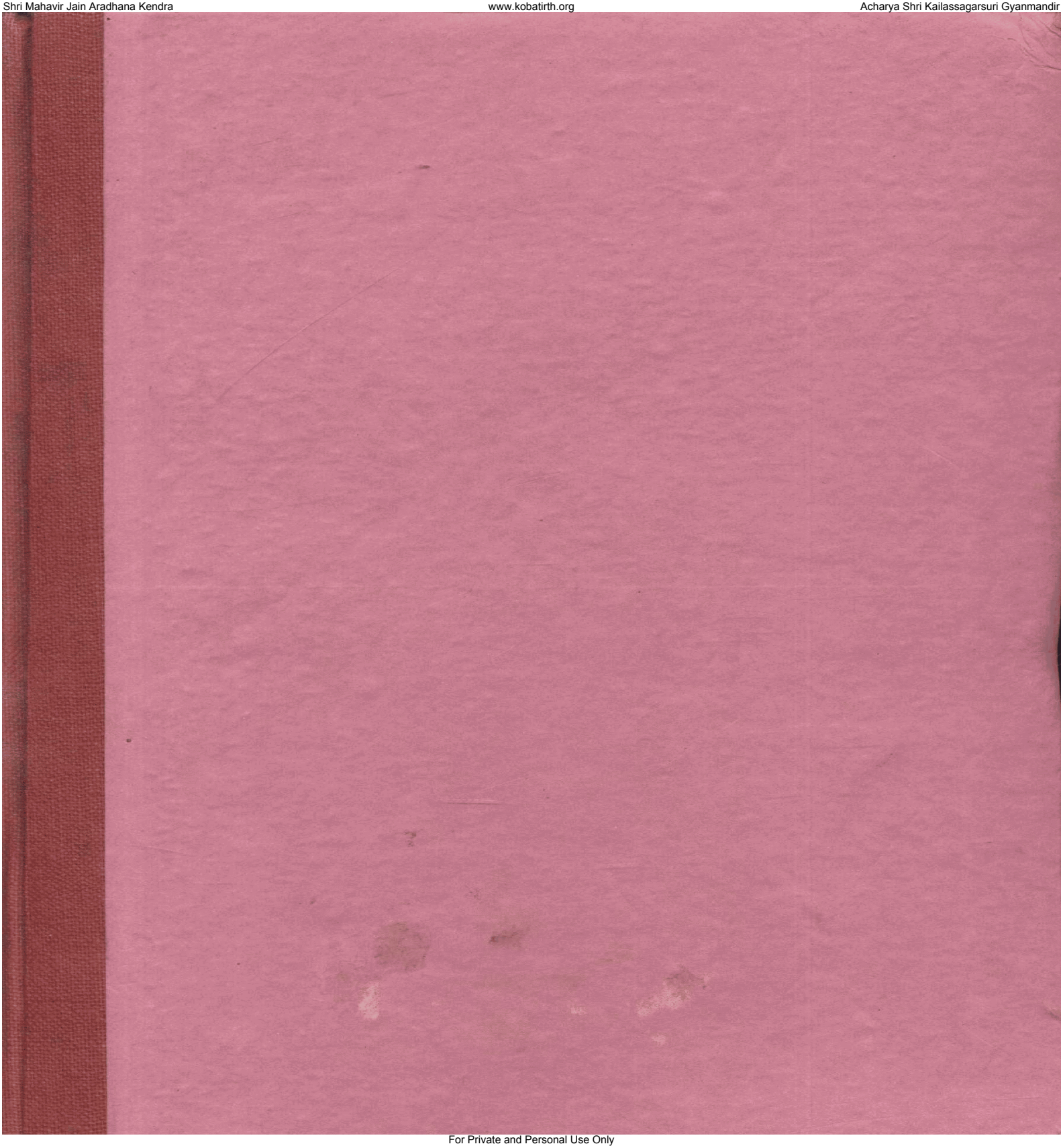

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रीतिकाव्य शब्दकोश

डॉ. किशोरी लाल

स्मृति प्रकाशन
इलाहाबाद

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संस्करण	प्रथम, १९७६
प्रकाशक	स्मृति प्रकाशन १२४, शहरारावाग इलाहाबाद
मुद्रक	स्टैण्डर्ड प्रेस २ बाई का बाग इलाहाबाद
मूल्य	स्मृति प्रकाशन इलाहाबाद रु. ५०/-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रस्तावना

हिन्दी के प्राचीन ग्रथों का अध्ययन करते समय मैंने बहुत पहले एक ब्रजभाषा कोश की अपेक्षा का अनुभव किया था, पर उस समय नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हिन्दी-शब्द-सागर के अतिरिक्त ऐसा कोई अन्य काश उपलब्ध नहीं था, जो प्रायोगिक साक्यों के आधार पर प्राचीन शब्दों का वास्तविक ज्ञान करा सके। इसमें संदेह नहीं कि संस्कृत में वी० एस० आप्टे का संस्कृत अंग्रेजी कोश प्रायोगिक साक्यों की दृष्टि से एक अत्यंत महत्वपूर्ण कोश माना जाता है। पर हिंदी के प्राचीन काव्यों का अध्ययन -अध्यापन भक्ति अथवा रीति वाङ्मय के एक मानक अभिधान के अभाव में प्रायः पीछे छूटता गया, और परिणामतः लोग प्राचीनता को छोड़कर नवीनता की ओर लपके, क्योंकि यहाँ प्राचीन काव्यों की भांति अर्थ समझने की समस्या प्रायः गौण थी।

प्राचीन काव्यो में रमने की जैसी वृत्ति और लगन पुराने खेवे के साहित्यकारों में थी, वैसी प्रायः नये सहित्यकारों में लक्षित नहीं होती। कारण स्पष्ट है, तब डिग्री धारियों का ऐसा बोल बाला नहीं था जैसा अब। स्वयं पं० रामचन्द्र शुक्ल एवं लाला भगवानदीन दीन डाक्टर होना तो दूर रहा किसी विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट भी नहीं थे, किन्तु उस युग के कितने ऐसे डी० लिट् उपाधिकारी अब भी हैं, जिन्हें आचार्य शुक्ल जी ने उनके शोध प्रबन्ध को फिर से लिखने की सलाह दी थी। यह थी डिग्री विहीन मनीषियों की मनस्विता, जिस पर आज भी हिन्दी साहित्य को गर्व है। लाला जी और आचार्य शुक्ल जी में प्राचीन काव्यों में प्रयुक्त अप्रचलित एवं विकृत शब्दों को पकड़ने की जैसी क्षमता थी, यदि उसे कसौटी बना कर विश्वविद्यालयों में सम्प्रति नव नियुक्तियां की जांय तो कितने ही विभाग के महन्त शिष्यमण्डली समेत बहिर्गत होने को बाध्य होगें।

आज तो युग और परम्परा बदल चुकी है। अब न देव के ग्रन्थों का अर्थ समझना है और न बिहारी और पद्माकर की काव्यगत विशिष्टता। उलटे लाला भगवान दीन जी की खिल्ली इस लिए उड़ाई जाती है कि वे केवल टीकाकार थे समर्थ आलोचक नहीं, पर जो मूलग्रन्थों को पूर्णतया नहीं समझ पाता वह झूठी आलोचना की जिला और पालिश से काव्य में कहां तक दीप्ति उत्पन्न कर सकता है, यह सहज सम्भाव्य है। वस्तुतः लाला जी हिन्दी के मल्लिनाथ था उन्होंने उस युग में केशव एवं बिहारी के दुरूह ग्रन्थों का भाष्य प्रस्तुत किया जब हिन्दी के प्राचीन शब्दों का कोई कोश नहीं था और केवल संस्कृत के कोशों से पूर्णतया काम चल नहीं पाता था। रामचन्द्रिका और सतसई उस समय भी एम० ए० के पाठ्यक्रम में निर्धारित थी। प्रयाग के स्वर्गीय डा० धीरेन्द्रवर्मा और बाबूराम सक्सेना इस बात के साक्षी हैं कि जब लाला जी की "केशव कौमुदी" प्रकाशित नहीं थी, उस समय दोनों महानुभाव किस कठिनाई से अर्धरात्रि तक पढ़ते थे और सुबह क्लास में छात्रों को ठीक-ठीक अर्थ बताने में आना-कानी करते थे। लाला जी का बचपन बुंदेलखण्ड के उन अंचलों में बीता, जहां केशव, आलम, ठाकुर, जैसे बुंदेलखण्डी कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्दावली जन कण्ठ पर विराजमान है। क्या बुंदेलखण्डी का ठीक ज्ञान न रखने पर केवल संस्कृत कोशों के आधार पर केशव के ग्रन्थों का ठीक ठीक अर्थ किया जा सकता है? इसका सहज उत्तर होगा कथमपि नहीं। वास्तव में लाला जी के श्रम एवं उनके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वैदुष्य का मूल्यांकन वे ही कर सकेंगे, जिन्हें प्राचीन काव्यों के दुरुह एवं ध्वान्तपूर्ण मार्ग से गुजरना पड़ा है। ऐसे दुर्गम कान्तार में भी लाला जी ने अपने भाष्य का जैसा आलोक बिखेरा है और पथ की भीषणता का जैसा परिहार किया है, इसे उस पथ के सच्चे पथिक ही बता सकते हैं।

कहा जाता है कि कालिदास की वाणी दुर्व्याख्यारूपी विष से मूर्छिता थी उसे मल्लिनाथ की संजीवनी व्याख्या ने पुनर्जीवित किया[१]। इसमें सदेह नहीं कि प्राचीन काव्यों की अनेकशः भ्रांतियों का निराकारण करने वाली लाला जी की संजीवनी व्याख्या ने मृतप्राय रीति काव्य को पुनः नवजीवन दान दिया। लाला जी के समान आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल घनानन्द को कितना समझते थे और सेनापति कृत कवित्त रत्नाकर के "श्लेषतरगं" के संश्लिष्ट अर्थ को खोलने में वे कितना जुटते थे और आने वाली कठिनाइयों से ग्रीष्मावकास के क्षणों में कितना जूझते थे इसका ज्वलन्त प्रमाण पं० उमाशंकर जी शुक्ल हैं, जिन्हें सेनापति की कठिनाइयों के सिलसिले में शुक्ल जी का द्वार खटखटाने का अवसर प्राप्त हो चुका है।

हिन्दी के पूर्वमध्ययुग की रचनाओं के आधार पर एक कोश प्रस्तुत करने की योजना डा० माताप्रसाद गुप्त ने बनाई थी, किन्तु उनके असामयिक निधन से यह कार्य पड़ा ही रह गया। इधर विशेषतया अहिन्दी भाषाभाषियों की कठिनाइयों को दृष्टि-पथ पर रखकर मैंने केवल रीतिकाव्य से सम्बन्धित एक ऐसे कोश की रचना का विचार किया, जिसमें केशव से लेकर ग्वाल तक की शब्दावली उक्त कोश में आ जाय। पर कार्य की गुरुता को देखते हुये इस कार्य में संलग्न होने का साहस न कर सका। कदाचित कोई सहायक मिलता तो कार्य की गुरुता को समेटने का यत्किंचित साहस भी प्रदर्शित करता, पर ऐसा अवसर नहीं मिला।

करीब आठ दस साल पूर्व मैंने प्राचीन हिन्दी काव्य की पाठ एवं अर्थ-समस्या विषय पर कई लेख प्रस्तुत किए थे, जो 'हिन्दुस्तानी', 'सम्मेलन पत्रिका', और 'रसवन्ती' में प्रकाशित भी हुए थे। उनका पुर्नमुद्रण मैंने प्राचीन साहित्य के कई विद्वानों की सेवा में भेजा था। उन लेखों में कुछ ऐसे शब्दों पर प्रथम बार विचार हुआ था, जिनकी प्रकाशित कोशों में कुछ भी चर्चा नहीं थी। मेरे इस प्रयास को काशी के आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र, स्व० डा० भवानी शंकर याज्ञिक, स्वर्गीय ब्रजरत्नदास बी० ए, तथा स्व० आचार्य रामचन्द वर्मा के अतिरिक्त श्री प्रभुदयाल जी मीतल एवं डा० सत्येन्द्र जी ने पर्याप्त श्लाघा की थी। श्री मीतल जी ने तो प्राचीन हिन्दी काव्य के एक कोश की आवश्यकता पर बल भी दिया था, पर इस कार्य को व्यय एवं श्रमसाध्य समझ कर वे कुछ अधिक नहीं कह सके। कुछ वर्ष पूर्व जब वे 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि लेने के लिए प्रयाग पधारे तो मैंने कोश की पुनः चर्चा की, पर अपनी अवस्था और कार्य की गुरुता को समझते हुये वे इस सम्बन्ध में मौन ही रहे।

कोश की पुनः चर्चा चलने पर हमारे सहपाठी पं० हरिमोहन मालवीय और 'स्मृति प्रकाशन' के अधिकारी पं० बालकृष्ण त्रिपाठी के निरन्तर आग्रह ही नहीं परम दुराग्रह के कारण मुझे वाध्य होकर अपने दुर्बल कंधों पर यह भार लेना ही पड़ा। सच तो यह है कि यदि इन दोनों महानुभावों का कशाघात मेरे ऊपर न पड़ता तो कह नहीं सकता कि मुझ जैसे प्रमादी एवं आलसी व्यक्ति से यह

१—भारती कालिदासस्य दुर्व्याख्या विषमूर्छिता।
एष संजीविनी व्याख्या तामद्योज्जीवयिष्यति। —कुमारसंभव-प्रथम सर्ग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योजना कार्यान्वित होती अथवा नहीं । मैंने उक्त दोनों सज्जनों के आदेश से १५ अगस्त १९७३ से कार्य प्रारम्भ किया और ऐसा विचार किया गया कि प्रस्तुत कोश में प्रथमतः चार और पाँच हजार से अधिक शब्द न रखे जाँय और जो भी शब्द संकलित हों उनकी निरुक्ति और प्रयोग को अधिक वरीयता दी जाय । जहाँ तक मुझे ज्ञात है, अद्यावधि प्रायोगिक वैशिष्ट्य को दृष्टि में रखते हुए कोई भी ऐसा कोश हिन्दी में देखने को नहीं मिला । अतः प्रस्तुत कोश इस दिशा मे निश्चय ही एक नव्य प्रयास है, इसमें किंचित सन्देह नहीं । कोश प्रस्तुत करते समय कुछ गुरुजनों और मित्रों की यह सलाह थी कि इस कोश में रीतिकाव्य के शास्त्रीय शब्दों को भी समेटा जाय पर मैंने जानबूझ कर उन्हें इसलिए नहीं रखा कि शास्त्रीय शब्दों का एक स्वतन्त्र कोश प्रस्तुत कोश के अतिरिक्त निर्मित किया जा सकता है । पुनः रीतिकाव्य के बहुत से शास्त्रीय शब्द 'साहित्यकोश' में अन्तर्भूत हो चुके हैं ।

नागरी प्रचारिणी, सभा के हिन्दी शब्द-सागर के निकल जाने पर कुछ स्थानिक बोलियों के भी कोश प्रकाशित हुए जिनमें 'अवधी कोश' और 'सूर ब्रजभाषा कोश' मुख्य हैं । 'अवधी कोश' का सम्पादन श्री रामाज्ञा द्विवेदी "समीर" ने किया और 'सूर ब्रजभाषा कोश' का सम्पादन-कार्य डा० दीन दयाल गुप्त एवं डा० प्रेमनारायण टण्डन के समवेत प्रयास से पूरा हुआ । अवधी कोश की तुलना में सूर-ब्रजभाषा कोश की कलेवर-वृद्धि अधिक की गयी और अन्ततः यही निष्कर्ष निकालना पड़ा कि सूर के कठिन एवं महत्व के शब्दों पर उतना विचार उक्त कोश में नहीं किया गया, जितना अनावश्यक विस्तार एवं उपबृंहण ब्रजभाषा के व्याकरणीय रूपों पर । इसी प्रकार 'अवधीकोष' में भी महत्वपूर्ण शब्दों को स्थान देने के बजाय अति सरल और सामान्य कोटि के शब्दों से उक्त कोश को लाद दिया गया । और उसमें सूफी साहित्य की मुख्य शब्दावली का समावेश करना तो दूर रहा तुलसीदास के भी पूरे शब्द नहीं आ सके ।

मैंने "रीतिकाव्य-शब्दकोश" के प्रणयन में उक्त कोशकारों की प्रवृत्ति से मरसक बचने का प्रयास किया है तथा उन्हीं शब्दों का संकलन किया है जो विशिष्ट महत्त्व के हैं । अल्प महत्व एवं साधारण कोटि के शब्दों को जान-बूझ कर छोड़ दिया गया है और यदि सामान्य कोटि के शब्दों को ग्रहण करने की चेष्टा की गयी है तो उनके विशिष्ट अर्थ के बोधक होने के कारण । उदाहरणार्थ गंग कवि के एक छंद में मुझे 'धजा' शब्द प्राप्त हुआ, जिस प्रसङ्ग में यह शब्द प्रयुक्त है, वहाँ यह 'ध्वजा' अर्थ का बोधक न होकर 'मस्तक' या 'सिर' के अर्थ में गृहीत हुआ है ।

अभी तक हिन्दी कोशों में प्रायः कूटात्मक शैली या प्रवृत्ति के शब्दों की उपेक्षा की गई है । किन्तु जब प्राचीन हिन्दी काव्य का अध्येता अपनी जिज्ञासा के शमन के निमित्त हिन्दी कोशों के पृष्ठ पलटता है तो उसे निराश होना पड़ता है । मैंने यथाशक्य ऐसे कुटात्मक शब्दों को भी ग्रहण करने की चेष्टा की है; यथा आचार्यदास ने लक्ष्मण जी के लिए सौ हजार मन [सौहजार = लक्ष + मन] शब्द का प्रयोग अपने 'काव्य निर्णय' में यथा प्रसङ्ग किया है । मैंने कोश के उपयुक्त समझ कर ऐसे शब्दों को सहर्ष आकलित करने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं किया ।

हिन्दी रीति-काव्य में कुछ ऐसे मुहावरे भी दृष्टिगत हुए हैं जिनका चलन अब नहीं रह गया । ऐसे मुहावरों पर भी प्रासङ्गिक दृष्टि से पुनः विचार किया गया है; यथा 'शृङ्गार-संग्रह' के एक छन्द में यह मुहावरा—"मेरो मन माई री बहीर को ससा भयो" सर्वथा नूतन है । ब्रजभाषा के थोड़े

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से हो कवियों में ऐसा मुहावरा देखने को मिला है। प्राचीन काव्य में इस प्रकार के मुहावरे मुझे जहाँ कहीं मिले हैं, मैंने उन्हें निःसंकोच ग्रहण किया है।

प्राचीन शब्दों का चयन करते समय लिंग एवं क्रियाओं के रूप निर्धारण करने में भारी कठिनाई का सामना करना पड़ा। कारण यह है कि खड़ी बोली में लिंग और क्रियाओं के स्वरूप बहुत कुछ स्थिर हैं, पर ब्रजभाषा और अवधी आदि की स्थिति इससे सर्वथा भिन्न है। कुछ उदाहरणों से हमारे कथन की पर्याप्त पुष्टि हो सकती है। यथा, ब्रजभाषा में 'गेंद' स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है, पर साधारणतः यह पुलिंग में ही गृहीत होता है। इसी प्रकार "शोर" शब्द है तो पुलिंग के अन्तर्गत, किन्तु दीनदयाल गिरि के प्रयोग से स्पष्टतया प्रतीत होता है कि यह स्त्रीलिंग है, नमूना लें—"सुनै कौन या ठौर जितै ये खल की सोरैं।" पुनः क्रियाओं के सकर्मक और अकर्मक रूपों के निर्धारण में कहीं-कहीं रुकना पड़ा है, फिर भी उनके सम्बन्ध में यत्र-तत्र मतभेद की भी गुंजाइश हो सकती है, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता।

शब्दों का चयन प्राप्त मुद्रित ग्रन्थों से ही किया गया है। मुद्रित ग्रन्थों में अधिकांशतः ऐसे ग्रन्थ भी हैं, जो सैकड़ों वर्ष पूर्व बनारस के लाइट प्रेस, भारत जीवन प्रेस, लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस तथा बम्बई के खेमराज श्री कृष्णदास के यहाँ से प्रकाशित हुए थे। इन ग्रन्थों के शुद्ध पाठ को समझने और उनके मूल रूपों की कल्पना करने में मेधा को कहाँ तक दौड़ लगानी पड़ी है, इसे भुक्त भोगी ही समझ सकते हैं। हाँ, मथुरावासी पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी को ऐसे पाठों से बहुत बड़ी शिकायत होगी। पर चतुर्वेदी जी यह भूल जाते हैं कि सम्प्रति हस्तलेखों की उपलब्धि ब्रह्म प्राप्ति से भी कठिन तथा दुर्लभ है। वस्तुस्थिति यह है कि राजाओं की लाइब्रेरी में तो सामान्य व्यक्ति का पहुँचना ही अति कठिन है, पर जहाँ नागरी प्रचारिणी सभा, काशी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं के हस्तलेखों के विनियोग-उपयोग का द्वार भी सामान्य व्यक्ति के लिये बन्द हो वह कौन सा द्वार खटखटाए? वस्तुतः यह दुख का विषय है कि जिस पुनीत भावना से प्रेरित होकर वहाँ डा० श्यामसुन्दर दास एवं राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन जैसी विभूतियों ने हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि एवं संवर्धन के निमित्त उक्त संस्थाओं की संस्थापना की थी, वे ही आज दलबन्दी, जातीयता, संकीर्णता एवं स्वार्थपरक विचारों के पंक में पड़कर अपने लक्ष्य से स्खलित हो रही हैं—च्युत हो रही हैं। सत्य तो यह है कि बहुत लिखा-पढ़ी करने के पश्चात् यदि हस्तलेखो को देखने का अधिकार मिल भी गया तो प्रतिलिपि के अधिकार से तो सतत प्रयत्न करने पर भी वंचित होना पड़ता है। यदि किसी उदारमना अधिकारी से प्रतिलिपि करने का आदेश मिल भी गया तो उतने अंश का ही जितना वह "ऊँट के मुंह में जीरा" कहावत को चरितार्थ करता है। साहित्य के प्रबुद्ध अध्येता को इस रहस्य के समझने में किंचित देर नहीं लगेगी, यदि दृष्टि फैला कर भीतरी कुचक्रों और राजनैतिक झंझावातों को समझने का कुछ अवसर मिले। कहा जाता है कि इन संस्थाओं के अधिकारियों की ग्रन्थ-प्रकाशन की अपनी योजनाएँ हैं और ऐसे योजनाबद्ध स्वांग और नाट्य-प्रदर्शन से सरकार के साथ भी प्रवंचना की जाती है।

ऐसी संस्थाओं से पुस्तकें धड़ल्ले के साथ निकल रही है, प्राचीन ग्रन्थों का भी खूब सम्पादन हो रहा है। सम्पादक जी भले ही सम्पादन-कला की बारहखड़ी भी न पढ़े हो, पर सम्पादन कार्य में वे मूर्धन्य संपादकों में परिगणित होते हैं। सम्पादन उन्हीं का है या किसी से कराया गया है, यह भी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक रहस्य का विषय है। सम्पादन के नाम पर रचनावली या छन्दावली को "ग्रन्थावली" का भी जामा पहना दिया जाता है। "कृपाराम ग्रन्थावली" में कितनी ग्रन्थावलियाँ हैं, ईश्वर ही जाने। "सोमनाथ ग्रन्थावली" के पाठ की कैसी-कैसी कचूमर निकाली गई है, इसे जानने के लिए उक्त ग्रन्थावली का अवलोकन अवश्य करना चाहिए, जो कलेवर और मूल्य दोनों ही में भारी-भरकम है। यदि नमूने के लिए सम्पादक जी से पूछा जाय कि "कैसे ताहि लाऊँ ताकी छांह भई सखी डोलै, भूषन समूल उदौ कोढि करवीन कौ।"[1] का क्या अर्थ है तो सम्पादक जी बगलें झांकने लगेगें। इसी प्रकार "अनुक्रमणिका" में जिन शब्दों का अर्थ दिया गया है, वे अति सरल और सामान्य पाठकों के लिये पूर्ण बोध गम्य हैं, किन्तु जहाँ "बखियान"[2] जैसे कठिन शब्दों के अर्थ लिखने की बात आई, वहाँ सम्पादक महोदय रण से पलायन कर गये।

ऐसी स्थिति में प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन और प्राचीन शब्दों का कोश कैसे और किस बल बूते पर प्रस्तुत किया जाये। जहाँ आर्थिक लाभ कम हो और श्रम अधिक करना पड़े, वहाँ किसे फुरसत है कि वह ऐसे गोरखधन्धे में पड़े। साधना के ऐसे पथ पर निस्पृहभाव से लगने वाले आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र जैसे तपस्वी ही हो सकते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि पद्माकर, दास भूषण, बिहारी, मतिराम, ठाकुर, घनानन्द आदि की सुसम्पादित रचनाओं से शब्दाकलन में जितनी सुविधाएँ मिली, उतनी ही कठिनाइयाँ विकृत एवं अवैज्ञानिक प्रक्रिया से सम्पादित ग्रन्थों से भी मिली। जहाँ तक ज्ञात है, ग्वाल, पजनेस, रघुनाथ, चिन्तामणि त्रिपाठी आदि रीतिकवियों के ग्रन्थ पुरानी शैली की सम्पादन-विधि के अनुसार ही सम्पादित हुए हैं। इनमें बहुत कुछ मूल की त्रुटियाँ हैं और उनसे बढ़कर तत्कालीन मुद्रण-जनित अशुद्धियाँ भी भरी पड़ी हैं। कुछ ग्रन्थ तो ऐसे भी देखने को मिले हैं जो बहुत पहले पाषाण यंत्रालय में मुद्रित हुये थे। लीथों में छपे इन ग्रन्थों में एक ही पंक्ति में इस प्रकार मिलाकर लिखा गया है कि उसका शुद्ध-शुद्ध पढ़ना भी अब मुश्किल हो रहा है। नमूने के लिए चाहे आप "सुन्दर कोप नहीं सपने" पढ़ लें अथवा "सुन्दर को पनही सपने", स्थिति अधिकतर ऐसी ही है।

कोश में जिन शब्दों का समावेश किया गया है उनके अर्थ और पाठ के सम्बन्ध में यथा शक्य पर्याप्त विमर्श करने का अवसर मिला है, पर उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के रीतिकवियों ने शब्दों की ऐसी कपाल-क्रिया की है कि अब उनका मूल अर्थ बताना भी दुस्तर हो रहा है। ऐसी स्थिति में शुद्ध अर्थ का पूर्ण दावा नहीं किया जा सकता। हाँ, अपने सन्तोष के लिए बहुत से शब्दों के शुद्ध पाठ और अर्थ पर विचार करने के लिए इस विषय के कतिपय विद्वानों से भी सम्पर्क स्थापित करना पड़ा है।

पिछले खेवे के कवियों में पजनेस और ग्वाल की रचनाओं का अभी तक कोई सुसंपादित संस्करण देखने को नहीं मिला, केवल नखशिख विषय का एक पुराना संग्रह "पजनेस प्रकाश" नाम से भारत जीवन प्रेस, काशी ने बहुत पहले प्रकाशित किया था। वही संग्रह यत्र-तत्र उपयोग में लाया जाता है। इस मुद्रित संस्करण में प्रेस की इतनी अशुद्धियाँ भरी पड़ी हैं कि शुद्ध पाठ और अर्थ

---

१. सोमनाथ ग्रन्थावली—खण्ड १, पृष्ठ १६७।

२. वही, पृष्ठ १२२।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रहण करने में काफी परेशान होना पड़ा। ग्रंथ में संस्कृत और फारसी के ऐसे अप्रचलित एवं अल्प प्रयुक्त शब्दों की प्रचुरता है कि कहीं-कहीं पर्याप्त दृष्टि गड़ाने पर भी ठीक अर्थोपलब्धि नहीं हो सकी, अतः असमर्थ होकर उन शब्दों का मोह छोड़ देना पड़ा।

ग्वाल की अधिकांश रचनाएँ अप्रकाशित हैं। इनकी प्रकाशित रचनाओं में कविहृदय विनोद, यमुना लहरी, षट्ऋतु और नखशिख है। "कविहृदय विनोद" बहुत पहले मथुरा से लीथो में मुद्रित हुआ था उसका पाठ इतना भ्रष्ट है कि उसके आधार पर सही-सही अर्थ निकालना अति कठिन है। "यमुना लहरी" मुंशी नवलकिशोर प्रेस के अतिरिक्त काशी के भारतजीवन प्रेस से भी छप चुकी है। "षट्ऋतु" को प्रथम बार भारत जीवन प्रेस, काशी ने ही प्रकाशित किया था, किन्तु पाठ इस ग्रन्थ का भी सन्तोष जनक नहीं है। "नखशिख" लक्ष्मीनारायण प्रेस, मुरादाबाद से सन् १९०३ में प्रकाशित हुआ था। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त ग्वाल के कुछ संग्रह ग्रन्थ भी छपे हैं, जिनमें भारतवासी प्रेस, दारागंज से प्रकाशित 'ग्वाल रत्नावली' अग्रवाल प्रेस, मथुरा से मुद्रित 'ग्वालकवि' प्रमुख है। सुना गया है कि आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र ग्वाल के समस्त ग्रन्थों का सम्पादन बहुत समय से कर रहे हैं। अतः अधिकारी विद्वान द्वारा सुसम्पादित होने वाली "ग्वाल ग्रन्थावली" निश्चय ही महत्वपूर्ण होगी।

मुझे ग्वाल के मुद्रित ग्रन्थों से कोश के लिए जिन शब्दों का संग्रह करना पड़ा, उनसे पदे-पदे भ्रमित होना पड़ा है। कारण यह है कि ग्वाल ने शब्दों की ऐसी कांट-छांट और तराश की है कि पहले तो उनके असली रूप का जल्दी पता ही नहीं चलता और यदि कहीं पाठ भी विकृत हो गया तो ग्वाल के अध्येता को निश्चय ही पथ-भ्रष्ट हो जाना पड़ा है।

ग्वाल ने यत्र-तत्र संस्कृत और फारसी के मिश्रण से नये शब्द भी गढ़ने का यत्न किया है; यथा—संस्कृत 'सिता' (मल्लिका) और फारसी 'आब' (जल या मकरन्द) के योग से सिताब शब्द प्रस्तुत किया जो फारसी 'शिताब' (शीघ्र) से सवथा भिन्न है। इसी प्रकार फारसी के अपभ्रंश शब्दों के प्रयोग में उन्होंने इतनी निरंकुशता प्रदर्शित की है कि बेचारा "तौहीन" "ताहिनो" में बदल गया है और "मुकावा" 'मुकब्बा' का रूप ले बैठा। प्राचीन शब्दों की विकृतियों की इस कुज्झटिका में वास्तविकता की रश्मियाँ कहाँ खो गयी जल्दी, पता नहीं चलता।

ब्रजभाषा का शब्द-भण्डार हिन्दी की अन्य विभाषाओं से अत्यन्त समृद्ध एवं सम्पन्न है। कारण यह है कि ब्रजभाषा धार्मिक और राजनैतिक दोनों कारणों से दूर-दूर तक फैली हुई थी,[१] स्व० डा० धीरेन्द्र वर्मा ने बहुत पहले ब्रजभाषा बोलने वालों की संख्या का आंकड़ा तुलनात्मक दृष्टि से इस प्रकार प्रस्तुत किया है :—

ब्रजभाषा बोलने वाले युरोप के आस्ट्रिया, बलगेरिया, पुर्तगाल या स्वैडिन देशों की जनसंख्या से लगभग दुगुने हैं तथा डेनमार्ग, नार्वे या स्विटज़रलैंड की जनसंख्या के लगभग चौगुने।[१]

इसके अतिरिक्त ब्रजभाषा का परिविस्तार राजदरबारों में भी उत्तरोत्तर क्षिप्र गति से होता गया। परिणाम यह हुआ कि हिन्दी रीति साहित्य की बहुत सी रचनाएँ हिन्दी प्रदेश की सीमा से

१. ब्रजभाषा व्याकरण—डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृ० १४।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाहर भी निर्मित होने लगीं। स्वयं हिन्दी प्रदेश के रहने वाले ग्वाल और चन्द्रशेखर बाजपेयी पटियाला और नाभा प्रदेश में रहकर दीर्घकाल तक रीतिकाल का सृजन करते रहे। यही कारण है कि इनकी रचनाओं पर उर्दू, फारसी के प्रभाव के अतिरिक्त यत्र-तत्र पंजाबी का भी प्रभाव लक्षित होता है। चन्द्रशेखर बाजपेयी के एकाध छन्द में पंजाबी क्रियापदों की भी झलक मिलती है, यथा 'होदा मन मुदित घरोदा सुख देत भट् निबिड़ निकुंज जे जसोदा के नगर मैं।[१]

स्पष्टतया इस पंक्ति में 'होदा' शब्द 'होना' अर्थ में प्रयुक्त है, किन्तु 'घरोदा' में पंजाबी षष्ठी विभक्ति 'दा' लगाकर कवि ने 'घर का' अर्थ ग्रहण किया है। इसी प्रकार पंजाबी की षष्ठी विभक्ति का प्रयोग बेनी प्रवीन के 'नवरस तरंग' में भी देखने को मिला है—

आई संग सखिन के पनिघट तें लै घट, बोली तौलौं सारसी अचानक ही बनदी।
टपकत आँसू तपकत हियरा है सियरा, है अति कहति बिसारी दसा तनदी॥
दीन्हौ आनि पान के सुपानि धरि आपने ही, जानै कौ प्रवीन बेनी बिथा वाके मनदी।

अधिकांश रीति काव्य है तो ब्रजभाषा में रचित परन्तु बुन्देलखण्डी का भी अमिट प्रभाव उस पर है, विशेषतया उन कवियों पर इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है जो बुन्देलखण्ड से घनिष्ट सम्बन्ध बनाये हुए थे। केशव, बिहारी, ठाकुर, प्रतापसिंह के अतिरिक्त बुन्देलखण्डी शब्दों की प्रचुरता बकसी हंसराज कृत "सनेहसागर" में स्थान-स्थान पर मिलेगी। ब्रजभाषा मर्मज्ञ लाला भगवानदीन ने उक्त ग्रन्थ का सम्पादन करते समय बुन्देलखण्ड के ठेठ और वहाँ के ग्रामीण अंचलों में बोले जाने वाले शब्दों पर पूर्ण विचार किया है।

मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि प्रस्तुत कोश की रचना करते समय मैंने मूल ग्रन्थों में प्रयुक्त शब्दों का ग्रहण उनके अनुषंगों का पूर्ण ध्यान रखकर ही किया है तथा काव्यग्रन्थों में प्रयुक्त जिन शब्दों का अर्थ स्पष्ट नहीं था, उन्हें भरसक समझने का यत्न किया है और यत्न करने पर भी जहाँ कोई मार्ग नहीं मिला वहीं उन शब्दों को त्याग देना पड़ा। बिना अर्थ और प्रसंग-विधान को समझे कल्पना के बल पर किसी शब्द को बलात् रखने का आग्रह कहीं भी लक्षित नहीं होगा। हां, यह अवश्य है कि जहाँ पूर्वर्त्ती कोशकारों का कहीं भी सहारा नहीं मिला, वहाँ प्रसंग-संपुष्ट अर्थ को ग्रहण करने में मुझे किसी भी प्रकार की झिझक नहीं हुई।

शब्दों के ठीक अर्थ-बोध के साथ ही उनकी निरुक्ति की समस्याएं कम जटिल न थी, पर मुझे हर्ष है कि अधिकांश स्थलों पर नागरी प्रचारिणी सभा के "हिन्दी शब्द सागर" के अलावा "प्राकृत शब्द महार्णव" वी० एस० आप्टे कृत संस्कृत अंग्रेजी कोश मोनियर विलियम्स कृत विशाल संस्कृत अंग्रेजी कोश, उर्दू हिन्दी कोश' एवं अंग्रेजी कोश से मुझे बहुत बड़ी सहायता मिली है। मैं एतदर्थ उक्त कोशों के सुविज्ञ एवं सुधी संपादकों का हृदय से आभारी हूँ। कोश में जहां निरुक्ति की ठीक दिशा ज्ञात नहीं हो सकी वहां अज्ञात सूचक चिह्नों द्वारा कोष्ठकों में इंगित कर दिया गया है और यथा संभव प्रयुक्त छंद की पंक्तियों में कवि का नाम दे दिया गया है। किन्तु जहां कवि का नाम ज्ञात नहीं हो सका, वहां मूल ग्रंथ अथवा संग्रह ग्रंथ का उल्लेख मात्र कर दिया गया है। ठीक अर्थ

१. रसिक विनोद— चन्द्रशेखर बाजपेयी, पृ० ७२ प्रथम संकरण।
२. नवरस तरङ्ग—बेनी प्रवीन पृ० १६, प्र० सं०।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रहण करने के लिये इन कोशों के अतिरिक्त कुछ अतिशय पुराने कोशों को भी देखना पड़ा है । इनमें श्री धर भाषा कोश [सन् १८७४ ई० में नवल किशोर प्रेस लखनऊ से प्रकाशित] 'फैलन कोश' तथा प्लाट्स कोश [सन् १८८४ में लंदन से प्रकाशित] मुख्य हैं । संस्कृत के जिन प्राचीन कोशों को मुझे देखने का अवसर मिला है उनमें' अभिधान चिन्तामणि कोश, अमरकोश एवं मेदनी कोश, प्रमुख हैं ।

"रीतिकाव्य-शब्द कोश" के अन्तगर्त लाला भगवान दीन, पं० कृष्ण बिहारी मिश्र, मिश्रबन्धु महोदय एवं आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र आदि के सुसंपादित ग्रन्थों की टिप्पणियों को भी लिया गया है, किन्तु जहाँ इन संपादकों की टिप्पणियां मुझे अधिक संन्तोषप्रद नहीं प्रतीत हुई, उन्हें यथावत् न ग्रहण करके उन पर नये सिरे से विचार करना पड़ा है । अतः मैं इन पूर्ववर्ती विद्वान संपादकों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके सहयोग के अभाव में अभीष्ट लक्ष्य की संपूर्ति संभव न थी ।

वस्तुतः कोश-रचना की दिशा में मेरा यह प्रथम प्रयास है, अतः इस कार्य में होने वाली संभाव्य त्रुटियों एवं भ्रांतियों से मैं इनकार नहीं कर सकता है । हां, सुविज्ञ पाठकों और विपश्चितों को इस लघु प्रयास से यदि थोड़ा भी प्रसादन हो सका तो मैं अपने श्रम को सार्थक समझूंगा और पुनः इससे प्रेरित होकर भक्ति-काव्य कोश की भी रचना में निरत होऊँगा ।

कोश की रूपरेखा प्रस्तुत करने में मुझे पूज्य पं० उमा शंकर जी शुक्ल से अमित सहायता मिली है, मैं इसके लिए उनका चिरबाधित हूँ । इस कार्य में मुझे मथुरा निवासी आदरास्पद श्री प्रभु दयाल जी मीतल से भी अत्यधिक प्रोत्साहन मिलता रहा है । मैं उनकी ऐसी अकारण एवं सहज कृपा के लिए उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ । पूज्य पं० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र तो प्रत्यक्षतः एवं परोक्षतः दोनों ही रूपों में मेरे शुभचिन्तक रहे हैं । अतः धन्यवाद देकर उनकी शुभचिन्तना की गुरूता को हलका नहीं करना चाहता ।

बन्धुवर डा० किशोरी लाल गुप्त, प्रिंसिपल जमानिया हिन्दू डिग्री कालेज को भी धन्यवाद देता हूँ जिन्होने पत्र द्वारा अपने मार्मिक सुझावों से मुझे लाभान्वित करने की कृपा की है । पूज्यवर डा० रघुवंश एवं मान्यवर डा० जगदीश गुप्त के तथ्यपूर्ण परामर्शो की उपेक्षा कैसी की जा सकती है, अतः नतमस्त होकर उनकी कृतज्ञता को स्वीकार करता हूँ ।

डा० पारसनाथ तिवारी, डा०मोहन अवस्थी एवं डा० राजेन्द्र कुमार को हृदय से धन्यवाद देता हूँ जिनसे विवादास्पद शब्दों पर परामर्श करने का मुझे महार्घ अवसर प्राप्त हुआ है । मित्रवर सन्त लाल जी तो मेरे बचपन के हितैषी हैं और मुझे वे ही काम आते हैं जब मैं पूर्ण निराश हो जाता हूँ, अतः धन्यवाद द्वारा उनके महत्व का घटाना मुझे वांछनीय नहीं है । इसके अतिरिक्त ज्ञात अज्ञात सभी सज्जनों को धन्यवाद देता हूँ जिनसे किसी भी प्रकार का सहयोग कोश-निर्मिति के सम्बन्ध में मिला है । अन्त में विद्वानों से मेरा यही नम्र निवेदन है कि यदि इसमें किसी भी प्रकार की त्रुटियाँ मिले तो वे उन्हें इंगित करें जिससे मैं ग्रन्थ के दूसरे संस्करण में कथित त्रुटियों का मार्जन कर सकूं ।

विजयादशमी : सं० २०३२
१६०, नैनी बाजार,—इलाहाबाद

किशोरी लाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संकेताक्षर

अं०	अंगरेजी भाषा	पं०	पंजाबी भाषा
अ०	अरबी	पहा०	पहाड़ी भाषा
अनु	अनुकरणात्मक शब्द	पा०	पाली
अप०	अपभ्रंश	पु०	पुलिंग
अव्य०	अव्यय	प्रा०	प्राकृत भाषा
आ०	आगम	फा०	फारसी भाषा
उदा०	उदाहरण	बुं०	बुंदेलखण्डी भाषा
क्रि०	क्रिया	ब्रज०	ब्रजभाषा
क्रि० अ०	क्रिया अकर्मक	मुहा०	मुहावरा
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण	रघुराज	महाराज रघुराजसिंह
क्रि० स०	क्रिया सकर्मक	वि०	विशेषण
केशव	आचार्य केशवदास	सं०	संस्कृत
तु०	तुर्की भाषा	सर्व	सर्वनाम
दास	आचार्य भिखारीदास	स्त्री०	स्त्री लिंग
देश	देशज	हि०	हिन्दी

For Private and Personal Use Only

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अ

अंगछ—संज्ञा, पु० [षडंग] षडंग, वेद के छः अंग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द तथा ज्योतिष ।

उदा० अंग छबि लीन स्रुति धुनि सुनियै न मुख लागी अब लार है न नाकहू कौं ज्ञान है ।

—सेनापति

अंचकैं—क्रि० वि० [हिं० अचानक] अचानक, सहसा, एकबारगी ।

उदा० अरु इक बंधु परोसति थारी ।
चली अंचकैं उठि नव नारी ।।

—सोमनाथ

अन्तरभाव—संज्ञा, पु० [सं० भावान्तर] भावान्तर, भिन्नता, —अन्तर्भाव ।

उदा० कछु पुनि अन्तरभाव तें कही नायिका जाहि बिना नियम सब तियन में सुन्यो कबीसन पाहि ।

—दास

अंकावना—क्रि० स० [सं० अंकन] जाँच करवाना, मूल्यांकन करवाना ।

उदा० प्रेम बजार के अन्तर सो पर नैन दलाल अंकावने है । —ठाकुर

अखांगी—वि० [सं० अ + हिं० खाँगी = खंडित] अखंडित, निरन्तर, लगातार ।

उदा० जाके मुख सामुहे भयोई जौ चहत मुख, लीन्हो सो नवाइ डीठि पगनि अखांगी री ।

—पद्माकर

अंगेट—वि० [सं० अंग + इष्ट] चुस्त, अंग के लिए जितना उपयुक्त है ।

उदा० गाढ़ी अंगेट गढ़े से खएनि में,
ठाढ़े उरोजनि ठाढ़ी लजै हैं ।—गंग

अंगेठी—वि० [सं० अंग + इष्ट] १. चुस्त २. अत्यंत सुंदर ३. अंगदीप्ति ।

उदा० १. पातरी अंगेठी आँगी अंगहू सों लागी रहै ।

—आलम

२. कौल के से पात नैन पातरी अंगेठी है ।

—आलम

३. गोरी अँगेठि अडीठि सी डीठि सुपैठि रह्यो मन पीठ पनारी । —गंग

अंगोटना—क्रि० स० [सं० अग्र + हिं० ओट] घेरना, छेंकना ।

उदा० हाथ मैं मालती माल लिये चली भीतरै ताहि गोसांइ अँगोटी । —बोधा

अइलाना—क्रि० अ० [हिं० ऐंड़ाना] ऐंड़ाना, टेढ़ा होना ।

उदा० जो तुम होहु बड़े घर को
अइलात कहा हौ, जगात न दैहौ ।

—रसखानि

अऊलना—क्रि० अ० [सं० उल् = जलना] १. औलना, जलना, गरम होना २. छिलना, छिदना [अ = अच्छी तरह + शूलन]

उदा० छत आजु की देखि कहौंगी कहा छतिया निति अैसे अऊलति है । —रघुनाथ

अकनना—क्रि० स० [सं० आकर्णन] कान लगा कर सुनना, आहट लेना ।

उदा० अकनि अकनि रन परसपर, असिप्रहार झनकार । —दास

अकलैंनि—संज्ञा, स्त्री [हिं० अकेला] अनन्य प्रेमिका, एकाकी साधिका ।

उदा० कान्ह परे बहुतायत मैं अकिलैनि की बेदन जानौ कहा तुम । —घनानन्द

अकस—संज्ञा, स्त्री [फा० अक्स = उलटा] बैर, शत्रुता ।

उदा० मनु ससिसेखर की अकस किम सेखर सत चंद । —बिहारी

अकसीर—संज्ञा, स्त्री [अ०] १. रसायन, कीमिया २. अत्यंत गुणकारी ।

उदा० ग्वाल कवि गोरी द्रग तीर के, तुसीर के सु मोद मिलें जैसे अकसीर के, खमीरके ।

—ग्वाल

अकाथ—क्रि० वि० [सं० अकार्यार्थ, हिं० अकारथ] व्यर्थ, निष्प्रयोजन, वृथा ।

उदा० फेरि फिरन कौं कान्ह कत करत

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पयान अकाथ । रही रोकि मग ग्वारिनी
नेहकारनी साथ ।। —दास

अकुंठ—वि० [सं०] जो मन्द न हो, उज्ज्वल, अमंद ।

उदा० पूरन परम ग्राम बैकुंठ अकुंठ धाम
लीने बिसराम प्रभु संपति अपांड़िको
—देव

अकुताना—क्रि० अ० [?] घबराना व्याकुल होना ।

उदा० सुनि अकुताने राजाराम ।
भूलि गयौ तिहिं बल धन धाम । —केशव

अकूठो—वि० [सं० आकुंठन] १. शुष्क, सूखा, नीरस २. बहुत अधिक, राशि, समूह ।

उदा० जैसी करा उन प्रीति की रीति लखे पलुहै
बलि काठ अकूठो । —तोष

अकैठे—वि० [सं० एक + इष्ट] १. एक मात्र, २. एकत्रित ।

उदा० आवत बात न कोऊ हिये,
चित कैसे तजै कुलकानि अकैठे ।
—बेनी प्रवीन

अकोति—वि० [हिं० अकूत] अपरिमित, असीम ।

उदा० कैधों सबै नखतान की ज्योति अकोति
विरंचि बटोरि धरी है । —रघुराज

अकोर—संज्ञा, स्त्री० [सं० अंकमाल] आलिंगन की चेष्टा, छाती से लिपटने की मुद्रा ।

उदा० रीझ बिलोएई डारति है हिय,
मोहति टोहति प्यारी अकोरै ।
—घनानन्द

अकोरना—क्रि० सं० [सं० आक्रोडन, प्रा० अक्कोडण] इकट्ठा करना, संग्रह करना ।

उदा० आतम राम रमे, उठि अंत निरन्तर अन्तर
ताप अकोरी । —देव

अकोसना—क्रि० सं० [हिं० कोसना]—कोसना शाप के रूप में गाली देना ।

उदा० रोसैं भरि दैवहि अकोसति इकोसें, फेरि
दौरी फिरै ब्याकुल बहीर सखियान की ।
—सोमनाथ

अक्करी—वि० [हिं० अकड़] अकड़ वाली ।

उदा० फिरै चक्करी से गली सक्करी में । लियै
अक्करी ऐंड ज्यौं हिक्करी में । —पद्माकर

अक्कासे संज्ञा, पु० [सं० आकाश] आकाश, नभ ।

उदा० मौजी मान सिंहावत रीझत जगत सिंह,
बकसे तुरंग तुंग वै उठत अक्कासे ।
—पद्माकर

अखज—वि० [सं० अखाद्य] अखाद्य, न खाने योग्य ।

उदा० झख मारत ततकाल ध्यान मुनिवर को धारत
बिहरत पंख फुलाय नहीं खज अखज विचारत ।
—दीनदयाल गिरि

अखतीज—संज्ञा, स्त्री [सं० अक्षय तृतीया] अक्षय तृतीया, आखातीज ।

उदा० बाढ़ी अखतीज सी असाढ़ी अनबीज खेत,
दान दरसावनी सरस राखी रसमी ।
—देव

अखम—वि० [सं० अक्षम] अक्षम, अशक्त, असमर्थ

उदा० मुकुतपुरी है जाके माँग महि खीन मध्य,
सोम सिव सोभा माँह अँग न अखम है ।
—बेनी प्रवीन

अखाँगना—क्रि० स० [अं = आगम + हिं खाँगना]
१. मारना २. वृद्धि करना [सं० अ + हिं खाँगना = कम होना]

उदा० कहै पद्माकर अखाँग्यौ तुम लंकपति हमहूँ
कलंकपति ह्वै बोई अखाँग्यौ है ।
—पद्माकर

अखारा—संज्ञा, पु० [हिं० अखाड़ा] नाच, नृत्य २. रंगभूमि ।

उदा० देखत हौ हरि ! देखि तुम्हैं यही होत है
आंखिन में ही अखारो । —केशव

अखिलमा—क्रि० अं० [हिं० अखरना] अखरना, कष्ट पाना, दुख पाना ।

उदा० सुचित गुबिंद ह्वै के सेवते कहाँ धौं जाइ,
जल जंतु पंति जरि जैबे कों अखिलती ।
—पद्माकर

अखेटक—संज्ञा, पु० [सं० आखेटक] शिकारी बहेलिया ।

उदा० बैननि मैन के बान चले, मृगनैननिहू को
खिलारू अखेटक । —देव

अखेलत—वि० [स० अं० + केलि] बिना खेलते हुए, अचंचल, भारी, गंभीर ।
२. आलस्यपूर्ण, उनींदा

उदा० भारी रसभोजे भाग भायनि भुजन भरे
भावते सुभाइ उपभोग रस मोइगे । खेलत ही

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खेलत अखेलत ही आंखिन सों खिन-खिन खीन ह्वै खरे ही खिन खोइगे । —देव

अगड़—संज्ञा, स्त्री [सं० निगड़] जंजीर, बेड़ी, आँदू ।

उदा० मत्त द्विरद मनौ अगड़ तोड़ि गहगडसौं धाये । —नागरीदास

अगति—संज्ञा, पु० [सं०] समुद्र, जड़, जो गति शील न हो ।

उदा० निपट पतिव्रत धरणी । मग जन को सुख करणी । निगति सदा गति सुनिये । अगति महा पति गुनिये । —केशव

अगब्बि—संज्ञा, स्त्री [?] १. मसोसना २. फटकार, डाँट ।

उदा० १. कोउ अधर दसननि दब्बि । रह गई उरनि अगब्बि । —सोमनाथ

अगरि—वि० [सं० अग्र प्रा० अग्ग] १. प्रचुर, बहुत, अच्छी तरह, २. श्रेष्ठ उत्तम, ३. अग्र, आगे, पहले ।

उदा० तन मन जूटी, ते बिकट बन टूटी, आनि खाइ विष बूटी, भिदी अंगनि अगरि कै । —देव

अगरी—वि० [सं० अग्र] उच्च, बढ़कर, श्रेष्ठ ।

उदा० देव गुण अगरी उसासै भरे अगरी दबाए दंत अँगुरी अचल अंग अंगरी । —देव

अगवानी—संज्ञा, स्त्री [सं० अंग=सूर्य + वानी हिं० कान्ति ।
१. सूर्य प्रभा २.अभ्यर्थना, पेशवाई ।

उदा० नीकी अगवानी होत सुख जन वासौ—सब सजी तेल ताई चैन मैन मयमंत है । —सेनापति

अगाउनी—क्रि० वि० [सं० अग्र + हिं० आवनी] पहले से, पूर्व ।

उदा०मुरली मृदंगन अगाउनी भरत स्वर भाउती सुजागरैं भरी है गुन आगरे ।—देव

अगाज—संज्ञा, पु० [अ० अग्राज] इच्छाएँ, ख्वाहिशें, २. स्वार्थ ।

उदा० शेर की सी गाज होय, सुत कौ अगाज होय, सदा शुभ काज होय, उमर दराज होय, —ग्वाल

अगिनिबासो—संज्ञा, पु० [हिं० अगिनबासा] बाज की जाति का एक पक्षी, अगिनबासा ।

उदा० इनको तौ हाँसो वाके अंग में अगिनिवासो, लीलहीं जु सारो सुख सिंधु बिसराएरी । —दास

अगारिन—क्रि० वि० [सं० अग्र] आगे, पूर्व ।

उदा० ग्वाल कवि ऊँचे वे उरोज की अगारिन पै लिपटी अलक ताके ताके यों तमासे में । —ग्वाल

अगिहाई—संज्ञा, स्त्री [सं० अग्निदाह] अग्निदाह

उदा०
अनदीने सब हाँसी करै । चोर लेइ अगिहाई जरै । —केशव

अगोठि—संज्ञा, पु० [सं० अग्र] अग्रभाग, आगे का हिस्सा ।

उदा० काटि किधौं कदलीदल गोप को दीन्हो जमाइ निहारि अगोठि । —दास

अगोचर—वि० [सं०] अपरिचित ।

उदा० बाल सों ख्याल, बड़े सों विरोध, अगोचर नारि सों न हँसिये । —गंग

अगोनी—संज्ञा, स्त्री० [?] १. अँगीठी, जिसमें आग सुलगाई जाती है २. वह स्त्री जो गौने नहीं गई हैं ।

उदा० देव दिखावति कंचन सो तन औरन को मन तावै अगोनी । —देव

अगोरना—क्रि० [हिं० अगोड़ना] चौकीदारी करना, पहरेदारी करना ।

उदा कल न परै पलकौ भट्ट लट्ट कियो तुव नेह गोरे मुहुँ मन गड़ि रह्यो रहे अगोरे गेह । —दास

अगोरही—अव्य० [सं० अग्र + हिं० प्रत्यय] पहले से ही, पूर्व से, ही, २. प्रतीक्षा [संज्ञा, अगोर]

उदा० मैं बरजे हैं अगोरही गोविद, गोरी को नेह गरे परिहैगी । —गंग

अगौने—क्रि० वि० [सं० अग्र] पहले, आगे २. बिना गौना के, द्विरागमन के पूर्व ।

उदा० लोने मुख सलज सलोने वे सुसील ते रिझाये रैनि गौने की, अगौने रूप गुनि कै ।

अघ—संज्ञा, पु० [सं० अघासुर] ? अघासुर जिसे श्री कृष्ण ने मारा था २. पाप ।

उदा० कालीनाग नाथ्यो संखचूर चूर कियो, अघ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अजगर मारयो, पूतना की बात साचली ।
—देव

अघामल—क्रि० वि० [हिं० अघाना] पूर्णतया, अच्छी तरह, पूरीतरह ।
उदा० फिरैं रन घूमत घायल सूर ।
अघायल स्रोनित चायल चूर ।
—चन्द्रशेखर

अचका—क्रि० वि० [हिं० अचानक] सहसा, अचानक ।
उदा० आइ गयौ औसर ही अचका कन्हाई तहाँ
सजैं फूल माल मंजु मोर पखियान में ।
—सोमनाथ

अचगर—संज्ञा, पु० [?] शरारत, बदमाशी ।
उदा० 'आलम' न काहू डरै देरब्यो अचगर मैं ।
—आलम

अचाक चक—[हिं० + सु० चाक] अरक्षित, कम-अनु० चक जोर ।
उदा० चाकचक चमू के अचाकचक चहूँ ओर
—भूषण

अचैनी—वि० [हिं० आचमन] आचमन करने वाली, पीजाने वाली ।
उदा० चैनी जमराज की अचैनी जी जरेनी जोर
बोर देनी कागद गुपित्र के गरेनी है ।
—ग्वाल

अचोतना—क्रि० स० [सं० आचमन] आचमन करना, पान करना, पीना ।
उदा० सेखर अनूप छबि मदमतवारो मनु बार
बनिता को रस सरस अचोत है ।
—चन्द्रशेखर

अचौन—संज्ञा पु० [सं० आचमन] आचमन या पीने का पात्र, कटोरा ।
उदा० देखि देखि गातन अघात न अनूप रस,
भरि भरि रूप लेत लोचन अचौन से ।
—देव

अच्छर—संज्ञा, पु० [सं० अक्षर] १. आकाश २. अक्षर ।
उदा० अच्छर हैं विशद करति उषै आप सम जातैं
जगत की जड़ताऊ बिनसति है ।
—सेनापति

अच्छरिय—संज्ञा, स्त्री० [सं० अप्सरा] परी, अप्सरा ।
उदा० रचि सूर से लिय अंग । अच्छरिय हार
उमंग । —जोधराज

अच्छिनि—संज्ञा, पु० [सं० अक्ष + हिं० न (प्रत्य) आँखें, नेत्र, अक्ष ।
उदा० दरस हेतु तिय लिखति, पीय सियरावहु
अच्छिनि । —सेनापति

अछड़ैती-संज्ञा, स्त्री [सं० अ + छल], निष्कपट की बातें, प्रेम चर्चा ।
२. छल न करने वाली [वि०]
उदा० वै परै पायन प्रेम पगे हँसि, कण्ठ लगाइ
कहौ अछड़ैती । —बेनी प्रवीन

अछत—वि० [सं० अक्षय] अक्षय, न नष्ट हुए
उदा० गनती गनिबे तैं रहे, छतहूँ अछत समान ।
—बिहारी

अछवाई—संज्ञा, स्त्री [१] सौन्दर्य, सुन्दरता ।
उदा० रति साँचे ढरी अछिवाई भरी पिंडुरीन
गुराई पै पेखि पगै घनआनंद एडिन आनि
मिडै तरवानि तरे ते भरे न डगै । —घनानंद

अछीने—वि० [सं० अक्षीण] पुष्ट, बलवान, शक्तिशाली ।
उदा० ओछै कद ओछे बैस उदित अछीने छीने
ओछे ओछे उन्नत उरोज अलबेली के ।
—परमेश

अछुअवा—संज्ञा, स्त्री [हिं० आछू] आछू, बिछिया ।
उदा० पहिरे लाल अछुअवा, तिय-गज पाय ।
चढ़े नेह हथिअवहा, हुलसत जाय ।
—रहीम

अछेव—वि० [सं० अछिद्र] दोष रहित निर्दोष, बेदाग ।
उदा० बसन सपेद स्वच्छ पेन्हे आभूषण सब
हीरन को मोतिन को रसमि अछेव को ।
—रघुनाथ

अछेह—वि० [सं अछेध] १. निरन्तर, लगातार, २. अत्यधिक ।
उदा० सीतल पवन पुरवाई के परस नव, बेलिन
विद्रुमन सौं लगनि अछेह की ।
—सोमनाथ

अछ्छ—संज्ञा पु० [सं० अक्ष] अक्ष, आँख, नेत्र ।
उदा० सुख रस भीने, प्रान प्यारी बस कीने पिय,
चिन्ह ए नवीने परतच्छ अछ्छ देखिये ।
—सेनापति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अज—संज्ञा, पु० [सं०] १. कामदेव २. ब्रह्मा, ३. विष्णु ।

उदा० १. धुनि पूर रहै नित कानन में अज को उपराजबोई सो करै ।
—घनानन्द

अजगैबी—संज्ञा, स्त्री, [फा० अज + अ०गैब] स्वर्गीय, प्रभुता, शोभा ।

उदा० कहै पद्माकार त्यों तारन विचारन की विगर गुनाह अजगैबी गैरआब की ।
—पद्माकर

अजब—संज्ञा, पु [फा०] अर्जुन सिंह के हाथी का नाम ।

उदा० गज अजब अर्जुनसिंह को झपटै झुकै झुकि झूमिकै ।
—पद्माकर

अजमूदै—संज्ञा, पु० [?] आनन्द, सुख हर्ष

उदा० लीजै अजमूदै अब याही मनि मंदिर मैं आवो लाल ललकि मिलै तौ गलबाही दै ।
—बेनी प्रवीन

अजार—संज्ञा, पु० [फा० आज़ार] बीमारी, रोग २. दुख, तकलीफ ।

उदा० जर के अजार मिस पलका पै परी आनि बरै बिरहानल अखिल वाके गात री,
—कवीन्द्र

यह प्रीति अजार को औरे तबीब परन्तु कछू सुनि लीजतु है । —ठाकुर

अजीम—वि० [अ० अजीम] महान्, बड़ा ।

उदा० तदपि गौरी सुनि बाँझ हैं वरु है संभु अजीम । —रहीम

अजुहीं—संज्ञा स्त्री० [सं० यूथी,] (आगम + हि० जूही) जूही नामक एक पुष्प ।

उदा० अजुही गुहि रेसमतगा कीनी माल बिसाल हरि हराउ तन को कियो मोकर कीनी लाल
—भतिराम

अजूजा—संज्ञा, पु० [देश०] बिज्जु की भाँति एक जानवर जो मुर्दा खाता है ।

उदा० कहै कवि दूलह समुद्र बढ़े सोनित के—
जुग्गिनि परेते फिरै जम्बुक अजूजा से
—दूलह

अजोखे—वि० [हि० अ + जोखे = तोले, अतुल] अतुलनीय; बेजोड़ ।

उदा० पांव न देत नदी तट मैं सरनीर निमज्जत नेम अजोखे । —चन्द्रशेखर

अझूनो—वि० [सं० अक्षीण] पुष्ट; मजबूत अक्षुण्ण न नष्ट होने वाला ।

उदा० डोलत है अभिलाष भरे;
सुलग्यो विरहा ज्वर अंग अझूनो —देव

तुम्हैं बिन सांवरे ये नैन सूनै ।
हिये मैं लै दिये बिरहा अझूनै । —घनानन्द

अटकरना—क्रि० स० [हिं० अटकर] अन्दाज लगाना; ताक लगाना; घात लगाना ।

उदा० कहा भयौ जो होरी आई तुम अटकरत अटपटो दाव । —घनानन्द

अटकरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० अटकल] अन्दाज, अनुमान, कल्पना सहारा ।

उदा०
निरख्यौ न मीत ह्वां अनीति करी
पंचबान, फिरी निजधाम को प्रकास अटकरी मैं
—सोमनाथ

अटना—क्रि० [हि० ओट] बाधा डालना, आड़ करना, छेकना ।

उदा० फारौं जु घूंघट ओट अटै सोई
दीठि फोरौं अध को जु धंसाई ।
—केशव

गहि घूंघरिया उर बाहु अटै जुग जंघ जटै
मुख नाहीं रटै । —तोष

अटब्बर—संज्ञा, पु० [सं० आडम्बर] आडम्बर, विस्तार, फैलाव ।

उदा० अब तो गुनिया दुनिया को भजै, सिर बांधत पोट अटब्बर की । —गंग

अटहर—संज्ञा, स्त्री० [सं० अट्ट] ढेर, फेंटा, पगड़ी ।

उदा० आप चढ़ी सीस यह कसबी सी दीन्ह औ, हजार सीसवारे की लगाई अटहर है,
—पद्माकर

अटा—संज्ञा, पु० [हिं० अट्ट] अट्ट , समूह, झुंड ।

उदा०
कारी पीरी ढालैं देखियै बिसालैं अति,
हाथिन की अटा घन घटा सी अरति है ।
—केशव

अठंग—संज्ञा, पु० [सं० अष्टाङ्ग]—अष्टांग योग ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० उठत उरोज न उठाये उर ऐठ भुज,
ओठन अगेठै, अंग आठहू अठंग सी ।
—देव

अठपाव—संज्ञा, पु० [सं० अष्टपाद] उपद्रव, शरारत; बदमाशी ।
उदा० भूषन क्यों अफजल्ल बचै अठपाव कै सिंह को पांव उमैठो । —भूषण

अठाई—वि० [बुं०] बदमाश, दुष्ट ।
उदा० कहिये कहा बात कान्हर की आठो गाँठ अठाई । —बक्सी हंसराज

अठाएँ—संज्ञा पु० [सं० अ + हिं ढाँव स्थान] बुरे स्थान, कुठाँव , अनुपयुक्त स्थान ।
उदा० पुनि बुधि बिसराएं गिरै अठायें औचक आँए ताँवरिया —सोमनाथ

अठान—संज्ञा, पु० [सं० अ + हिं० ठानना] १. धरना, वैर, शत्रुता २. न करने योग्य, अकरणीय ।
उदा० नित ठान्यो अठान जिठानिन सों पुनि सास की केती रिसाई सही । —सुन्दर
तजतु अठान न, हठ परयौ सठमति आठोयाम । —बिहारी
२. ऐसी अठाननि ठानत हौ कित धीर धरौ न, परौ ढिग ढूके । —घनानन्द

अठेठी—वि० [देश० अ० आगम ठेठ] बिलकुल, निरी, विशुद्ध ।
उदा० जी की कठेठी अठेठी गँवारीनि नेक नहीं कबहूँ हँसि हेरी । —पजनेस

अठोट—संज्ञा, पु० [हिं० ठाट] आडम्बर, ठाट, पाखंड ।
उदा० लाज क अठोट कै कै बैठती न ओट दै दै, घूँघट कै काहे कौं कपट पट तानती ।
—देव

अडारी—संज्ञा, पु० [हिं० अड़ार,] अड़ार समूह २. अटारी, अट्टालिका ।
उदा० रैनि सरद् सुधानिधि पूर चढ़यो जग कालिम छाँह अडारी । —आलम

अड़ार—संज्ञा, पु० [सं० अट्टाल] समूह, राशि, भण्डार ।
उदा० दुखनि अड़ार लाय सुखनि बिड़ार जाय, मारी मैंन डारि दीनी पीरी पीरी डार सी
—आलम
जग डोलत डोलत नैनाहा । उलटि अड़ार चाह पल माहाँ । —जायसी

अड्ड—संज्ञा, पु० [हिं० अड्डा] शरण, आड़ ।
उदा० काल पहूँच्यो सीस पर नाहिन कोउ अड्ड ।
—दास

अढ़—संज्ञा, पु० [हिं० अढुक] नाश, क्षय, चोट, आघात, ठोकर ।
उदा० कहै कवि गंग महागढ़ बढ़ अढ कीने ।
मींडि डारे चटपट चढ़ि थर चरी सी ।
—गंग
कैयो देस परिब्रढ़ कैयौ कोट-गढ़ी-गढ़ कीन्हे अढ़ अढ़ डिढ़ काहू में न गति है ।
—भूषण

अढ़ना—क्रि० अ० [हिं० अड़ना] रुकना, अड़े रहना ।
उदा० रीझनि भीजे सुधा-रत स्याम सदा घन-आनँद ऐंड अढ़ी है । —घनानंद

अतंदर—वि० [सं० अतंद्रिक] १. तेज, चंचल आलस्य रहित २. ब्याकुल, बेचैन ।
उदा० १. जोगीदास नंदन भुवाल मोगीलाल को बिशाल जलजाल है प्रताप अति अतंदर ।
—देव

अतन्द्रमा—वि० [सं० अतन्द्र] तन्द्रा रहित ।
उदा० नखत बिराजै कौन निसि में अतन्द्रमा ।
—पद्माकर

अतना—संज्ञा, पु० [सं० अतन] बिना तन वाला, अनंग, कामदेव ।
उदा० दै पतियां कहि यों बतियां अतना छतियां छतना करि डारी । —मुरलीधर

अतरसों—क्रि० वि० [सं० इतर + श्वः] परसों के बाद आने वाला दिन, आने वाला तीसरा दिन, नरसों ।
उदा० खेलत में होरी रावरे के करबर सों जो भीजी है अतरसों सो आइहै अतरसों ।
—रघुनाथ

अतित—क्रि० अ० [सं० अतीत] बीतना, समाप्त होना ।
उदा० रघुनाथ फेरि पछितैबो रहैगो घेरि बूझि-बूझि हेरि पीछे औसर अतित के ।
—रघुनाथ

अतीत—संज्ञा, पु० [सं० अतिथि] अतिथि, मेहमान ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० निरमोही महा हौ पै मया हू बिचारि जारी,
हाहा इन नैननि अतीत किन हूजिये ।
—घनानन्द

अथरप—वि० [सं० अ + हिं० थरप = स्थिर] अस्थिर, चंचल ।
उदा० ग्वाल कवि अधिक इँचाइँची समै में तहाँ
हालत कुचन बीच बेनी अथरप है ।
—ग्वाल

अथाई—संज्ञा, स्त्री [सं० स्थायि] बैठक, चौबारा, २. वह स्थान जहाँ लोग एकत्रित होकर परामर्श करते हैं ।
उदा० १. गोप अथाइन तें उठे गोरज छाई गैल ।
—बिहारी
२. भोर लौं अखिल भोर अथाइन द्वार न
कोऊ किंवार भिरैया । —देव

अथूल—वि० [सं० अ + स्थूल] सूक्ष्म, स्थूल का विलोम ।
उदा० एकै थिर अथिर, अथूल, थूल, लघु गुरु,
देखो दृग खोलि तो न देखौ देव दूसरो ।
—देव

अदंभ—वि० [सं० अदम्भ] दम्भ रहित, पवित्र ।
उदा० त्यों पद्माकर मंत्र मनोहर जै जगदेब
अदंब अए री । —पद्माकर

अदगु—वि० [सं० अ + फा० दाग] बेदाग, शुद्ध, साफ, पवित्र ।
उदा० चिंतामनि कहै जु ओर बचन की दौर मैन
ऐसौ कछू सुखमा को समूह अदगु है ।
—चिंतामणि

अदन—संज्ञा, पु० [अ] स्वर्ग का उपवन जहाँ ईश्वर ने आदम को बना कर रखा था ।
उदा० मंद मुसकात छिति छूटत मयूखन के,
आगम अनूप तामें अदभुत अदन के ।
—पजनेस

अदल—वि [देश०] १. बढ़कर, श्रेष्ठतर, २. न्याय, इंसाफ [अ०]
उदा०
१. कोकिल ते कल, कंज-दल ते अदल भाव,
जीत्यो जिन काम की कटारी नोकबारी को ।
—दूलह

अदल-खाना—संज्ञा. पु० [फा०] न्यायालय, कचहरी ।
उदा० मेरे ही अकेले गुन औगुन बिचारे बिना,
बदलि न जैहै ह्वै बड़े अदल खाने ।
—दास

अदाई—वि० [अ० अदा] १. चाल बाज, धूर्त, २. ढंगी, ढंग रचने वाला ।
उदा० आह न अहट अध अरी या अदाई की ।
—गंग

अदाब—वि० [सं० अदभ्र, प्रा० अदब्भि] अदभ्र, बहुत, अधिक अपार ।
उदा० सेबती-गुलाब में न, अतर अदाब में,
न जैसी है सुबासु, कान्ह मुख-महताब में ।
—ग्वाल

अदाह—वि० [सं० आदग्ध] अच्छी तरह से, दग्ध, पूरी तरह से जला हुआ ।
उदा० 'आलम' अनंग दाह कीनो है अदाह तन,
अंगना के अंग अंग तपनि अँगार सी ।
—आलम

अदुंद—वि० [सं० अद्वंद्व, प्रा० अदुंद] १. अद्वितीय, द्वंद्व रहित, बेजोड़, २. बाधा रहित, शांत।
उदा० १. यौवन बनक पै कनक वसुधाधर सुधाधर बदन मधुराधर अदुंद री । —देव

अदेह—संज्ञा, पु० [सं०] १. कामदेव, २. विदेह, जनक जी ।
उदा० सेज करि ज्ञान की अदेह में न चपनो ।
—ग्वाल

अद्धर—वि० [बुं०] जिसका कोई आधार न हो, निराधार ।
उदा० अद्धर को है अधार हरी नर बंधक बंधन
माँझ रस्यो है । —ठाकुर

अधकर—संज्ञा, पु० [?] अंतरिक्ष, आकाश का मध्य भाग ।
उदा० अध, अधकर, ऊपर आकाश । चलत दीप
देखियत प्रकाश । —केशव

अधर—संज्ञा, पु० [सं०] १. अन्तरिक्ष, आकाश २. ओष्ठ ।
उदा० १. धावत धधात धिग । धीर धम धुंधा-
धुंध धाराधर अधर धुवान में ।
—पजनेस

अधसाँसी—वि० [सं० अर्ध + श्वास] अधमरी, अर्धजीविता ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० जाति में होति सुजाति कुजातिन-काननि
फोरि करौ अधसाँसी । —दास

अधिकारी—वि० [सं० अधिक] अधिक, अत्यधिक, बहुत ज्यादा ।

उदा० मुख पै कच के अधिकारी खुले अधचौकी
जगम्मग जोति करै । —आलम

अधिच्छ—वि० [सं० अदृश्] अदृश्य, लुप्त ।

उदा० कहै पदमाकर न तच्छन प्रतच्छ होत
अच्छन के आगेहू अधिच्छ गाइयतु है ।
—पद्माकर

अधिरथिक—वि० [सं० अधिरथ] १. रथारुढ़ २. सारथी

उदा० १. केसव छवीलो छत्र सीस फूल सारथी सो,
केसरि को आड़ अधिरथिक रची बनाइ ।
—केशव

अनंत—संज्ञा, पु० [सं०] शेष नाग २. जिसका अन्त न हो ।

उदा० सूनो कै परम पदु, ऊनो कै अनंत मदु,
नूनो कै नदीस नदु, इंदिरा मुरै परी ।
—देव

अनकना—क्रि० सं० [सं० आकर्णन] १. सुनना, श्रवण करना २. छिपकर सुनना ।

उदा० यदपि सबै गावैं मधुर, ऊँचे सुरन लगाइ,
तदपि अनकि मोहन सुरन, मोहैं गरब
गवाँइ । —रघुराज

अनखीलिन—वि० [हिं० अनख] नाराज होने वाली, बुरा मानने वाली ।

उदा० कहै पद्माकर अगार अनखीलिन की
भीरी भीर भारन कों भाँज दैरी भाँज दै ।
—पद्माकर

नेको अनखाति न अनख भरी आंखिन,
अनोखी अनखीली रोख आंखे से करति है ।
— देव

अनखुली—वि० [हिं० अनख-क्रोध] क्रुद्ध, क्रोध करने वाली, नाराज होने वाली ।

उदा० लगे जानि नख अनखुली, कत बोलत
अनखाय । —विहारी

अनगच्छ—वि० [?] निश्चंत, बिना किसी शंका के ।

उदा० उचित जु जांनहु सो तुम अच्छ ।
करौ बलिदान सु ह्वै अनगच्छ ।
—सोमनाथ

अनगब्बै—वि० [सं० अन + गर्व] अगर्व, अहंकार रहित ।

उदा० यह सुनि ब्रह्मचर्ज ह्वै पब्बै ।
मंडप तन आयौ अनगब्बै । —सोमनाथ

अनगाना—क्रि० अ० [ब्र०] १. जान बूझ कर देर लगाना, टालमटोल करना . आगे न जाना ।

उदा० मुहुँ धोवति, एड़ीं घसति, हसति, अनगवति
तीर । —बिहारी

अनपरवाहिनै—संज्ञा, स्त्री [सं० अन + फा० परवाह] बेपरवाही, बेफिक्री ।

उदा० रुचि न दुकूलनि की, केस माँग फूलनि की,
सबहीं छकाए जाकी अनपरवाहिनैं ।
—सोमनाथ

अनबनी—वि० [सं० अन्य + वर्ण] अद्भुत वर्ण का, विचित्र रंग का ।

उदा० सहज बनी है घनआनंद नवेली नाक,
अनबनी नथ सौं सुहाग की मरोर तैं ।
—घनानंद

अनभग्गहि—वि० [अन + भग्ग, हिं० अभागा] अभागा, भाग्यहीन, बदकिस्मत ।

उदा० अब त्यौं निरवारतु या अनभग्गहि खग्ग
प्रहारनि छोह छयौ । —सोमनाथ

अनभावरि—संज्ञा, स्त्री, [हिं० अनभाना पसन्द न होना] न पसन्दगी का भाव, किसी वस्तु को पसन्द न करना ।

उदा० भावरि अनभावरी भरे करौ कोरि बदवादु
—बिहारी

अनमिलती—वि० [हिं० अमिल] विषम, अमिल, खराब ।

उदा० कहै पदमाकर सु जादा कहौं कौन अब
जाती मरजादा ह्वै मही की अनमिलती
—पद्माकर

अनवच्छ—वि० [सं० अनवच्छिन्न] अखण्ड, बेरोकटोक ।

उदा० उच्छलत सुजस बिलच्छ अनवच्छ दिच्छ
दिच्छन हूँ छीरधि लौ स्वच्छ छाइयतु
—पद्माकर

अनहेत—संज्ञा, पु० [सं० अन + हेत = प्रेम] विराग, सन्यास ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० न न अच्छर सब सों निरस, सुनि उपजत अनहेत । —गंग

अनाप—वि० [सं० अनात्मन्] १. निर्बोध, जड़, मूर्ख २. आत्मा से परे ।
उदा० १. अरु दुहुँनि चहन जो नाहिं आप निलेंप ब्रह्म सो उर अनाप ।
—सोमनाथ

अनासु—क्रि० वि० [सं० अनायास] बिना प्रयास के, अचानक ।
उदा० वा दिन गई ती ब्रज देखन करील-बन भूक मैं परी तौ आइ बंसी के अनासुरी
—द्विजदेव

अनासी—क्रि० वि० [सं०अनायास] अचानक, बिना प्रयास के ।
उदा० चितवन चोर की अनासी दृग कोर की दै छोटी नथ मोर की मरोर मन लै गई ।
—ग्वाल

अनिंद्री—वि० [सं० अ + निन्द्य] अनिन्द्य, अनिन्दनीय, अनवद्य ।
उदा० भूपर कमल युग ऊपर कनक खंभ ब्रह्म की सी गति मध्य सूचम अनिंदोबर । —देव

अनुबादन—संज्ञा, पु० [सं० प्रवाद अनु + वाद].अफवाह, जनश्रुति ।
उदा० ऐसे अनुबादन के अनुवा घनेरे हैं ।
—गंग

अनुवा—संज्ञा, पु० [हिं० आनना, ले आना] ले आने वाले, फैलाने वाले, उड़ाने वाले ।
उदा० ताहि तू बताइ जोई बाँह दै उसीसैं सोई, ऐसे अनुबादन के अनुवा घनेरे हैं ।
—गंग

अनून—वि० [सं० अन्यून] अधिक, बहुत बड़ा ।
उदा०
आवत बढ़्यो न जग, जातहू घट्यो न कछु, देव को विलास, देव ऐसोई अनून तो ।
—देव
देव दुहून के देखत ही, उपज्यो उर मैं अनुराग अनूनों । —देव

अनूह—वि० [?] अयोग्य, न्यून ।
उदा० हीरन के जूह मंजु मनि के समूह समताई में अनूह जानि भूतल तले गये ।
—नंदराम

अनैसा—वि० [सं० अनिष्ट] अप्रिय, बुरा ।
उदा० कहि कहि निस दिन बोल अनैसे जारत जीव जिठानी । —बक्सी हंसराज

अपंग—संज्ञा, पु० [सं० अपांग] कटाच्च, चितवन, आँख का कोना ।
उदा० कसि तून वीर सजंग । अच्छरिय नैन अपंग । —जोधराज

अप—संज्ञा, पु० [सं० आप] १. जल, पानी, २. आब, चमक, दीप्ति ।
उदा० लागे जोग जग में, न तप अनुरागे कभू, लागे रूप अप में सु पैरन अपारे ई ।
—ग्वाल

अपघन—संज्ञा, पु० [सं०] शरीर, शरीर का अंग ।
उदा० अपघन घाय न बिलोकियत घायलनि घनो सुख केशोदास, प्रगट प्रमान है ।
—केशव

अपलोक—संज्ञा, पु० [सं०] पाप, बुरा कर्म ।
उदा० श्री रघुनाथ के आवत भागे । ज्यों अपलोक हुते अनुरागे । —केशव

अपसर—संज्ञा, स्त्री [सं० अप्सरा] १. अप्सरा, २. वाष्प करण [पु०] ।
उदा० रहै अपसर ही की सोभा जो अनूप धरि सुभग निकाई लीने चतुर सुनारी है ।
—सेनापति

अपाइ—संज्ञा, पु० [सं० अपाय] अनरीति, अन्यथाचार ।
उदा० तजि कै अपाइ, तीर बसैं सुख पाइ, गंगा । कीजै सो उपाइ, तेरे पाइ ज्यौं न छूट ही ।
—सेनापति

अपांड़ि—संज्ञा, पु० [सं० आपाणि] मुट्ठी में, हथेली में, पाणि में ।
उदा० पूरन परम ग्राम बैकुंठ अकुंठ धाम लीने बिसराम प्रभु संपति अपांड़ि कै । —देव

अपारथ—संज्ञा, पु० [हिं० आप=अपने + सं० अर्थ=प्रयोजन] स्वार्थ, अपना प्रयोजन ।
उदा० स्वारथ न सूझत, परारथ न बूझत, अपारथ भूझत, मनोरथ मयो फिरै ।
—देव

अपीच—वि० [सं० अपीच्य] सुन्दर, रुचिर ।
उदा० फहर गई धौं कबै रंग के फुहारन में,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कैधौं तराबोर भई अतर-अपीच में ।
—पद्माकर

ऐसी-भई धूंधरि धमारि की सी ताहि समय,
पावस के भोरे मोर सोर कै उठे अपीच ।
—द्विजदेव

अपूर—वि० ['अ' का आगम + हिं० पूर = पूर्ण] खूब, अत्यधिक बहुत ।

उदा० मजलिस लखि रीझो नृपति दीन्हों दान अपूर ।
—बोधा

अपेलि—संज्ञा, स्त्री० [देश०] अनीति, अन्याय ।

उदा० हाल ठाकुराइस में बोलिबो अचंभो यह,
ईश्वर के घर ते अपेलि चलि आई है ।
—अज्ञात

अफताबा—संज्ञा, पु० [फा० आफ़ताबा] हाथ-मुंह धुलाने का एक प्रकार का गडुआ, एक पात्र विशेष ।

उदा० हुक्का, हुक्की कली सुराही अरु अफताबा ।
—सूदन

अफरना—क्रि० अ० [सं० स्फार] भोजन से तृप्त होना ।

उदा० १. देव सुधा दधि दूध न हू अफरी है कहूँ सफरी जस सूखै ।
—देव

२. प्रगट मिले बिन भावते, कैसे नैन अघात ।
भूखे अफरत कहुँ सुने, सुरति मिठाई खात ।
—रसनिधि

अबंझा—वि० [सं० अबन्ध्या] सफल, फलीभूत, अव्यर्थ ।

उदा० संझा ते अबंझा प्रेम झंझानल झुकी झीनी झनकै रसन बलै नूपुर समाधी सी ।
—देव

अबंधुर—वि० [सं०] कठोर, वीर, उत्साही, जो नम्र न हो,

उदा० गजदंतनि कंध धरे बिबि कंधु महागुन सिंधु अबंधुर से ।
—देव

अबताली—संज्ञा, पु० [फा० अबदाली] अदल बदल कर देने वाला अधिकारी

उदा० आइ गये अबताली दोऊ कुच छाप लये सिर स्याय सुहाई ।
—आलम

वाको अयान निकारन कौं उर आए हैं जीवन के अबिताली ।
—केशव

अबर—संज्ञा, पु० [अभ्र] बादल ।

उदा० अबर रंग की साल विच, हिस फेरयो मुखचंद, अतनातस मैं रीझि कै, पिय मन भो रसकंद ।
—नागरीदास

अबलख—संज्ञा, पु० [सं० अबलक्ष] १. सफेद और काले रंग का घोड़ा २. कबरा, दोरंगा (वि०)

उदा० अतिही अबीले अबलख लीले गति गरबीले महि खूदैं ।
—पद्माकर

अबस—वि० [अ०] व्यर्थ, बेकार ।

उदा० खलक ना मानै एक भी अबस कियैं बकबाद खूब कमावैं इस्क कौ, तब कुछ पावैं स्वाद ।
—नागरीदास

चंदन मैं नाग, मदभरो इन्द्र-नाग
विषभरो सेसनाग कहै उपमा अबस को
—भूषण

अबाल—वि० [सं०] यौवन से पूर्ण, युवती ।

उदा० मोहिय महल मँह तिमिर तिरोहित कै, बसति अबाल विधुमुखी विधि बालिका ।
—देव

अबोल—संज्ञा, पु० [हिं० बोल] मौन, चुप, शान्त, बिना बोले हुए

उदा० बोलन आएँ अबोली भई अब केसव ऐसी हमैं न सुहाहीं ।
—केशव

अब्द—संज्ञा, पु० [सं०] बादल

उदा० अब्द सब्द करि गर्जि तर्जि झुकि झर्पि झपट्टहिं ।
—दास

अभिख्या—वि० [सं० अभिलाषा] अभिलाषिणी,

उदा० दारुन दुभीख सोभा भीख दीजै भीषमहि, राखौ मुख आभा अभिमान की अभिख्या हौं ।
—देव

अभितई—वि० [अ का आगम + हिं० भीति] डरी हुई, संत्रस्त, भयभीत

उदा० पुलकनि अंग रंग औरै भयो आंनन को, जांनि परी दुरी पंचबान की अभितई,
—सोमनाथ

अभिराम—वि० [सं०] १. शुभ, मंगल, २. सुन्दर ।

उदा० सुन्दर स्याम सुराम दुहू, अभिराम सभै, मग मैं पग काढ़े ।
—देव

अभिसंधिता—संज्ञा, स्त्री० [सं०] कलंहातरिता नायिका ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा०
स्वाधीनपतिका उत्कला, वासक शय्या नाम।
अभिसंधिता बखानिये, और खंडिता नाम॥
—केशव

अभेव—संज्ञा, पु० [सं० अभेद] अभेदता, अभिन्नता, एकत्व।
उदा० मलय की खौरिभाल, उरमाल मालती को,
एहो रघुनाथ राजै रंगनि अभेव को।
—रघुनाथ

अम्भ—संज्ञा, पु० [सं० अम्बु] जल, अश्रु।
उदा० मित्र अमित्रन की अँखियान प्रवाहु सौ,
आनन्द सोक के अम्भ को। टूटि गयौ
इकबार, विदेह महीप को सोचु, सरासन
संभु को। —देव

अमनैक—वि० [?] बदमाश, शरारती, ढीठ।
उदा० बाल गोपाल सबै अमनैक हैं, फागुन में
बचिहौब कहाँ तैं। —बेनी प्रवीन
दौरि दधि दान काज ऐसो अमनैक तहाँ,
आली बनमाली आइ बहियाँ गहत है।
—पद्माकर

अमनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० अवनि] अवनि, पृथ्वी।
उदा० जब पहुँची द्वार बरात प्रकास्यौ अमनी
ओर अकासौ। —सोमनाथ

अमरन की—संज्ञा, स्त्री० [सं० अमर=देवता +हिं० को=कन्या] देव कन्या, देवता की पुत्री।
उदा० अमर-मूरति कबि 'आलम' है मेरे जान,
कोऊ अमरावती तें आई अमरन की।
—आलम

अमान—वि० [सं०] १. अपरिमित, बहुत, २. निरभिमान।
उदा० १. मोहे महा महिमा वै कहैं, ये भरी रहै
मान अमान अमोही। —बेनी प्रवीन

अमायस—संज्ञा, पु० [?] भोग-विलास, उपभोग।
उदा० अब यह गुसामाफ करि दीजै। चलिये
बहुरि अमायस कीजै। —बोधा

अमारी—संज्ञा, स्त्री० [अ०] हाथी के ऊपर रहने वाला हौदा जिस पर एक छतरी रहती है।
उदा० ऊलर अमारी गंग भारी बंब धौं धौं होत।
—गंगा

अमीकला—संज्ञा, पु० [सं० अमृत+कला = किरण] चंद्रमा, शशि।
उदा० अद्भुत अमी कला आनंदघन सुजस जोन्ह
रस वृष्टि सुहाई। —घनानन्द

अमुंद—वि० [सं० अ+हिं० मुँदना]-खिला हुआ, विकसित।
उदा० हाँसी बेलि बैन धुनि, कोकिल कपोल चारु
चिबकु गुलाब नाक चम्पक अमुँदरी।
—सोमनाथ

अमेजना—क्रि० स० [फा० आमेजन] मिलना, मिलावट होना।
उदा० कैधौं अलि मालती सुमन पै सुमन दै कैरीझि रहयो थकित सुगंधन अमेजे मैं।
—रसकुसुमाकर
मोतिन की माल, मलमलवारी सारी सजें
झलमल जोति होति चाँदनी अमेजे मैं।
—बेनी कवि

अमोद—संज्ञा, पु०[सं०आमोद] सुगंध, सुरभि।
उदा० आगे आगे तरुन तरायले चलत चले,
तिनके अमोद मंद मंद मोद सकसै,
—भूषण

अरंग—संज्ञा, पु० [देश०] सुगन्ध का झोंका।
उदा० रुप के तरंगनि बरंगनि के अंगनि ते-
सोधो के अरंग लै तरंग उठै पौन की।
—देव

अरकना—क्रि० अ० [हिं० अटकना] अटकना, फँसना, अड़ना २. अरराकर गिरना, टकराना।
उदा० १. सरक्यो मन मेरो मंजीरन मैं,
मुरवा की जंजीरन मैं अरक्यो।
—ग्वाल

अरकस—संज्ञा, पु० [हिं० अलकसाना]- आलस्य सुस्ती, काहिली।
उदा० ग्वाल कवि कहै तै न आप मैं बिलोक्यौ
ब्रह्म, जुदौ हू न जान भज्यो भ्रम्यो-अरकस
तें। —ग्वाल

अरकसी—सज्ञा, पु० [सं० आलस्य] आलस्य।
उदा० बीती बरस सी आप पातीहू कौं-
अरकसी ऐसी चित बसी तौ हमारौ कहा
बस है। —सेनापति

अरगजा—संज्ञा, पु० [हिं० अरग+जा] एक सुगंधित पदार्थ, जो केशर, चंदन और कपूर आदि को मिला कर बनाया जाता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० गाज अरगजा लागे चोवा लागे चहकन
—देव

अरगट—संज्ञा, पु० [हिं० आड़ + सं० गात्र] परदा, घूँघट ।
उदा० बाल छबीली तियन में बैठी आपु छिपाय, अरगट ही फानूस सी परगट परै लखाय
—बिहारी

अरगाई—वि० [बु०] चुप, अलग ।
उदा० ठाकुर गौर करै केहि कारण बैठि रहे मन में अरगाई । —ठाकुर

अरगाना—क्रि० अ० [हिं० अलगाना] १. चुप्पी साधना, मौन होना २. पृथक् होना
उदा० बोधा किसू सों कहा कहिये सो विथा सुनि पूरी रहै अरगाइ कै ।- —बोधा
झुकी रानि कहि रहु अरगाई ।
—तुलसीदास

अरबीन—संज्ञा, पु० [फा० अरब] अरब देश के घोड़े ।
उदा० नैकु थिर धाउ अभिराम गुन सुन्दर हौ नाहि घनस्याम यह काम अरबीन कौ ।
—सोमनाथ

अरब्बीबारे—संज्ञा, पु० [सं० अर्वन् अरब्बी = इन्द्र हिं० बारे = छोटे = उप] उपेन्द्र, श्री कृष्ण २. अरब की संख्या ।
उदा० देखती करोरि बारी संगिनी हमारी है, अरब्बी वारे हम संग संका कत कीजिए ।
—दास

अरविन्द ठाकुर—संज्ञा, पु० [सं० अरविन्द + हिं० ठाकुर = स्वामी] कमल का स्वामी, सूर्य दिनकर ।
उदा० देखि कै उजेरी रही ठगि सी गोविन्द अरविन्द ठाकुरहि औनि आतप उतारे सों ।
—गोविन्द

अरस—संज्ञा, पु० [अ० अर्श] १. अर्श, आकाश २. स्वर्ग ।
उदा० १. सेनापति जीवन अधार निरधार तुम जहाँ कौ ढरत तहाँ टूटत अरस ते
—सेनापति

अरसीली—वि० [सं० अलस] रोषीली, क्रोध करने वाली, २. अलसीली, आलस्य से भारी ।
उदा० अरसीली ढीली मिलनि मिली रसीली बाल
—दास

अरावा—संज्ञा, पु० [फा० अराबः] गाड़ी, शकट वह गाड़ी जिस पर तोप लादी जाती है, २. तोप
उदा० धौंसा धुनि छूटत, अराबे तरपति देव, विकट कटक, देव घटा भट जुरिगे ।
—देव

अराना—क्रि० स० [हिं० अड़ाना] अड़ाना रोकना, टिकाना, अटकाना ।
उदा० भौंहै अराल अरेरति है उर कोर कटाच्छन ओर अराये । —देव

अरिनी—वि० [सं० अ + ऋणी] ऋण मुक्त
उदा० हौं अमरनि के आयु के, वृन्दनि हू हित छाइ । तुम सौ अरिनी हौंउ नहि, सेवा करि बहुभाइ । —सोमनाथ

अरुरना—क्रि० अ० [देश०] लचकना, मुड़ना, बलखाना ।
उदा० तीखी दीठि तूख सी, पतूख सी अरुरि अंग, रूख सी मरुरि मुख लागत महूख सी ।
—देव

अरूसा—संज्ञा, पु० [हिं० अड़ूसा] १. एक पौंधा, जिसके फूल और पत्ते यक्ष्मा, श्वास आदि रोग के लिए अति उपयोगी हैं । २. बिना रूठे ।
उदा० पीरे पान खाइ नीरैं चूकि कै न जाइ मान खई मिटि जाइगी अरूसे ही के रस मैं ।
—सेनापति

अरेरना—क्रि० अ० [अनु०] रगड़ना ।
उदा० मदन सदन सुख सनमुख नूपुर निनाद रस निदरि अनादर अरेरि मारु । —देव

अरोच—संज्ञा, पु० [सं० अरुचि] अरुचि, विरक्ति, घृणा, नफरत ।
उदा० मोच पंचबान को अरोच अभिमान को, ये सोच पति प्राण को सकोच सखियन को ।
—देव

अरोरना—क्रि० स० [बु०] चुन चुन कर लेना, छाँट-छाँट कर लेना ।
उदा० आनँद अरोरैं जे सँजोगी भोगी भाग भरे, बिकल वियोगिन की छतियाँ सकाती हैं ।
—चातुर

अलंक—संज्ञा, पु० [सं० अलक] केश, बाल ।
उदा० सोभा रूप सीउ सी अनूप गुन भरी ग्रीव ऊपर अलंक, रतनावलि फनीन की ।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलंग—अव्य० [सं० अल + अंग] ओर तरफ ।
उदा० ऊपर अटारी सजि बैठी है पलँग पर,
जौन-सी अलँग फँदफँदे की देवाल है ।
—बेनीप्रवीन
लेन आयो कान्ह कोऊ मथुरा अलंग ते ।
—दास

अलकत—संज्ञा, पु० [सं० अलक्त] अलक्त, लाख से निर्मित एक प्रकार का लाल रंग जिसे स्त्रियाँ पैर में लगाती हैं ।
उदा० केसर निकाई किसलय की रताई लिये
झाही नाहीं जिनकी धरत अलकत है ।
—हरिलाल

अलगार—वि० [फा० अलग़ारों] बहुत अधिक, ज्यादा ।
उदा० 'ग्वाल कवि' मंसा बिहार की अपार पार,
ह्वै रही सवार भौंर भीर अलगार पै ।
—ग्वाल

अलगारन—वि० [फा० अलगारों] १. बहुत अधिक, अतिशय, २. तेजी के साथ, तीव्र गति से ।
उदा० २. नरबर ढिग नौरंग खहँ मंडे ।
तहँ अलगारन धाइ पहूँचे ।
—लाल कवि

अलगु—संज्ञा, पु० [बु०] दोष, आरोप ।
उदा० जो कोऊ तुम्हरी कान्हर की ये बातैं सुनि पावें । तो या व्रज के लोग लुगाई सबरे अलगु लगावें ।
—बक्सी हंसराज

अलगोजा—संज्ञा, स्त्री [अ०] एक प्रकार की वंशी ।
उदा० अलगोजे बज्जत छिति पर छज्जत सुनि धुनि लज्जत कोइ रहैं । —पद्माकर

अलच्छी—संज्ञा, स्त्री० [सं० अ + लक्ष्मी] अलक्ष्मी, दरिद्रा, गरीबी ।
उदा० पिपासा चा ुधा चा ुद्र बीना बजावैं अलच्छी अलज्जी दुओ गीत गावैं । —केशव

अलप—संज्ञा, स्त्री० [देश] बहुत बड़ा संकट, दुर्घटना ।
उदा० पल पल पूंछत बिपल दृग मृग नैनी आये न कमल नैन, आई धौं अलप री ।
—देव

अलबेल—संज्ञा, पु० [हिं० अलबेला, सं अलभ्य] मन मौज, अल्हड़पन, लापरवाही ।
उदा० क्यों न आये कंत अलबेल में अलेल में ह्वै, रहे रिस-रेल में, कै बैठे भूप मेल में ।
—ग्वाल

अलस—वि० [सं० अ + हिं० लसना = शोभित होना] शोभाहीन, कांतिहीन, आकर्षणहीन ।
उदा० बने बहु बनक के, घने मनि कनक के,
अलस रवि छवि करै कलस कलकै ।
—देव

अलहन—संज्ञा, पु० [सं० अ + लभन] दुर्भाग्य, बुरा कर्म ।
उदा० आस धरें आली कति आधी रात ह्वै गई
पै अजहूँ न आए आली अपनो अलहनो ।
—सुन्दर

अलापना—क्रि० अ० [सं० आलापन] तान लगाना, गाना ।
उदा० कान ह्वै तान को रूप दिखावति जान जबै कछू लागै अलापन ।
—घनानन्द

अलाम—वि० [अ० अल्लामा] झूठा, असत्यवादी, प्रलापी, बात बनाने वाला ।
उदा० आपके कलाम को सलाम है अलाम राज ऐसे दगाबाज ते मिजाज मैं मिलावौ ना ।
— नंदराम

अलार—संज्ञा, पु० [सं० अलात] अलाव, आंव, आग का ढेर, भट्ठी ।
उदा० तान आन परी कान वृषभान नंदनी के-
तच्यो उर प्रान पच्यो बिरह अलार है ।
—रघुनाथ

अलि—संज्ञा, पु० [सं०] १. वृश्चिक राशि, २. विच्छू ३. भ्रमर ४. सहेली ।
उदा० १. सिंह कटि मेखला स्यों कुभ कुच मिथुन त्यों मुखवास अलि गुंजै भौहैं धनु सीक है ।
—दास

अलिक—संज्ञा, पु० [सं०] ललाट, माथा ।
उदा० किलकत अलिक जु तिलक चिलक मिस, भौंहनि में बिभ्रमनि भावभेद दीने हैं ।
—केशव
चिबुक उचाइ चारु पोंछति कपोलन अँगोछत, अलिक दोहू अलक दुधाही के ।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलिख्या—वि० [सं० अलेख] अलेख, अनगिनत अगणित ।
उदा० उत्तम गुन निधान, निर्गुन गुन-निधान, गुननि तिहारे बँधी औगुन अलिख्या हौं
— देव

अलीन—संज्ञा, पु० [सं० आलीन] द्वार के चौखट की खड़ी लकड़ी, दालान या बरामदे के किनारे का खम्भा ।
उदा० दौरत दरीन को अलीन की अलीन लगि कटि खीन होन लागी, चिन्ता चितभंग की ।
—ग्वाल

अलूला—संज्ञा, पु० [हिं० बुलबुला] बुलबुला २. मभूका ३. लपट ४. उद्गार
उदा० १. बानर बदन रुधिर लपटाने छवि के उठत अलूले । —हनुमान

अलेखन—क्रि० स० [सं० आलेखन] लिखना, चित्र बनाना ।
उदा० मंदिर की दुति यों दरसी जनु रुप के पत्र अलेखन लागी ।
—सोमनाथ

अलेखी—संज्ञा, स्त्री [सं० अ + लेखी = देवाङ्गना] राक्षसी, रजनीचरी, निशाचरी ।
उदा० लेखी मैं अलेखी मैं नहीं है छबि ऐसी औ, असमसरी समसरी दीबे कों परै लिये
—दास

अलेल—संज्ञा, स्त्री [देश] १. प्रचुरता, अधिकता २. अत्यधिक, अतिशय [वि०] ।
उदा० लोहू के अलेल में गलेल देत भूतभिरैं, रुंडन को प्रेत औ पिसाच सहचारी हैं ।
—चन्द्रशेखर
लोहू के अलेल गंग गिरजा गलेले देत, चोंथ चोथ खात गीध चर्बी मुख चोपरी ।
—गंग
२. खेलिके रंग अलेल चढ़ी छबि, कैसी लगै गहिं घूँघट आवन । —नागरीदास
कंचन की बेलि सी अलेल एक सुन्दरी ही अंग अलबेली गई गोकुल की गैले हैं ।
—ग्वाल

अलेली—वि० [हिं० अलेल] अत्यधिक, अतिशय
उदा० दीह दुति रेली अलबेली की अलेली अब, फैली दीप दीपन लौं झलक झरोखा तैं ।
—बेनी प्रवीन

अलै—संज्ञा पु० [सं० आलय] आलय, घर २. अलि, सखी ।
उदा० दूरि करौ मधु मालती चूरकै घेरे हैं जो दिसि चारि अलैकी । —रघुनाथ

अलोक—संज्ञा, पु० [सं० अ + लोक = यश] अपयश, कलंक, बदनामी ।
उदा० कैसो परलोक, नरलोक बरलोकनि मैं, लीनौं मैं अलोक, लोक लीकनि तैं न्यारी हौं ।
—देव
देवजू कौन गनै परलोक में लोक में—
आपु अलोक लिगारिये । —देव

अलोलिक—वि० [सं० + लोल] स्थिर, अचंचल ।
उदा० लोल अमोल कटाछ कलोल अलोलिक सों पट ओलि कै फेरे । —केशव

अलोकनि—संज्ञा, स्त्री [सं० अवलोकन] अवलोकनि, दृष्टि, आँख ।
उदा० प्रिया अलोकनि में निरखि, पीक अरुन बर जोति, तन दीपति दिन दीप सब, सब सौतिन ही होति । —मतिराम

अल्लाना—क्रि० अ० [सं० अर = बोलना] चिल्लाना, बोलना ।
उदा० राम कहै चकित चुरैलैं चहुँ अल्लैं, त्यों खबीस करि भल्लै चौहैं चकित मसान को ।
—राम कवि

अवगरी—वि० [प्रा० अवगर, सं० अप + कृ] अपकारी, अहित करने वाला ।
उदा० आवन दै होरी धीरी रहि ।
कहा नचावति मोहन अवगरी लैहौं दाव भावतो गहि । —घनानन्द

अवधि—वि० [सं०] १. अत्यंत, बहुत ही २. सीमा, हद (संज्ञा) ।
उदा०
तो तन अवधि अनूप रुपु लग्यौ सब जगत को ।
मो दृग लागे रूप, दृगन लगी अति अटपटी ।
—बिहारी

अवर—संज्ञा, पु० [सं० आमलक] १. आँवला, २. निम्न, अधम ।
उदा० बेल मति कीजे सिरसाबित तिहारे चूक-बास मैन पैहै अवर रत बिहाल है ।
—नंदराम

अवरेख—संज्ञा, पु० [सं० अवलेख] १. चित्र, २. शोभा. सौन्दर्य ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० को है वह देखि महा मोहनी को भेख धरैं नखसिख देव-देवता को अवरेख सों ।
—देव

अवरेखना—क्रि० स० [सं० अवलेखन] १. अनुमान करना, सोचना, कल्पना करना २. देखना ३. लिखना, चित्रित करना, ४. मानना ।
उदा० १. आखैं मिली न मिली सखियाँ मिलि बोई सु केशव क्यों अवरेख्यो । —केशव

अवरोहना—क्रि० स० [सं० अवरोधन] रोकना, छेकना, घेरना, पकड़े रहना २. खींचना चित्रित करना ।
उदा० कौन जाने को ही उड़ि लागी डीठि मोही उर रहै अवरोही कोई निधि ही निकाई की ।
—देव

अवलच्छ—वि० [सं० अपलक्ष] गायब, दिखाई न पड़ना ।
उदा० पच्छ बिन गच्छत प्रतच्छ अंतरिच्छन में, अच्छ अवलच्छ कला कच्छनन कच्छे हैं ।
—पद्माकर

अवलेप—संज्ञा, पु० [सं०] गर्व, अभिमान ।
उदा० गुसादिक षट-भेद ये, तजि कुल गलि अवलेप, नाम समान बिचारिये, उदाहरे संछेप ।
—देव

अलोना—वि० [सं० अ + लावण्य] लावण्य रहित, आकर्षणहीन, नीरस, फीका, बेमजा ।
उदा० कौ लगि अलोनो रूप प्याय प्याय राखौं नैन, नीर देखें मीन कैसे धीरज धरतु है ।
—केशव

अवगाहना—क्रि० अ० [सं० अवगाहन] सोचना, विचारना ।
उदा० मेढ़ो कैरी काजरी पियरि बौरी भूरी चारु बलही मँजीठी बन बेला अवगाहिनै ,
—आलम

अवलोचना—क्रि० स० [सं० आलंचन] दूर करना ।
उदा० को चैत को इह चाँदनी तें अलि याहि निबाहि बिथा अवलोचै । —पद्माकर

अवाची—संज्ञा, स्त्री० [सं०] दक्षिण दिशा ।
उदा० प्राची प्रतीची अवाची बिलोकि दसो दिसि होत ही कूच कुचैनी । —गंग

अवाद—वि० [सं० अ + वद्य] अनवद्य, निर्दोष, अनिंद्य, पवित्र ।
उदा० है अधरा मैं मिठाई अवादन, आवै सवाद सुधा सने कंद मैं । —ग्वाल

अवेज—संज्ञा, पु० [अ० एवज़] प्रतिकार, बदला ।
उदा० मारग में गज में चढ़ो जात चलो अँगरेज ।
कालीदह बोर्‌यो सगज लिय कपि चना अवेज
—रघुराज

असंगत—वि० [सं० अशंक] १. अशंकित निडर, निर्भय, २. अनुचित, ३. अयुक्त, बेठीक ।
उदा० मुरली सुनत बाम काम जुर लीन भई धाई धुर लीक तजि, बीधी विधुरनि सों , पावस नदी सी गृह पावस न दीसी परै उमड़ी असंगत तरंगित उरनि सों ।।
—देव

असकंध—संज्ञा, पु० [सं० स्कन्ध] स्कन्ध, काण्ड, अध्याय ।
उदा० सुर ज्ञान जु ध्यान मुनिन्दनि कै बरन्यो असकंध दुआदस । —आलम

असकना—क्रि० अ० [हिं० अ (अ० का आगम) + सकाना = भयभीत होना] भयभीत होना, डरना
उदा० पैज करी, क्रुद्ध चल्यौ रामानुज सुद्ध सुनि, जुद्ध को पयान मघवान असकत है ।
—समाधान

असमसरी—संज्ञा, स्त्री, [सं० असमशरी] काम देव की स्त्री, रति ।
उदा० लेखी मैं अलेखी मैं नहीं है, छवि ऐसी और असमसरी कीबे को परै लियै ।
—दास

असरार—क्रि० वि० [हिं० सरसर] निरन्तर, लगातार, धारा प्रवाह, बेरोक ।
उदा० अति सुन्दर अँखियन में अँसुवा उमंगि चले असरारा —बक्सी हंसराज

असावरी—संज्ञा, पु० [१] एक प्रकार का रेशमी वस्त्र, २. रुपहली साड़ी ।
उदा० १. सारी असावरी की झलकै, छलकै छबि घांघरे घूम घूमारे । —देव
२. सुन्दरी क्यों पहिरति नग भूषन असावली
—दास
असावरी मानिक कुंभ सोभै असोकलग्ना बन देवता सी । —केशव

असु—संज्ञा, पु० [सं०] प्राण, चित,
उदा० दरस देखाइ रुप नैन में बसाइ हिय मूरति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लसाइ कै मिलाइ लीन्हों असु है ।
—रघुनाथ

असुरंगा—संज्ञा, पु० [सं० असुर], असुर राक्षस, यमराज ।
उदा० ताही कौ सुजस लोक लोकनि के ओकनि में, सोकनि के थोकनि कौ देत असुरंगा है ।
—सूरति मिश्र

असैली—वि० [सं० अ + शैली] कुढंगी, अनुचित कुमार्गी ।
उदा० हैली हिम रितुह में निरखि असैली रीति, फैली अंग अंगनि में गरमी लवंग की ।
—सोमनाथ

असोस—वि० [सं० अशोष्य] न सूखने योग्य ।
उदा० गोपिन के असुँवनि भरी सदा असोस अपार डगर डगर नै ह्वै रही बगर बगर के बार ।
—बिहारी

असौज—वि० [हिं० असूझ] अँधेरा, अँधकारमय २. कठिन, विकट ।
उदा० सुनि उद्धव श्री व्रज राज बिना हमकौ सु असौज असौजत है ।
—सूरति मिश्र

असौजना—क्रि० स० [हिं० असूझना] आर-पार दिखाई न पड़ना, अँधकार मय प्रतीत होना ।
उदा० सुनि उद्धव श्री ब्रजराज बिना हमकौं सु असौज असौजत है । —सूरति मिश्र

असौंध—संज्ञा पु०[अ + हिं० सुगंध] दुर्गंध, बदबू ।
उदा० जँह आगम पौनहि को सुनिये । नित हानि असौंधहि को गुनिये ।
—केशव

अस्फी—संज्ञा, पु० [फा० अस्प + ई] घुड़सवार, अश्वारोही ।
उदा० सु अस्फी घने दुंदुभी हैं धुकारे ।
—पद्माकर

अहकना—क्रि० अ० [हिं० अहक, सं० ईहा] प्रबल कामना या इच्छा करना, लालायित होना, लालसा करना ।
उदा० लीन्हीं सुधि नाहिं अजौं कोर करुना की चितै, कितै रहें बितै दिन, गोपी गिन अहकी । —हफीजुल्ला खां के हजरा से

अहटाना—क्रि० अ० [हिं० आहट] आहट मिलना पता चलना ।
उदा० और ठौर कहूँ टोहेहू न अहटाति है ।
—आलम

अहिताई—संज्ञा, स्त्री, [सं० अहि] सर्प का गुण, सर्पवत् व्यवहार, कुटिलता ।
उदा० क्यों अहिताई गहो हमसे कवितोष रहै कहुँ मान मिताई । —तोष

अहूं—संज्ञा, पु० [सं० अहंकार] अहंकार, गर्व घमंड ।
मानु तजौरी पुकारि पिकी कहै, जोबन की करिबे न अहूँ है । —देव

अहूँदना—क्रि० स० [हिं० अहुटाना?] हटाना भगाना, दूरकरना ।
उदा० भौरनि अहूँ दैं जग सुन्दरता रुदैं मनौं, मकरंद बूँदै अरबिन्द पै तें बरसैं ।
—सोमनाथ

अहू—संज्ञा, पु० [फा० आहू] मृग ।
उदा० अहू हूरिनन में मिलत अद्धद्धसत सु अद्ध ।
—पद्माकर

अहूख—वि० [?] अरुचिकर फीका, दुखद, पीड़ा उत्पन्न करने वाला ।
उदा० ऊख पियूख मयूखनि हूखनि, लाग अहूख लखै सुर रुखै । —देव

अहूत—वि० [सं० आहूत] निमंत्रित, बुलाये गये, आमंत्रित ।
उदा० आई मन भाई सो अकेली बन कुंजन में, आइ गये लाल मानौ मदन अहूत री ।
—बेनी प्रवीन

अहूल—वि० [सं० अ + शूल] १ शूल रहित, पीड़ा रहित, आनन्दमय, सुखद २. अनिंद्य ।
उदा० १. कूल है नदी को प्रतिकूल है गुमान री, अहू लहै सु तौन जौन जौवन अहूल है ।
—देव

अहोमनि—संज्ञा, पु० [सं० अहोमणि] सूर्य, दिनमणि ।
उदा० केतिक और अहोमनि होति, जहाँ छवि कोटि अहोमनि की हृत । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आ

आँक—संज्ञा, पु० [सं० अंक], अंक, शरीर ।

उदा० गोरे आँक थोरे लाँक थोरी बैस भोरी—मति, घरी घरी और छबि अंग अंग मैं जगै । ——आलम

आँकि—संज्ञा, स्त्री० [सं० अंक] समता, बराबरी ।

उदा० तेरी सी आँकि तुही नहि आनत काम की कामिनि तो सिरदच्छी । ——गंग

आँकुर—संज्ञा, पु० [सं० अंकुश] अंकुश ।

उदा० सौक सांकरनि नहि गुनत आंकुरनि को, मनहु मैनाक जल निधि हिलोरै । ——देव

आँग——संज्ञा, पु० [सं० अंग] छाती, स्तन, उरोज ।

उदा० कहै पद्माकर क्यों आँग न समात आँगी । ——पद्माकर

आँगना——क्रि० स० [हिं० अँगवना, सं० अंग] सहन करना, बर्दाश्त करना ।

उदा० कहि कबि गंग ऐसे पिय सों बियोग, मोसी सखी सों उदेग सब एकै बेर आँगई । ——गंग

आँगी——संज्ञा, स्त्री० [सं० अंगिका] अँगिया, चोली, कंचुकी ।

उदा० कहै पद्माकर क्यों आँग न समात आँगी । ——पद्माकर

आँट—संज्ञा, स्त्री० [हिं० अंटी] दबाव, दाँव २. बैर, लाग-डाँट ।

उदा० आँटे परि प्रानन हरैं काँटे लौं लगि पाय । ——बिहारी

आँदू——संज्ञा, पु० [सं० अंदू] बाँधने की जंजीर, लोहे की बेड़ी ।

उदा० कुंजर से दृग तेरे भट्ट ! गुन के गुन माल जरेई रहैं ।

(क) खून करैं सब 'आलम' को फिर लाज के आँदू परेई रहैं । ——आलम

(ख) अंजन आँदू सौं भरे, जद्यपि तुव गज-नैन । ——रसनिधि

आँन——संज्ञा, स्त्री० [फा० आन] छवि, छटा शोभा ।

उदा० जिरम आंनरस रंग बिन, तजि कुडोल छंद भंग । लीजै कविता रतन मैं, संग ढंग अरु रंग । ——नागरीदास

आँबरी——संज्ञा, पु० [सं० आमलक] आँवला ।

उदा० आँब छाँडि आँबरी को काहे लागि छीयै कोऊ, छीर छांड़ि छाछ पीए खोई खाए खाइगे । ——गंग

आँवदनी——संज्ञा, स्त्री० [फा० आमद] आगमन, अवाई, आना ।

उदा०——जानि के आँवदनी बर की चित चाइनि सों तित ही करिकै रुख । ठाढ़ी भई मिलि कै तिय गाँउ की नाथ बरात को देखन कों सुख ।। ——सोमनाथ

आँवदनी सुनि चंदमुखी बनि कै निजु कों रति ते जितवैरी । ——सोमनाथ

आँवरे——संज्ञा, पु० [सं० आमलक] आँवला, एक प्रकार का कसैला फल ।

उदा० कहै पद्माकर अंगूर ऐसे आँवरे से फूलत फुलौरी से फुलिग के तमासा से । ——पद्माकर

आँसलो—वि० [हिं० आंस, सं० काश] वेदना-युक्त, वेदना वाला, पीड़ा उत्पन्न करने वाला ।

उदा० पटक्योई परै यह अंकुर आँसलो ऐसी कछू रसरीति धुरी । ——घनानन्द

आँसी— संज्ञा, स्त्री० [सं० अंश] १.बैना, वह मिष्ठान्न जो इष्ट मित्रों में बाँटा जाता है । २. अंश, हिस्सा ३. टुकड़ा

उदा० १. काम कलोलनि मैं मतिराम लगैं मनौ बाँटन मोद की आँसी । ——मतिराम

२. नारि कुलीन कुलीननि लै रमै मैं उनमैं चहौं एक न आँसी । ——दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

३. गाँसी ऐसी आँखिन सों आँसी आँसी कियो तन फाँसी ऐसी लटनि लपेटि मन लै गई । ——गंग

अटपट—संज्ञा, पु० [अनु०] कठिनाई, मुश्किल ।

उदा० सेनानी के सटपट चन्द्र चित चटपट, अति अति अटपट अंतक के ओक के । ——केशव

आई——संज्ञा, स्त्री० [सं० आर्या] अइया, वृद्ध दासी

उदा० धाइ नहीं घर, दासी परी जुर, आई खिलाई की आँखि बहाऊँ । ——केशव

आउड़े——वि० [सं० आकुंड] १. उमड़ता हुआ २. गंभीर, गहरा ।

उदा० भरे गुण भार सुकुमार सरसिज सार शोभा रूप सागर अपार रस आउड़े । ——देव

आकना——क्रि० स० [हिं० आँकना] बताना, आँकना ।

उदा० चाह्यौ चल्यौ कहि तोष सुप्रीतम ती हिय के दुख जात न आके । ——तोष

आकर—वि० [सं०] तलवार चलाने में चतुर, प्रवीण ।

उदा० चौहान चौदह आकरे । धंधेर धीरज धाकरे । ——पद्माकर

आकसपेचा——संज्ञा, पु० [फा० इश्केपेचाँ] इश्कपेचा नामक पुष्प, एक बेल जो पेड़ों पर लिपट जाती है ।

उदा० आकसपेचा माल गुहि पहिराई मो ग्रीव । हूँ निहाल बलिमा करी दासी जानि क जीव । ——मतिराम

आकूत——संज्ञा, पु० [सं०] अभिप्राय, किसी वस्तु का आशय जहाँ चेष्टा सहित समझाया जाय ।

उदा० जानि पराये चित की ईहा जो आकूत होय जहाँ सूच्छम तहाँ, कहत सुकवि पुरहूत ——मतिराम

आखना——क्रि० स० [सं० आख्यान] १. कहना, २. चाहना ।

उदा० बानी मुनि दूती की जिठानी तैं सकानी बाल, सोचि रही ऊतर उचित कौन आखियै ——सेनापति

आगिया——संज्ञा, पु० [?] खद्योत्, जुगनू नामक कीड़ा ।

उदा० कहाँ भान भारौ कहाँ आगिया बिचारौ कहाँ, पूनौ को उजारौ कहाँ मावस अँधेर है । ——भूधरदास

आगौ——वि० [सं० अग्र] बढ़कर, आगे ।

उदा० जीव की बात जनाइयै क्यौं करि जान कहाय अजानति आगौ । ——घनानंद

आगौनी——संज्ञा, स्त्री० [बुं०] १. आतिशबाजी, २. अगवानी ।

उदा० १. अति उमेद बाढ़ी उर अन्तर आगौनी मनमानी । ——बक्सी हंसराज

आजना——क्रि० अ० [?] बिछाना ।

उदा० पदकमय मंडल मनोहर मृदुल आसन आजि रुपरासि किसोर दोऊ दिपत बैठि विराजि । ——घनानन्द

आजि——संज्ञा, पु० [सं०] लड़ाई, संग्राम, युद्ध

उद० सुनु मैथिली नृप एक को लव बाँधियो वर बाजि । चतुरंग सेन भगाइ कै सब जीतियो वह आजि । ——केशव

आजिबिराजिन——संज्ञा, पु० [सं० आजि = युद्ध + विराजी = शोभित] शूर, वीर ।

उदा० सुनिये कुल भूषन देव विदूषन । बहु आजि-बिराजिन के तम पूषन । ——केशव

आठहुं गाँठ——क्रि० वि० [सं० अष्ट ग्रंथि] सब प्रकार से, भली भाँति, शरीर की आठ गाँठें ।

उदा० मायी पियै इनकी मेरी माइ को हैं हरि आठहुँ गाँठ अठाये । ——केशव

आड़बँद——संज्ञा० पु० [हिं० आड़ + बंध] कमर कसने का कपड़ा, पेटी, फेंट, पटुका, कमर बंद ।

उदा० कसि कसि कटि सों बाँध आड़ बँद मुर खंजरी बजावै । ——बक्सी हंसराज

आड़िली——संज्ञा, स्त्री० [हिं० अड़ या आर] हठ, जिद्, आग्रह ।

उदा० फूलनि के भूषन सजत ब्रज भूषन, तजत प्यास भूषन, अनोखी उर आड़िली । ——देव

आढ़ना——क्रि० स० [सं० अलू = वारण करना] आड़ना, रोकना, छेंकना, पकड़ना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० झिझकत झूमत मुदित मुसुकात गहि,
अंचल को छोर दोऊ हाथन सो आढ़ों है ।
—पद्माकर

आततांई—संज्ञा, पु० [सं० आततायिन] १. आग लगाने वाला २. विष देने वाला ।
उदा० बरनि बताइ, छिति- ब्यौम की ततांई जेठ
आयौ आततांई पुटपाक सौं करत है ।
—सेनापति

आतमभूत—संज्ञा, पु० [सं० आत्म भू] कामदेव, मदन, रतिपति, काम-वासना ।
उदा० सुन्दर मूरति आतम भूत की जारि धरीक में छार कियो है । —केशव
बहु भाँतिन हारि सिखाय सबै सखि, आतम भूत के दूत घने । —द्विजदेव
आसन मारे बैठि सब जारि आतमाभूत
—जायसी

आतस—संज्ञा, स्त्री० [फा० आतिश] पावक, अग्नि, आग ।
उदा० ज्यों छिन एक ही में छुटि जाति है आतस के लगे आतसबाजी । —पद्माकर

आदरस—संज्ञा, पु० [सं० आदर्श] शीशा, दर्पण ।
उदा० दोइ सौतै ठाढ़ी जहाँ तहाँ प्राणप्यारो आयो आपु आदरस एक लीन्हे बड़े ओज को ।
—रघुनाथ

आनक—संज्ञा, पु० [सं०] नगाड़ा, दुंदुभी, डंका ।
उदा० आनक की झनक अचानक ही कान परी
देव जू सुनत बसही के सुध काज सों
—देव

आना—संज्ञा, पु०, [सं० अर्ण] जल, पानी ।
उदा० दशरथ के राम, औ स्याम के समर जैसे, ईस के गनेस औ कमल पत्र आना के ।—गंग

आबरखोर—संज्ञा, पुं० [फा० आबरखोरा] गिलास, २. प्याला, कटोरा ।
उदा० आबरखोरे छीर के जमाये बर्फ चीर के, सु बंगले उसीर के, भिजे गुलाब नीर के ।
—ग्वाल

आप—संज्ञा, पु० [सं०] १. रस २. जल ।
उदा० १. अच्छर हैं विशद करति उर्ध आप सम जातैं जगत की जड़ताऊ बिनसति है ।
—सेनापति

आभासमनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० आभास = असत्य + मनि = मणि रत्न] नकली रत्न ।
उदा० जाकी सुभदायक रुचिर, करते मनि गिरि जाइ । क्यों पाए आभासमनि होइ तासु चित चाइ । —दास

आभिर—संज्ञा, पु० [अ०] हुक्म चलाने वाला ।
उदा० नव नागरि तन-मुलुकु लहि जोबन आभिर जौर । —बिहारी

आयसु—संज्ञा, पु० [सं० आयस] १. लोहे का कवच २. आदेश, आज्ञा ।
उदा० आयसु को जोहैं आगे लीन्हे गुरुजन गन, बस में करति जो सुदेस रजधानी —दास

आर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० आड़,] तिलक, टीका
उदा० केशर आर दिये सुकमारिय । मैन मई झलकै नवनारिय । —बोधा

आरबी—संज्ञा, पु० [सं० आरव] भीषण शब्द, गर्जना ।
उदा० कोट गढ़ गिरि ढाहैं जिनकौं दुरग ना हैं बलकी अधिक छवि आरवी सहित है ।
—सेनापति

आल—संज्ञा, स्त्री० [सं० आलि] पंक्ति, समूह ।
उदा० रतिहू तें नीकी प्यारी प्यारे कान्ह जाके पाछे बेनी की बनक डोलैं मानो अलि आलसी ।
—आलम

आलमतोग—संज्ञा, पु० [फा० आलम = झंडा + तोग, पताका] झंडा और पताका ।
उदा० आनि लियो उन आलम तोग भाजे लाज मरैगो लोग । —केशव

आरम्भ—संज्ञा, पु० [सं०] प्रथमोत्थान, उठान ।
उदा० रंभाऊ न भावै ऐसे रुप को आरम्भ देखि, सोभित सरीर मधि आभा आभरन की ।
—आलम

आरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० आला] ताक, ताखा, अरवा २. ओर, तरफ [सं० आर]
उदा० विछवाए पौरिलौ बिछौना जरीबाफन के बखाये दीपक सुगंध सब आरी में ।
—रघुनाथ

आरे—संज्ञा, पु० [हिं० आला] ताखे, आले ।
उदा० आरे मणि खचित खरे, बासन बहु वास भरे, राखित गृह गृह अनेक, मनहु मैन साजै । —केशव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आरौ—संज्ञा, पु० [सं० आरव] आरव, शब्द, आहट ।
उदा० दूरितें आय दुरै हो दिखाय अटा चढ़ि जाय गह्यौ तहाँ आरौ । —रसखानि

आलकस—संज्ञा, पु० [सं० आलस्य] सुस्ती, आलस्य ।
उदा० जृम्भाहू को जानिये, सात्विक भावन माँह होत आलकस आदिते, बरनत हैं कबि नाँह । —बेनी प्रवीन

आला—वि० [अ] १. उत्तम, बढ़िया, श्रेष्ठ २. गौखा, ताखा ।
उदा० सोने की अँगीठिन में अगिन अधूम होय, होय धूम धार हू तौ मृगमद आला की । —ग्वाल

आली—संज्ञा, स्त्री० [पहा०] क्यारी, चार बिस्वा के बराबर खेत ।
उदा० आली चंदन की न क्यों पाली माली कूर । —दीनदयाल

आले—वि० [सं० आर्द्र] १. गीला, आर्द्र, २. उत्तम, अधिक [अ०] ।
उदा० १. आड़े दै आले बसन जाड़ेहू की रात, साहस कै कै नेह बस सखी सबै ढिग जात

आवज—संज्ञा, पु० [हिं० आवझ] बाजा विशेष, ताशा ।
उदा० बहुबंदी जन पढ़त बिरद बज्जत आवज साज घन । तिहि समैं मुहूरत जानि कै लग्यौ सिंहासन पै चढ़न । —सोमनाथ

आवरे—वि० [?] दीन, शिथिल ।
उदा० औसर न सोचैं घनआनंद बिमोचै जल लोचैं वही मूरति अरबरानि आवरे । —घनानन्द

ऊषमा विषम विषमेखु स्वेद विंदु चुवै अधर-न आवरे सुमन सर साधी सी । —देव

आवस—संज्ञा, स्त्री० [हिं० औस] औंस, भाप ।
उदा० अन्तर-आँच उसास तचै अति, अंग उसीजै उदेग की आवस । —घनानन्द

आशय—संज्ञा, पु० [सं०] १. कोष्ठागार, विभव २. तात्पर्य ।
उदा० १.दीरघ मत सतकबिन के अर्थाशय लघुतर्ण कवि दूलह याते कियो कबि कुल कंठाभर्ण —दूलह

आशीविष—संज्ञा, पु० [सं०] सर्प, सांप ।
उदा० आशीविष दोषन की दरी । गुण सत पुरुषन कारण छरी । —केशव

आस—संज्ञा, पु० [सं० असु] असु, प्राण, जीव
उदा० मनो कर जोर पाँचो तत्व एक ठौर ह्वै के आस लेने आपने को धाये चहुँ ओर तें —रसलीन

आसा—संज्ञा, पु० [अ० असा] डंडा, सोने चाँदी का डंडा जिसे बरात आदि में चोबदार शोभा के लिए ले कर चलते है ।
उदा० आप कहूँ आसा कहूँ तसबी कहूँ कितेब । —बिहारी

माँगत है भीख औ कहावे भीख प्रभु हम धरे याकी आसा याकों आसा धरे देखिये —दास

आसार—संज्ञा, पु० [सं०] वृष्टि, वर्षा २. चिह्न, लक्षण [अ०] ।
उदा० आनँद पयोद सु बिनोद आसार बल मधुर रसनिधि तरंगनि बिराजत उगचि । —घनानन्द

आसिलो—संज्ञा, पु० [अ० वसीला] जरिया, बहाना ।
उदा० कहि धौं कछू आसिलो भयौं । कै काहू बन जीवन हयौं । —केशव

आसना—संज्ञा, स्त्री० [फा० आशना] प्रेमिका, नायिका ।
उदा० मध्य रस सिंधु मानौं सिंहल तैं आई वह तेरी आसनाउ गुन गहौ तीर आई है । —सेनापति

आहन—संज्ञा, पु० [फा०] लोहा ।
उदा० आहिन जाति अहीर अहौ तुम्हें कान्ह कहा कहौ काहू की पीर न । —देव

आहु—संज्ञा, पु० [सं० आहव] साहस, हिम्मत ।
उदा० रह्यो राहु अति आहु करि मनु ससि सूर समेत । —बिहार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इंगवै—संज्ञा, पु० [?] शूकर दन्त ।
उदा० बंक लगे कुच बीच नखच्छत देखि भई दृग दून लजारी । मानो वियोग बराह हन्यो युग शैल की संधिन इंगवै डारी । —केशव

इंडुरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० कुंडली] कपड़े की गोलाकार गद्दी जिसे पानी के घड़े या बोझ आदि के नीचे रख लिया जाता है ।
उदा० गागरि डारि भजे इंडुरी गहि काँकरि डारत औसर लै हो । —आलम
आई संग आलिन के ननद पठाई नीठि, सोहति सुहाई सीस ईडुरी सुपट की । —पद्माकर

इंदरा मंदिर—संज्ञा, पु० [सं० इंदिरा-मंदिर] लक्ष्मी का गृह, कमल ।
उदा० देवजू इंदिरा मंदिर की नव सुंदरि इंदरा-मंदिर नैनी । —देव

इंदु उपल—संज्ञा, स्त्री० [सं०] चन्द्रकांतमणि,
उदा०
इंदु उपल उर बाल कौ, कठिन मान में होत । देखे बिन कैसें द्रवै, तो मुख इंदु उदोत । —मतिराम

इन्दुनंद—संज्ञा, पु० [सं० इन्दु=चंद्रमा + नंद =पुत्र=बुध] बुध, एक ग्रह विशेष ।
उदा० मनै रघुनाथ किधौं मेरुकंदरा में चंद, कैधौं भानु गोद में बिराजो इन्दुनंद री । —रघुनाथ

इंदुमनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० इन्दुमणि] चन्द्रकांतमणि नामक एक मणि जो चन्द्र प्रकाश में द्रवित होती है ।
उदा० इंदुमनि मंदिर महालय हिमालय ते ऊँची रुचि, करतु सुमेरु सानु भानु तर । —देव

इकंक—कि० वि० [हिं० एक + आंक] पूर्ण-रूपेण, निश्चय ।
उदा० घटती इकंक होन लागी लंक बासर की । केस तम बंस को मनोरथ फलीनभो । —दास
राम तिहारे सुजस जग, कीन्हों सेत इकंक । —दास

इकचक—संज्ञा, पु० [सं० एक चक्र] सूर्य, रवि ।
उदा० स्रवन मैं हाथ कुंडलाकृति धनुष बीच, सुंदर बदन इकचक लेखियत है । —सेनापति

इकठां—संज्ञा, पु० [हिं० एक + ठाँव=स्थान] एक स्थान, एक जगह ।
उदा० भूलि सबै सुधि खेलन की, न घरीक कहूँ एकठां ठहराति है । —सोमनाथ

इकतो—वि० [सं० एक] अद्वितीय, बेजोड़ एक ही ।
उदा० काछ नयौ इकतौ बर जेउर दीठि जसोमति रांज कर्‌योरी । —रसखानि

इकलाई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० + लाई या लोई=पत्त] चादर, एक पाट का महीन दुपट्टा ।
उदा० पाय दियौ चलिबै को उतैं सिर तैं इकलाई गिरी रँगसानी । —सोमनाथ

इकलास—वि० [सं० एकरस] समान, एक ढंग का ।
उदा० कूबरी-कान्हर को इकलास कियो सबही विधि खूब है अल्ला । —ठाकुर

इकहाऊ—क्रि० वि० [सं० एक + हिं० हाई, प्रत्य] एक बारगी, एक साथ, अचानक ।
उदा० त्यों पद्माकर झोरी झमाइ सु दौरीं सबै हरि पै इकहाऊ । —पद्माकर

इकौंसे—वि० [सं० एक + आवास] अकेले ।
उदा० सौतिन तें पिय पाय इकौंसे भरे भुज सोच-सकोच निवारे । —घनानन्द

इचनि—संज्ञा, स्त्री० [?] आकर्षण, खिचाव ।
उदा० नीकी नासा पुट ही की उचनि अचंभे भरी, मुरि कै इचनि सों न क्यौंहू मन तें मुरै । —घनानंद

इजाफा—संज्ञा, पु० [अ० इज़ाफ़ा] वृद्धि, बढ़ती ।
उदा० ग्वाल कवि कहै प्याला, बाला ये दुहून ही में, सबही ने जान्यौ ठीक आनँद इजाफा सौ । —ग्वाल

इजार—संज्ञा, पु० [फा० इज़ार] पायजामा, सूथना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० घेरदार पांइचे, इजार कीमखापी —ग्वाल

इड़ियाना—क्रि० अ० [हिं० अड़ियाना] हठ करना, अड़ना ।

उदा० रस के निधान बसकरन बिधान कहौ,
आज इड़ियाने छिड़ियाने कैसे डोलौ हौ ।
—ठाकुर

इतमाम—संज्ञा, पु० [अ० एहतमाम] प्रबन्ध, इन्तजाम ।

उदा० तिलक छरी गहि कनक की, त्यौंरी तेज जसोल । करत अनख इतमाम कौं पिय नहि सकैं सकोल । —नागरीदास

इतिमान—संज्ञा, पु० [अ० इहतिमाम] इन्तजाम, प्रबन्ध, व्यवस्था ।

उदा० भारी दरबार भर्‌यौ भौंरन की भीर बैठ्‌यौ मदन दिवान इतिमाम काम काज को ।
—पंडित प्रवीन

इलबेस—संज्ञा, पु० [अ० इल्बास] पहनावा, वेश ।

उदा० रेसमी रखत इलबेस सी सुदेस किये,
देखि देस देस के नरेस ललचात हैं ।
—गंग

इलाम—संज्ञा, पु० [अ० ऐलान] हुक्म, आज्ञा, इश्तिहार ।

उदा० ठान्यो न सलाम मान्यो साहि को इलाम धूम धाम कै न मान्यो रामसिंहहू को बरजा ।
—भूषण

इषुधी— संज्ञा, पु० [सं० इषु = बाण + धि = धारण करना ।] तूणीर, तरकश

उदा० नेकु जहीं दुचितो चित कीन्हो ।
सूर तहीं इषुधो धनु दीन्हो ।
—केशव

ई

ईचनि— संज्ञा, पु० [सं० ईक्षण] आँख, नेत्र ।

उदा० कालिहिहि नीठि कठोर उठे कुच ईचनि सों ठनि कै निठुराई । — देव

ईछा—संज्ञा, स्त्री० [सं० इच्छा]इच्छा, कामना

उदा० भोर कठोर हियो करि के तिय सों पी बिदा भौ बिदेस के ईछे । —पजनेस

ईछी—संज्ञा, स्त्री० [सं० इच्छा] इच्छा, कामना, अभिलाषा ।

उदा० भेष भयो विष भावे न भूषण, भूख न भोजन को कछु ईछी । —देव

ईछु—संज्ञा, स्त्री० [सं० ईक्षु] ईख, गन्ना ।

उदा० दाखऊ माखनऊ मिसिरी मधु ईछु मिलै किन आजु उबीठो । —देव

ईठि— क्रि० वि० [सं० इष्टि] १. यत्न पूर्वक अच्छी तरह, चेष्टा पूर्वक २. मित्रता, दोस्ती ३. सखी (संज्ञा, स्त्री०)

उदा० १. सखियाँ कहैं सु साँच है लगत कान्ह की डीठि । कालि जु मो तन तकि रह्यो उभरयो आजु सो ईठि ।
— दास

३. याको अचंभो न ईठि गनो इहि दीठि को बाँधिबो आवै घनेरो । — दास

ईनो— संज्ञा, स्त्री० [प्रा० ईड = स्तुति] १. स्तुति, प्रशंसा २. प्रार्थी, अभिलाषी [प्रा० ईण]

उदा० बैठी मृग छाला सी दुलीचियै बिछाइ बाला माला मुकुता को धरे ध्यान अब ईनो है ।
— तोष

रति मांगी तुमते करी ईड़ा । —सबलसिंह

ईहा— संज्ञा, स्त्री० [सं० इच्छा] इच्छा, कामना, अभिलाषा ।

उदा० जानि पराये चित्त की, ईहा जो आकूत ।
—मतिराम

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उ

उकढ़ना—क्रि० अ० [प्रा० उक्कडिढय, सं० उत्कर्षित] निकलना, आगे बढ़ना ।

उदा० यह कहि तुरंग कुदाइ आगे उकढ़ि अरि-गन में गयौ । —पद्माकर

उकताना—क्रि० अ० [सं० आकुल] १. जल्दी करना, जल्दीबाजी करना २. ऊबना ।

उदा० १.कह ठाकुर क्यों उकताव लला इतनी सुनि राखिय मों पहियां । —ठाकुर

उकर—संज्ञा, पु० [अ० उक्लः] बाँध, बँद, मर्यादा प्रतिष्ठा २. बड़ाई ।

उदा० १. ग्वाल कवि कहै एक घाटौ तो जरुर मोमें गोबर न थाप्यो, औ न खोयौ मैं उकर है । —ग्वाला

२ भनै समाधान ऐसो पौन को कुमार गिरि द्रोन को लियायौ ताकी कौन सी उकर को । — समाधान

उकराइन—वि० [बु०] हैरान, परेशान ।

उदा० ठाकुर कहत उकराइन भई हौं सुनि, सुनि कै उराहनोजी हो रहो अधरको —ठाकुर

उकसनि—संज्ञा, स्त्री०[हिं० उकसना] १.उभाड़, छाला उठने की क्रिया २. ददोरा ।

उदा० १. रहसि रहसि हँसि हँसि कै हिंडोरे चढ़ी लेति खरी पैगै छबि छाजै उकसनि में । अज्ञात

२. दृग लागे तिरछे चलन, पग मन्द लागे, उर मैं कछूक उकसनि सी कढ़ै लगी । — रस कुसुमाकर से

उकास संज्ञा, स्त्री० [बु०] फुरसत, छुट्टी ।

उदा० बासर उसासनि सो औसरौ न पावै पलु, निस अँसुवनि सों न नेकुहू उकासु है । — आलम

उकासना—क्रि० स० [हिं० उकसाना] ढीली करना, खोलना ।

उदा० पहिरति हेरति उतारति धरति देव दोऊ कर कंचुकी उकासति कसति है । — देव

उकीरे—वि० [सं० उत्कीर्ण] खुदे हुए, उत्कीर्ण, छपा हुआ ।

उदा० दाम ही के बीरे हैं कि विद्रुम उकीरे हैं कि किधौं बरबंधु बर बंधुक प्रभा के हैं । — केशव

चित्र मैं चितेरी है कि सुन्दर उकेरी हैं की जंजीरनि जेरी है । ज्यो घरी लौ भरतु है । —सुन्दर

उखटना—क्रि० अ० [हिं० उखड़ना] उखड़ना, पैरों का लड़खड़ाना ।

उदा० नैन द्रवै जलधार ह्वै, उखटत लेत उसांस रैन अँधेरी डोलि हौं, गावत जुगल उसास । — नागरीदास

उखलना—क्रि० स० [देश०] फैलना, बिखरना ।

उदा० उखली सुबासु गृह अखिल खिलन लागीं, पलिका के आस पास कलिका गुलाब की —देव

अम्बर नील मिली तम तोम खिली उखली मुख सोम उजेरी । — देव

उखेलना—क्रि० स० [सं० उल्लेखन] लिखना, खींचना, उरेहना ।

उदा० खेलत ही खेलत उखेलत ही आंखिन, सु, खिन खिन खीन ह्वै खरेई खिन खोइ गए । —देव

उगति—संज्ञा, स्त्री० [सं० उक्ति] कथन, चमत्कार पूर्णवाक्य, चतुरता पूर्वक वचन ।

उदा० चातुरी सों राधिका सों सहेट की ठौर की यों सुन्दर सुनाइ कही सिगरी उगति है । —सुन्दर

उगार—संज्ञा, पु० [सं० उद्गार] उगली हुई वस्तु ।

उदा० एक पियति चरनोदकनि, एक-उगारनि खात । —केशव

उघुट्टनि—संज्ञा, पु० [सं० उत्कथन] उघटन, ताल देने की क्रिया, संगीत में सम पर तान तोड़ने का कार्य ।

उदा० वह लाल की चाल चुभी चित मैं रसखानि संगीत उघुट्टनि की । —रसखनि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उचटना—क्रि० अ० [हिं० उचट] फैलना, छिटकना २. पृथक होना, निकलना ।

उदा० भूषन यो घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानौ । ऊँचे सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात ही मानौ ।
—भूषण

२. मनो काम चमू के चढ़े किरचैं उचटैं कलधौत कें नालन की । — गंग

उचाकु—संज्ञा, पु० [सं० उच्चाट] १. उचाट, विरक्ति २. उच्चाटन, तंत्री के छः अभिचारों में से एक ।

उदा० नींदौ जाइ, भूखौ जाइ, जियहू में जाइ जाइ, उरहू में आइ आइ लागत उचाकु सो । —गंग

उचाना—क्रि० स० [सं० उच्च + करण]उठाना, ऊपर करना ।

उदा० जानति हौ भुज मूल उचाय दुकूल लचाय लला ललचैयत । —देव

ग्वाल कवि करन उचाय उलटाय पीछैं, कंध तैं मिलाय तन तोरत सरस के ।
—ग्वाल

उचेलना—क्रि० स० [हिं० उकेलना] उचाड़ना, निकालना, किसी लिपटी हुई वस्तु की तह को अलग करना ।

उदा० जीव रह्यौ तुव नेह की आस, उसासनि सों हिय मास उचेल्यो । —सोमनाथ

ग्वाल कवि बाहन की पेल में, पहेल में, कै बातन उचेल में, कै इलम सफेल में ।
—ग्वाल

उछंग—संज्ञा, पु० [सं० उत्संग] गोद, अंक, क्रोड़ २. छाती ।

उदा० इतै बहु धौस में आइकै धाइ नवेली कों बैठी लगाइ उछंग । —दास

उछकना—क्रि० अ० [हिं० छकना] नशा उतरना, होश में आना ।

उदा० छिनकु छाकि उछकै न फिरि, खरौ विषम छवि छाकु । —बिहारी

उछटना—क्रि० अ० [सं० उच्चाटन, हिं० उचटना] १. भड़कना, बिचकना २. उछलना, कूदना [हिं० उछलना] ।

उदा० १. बीजु छुटे उछटै छबि देव घटै छिनु नाहिं कटै दिन कैसे । — देव

२. कहि तोष छुये कर रंग पटै उछटै पलिका पटिया लपटै । —तोष

उछीर—संज्ञा, पु० [हिं० छीर=किनारा] [प्रा० उच्छिल्ल] १. छिद्र, विवर २. जगह, स्थान, अवकाश ।

उदा० १. ग्वाल कवि सोभा तैं सरीर मैं उछीर हीन कढ़ी चंद चीर जाइ नहिं भाखे गुन
— ग्वाल

२. चनक मूंद, द्रुम कुंज उछीर । सोर करत। किंकन मंजीर । — नागरीदास

उजगना—क्रि० अ० [हिं० उझकना] उचकना, चौंकना ।

उदा० सोवति, जगति, उजगति, अनुरागिनि, बिरागिनि ह्वै देव बड़भागिनी लजानी है ।
—देव

उजहना—क्रि० अ० [हिं० उजड़ना ?] नष्ट होना, समाप्त होना, उजड़ जाना ।

उदा० यौबन के आवत उजहि गई एकै बार बालक बयस की बसी ही जौन बौरई । — रघुनाथ

उझकना—क्रि० अ० [हिं० उचकना] १. चौंकना, २. झांक कर देखना, ३. उछलना ।

उदा० १. जुज्यों उझकि झाँपति बदन झुकति विहँसि सतरात । —बिहारी

२. मोहि भरोसो रीझि है उझकि झाँकि इकबार । —बिहारी

उझपना—क्रि० स० [अनु०] खुलना, उन्मीलित होना ।

उदा० पद्माकर झपि उझपि उझपि झपि रहत दृगंचल । — पद्माकर

उझरना—क्रि० अ० [सं० उत्सरण, प्रा० उच्छरण] ऊपर की ओर सरकना, ऊपर की ओर उठना ।

उदा० करु उठाइ घूँघटु करत उझरत पट गुझरौट ।
सुख मोटैं लूटीं ललन लखि ललना की लौट ।
—बिहारी

उझलना—क्रि० अ० [सं० उल्झरण] उमड़ पड़ना, ढलना, प्रवाहित होना ।

उदा० झिल की न जानै हिल मिल की नैनाज

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बात, हिलकी मैं सोम झिलमिल की उझलि परै । —ग्वाल

उझलि—संज्ञा, स्त्री० [सं० उल्झरण, प्रा० ओज्झरो], निर्झर , उमड़ाव, बाढ़, प्रवाह, बहाव, एकत्र होना २. ऊपर की ओर उठना,

उदा० रूप की उझलि आछे आनन पै नई नई तैसी तरुनई तेह—ओपी अरुनई है ।
—घनानन्द

झेलो वियोग के ये उझिला निकसे जिनरे जिअरा जिअरा तैं । — ठाकुर

उझेल—संज्ञा, पु० [हिं० उझलना] ढालने की क्रिया, उड़ेलने का कार्य ।

उदा० अमल अमेल में, कै प्यालिन उझेल में, कै रहे झुकि झेल में, कै भूलों की झमेल में।
—ग्वाल

उटकना—क्रि० स० [सं० उत्कलन] अटकल लगाना, थाह लगाना, अनुमान करना ।

उदा० छलबल दलबल बुद्धि बिधान ।
कै उटक्यौ अबदुल्लहखान । —केशव

उटक्कर—वि० [?] अंधाधुंध, बहुत अधिक ।

उदा० सीसन की टक्कर लेत उटक्कर घालत छक्कर लरि लपटैं । —पद्माकर

उटना—क्रि० अ० [हिं० ओट] ओट में हो जाना, छिप जाना ।

उदा० भजि चले एकैं देखि क्रुद्धित कुँवर को इत उत उटैं । —पद्माकर

उठेल—संज्ञा, स्त्री० [हि० ठेल] ठेल, धक्का, चोट ।

उदा० अरिबर सिलाही बहु गिराये सक्ति को जु उठेल मों । —पद्माकर

उतमंग—संज्ञा, पु० [सं० उत्तमाङ्ग] सर, मस्तक ।

उदा० (क) बन्दक शिवा के चोली बन्द कसि वाके गुहे मोती उतमंग के उमा के उत मंग के । — देव

(ख) सोहति उतंग उतमंग ससि संग गंग ।
—सेनापति

उतल्ल—वि० [हिं० उतावला] उतावला ।

उदा० संकरषन फुंकरै, काल हुँकरै उतल्लै ।
— चन्द्रशेखर

उतार—वि० [देश०] उपेक्षित, तुच्छ, निकृष्ट ।

उदा० पातकी पतित अति आतुर उतार तारे पातुर पिसाच काम-कातर करन ये ।
—देव

उतू—संज्ञा, पु० [?] कपड़े आदि में बेल-बूटे बनाने का एक औजार ।

उदा० चोली चुनावट चीन्हें चुमें चपि होत उजागर दाग उतू के । —घनानन्द

उत्तपनि—संज्ञा, पु० [सं० उत्ताप] १. उत्ताप, ज्वाला, गर्मी, तपन । २. कष्ट ।

उदा० १. उत्तपनि-रत रितुपति में तपति अति, निसिपति-कर उर ताप सी गहति है ।
— आलम

उथपना—क्रि० स० [सं० उत्थापन] नष्ट करना, उजाड़ना, उखाड़ना ।

उदा० माथे मोर पंखा धरे स्यामरो सों रघुनाथ बड़ी बड़ी आँखि करै कौल को उथपनो ।
— रघुनाथ

कवि आलम थान थपे उथपे की रहै बलु कै नर बैन रचैं । — आलम

उदंगल—वि० [सं उद्दण्ड] उद्दण्ड, धृष्ट ।

उदा० जंगल के बल से उदंगल प्रबल लूटा महमद अमी खां का कटक खजाना है ।
—भूषण

उदग्ग—वि० [सं० उदग्र] प्रचण्ड ।

उदा० तिनके सिरन पै अति उदग्ग सुखग्ग नृप घालत भये । —पद्माकर

उदबस—वि० [सं० उद्वासन] उजाड़, सूना ।

उदा० मन न लगत उदबस लगै आन सो
— आलम

उदारिज—संज्ञा, स्त्री० [सं०औदार्य], औदार्य, उदारता ।

उदा० चारि उदारिज आदि दै सोभादिक त्रय जानि । दास

उदेत—वि० [सं० उदय] उदित, निकलना

उदा० नगर निकेत रेत खेत सब सेत-सेत, ससि के उदेत कछु देत न दिखाई है । — देव

उदोत—संज्ञा, पु० [सं० उद्योत] चाँदनी, ज्योत्स्ना प्रकाश ।

उदा० इंदु के उदोत तें उकीरी ही सी काढ़ी, सब सारस सरस, शोभा सार तें निकारी सी ।
केशव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उद्दित — वि० [सं० उद्यत] उद्यत, प्रस्तुत, तैयार
उदा० रह्यो द्यौस जब द्वै घरी, साजि सकल सिंगार। उद्दित ह्वै अभिसार को, बैठी परम उदार। — देव

उनदौंही—वि० [सं० उन्निद्र] उनीदीं निद्रा ग्रस्त
उदा० पारयौ सोरु सुहाग कौ इनु बिनु हीं पिय नेह। उनदौंही अँखियाँ ककै, कै अलसौंहीं देह। — बिहारी

उनमाथना— क्रि० स० [सं० उन्मथन] मथना, विलोड़ना।
उदा० जल तें सुथल पर थल तें सुजल पर उथल पुथल जल, थल उनमाथी को। — बेनी

उनमानना — क्रि० अ० [सं० अनुमान] अनुमान करना, संभावना करना।
उदा० (क) तनु कंबु कंठ त्रिरेख राजति रज्जु सी उनमानिये, —केशव
(ख) राजा राइ राने उमराइ उनमाने, उनमाने निज गुन के गरब गिरबीदे हैं। — देव

उनरना—क्रि० अ० [सं० उन्नरण = ऊपर जाना] १. उठना, उभड़ना २. कूदना, उछलना, कूदते हुए चलना।
उदा० २. मेरो कह्यो किन मानती मानिन, आपुही तें उतको उनिरोगी। — देव

उनाना— क्रि० स० [सं० उन्नमन] लगाना, प्रवृत करना २. भरना, रंजित करना।
उदा० एकनि भेंटि दुहुँ भुज देव हियो दृग अंजन रंग उनैकै। —देव

उनाव—संज्ञा, पु० [सं० उन्नमन] उत्तेजना, जोश।
उदा० बनावैं उनावैं सुनावैं कर रक्खे। रबाबै बजावैं सु गावैं हरक्खे। —पद्माकर

उपंगी—संज्ञा, पु० [१] नसतरंग नामक वाद्य
उदा० पगि पगि पुनिपुनि खिन खिन सुनि सुनि मृद मृद ताल मृदंगी मृहचंगो झांझ उपंगी। — दास

उपखान—संज्ञा, पु० [सं० उपाख्यन] १. कहावत २. पुरानी कथा।
उदा० है जग में उपरवान प्रसिद्ध सुनो रघुनाथ की सौंह सुनाइयो। वृच्च सोई है जहाँ फल खाइये, सिंधु सोइ है जहाँ जल खाइये। —रघुनाथ

उपदि—क्रि० वि० [बुं०] पसन्गीस, अपनी मर्जी से उपदि बरयो है यहि सोभा अभिरत हौ। —केशवदास

उपधि—क्रि० वि० [बुं०] धोखे से, छल से।
उदा० किधौं यह राज पुत्री बरही बरी है किधौं उदधि बरयो है यह सोभा अभिरत है। —केशव

उपनये—वि० [देश०] नंगा, बिना जूता के।
उदा० जिन दौरियो उपनये पावन हरुवाइल के पाछे। —बक्सी हंसराज

उपसीजना—क्रि० अ० [सं० उपयेज] अधीन होना, वश में होना।
उदा० आज कहूँ उपसीजि न जाहुगी, जोन्ह तें जीति हौ मेरी गोसाँइन। —गंग

उपाना— क्रि० स० [सं० उत्पन्न] उत्पन्न करना पैदा करना।
उदा० हौं मनते विधि पुत्र उपायो। जीव उधारन मन्त्र बतायो। — केशव

उपावन—संज्ञा, पु० [सं० उपाय] रक्षण, रक्षा
उदा० जब एक समै प्रभु भावन बावन, सन्त उपावन देह धरी। —गंग

उपाहन— संज्ञा, पु० [सं०] जूता, पदत्राण।
उदा० धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पाय उपाहन की नहिं सामा। —नरोत्तमदास

उपैजाना— क्रि० अ० [देश०] उड़जाना।
उदा० देखत बुरै कपूर ज्यौं उपै जाइ जिन, बाल। —बिहारी

उफाल—संज्ञा, पु० [देश०] बड़ी लम्बी डग, छलांग मारते समय की डग।
उदा० जल जाल काल कराल-माल-उफाल पार धरा धरी। —केशव

उबटना—क्रि० अ० [हिं० उचटना] चित्त से उतर जाना, अरुचि होना, उदासीन होना।
उदा० देखि कहाँ रहे धोखे परे उबटौगे जू देखौ ब देखहु आगे। — केशव

उबठना— क्रि० अ० [सं० उद्वेजन] अरुचि उत्पन्न होना, उदासीन होना।
उदा० अलंकार सो सार है उबिठै सुनत न वर्ष। —रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काम की घात अघाति नहीं दिन राति
नहीं रति रंग उबीठै । देव

उबरानी – वि० [हिं० ऊबना] ऊबी हुई, उचटी हुई ।

उदा० घेर घबरानी उबरानी ही रहति घन आनँद आरति राती साधनि मरति है ।
— घनानन्द

उबारक— संज्ञा, पु० [हिं० उ = और + बारक = बार + एक] एक बार और, एक से अधिक बार दुबारा, पुनः ।

उदा० त्यों न करैं करतार उबारक ज्यों चितई वह बारब धूटी । — केशव

उबीधना—क्रि० अ०[सं० उद्विद्ध]१. उलझना, फँसना, २. धँसना, गड़ना ।

उदा० १. बीधी बात बातन, सगीधीगात गातन, उबीधी परजंक में निसंक अंक हितई ।
— देव

उबरेना—क्रि० स०:[बुं०] गाय चराना, गाय को चराने ले जाना ।

उदा० खोलि खोलि खरिकन के फरकन गायें आनि उबेरी । — बक्सी हंसराज

उमहाना—क्रि० अ० [सं० उन्मद] उन्मत्त जैसी चेष्टा करना, मतवाला होना ।

उदा० वे ठाढ़े उमदाहु उत, जल न बुझै
— बड़वागि
आजु भिरैंगी पियै मदमत्त, फिरै,
— बिहारी
उत्साह भरी उमदानी ।
— बेनी प्रवीन

उमहना—क्रि० अ० [हिं० उमंग] उमंगित होना उल्लसित होना, प्रसन्न होना ।

उदा० माया रुप ओपी बुद्धि बिधि की बिलोपी जिन गोपी ते तिहारे गुन गाइ ब्रज उमही । —देव

उमाचना—क्रि० स० [सं० उन्मंचन] निकालना, उभाड़ना, उत्पन्न करना, ऊपर उठाना ।

उदा० लाज बस बाम छाम छाती पै छली के मानौं, नाभि त्रिबली तैं दूजी नलिनि उमांची री । — द्विजदेव

बाचै प्रेम पद्धति उमाचै न उमंगंत अनंग उर आँचैं सहि शूल परि रही है । — देव

उमात्यो--वि० [सं० अन + मत्त] निर्मद, मद रहित, जिसका नशा उतर जाय ।

उदा० जाके मद मात्यौ सो उमात्यौ ना कहूँ है कोई । —देव

उमीदे—वि० [फा० उम्मीद] उम्मीदवार, आशावान्, आशान्वित ।

उदा० सुजस बंजाज जाके सौदागर सुकवि चलेई आवै दसहूँ दिसान के उमीदे हैं । —देव

उरकना—क्रि० अ० [हिं० रुकना] रुक जाना, ठहर जाना ।

उदा० लाड़िले कन्हैया, बलि गई बलि मैया, बोलि ल्याऊँ बलभैया, आई उर पै उरकि जाइ । —देव

उरग—संज्ञा, पु० [?] १. ऋण मोचन, कर्जा से मुक्ति या छुटकारा २. सर्प ।

उदा० १. उरगावत रजपूत उरग बिन जात सोचि पचि । — केशव

उरगना—क्रि० अ० [हिं० उरग] १. छुटकारा पाना, मुक्त होना २. स्वीकार करना ३. सहना [सं० उरगी करण] ।

उदा० १. उरग्यौ सुरग्यौ त्रिबली की गली गहि नाभि की सुन्दरता संधिगौ । — ठाकुर
२. जौं दुख देइँ तौ लै उरगौ यह सीख सुनौ । — केशव

उरगाना —क्रि० स० [?] ऋण मोचन करना, कर्ज से छुटकारा देना, कर्ज से मुक्त करना ।

उदा० उरगावत रजपूत उरग बिन जात सोचि पचि । — केशव

उरबसी—संज्ञा, स्त्री [?] १. गले का एक आभूषण, घुकघुकी २. उर्वशी नामक अप्सरा ।

उदा० तो पर वारौं उरबसी सुनि राधिके सुजान।
तू मोहन के उरबसी ह्वै उरबसी समान ।।
—बिहारी
होत अरुनोत यहि कोत मति बसी आजु,
कौन उरबसी उरबसी करि आए हौ ।
— दूलह

उबाहना – क्रि० सं० [सं० उद्बहन, प्रा० उब्बहन] शस्त्र चलाना, फेंकना, हथियार खींचना ।

उदा० है न मुसक्किल एक रती नरसिंह के सीस पै सांग उबाहिबो । —बोधा

उबीठना—क्रि० स० [सं० अव + इष्ट] अरुचिकर होना, ऊब जाना, घबरा जाना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० माथुर लोगन के सँग की यह बैठक तोहि अजौं न उबीठी । —केशव

उरबीसुर—संज्ञा, पु० [सं० उर्बीसुर] ब्राह्मण, पृथ्वी के देवता ।

उदा० श्री गुरु को उरबीसुर को कुल के सुर को सुर और गनाऊँ । —तोष

उरबो—क्रि० स० [देश०] निकलना, अंकुरित होना ।

उदा० सोन सरोज कलीन के खोज उरोजन को उरबो जु निहारो । —देव

उररना—क्रि० अ० [हिं० उलरना] झपटना, बलात धँसना, कूदना ।

उदा० मोहन महा ढरारे, सोहन मिठास मारे, जोहन उररि पैठि बैठि उर भोरी हौं ।
—घनानन्द

उररना—क्रि० अ० [सं० उरु = विशाल] उमड़ना, निकलना, एकत्रित होना ।

उदा० घहरत गज, फहरत पट बांने ।
दरसन हित नर बहु उरराने ।
—नागरीदास

उरवायगी—संज्ञा, पु० [हिं० बाइगी] सर्प का विष उतारने वाला, गारुड़ी ।

उदा० लोक-लोहू रहै नाहिं लाज न लहरि लागै कुल उरवायगी बिलोकेंही नसत है । अपजस नींब आली नेक करुवाय नाहिं काकी परवाहि प्रान लैबे कौं हसत है ।
—केशव केशवराय

उरसना—क्रि० अ० [हिं० उड़सना] धँसना, प्रवेश करना २. उथल-पुथल करना ।

उदा० रूप गरबीलो अरबीलो नंद-लाड़िलो सु, दृग-मग उरस्यो परत आली उर मैं ।
—घनानन्द

उरा—संज्ञा, स्त्री० [सं० उर्वी] पृथ्वी, जमीन, भूमि ।

उदा० हार उतार हिये पहिरै पुन । पाँव धरै लहित्यौ न उराधन । —बोधा

उरारा—वि० [सं० उरु] विशाल, विस्तृत ।

उदा० रूप भरे भारे अनूप अनियारे दृग कोरनि उरारे कजरारे बूँद ढरकनि । —देव

उराव—संज्ञा, पु० [सं० उरस् + आव (प्रत्य०)] चाव, चाह, उत्साह, उमंग, उल्लास, हौसला ।

उदा० उमराव सिंह उराव करि अरि-झुंड-मुंडन को हरै । —पद्माकर
अति उराव महराज मगन अति जान्यौ जात न काला । —रघुराज

उराह—संज्ञा, पु० [सं० उपालम्भ] उलाहना, शिकायत ।

उदा० सुख जीवन काज अकाज उराह । —देव

उरैड़—संज्ञा, स्त्री० [हिं० उरेड़ना, उड़ेरना = गिराना] प्रवाह, धारा ।

उदा० मोद-घन झर लायौ केलि-सिंधु सरसायौ प्रेम की उरैड़ कुलकानि मैड़ तोरी है ।
—घनानन्द

उलंक—संज्ञा, पु० [बुं०] १. बड़प्पन, मर्यादा २. नग्न, नंगा ।

उदा० १. कवि ठाकुर फाटी उलंक की चादर देउँ कहाँ कहँ लौं थिगरी । —ठाकुर

उलंघना—क्रि० स० [हिं० उलंग] १. नग्न करना, वस्त्रहीन करना २. उल्लंघन करना, डाँकना, नाँघना ।

उदा० १. करै जोर झकझोर उलछार जंघै ।
लगे बालके चार आंसू उलंघै ।
—बोधा

उलछारना—क्रि० स० [सं० उत् + शालय प्रा० उच्छार] उछालना, ऊँचा फेंकना ।

उदा० करै जोर झकझोर उलछार जंघै ।
लगे बाल के चार आँशू उलंघै ।
—बाधा

उलझारना—क्रि० स० [हिं० उलटना] उलटना, हटाना ।

उदा० मृदु मुसकाइ गुढ़ाइ भुज घन घूँघट उलझारि । को धन ऐसो जाहि तूँ इकटक रही निहारि । —पद्माकर

उलथना—क्रि० अ० [सं० उद् = नहीं + स्थल = जमना] उलटना, ऊपर नीचे होना ।

उदा० नीबी के छुवत प्यारी उलथि-कलथि जात जैसे पवन लगे लोंट जात बेली ज्यों चमेली की । —बोधा

उलद—संज्ञा, स्त्री० [हिं० उलदना]झड़ी, वर्षण ।

उदा० देख्यों गुजरेटी ऐसे प्रात ही गली में जात स्वेद भर्‌यो गात मात घन की उलद से ।
—रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उलदना—क्रि० स० [हिं० उलटना] उँडेलना, उलटना, ढालना, बरसाना ।
उदा० उलदत मद अनुमद ज्यों जलधि-जल, बल हद भीम कद काहू के न आह के ।
—भूषण

लै तुम्बा सरजू जल आनी ।
उलदत मुहरैं सब कोई जानी ।
—रघुराज

उलरना—क्रि० अ० [सं० उद्+लवँ=डोलना] झपटना, टूटना ।
उदा० कह गिरिधर कवि राय बाज पर उलरे धुधकी । समय समय की बात बाज कहँ धिरवै फुदकी । —गिरिधर

उलहना—क्रि० अ० [सं० उल्लंघन] हरा-भरा होना, प्रफुल्लित होना, फूलना, प्रस्फुटित होना ।
उदा० देवजू अनंग अंग होमि कै भसम संग अंग अंग उलह्यौ अखैबर ज्यों डुंड मैं ।
—देव

उलाक—संज्ञा, पु० [?] संदेश वाहक, हरकारा, पत्र ले जाने वाला ।
उदा० उरज उलाकनिहूँ आगम जनायो आनि, बसन सँभारिबे की तऊ न तलास सी ।
—दास

उलाहित—क्रि० वि० [बुं०] शीघ्र, जल्दी ।
उदा० १. देव दुहूँ करि के सुख संग उलाहित ही उठि अंग अँगौछे । —देव
२. देधरानी जिठानी सबै जगतीं खड़को सुनि हैं न गहौ बहियाँ ।
हमैं सोवन देउ उलाइत का हरि धीर धरौ हिरदय महियाँ ।।
—ठाकुर

उलीचना—क्रि० स० [हिं० उल्लुंचन] फेंकना, डालना, छोड़ना, उलचना ।
उदा० रंग सौ मांचि रही रस फागु पुरी गलियाँ त्यों गुलाल उलीच में । —ठाकुर

उलेखना—क्रि० स० [हिं० उरेखना] उरेखना, खींचना, चित्र बनाना, अंकित करना ।
उदा० ताहि कहै बस आन बधू के, सु तू बिन भीतिहिं चित्र उलेखै । —कुमारमणि

उवनि—संज्ञा, पु० [सं० उदय प्रा० ऊपन] उदय, निकलना, प्रकट होना ।
उदा० चन्द से बदन भानु भई वृषभानु जाई, उवनि लुनाई की लवनि की सी लहरी ।
—देव

उवारे—संज्ञा, पु० [हिं० ओहार] पर्दा, पालकी या रथ पर ऊपर से लगाया जाने वाला वस्त्र ।
उदा० चारि ढाक के थंभ निवारे, घर तें बांई ओर उवारे । —सोमनाथ

उवाहना—क्रि० स० [सं० उद्वाहु] हथियार उठाना, चलाना ।
उदा० झुक झुक उवाहत खग्ग मुंड बरषत वर्षा इम । —बोधा

उसटाना—क्रि० स० [सं० उद्+सरण] उखाड़ना हटाना, भगाना ।
उदा० बहु ढाल ढक्कन सों ढकेलि अरिंद उसटाए भले । —पद्माकर

उसरना—क्रि० अ० [सं० उद्+सरण] निकलना, उद्भूत होना २. हटना, दूर होना, स्थानान्तरित होना ।
उदा० उसरि उरोज गिरि हरिद्वार हिरदै तें राख्यौं जिहिं सागर गहीर नाभि झषिकै ।
—देव

उसलता—क्रि० अ० [हिं० उसरना] हटना, स्थान भ्रष्ट हो जाना, स्थानांतरित होना ।
उदा० ऐल-फैल खैल मैल खलक में गैल गैल गजन की ठैल पैल सैल उसलत हैं ।
—भूषण

उसल फुसल—संज्ञा, पु० [हिं० उथल-पुथल] उथल-पुथल, उलट फेर ।
उदा० ऐरे दसकंध, बीस आंखिन सौं अंध देखि, एक कपि लंका कीनी उसल-फुसल है ।
—सूरति मिश्र

उससना—क्रि० स० [सं० उत्+सरण] १. खिसकना, टलना २ सांस लेना ।
उदा० १. वैसिये सु हिलिमिल, वैसी पिय संग अंग, मिलत न कैहूँ मिस, पीछे उससति जाति । —रसकुसुमाकर
२. एक उसांस ही के उससे सिगरेई सुगंध विदा करि दीन्हें । —केशव

उसारना—क्रि० स० [सं० उत्सारण] १. हटाना, तोड़ना, दूर करना २. निर्मूल करना, उखाड़ना ३. निछावर करना, बरसाना [हिं० औसाना]
उदा० १. आनँदघन सों उघरि घुरौंगी उसरि पैज की पाजैं । —घनानंद

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. द्विज गऊ पालहि, रिपु उसालहिं सस्त्र धावहिं तन सहैं । —पद्माकर

३. गोल ग्रीव की सोभा ऊपर कंबु अनेक उसारे । —सोमनाथ

उसारनि—संज्ञा, पु० [हिं० उसारना] उगला हुआ पदार्थ ।

उदा० एक पियति चरणोदकनि, एक उसारनि खाति । —केशवदास

उसालना—क्रि० स० [सं० उत् + सारण] उखाड़ना, हटाना ।

उदा० दीनन कौ पालै गाढ़े गढनि उसाले तब सज्जै करबालै ऐसो कौन बरबंड है ।

—सोमनाथ

उसासना—क्रि० स० [हिं० उसास] उभाड़ना, सांस को बढ़ाना ।

उदा० फिरि सुधि दै, सुधि धाइ प्यो, इहिं निरदई निरास । नई नई बहुर्‌यौ, दई । दई उसासि उसास । —बिहारी

उसीजना—क्रि० अ० [हिं० उसनना], उबलना, गरम होना ।

उदा० अन्तर-आँच उसास तचै अति, अंग उसीजै उदेग की आवस । —घनानन्द

उसीती—वि० [प्रा० उस्सिय] १. उन्नत, ऊँची २. गर्वित, उद्धत [प्रा० ऊसित्त] ।

उदा० १. सूती सी नाक उसीती सी भौंह सुधारे से नैन सुधारस पीजै ।

—केसव केसवराय

उसीस—संज्ञा, पु० [सं० उत् + शीर्ष] १. सिरहाना २. तकिया ।

उदा० ताहि तू बताइ जोई बाँह दै उसीसैं सोई, ऐसे अनुबादन के अनुवा घनेरे हैं । —गंग

उसुआसन—संज्ञा, पु० [सं० उद्‌बासन] खुचड़, दुःख, घर से निकालने का कष्ट, परेशानी ।

उदा० देवर की त्रासनि कलेवर कँपत है, न सासु-उसुआसनि उसास लै सकति हौं ।

—दास

उहँड़े—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] सेंध, नकब ।

उदा० कब काहू की चोरी कीनी कब उहँड़े मुँह पाये । —बक्सी हंसराज

उहारी लगना—क्रि० अ० [देश०] वाणी की अनुध्वनि करना ।

उदा० कोइल अलग डारि बोलति उहारी लगे, डहडही जोन्ह जी में दाह सी लगति है ।

—गंग

ऊ

ऊँटकटारा—संज्ञा, पु० [सं० उष्ट्रकंट] एक प्रकार की कँटीली झाड़ी जिसे ऊँट बड़े चाव से खाते हैं ।

उदा० खारक-दाख खवाइ मरौ कोउ ऊँटहि ऊँट-कटारोई भावै । —केशव

ऊक—संज्ञा, स्त्री० [सं०=उल्का] लुआठ, जलता हुआ अंगारा । २. टूटता तारा ।

उदा० १. ऊक भई देह बरि चूक है न खेह भई, हूक बढ़ी पै न बिबि टूक भई छतिया ।

—आलम

२. तीनिहू लोक नचावति ऊक मैं मंत्र के सूत अभूत गती है । —देव

ऊकबीक—संज्ञा, पु० [सं० उद्विग्न] उद्विग्नता, बेचैनी, घबराहट ।

उदा० 'द्विजदेव' जू ऊक औ बीक हिये मैं, गुपाल के फंद भयोई चहैं । —द्विजदेव

ऊकना—क्रि० स० [हिं० ऊक] जलाना, दुख देना ।

उदा० कवि 'ग्वाल' डरा बछरा कै छुटैं, छरा टूट परो क्यों ऊकती हैं ।

—ग्वाल

ऊखिल—संज्ञा, पु० [ब्रज०] किरकिरी २. पराया, अपरिचित, अजनबी ।

उदा० १. ऊखिल ज्यौं खरकै पुतरीन मैं, सूल की मूल सलाक भई है ।

—घनानन्द

२. भोंर लौं ऊखिल भीर अथाइन द्वार न कोऊ किवार भिरैया । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऊगना—क्रि० अ० [सं० उदय] प्रकाशित होना धूमिल वस्तु का प्रकाशित होना ।
उदा० पंच रँग-रँग बेंदी खरी ऊठै ऊगि मुख-जोति । —बिहारी

ऊजा—वि० [सं० ऊर्ग] १. शक्तिमान, बलशाली २. बेग ।
उदा० एक लीन्हे सीस खाय, वेष ईस एकन को, एकन को उपमा निहारी मन ऊजा से ।
—दूलह कवि

ऊभड़—वि० [हिं० उजाड़] उजाड़, उजड़ा हुआ ।
उदा० नरकन के रखवारे भाखैं ।
ऊभड़ नरक हम कहाँ राखैं ।
—जसवन्तसिंह

ऊटना—क्रि० अ० [हिं० औटना] १. उमंगित होना, उल्लसित होना, जोश में आना २. कहना, किसी बात को बार-बार कहना या रटना ।
उदा० १. काज मही सिवराजबली हिंदुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै । —भूषण
२. रास में लेवाइ गयो मोंहि मनमोहन के मोहन के मोहिबे को ऐसे आप ऊट गयो । —रघुनाथ
आवतो हमारी गैल सोई ब्रज छैल फेरि, बैर घर बाहेर की ऊटती तौ ऊटती ।
—बेनी प्रवीन

ऊठ—संज्ञा, पु० [देश०] बहाना, मिस ।
उदा० कवि देव सखी के सकोचन सों, करि ऊठ सुअौसर को बितवै । —देव
बैठी हुती ढिग आई अली सुदई सब ऊठ महीसों उठाय कै । —कृष्ण कवि

ऊठा—संज्ञा, पु० [हिं० उठना] उठान, जोम, जोश, उमंग ।
उदा० चूसि हौं जो निचुरो सो परै रसु ज्यौं हटकावत औदुकै ऊठा । —बेनी प्रवीन

ऊठी—संज्ञा, स्त्री० [सं० उत्थान] १. उठाने की विधि, लेने का ढंग २. हौसला, उमंग, उत्साह
उदा० १. चोरी मैं कि जोरी मैं कि रोरी मैं कमोरी मैं कि भूमि झकझोरी मैं कि झोरिन की ऊठी मैं । —ग्वाल
२. मूठी बाँधे पासे नैन ऊठी बँधी भावते की गरे बँधी स्वास औ निरास देह तिय की । —रघुनाथ

ऊत—संज्ञा, पु० [देश०] १. भूत , प्रेत २. जंगली, बेवकूफ, मूढ़ ।
उदा० १. भूतनाथ भूतनाथ पूतना पुकारै उन्हें ऊतरो न देत ऊत रोन लगे संग के ।
—देव
२. है जमदूत सो ऊत कपूत या भूत के संग सो राम छुड़ावै । —अज्ञात

ऊत्तरु—संज्ञा, पु० [सं० उत्तर] स्वीकृति ।
उदा० बिनती रति विपरीत की करी परसि पिय पाइ । हँसि, अनबोलैं ही दियौ ऊतरु, दियो बताइ । —बिहारी

ऊन—संज्ञा, पु० [सं०] एक छोटी तलवार जिसका व्यवहार प्रायः स्त्रियाँ करती हैं ।
उदा० सैफन सों, तोपन सों, तबल रु ऊनन सौ दक्खिनी दुरानिन के माचे झकझोर है ।
—कवीन्द्र

ऊनरी—वि० [हिं० उनये] घिरा हुआ, छाया हुआ, झुका हुआ ।
उदा० ऊनरी घटा मैं वह चूनरी सुरंग पैन्हि, दूनरी चढ़ाय रंग करि गई खून री ।
—ग्वाल

ऊनो—वि० [सं० न्यून] १. कठिन, २. व्यर्थ ।
उदा० ऊनो भयौ जीबो अब सूनो सब जग दीसै, दूनो दूनो दुख एक-एक छिन मैं सहौं ।
—घनानन्द

ऊबट—संज्ञा, पु० [सं० उद् (बुरा) + वर्त्य (मार्ग) कठिन मार्ग, खराब रास्ता २. ऊबड़-खाबड़ वि०] ।
उदा० ऊबट लुटाऊ बटपारन बटाऊ पट लंपट लुटान नट कपट माखन चोर । —देव

ऊभना—क्रि० अ० [सं० उद्गवन] खड़ा होना, उठना २.व्याकुल होना ।
उदा० आनि उभी जे खुभी अंखियान, लुभी ललचानि, चुभी चितही में । —देव
नेकु चलै चितै छांह ऊभी ह्वै कै ऊभी बाँह बार-बार अंगराय, पाँगुरीनु जोरि कै ।
—आलम

ऊमक—संज्ञा, स्त्री० [सं० उमंग] उठान, वेग ।
उदा० इक ऊमक अरु दमक सँहारै । लेहि साँस जब बीसक मारै । —लालकवि

ऊमर—संज्ञा, पु० [सं० उदुम्बर] गूलर, एक फल ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० अधिरात भई हरि आये नहीं हमें ऊमर को सहिया करि गे । —ठाकुर

ऊर—वि० [?] कुरस, नीरस, स्वादहीन २. न्यून [प्रा० ऊरप] ।

उदा० सरस परस के बिलास जँड़ जानै कहा, नीरस निगोड़ो दिन भरै भखि ऊर सों । —घनानन्द

ऊरी—अव्य० [सं० अवर] दूर, परे, उरे ।

उदा० नेक न नीचियै बैठति नागरी, जोबन हाथ लिये फिरै ऊरी । —गंग

ऊलना—क्रि० स० [सं० शूल, हिं० हूल] ।

१. भाले आदि की नोक गड़ाना या चुभाना २. झूमना, प्रसन्न होना, उछलना, कूदना ।

उदा० जानो सुधा के भरे कलसा खड़े सूर से ये उर ऊलि रहे हैं । —गंग

२. वृथारी कथा वाचिकै, नाचि ऊले । नहीं देव कोई, सबे झूठ झूले ।। —देव

लै चले उचारि एक बार ही पहारन कौं, बीर रस फूलि ऊलि ऊपर गगन कौं । —सेनापति

ऊलर—वि० [?] प्रकम्पित, हिलती-डुलती ।

उदा० ऊलर अमारी गंग भारी बंब धौं धौं होत, धारु के भिखारी के हजारी कोऊ जात है । —गंग

ऊसर—वि० [प्रा० ऊसल, सं० उत्+लस्] १. उल्लसित, पुलकित, प्रसन्न २. क्षार-भूमि, जिसमें बीज नहीं पैदा होता ।

उदा० लै हरमूसर ऊसर ह्वै कहूँ आयो तहाँ बनि कै बलदाऊ । —पद्माकर

ऊहर—संज्ञा, पु० [प्रा० उहर] उपगृह, छोटा घर ।

उदा० ऊहर सब कूहर भई बनितन लगी बलाय । —बोधा

ए

एँन—संज्ञा, पु० [सं० अयन] गृह, घर ।

उदा० एँन एँन ते हौं आजु गोरस के बेचिबे कौं निकसी अकेली अति सुमति रली रली । —सोमनाथ

एकचक्र—संज्ञा, पु० [सं०] सूर्य, रवि ।

उदा० श्रुति ताटंक सहित देखियै । एकचक्र रथ सो लेखियै । —केशव

एकौबिसौ—क्रि० वि० [हिं० एक बिस्वा] थोड़ा भी, किंचित मात्र ।

उदा० नख-पद-पदवी को पावै पदु द्रोपदी न, एकौ बिसौ उरबसी उर में न आनिबी । —केशव

एनमद संज्ञा, स्त्री० [सं० एण+मद] मृगमद, कस्तूरी ।

उदा० यों होत है जाहिरे तो-हिये स्याम । ज्यों स्वर्नसीसी भर्‌यो एनमद बाम ।। — दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐं

ऐंचना—क्रि० स० [हिं० खींचना] खींचना, तानना ।

उदा० दीन्हीं ऐंचि गाँसी पंचवान बखियान में ।
—सोमनाथ

ऐनमैन—वि० [फा० ऐन + सं० मैन] ठीक मोम की भाँति, ठीक मोम जैसा ।

उदा० मैन की बरी सी, ऐन मैन सुपरी सी, अरी बेसुध परी सी, फैन बूंद मुख मरी सी ।
—ग्वाल

ऐनें संज्ञा, पु० [अ० ऐन] नेत्र, आँख ।

उदा० सरनि तें पैने, मीन मृगनि ते ऐनें, हेरे हियौ हरि लैने हैं सुजान सुख दैनें हैं ।
— सोमनाथ

ऐरौ पैरो— क्रि० अ० [?] डूबना, उतराना ।

उदा० घिरिग बैताल ताल खेलत धिगानो मानो, लोहू की भभक भैरौ ऐरौ पैरौ ह्वै रह्यो ।
—गंग ।

ऐल—संज्ञा, पु० [हिं० अहिला] १. परेशानी, खलबली २. समूह, सेना ३. कोलाहल ४. भीड़ ५. प्रतीक्षा ६. धूल, मिट्टी ७. बाढ़, बूड़ा ८. अधिकता ।

उदा० १. खलक में खैल भैल मनमथ मन ऐला ।
—केशव

२. ऐल फैल खैल भैल खलक मैं गैल गैल ।
—भूषण

३. छैल छल छोभक छपाकर चुरैल आगे पीछे, गैल गैल ऐल पारत नकीब से ।
— देव

४. कहै पद्माकर गवैयन की ऐल परी गैल गैल फैल फैल फागु परसत है ।
—पद्माकर

५. गोकुल के छैल ढूँढ़े गूढ़ बन सैल, हौं अकेली यहि गैल तो सों ऐल करि-थाकी हौं ।
—देव

६. सखियान की आंखिन पारि कै ऐलो ।
—केशव

ओ

ओखे —संज्ञा, पु० [सं०] बहाने, मिस, हीला ।

उदा० आनँद ते गुरु की गुरुताऊ गनी गुन गौरि न काहुहु ओखे ।
—देव

ओघ—सं०, पु० [सं०] राशि, समूह, ढेर ।

उदा० मेरे मिलाये मिली दिन द्वैक, दुरे दुरे आनंद ओघ अघाती ।
—देव

ओघ्यो—संज्ञा, पु० [देश०] आरम्भ, शुरू ।

उदा० ऐसी भाँति भादौं आली, भोर ही तें ओघ्यो है ।
—गंग

ओज—संज्ञा, पु० [सं० ओजस्] कांति, चमक, प्रकाश ।

उदा० दोहू सौतैं ठाढ़ी जहाँ तहाँ प्राण प्यारो आयो, आपु आदरस एक लीन्हे बड़े ओज को ।
—रघुनाथ

ओझिल—संज्ञा, पु० [अवरुंधन] आड़, ओट ।

उदा० अम्बर में आड़ी ह्वै दिगम्बर ह्वै रहे, सो बरंबर की ओझिल ही, ओझिल उझकती ।
—देव

ओट—संज्ञा, स्त्री० [सं० उट] शरण, रक्षा, पनाह ।

उदा० हाथी सात बेध सो जाई । कौन ओट कर बचि ही राई ।
—बोधा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ओंड़—संज्ञा, पु० [देश०] बेलदार, मिट्टी खोदने वाला ।

उदा० चले जाहु ह्याँ को करत हाथिन कौ ब्यौपार । नाँहि जानत या पुर बसत धोबी ओड़ कुम्हार । —बिहारी

ओड़ना—क्रि० स० [हिं० ओट] रोकना, आड़ करना, ऊपर लेना ।

उदा० नेकी बदी वोड़िहैं विपति बस गोड़िहैं जो कान्ह हमैं छोड़िहैं तो हम तो न छोड़िहैं । —बोधा

ओड़ो—वि० [सं० आकुंड] गहरा, गम्भीर ।

उदा० आदि बेद पाठक बिरंचि किधौं रचि-रचि केलिकृत-काजैं ओड़ो कुंडु खोदि धर्‌यौ है । — केशव

ओना—संज्ञा, पु० [स० उदगमन] निकास, तालाबों में पानी के बहिर्गत होने का मार्ग ।

उदा० गावति बजावति नचत नाना रूप करि, जहाँ तहाँ उमँगत आनँद को ओनो सो । — केशव

गंग कहै सोइ देखियै ताहि हौं जाहि जु ए जिय लाग्यो है ओनो । —गंग

ओनाना—क्रि० स० [?] किसी बात को ध्यान से सुनने की चेष्टा करना ।

उदा० हेरत घातैं फिरै चहुधा तैं ओनात है बातैं देवाल तरी सों । —दास

ओपची—संज्ञा, पु० [सं० ओप] कवचधारी, योद्धा ।

उदा० जिरही सिलाही ओपची उमड़े हथ्यारन कों लिये । —पद्माकर

ओपनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० आवपन] पालिश, चमक, जिला ।

उदा० जोवन की झांई लरिकाई में दिखाई दीनी, सुबरन-रूप अंग ओपनी चढ़ायेते । —देव

ओपम—संज्ञा, पु० [हिं० ओप] प्रकाश, चमक, कांति ।

उदा० पजन किसोर वर जुगल सुआसन पै तेज की मरीचिन ते ओपम परा करै ।

—पजनैस

ओपी—वि० [हिं० ओपना] माँजी हुई, पालिश की हुई, चमकाई हुई ।

उदा० साँचे भरि काढ़ी तिहूँपुर की लुनाई लूटि, ओपी चारु चन्द की गुराई गहराति है । —सोमनाथ

मोतिन की हार जैसे दामिनि की धार जैसे ओपी तरवार जैसे तजत मियान है । —शृंगार संग्रह

ओरमना—क्रि० अ० [बुं०] लटकना ।

उदा० फूलन के बिबिध हार, घोरिलन ओरमत उदार । —केशव

ओल—संज्ञा, पु० [सं० क्रोड़] स्थानापन्न,, समान, तुल्य ।

उदा० मधुर अमोल बोल, टेढ़ी है अलक लोल, मैनका न ओल जाकी देखें भाइ अंग के । —सेनापति

ओलना—क्रि० स० [हिं० ओल=अड़] १. ओट करना, परदा करना २. रोकना,सहना ३. चुभाना ।

उदा० १. लोल अमोल कटाच्छ कलोल अलौकिक सो पट ओलि कै फेरे । —केशव

२. केशव कौन बड़े रूप कुलकानि पै अनोखो एक तेरे ही अनख उर ओलिए। — केशव

३. ऐसी हू है ईश पुनि आपने कटाच्छ मृग-मद घनसार सम मेरे उर ओलिहै । —केशव

ओलिक—संज्ञा, पु० [हिं० ओट] आड़, पर्दा, ओट ।

उदा० नील निचोल दुराइ कपोल विलोकतिहीं किये ओलिक तोही । — केशव

ओले—संज्ञा, पु० [हिं० ओल] विरह, वियोग ।

उदा० दामिनि-प्यास भर्‌यो घन डोलै ।
सदा मिलन मैं मानत ओलै ।

—घनानन्द

ओसना—क्रि० स० [सं० आवर्षण] बरसना, फैलना ।

उदा० कै मिसि की सिसकी पति हेत पिया रति मैं अति ही सुख ओसै । —तोष

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

औ

औंकना—क्रि० अ० [देश०] उदास होना, उचट जाना, विरक्त होना।
उदा० काँपि उठी कमला मन सोचत मोसों कहा हरि को मन औंको। —नरोतमदास

औंछना—क्रि० स० [बुं०] गूँथना, बनाना।
उदा० कब धौं तेल फुलेल चुपरि के लामी चुटिया औंछों। —बकसीहंसराज

औंडना—क्रि० अ० [हिं० औंड़] उमड़ना।
उदा० जाइ जड़ी जड़ सेस के सीस सिंची दिनदान जलावलि औंडी। —केशव

औंड़ी—वि० [सं० कुंड] १. गहरी २. तिरछी, वक्र।
उदा० १. ऊधौ पूरे पारख हौ, परखे बनाय तुम, पारिही पै बोरो पैरवैया धार औंड़ी को।
—देव
२. औंड़ी चितौन कहूँ उड़ि लागत बंदन आड़े जो आड़ न होती। —देव

औचकना—क्रि० अ० [हिं० उचकना=कूदना] उछलना, कूदना।
उदा० सटकारे बारनि के भार लंक लचकति, औचकि परी है सुनि बोल धुनि भारी को।
—सोमनाथ

औछकी—वि० [हिं० औचक] चौंकी हुई, घबराई हुई, भ्रम में पड़ी हुई, भ्रमित।
उदा० छकी सी घुमति कछु औछकी सी बात करै, चकी सी चितौनि मनीमदन हथ्यायो है। —गंग

औजस—संज्ञा, पु० [सं० अपयश] अपयश, निंदा, बदनामी, कलंक।
उदा० जहाँ जहाँ जाउँ गनै न कुठाउँ ठाउँ एक भाँति को है गाउँ डरौं औजसनि सों।
—सुन्दर

औझकना—क्रि० अ० [हिं० उझकना] १. चौंकना २. उछलना, उचकना, कूदना।
उदा० १. हौं तो रही देखि भेषैं अनसुनें अनदेखें नाउ लियें ऐसैं कोऊ औझकि परति है। —सुन्दर

औढ़ेर—संज्ञा, पु० [बुं०] बाधा, विघ्न, दिक्कत, परेशानी।
उदा० जो हम तुम बसबी इत लालन तो परहै औढ़ेरो। —बकसीहंसराज

औथरो—वि० [हिं० उथला] उथला, कम गहरा, छिछला।
उदा० अति अगाध, अति औथरो, नदी, कूप, सर वाय। —बिहारी

औदकना—क्रि० अ० [हिं० उदकना=कूदना] उछलना, कूदना, चौंकना।
उदा० चूसि हौं जो निचुरौ सो परै रसु ज्यौं, हटकावत औदुकै ऊठा। —बेनीप्रवीन
औद के साहि औरंग अति, राण सबल राजेस बर। —मानकवि

औनिबाल—संज्ञा, पु० [सं० अवनि+बाल] पृथ्वी का पुत्र, मंगल।
उदा० जावक सुरंग मैं न, इंगुर के रंग मैं न, इंद्रबधू अंग मैं न, रंग औनिबाल मैं।
—गंग

औनो—संज्ञा, पु० [?] गृह, घर।
उदा० मंडप ही में फिरै मड़रात न जात कहूँ तजि नेह को औनो। —पद्माकर

औम—संज्ञा, स्त्री० [अवम] वह तिथि जो पत्रा में लिखी जाती है, पर उसकी गणना नहीं होती।
उदा० गनती गनिबे तें रहे छतहू अछत समान। अब अलि ये तिथि औम लौं परे रहौ तन प्रान। —बिहारी

औरना—क्रि० स० [बुं०] उपाय या युक्ति सूझना।
उदा० सुधि बुधि भूलि गई तन मन की मोहि कछू नहिं औरै। —बकसीहंसराज

औलाष—संज्ञा, स्त्री० [सं० अभिलाष] अभिलाष, इच्छा, कामना।
उदा० जोई जोई औलाष सोई भाखि हारीं सबै, साख बैसाख हमरी न राखी।
—सूरति मिश्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

औली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ओल] अंचल, पल्ला २. गोद ।
मु० औली ओड़ना=आँचल पसार कर याचना करना ।
उदा० जब क्योंहू करि ग्रीवा छोड़ी । तबै पाँहुनी औली ओड़ी । —सोमनाथ

औसेरना—क्रि० स० [?] चिन्ता करना ।
उदा० जब जानी कान्हैया इनकी औसेरैगी माई । करि मनुहार बारि भरि लोचन तब घर को पठवाई । —बक्सीहंसराज

औहठी—वि० [सं० अव+हठ] बुरे हठ वाले ।
उदा० औहठी हठीले हने बदर जहांन रिपु, कौतुक कों बिबिध बिमान छिति छ्वै रहे । —गंग

अं

अंक—संज्ञा, पु० [सं० अंग] १. शरीर, अंग, देह २. चिह्न, निशान ३. लिखावट ४. गोद ।
उदा० १. जैसे भूमि अंबर के बीच में न कोऊ खंभ, तैसे लोल लोचनी के अंक में न लंक हैं । —ग्वाल

अंकिनि—वि० [सं० अंक=पाप] पापिनी, पाप करने वाली ।
उदा० कूबरी कलंकिनी वा अंकिनी को अंक लाय कीन्ह भलो कुल को कलंक तैं लगायो है । —ग्वाल

अंगी—वि० [सं० अंग] अंगवाला, सगा, सच्चा ।
उदा० माय न बाप को अंगी भयो सो हमारो कहो कब संगी भयो । —ग्वाल

अंभा—संज्ञा, स्त्री० [सं० अनध्याय, प्रा० अनंज्झा] नागा, छुट्टी, गायब ।
उदा० १. सोवै सुख मोचै शुक सारिका लचाये चोंच, रो चैन रुचिर बानि मानि रहै अंभा सी । —देव
२. अंभा-सी दिन की भई संभा सी सकल दिसि, गगन लगन रही गरद छवाय है । —भूषण

अंधाधुंध—वि० [हिं० अंधा+धुंध] १. बहुत बड़ा, विशाल २. घोर अंधकार (संज्ञा) ३. अन्याय ।
उदा० देखत मदंध दसकंध अंध धुंध दल बन्धु सों बल कि बोल्यो राजाराम बरिबंड । —दास

अंबर—संज्ञा, पु० [अ०] एक प्रसिद्ध बहुमूल्य सुगंधित पदार्थ ।
उदा० 'ग्वाल कवि' अंबर-अतर में, अगर में न उमदा सबूर हू में, है न दीपमाला में ।

अंस—संज्ञा, पु० [सं० अंशु] १. अंशु, किरण २. अंश, भाग ।
उदा० सित कमल बंस सी सीतकर अंस सी, बिमल बिधि हंस सी-हीरबर हार सी । —दास

अंसुक—संज्ञा, पु० [सं० अंशुक] बारीक रेशमी वस्त्र ।
उदा० जी में धोखो लाइ किधौ अंसुक हैं आँग के । —गंग

अँकोर—संज्ञा, पु० [देश०] घूस, रिशवत, उत्कोच ।
उदा० विचर्‌यौ न फेरि मन मेरौ रिझवार आली, लाज दै अकोर चुभ्यौ नैनन की कोर में । —सोमनाथ

अँगराना—क्रि० अ० [हिं० अँगड़ाई] अँगड़ाई लेना, उन्मत्तता का भाव प्रकट करना ।
उदा० बैठि झरोखन मैं अँगरै उझकै दुरिकै मुरिकै मुसुकातैं । —सुन्दर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क

कंक—संज्ञा, पु० [सं०] सफेद चील, कांक ।
उदा० काक कंक बालक कोलाहल करत है ।
—अज्ञात

कंकाली—संज्ञा, स्त्री० [सं० कंकाल] प्रेतिनी ।
उदा० कर गहि कपाल पीवै रुधिर, कंकाली कौतुक करे । —चन्द्रशेखर

कंचन बानै—संज्ञा, पु० [सं० कांचन=स्वर्ण, पीला+वर्ण=रंग] स्वर्ण के रंग का, पीत रंग वाला, गिरगिट, छिपकली की जाति का एक जंतु ।
उदा० जो नृग दान विधान करै, सु परै वह कूप में कंचन बानै । —सूरति मिश्र

कंचनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कंचन] वेश्या, वाराङ्गना ।
उदा० बंचनी विरागहू की, अति परपंचनी सी, कंचनी सी आज मेघमाला बनि आई है ।
—ग्वाल

कंटकारि—संज्ञा, स्त्री० [सं० कंटकारी] भट-कटैया नामक वृक्ष, जिसकी पत्तियों में दोनों तरफ काँटे होते हैं ।
उदा० हितै अहित किय हाकति, एकहि साट ।
कंटकारि की पतिया, दुहुँ दिसि काट ॥
—बेनी प्रवीन

कंद—संज्ञा, पु० [सं० कंदुक] १. कंदुक, गेंद २. बादल ।
उदा० १. औचक ही उचकौ कुच कंद सौ ।
—देव

कंधेला—संज्ञा, पु० [हिं० कंधा+एला] साड़ी का वह भाग जो स्त्रियों के कंधे पर रहता है ।
उदा० दूरतहार बारनहि बाँधे । उघरो शीश कंदेला काँधे । — बोधा

कंपू—संज्ञा, पु० [अं० कैंप] पड़ाव, डेरा ।
उदा० कंपू बन बाग के कदंब कपतान खड़े, सूबेदार साहब समीर सरसायो है ।
—पद्माकर

कँटिआना—क्रि० अ० [सं० कंटक+हिं० आंना] १. अंकुर निकलना, अँकुए फोड़ना । २. कंटकित होना, काँटे निकलना, रोमांचित होना ।
उदा० १. घूमैं घटा छटा छूटती हैं उलहे द्रुम बेलिन पत्र नये सो हरी हरी भूमि मैं इन्द्र बधू कँटिआइबे को जनु बीज बये ।
—ठाकुर
२. मनमोहन-छबि पर कटी, कहै कँट्यानी देह । —बिहारी

ककुरना—क्रि० अ० [देश०] सिकुड़ना, संकुचित होना ।
उदा० कोढ़िनि सी ककुरे कर कंजनि केसव सेत सबै तन तातो । —केशव

ककोदर—संज्ञा, पु० [सं० काकोदर] सर्प, साँप ।
उदा० आइ गये हरि जू हर पास कोपीन ककोदर को कर लीनी । —तोष

ककोरा—संज्ञा, पु० [देश०] ककोड़ा, खेखसा, परवल के आकार की एक तरकारी ।
उदा० जोरि जोरि जंघन उदर पर धरि धरि, सिकुरि सिकुरि नर होत हैं ककोरा से ।
—ग्वाल

कक्षासिखा—संज्ञा, पु० [सं० काकपक्ष] काकपक्ष केशों की पाटी ।
उदा० गजरद, मुख चुकरैंड के, कचासिखा बखानि । —केशव

कगायो करना—क्रि० अ० [अनु०] कांव-कांव करना ।
उदा० देह करें करठा करे जो लीन्हों चाहति है, कागु भई कोइल कगायो करे हम सों ।
—आलम

कचपची—संज्ञा, पु० [हिं० कचपच] चमकदार बुंदे या तारे जो शृंगार करते समय कपोल-मण्डल आदि में लगाए जाते हैं ।
उदा० कंचन की कचपची चूरिन की चमकनि छकनि की चाहनि चहक चित रही है ।
—गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कचवाई—वि० [हिं० कच्चा] भयभीत, साहस-हीन ।
उदा० जाकी मायाबस ब्रह्मादिक सकल रहैं कच-वाई । तिनको श्री वृषभानु लाड़िली छल कर छलि घर आई । —बकसी हंसराज

कचोरा—संज्ञा, पु० [हिं० कांसा + ओरा = कँसोरा] प्याला, कटोरा ।
उदा० मणि सांवरे चकरे कचोरनि माँह चंदन पंक । —गुमान मिश्र

कच्छन—संज्ञा, पु० [सं० कच्छ] नटों का शृंगार, बनाव, नटों का वेश ।
उदा० पच्छ बिन गच्छत प्रतच्छ अंतरिच्छन में अच्छ अवलच्छ कला कच्छनन कच्छे हैं । —पद्माकर

कच्छी—संज्ञा, पु० [हिं० कच्छ] कच्छ (गुर्जर) देश के घोड़े ।
उदा० कच्छी कछवाह के विपच्छन के बच्छ पर पच्छिन हलत उच्च उच्छलत अच्छे हैं । —पद्माकर

कच्छे—क्रि० स० [सं० कच्छ] सँवारना, नटों जैसा वेश बनाना, काछना ।
उदा० पच्छ बिन गच्छत प्रतच्छ अंतरिच्छन में, अच्छ अवलच्छ कला कच्छनन कच्छे हैं । —पद्माकर

कजरौटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कज्जली] कज्जली रखने का पात्र, पारा और गंधक घोटने से बनी हुई कज्जली के रखने का पात्र विशेष २. काजल रखने की डिबिया ।
उदा० भावते के रस रूपहि सोधि ले, नीके भर्‌यौ उर कै कजरौटी । —घनानन्द

कजाकी—संज्ञा, स्त्री० [फा० कज़्ज़ाक़ी] डाकूपना, डकैती ।
उदा० ये कजरारे कौन पर करत कजाकी नैन । —बिहारी

कटना—क्रि० अ० [सं० कर्त्तन] आसक्त होना, रीझना ।
उदा० मनमोहन छबि पर कटो कहै कॅटयानी देह । —बिहारी

कटरा—संज्ञा, स्त्री० [सं० कट्टार] कटारी ।
उदा० मोगरा द्विविद तार कटरा कुमुद नेजा अंगद सिला गवाच्छ बिटप बिदारे हैं । —केशव

कटा—संज्ञा, स्त्री० [हिं० काट] चोट, आघात, काट, घातकता ।
उदा० रोक री रोक करैया कहा कजरारे कटाच्छ कटा से भरे री । —ठाकुर
मेरै हियो कटिबे कौ कियो तिय तेरैं कटाच्छ कटा करिबे कौं । —पद्माकर

कटिजेब—संज्ञा, स्त्री० [सं० कटि + फा० जेब] करधनी, कमर में पहनने का एक आभूषण ।
उदा० अंग को अंगराग गेंडुआ कि गलसुई कैंधौं कटिजेब ही को उर को कि हास है । —केशव

कटैरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० काँटा] भटकटैया, जिसमें छोटे छोटे काँटे होते हैं ।
उदा० माया गर्व कोउ जनि करौ कहि तेकी बात सुहात । कंत कटेरो फूल है पलक मांहि फिर जात । —मतिराम

कठ—वि० [सं० निकृष्ट] निकृष्ट, खराब ।
उदा० बंचक कठोर ठेलि कीजै बाँट आठ आठ, झूठ पाठ कठ पाठ करी काठ मारिये । —केशव

कठिहार—संज्ञा, पु० [सं० काष्ठ + हिं० हार (प्रत्य०)] लकड़िहारा, लकड़ी बेचने वाला ।
उदा० कष्ट मांहि छूटे जब प्रान । धौरा को तन धर्‌यौ निदान । कठिहारै कै पानै पर्‌यौ । फिरत फिरत पुनि भूखां मर्‌यौ । —जसवंतसिंह

कठैठो—वि० [हिं० काठ] कठोर, निर्दय ।
उदा० बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठों । —भूषण
जी की कठेठी अठेठी गँवारिनि नेक नहीं कबहूँ हँसि हेरी । —पजनेस

कतारी—संज्ञा, स्त्री० [फा० कतार] १. पंक्ति, समूह, राशि ।
उदा० पति की पतारी हुती पातिक कतारी, ताहि तारी तुम राम, तारी तुम सौं न और है । —ग्वाल

कत्ता—संज्ञा, स्त्री० [सं० कर्त्तरी] छोटी तलवार ।
उदा० बीर रस मत्ता जाते काँपत चकत्ता यारो कत्ता ऐसा बाँधिये जो छत्ता बाँधि जाना है । —भूषण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कदंब—संज्ञा, पु० [सं०] समूह, ढेर २. एक वृक्ष, कदम ।

उदा० होति क्यों दुखित ह्वाँ कदंब है कदंब, आली, जहाँ पियाबासा है तहाँ ही पियबासा है । —बेनी प्रवीन

कद—संज्ञा, पु० [अ० कद] शरीर, तन ।

उदा० अँखियाँ मुखंबुज में मौर ह्वै समानीं, भई बानी गदगद कद कदम सो फूलिगो ।
—दास

कद आदम—वि० [अ० क़द्दे आदम] मानव शरीर के तुल्य ऊँचा ।

उदा० कद आदम सीसा लखे पजनेस लगे नख छाती छिपावति है । —पजनेस

कदर्थना—संज्ञा, स्त्री० [सं० कदर्थन] दुर्गति, दुर्दशा ।

उदा० हरि-जस-रस की रसिकता, सकल रसाइन सार, जहाँ न करतु कदर्थना, यह न अर्थ संसार । —देव

कधी—अव्य० [पंजा०] कभी, किसी समय ।

उदा० कधी अलसाय तनतोरै । अँगूठी हाथ की फोरै । —बोधा

कन—संज्ञा, पु० [सं० कण] भिक्षा ।

उदा० कन देबो सौंप्यो ससुर बहू थुरहथी जानि ।
—बिहारी

कनद—संज्ञा, पु० [सं० कण] अन्न का छोटा टुकड़ा, चावल का कना ।

उदा० मनत प्रवीन बेनी धनद सुखानो जात, कनद समेटत सकल सुख सामा के ।
—बेनी प्रवीन

कनवारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० कर्ण + बालिका] कान में पहनने का एक आभूषण, बाली ।

उदा० गुहे, गभुआरे, घुघुरारे बार सोहै सिर, मोती बीच, बनक कनक कनवारी के ।
—देव

कनसुआ—संज्ञा, पु० [हिं० कान + सुनना] आहट, टोह मुहा० = कनसुइयाँ लेना, छिपकर किसी की बात सुनना, किसी का भेद लेना ।

उदा० सुनी अनसुनी करि, काननि कनेख देखि. भीगी अँसुवनि कनसुवनि सुनत फिरै ।
—देव

कनसूवा—वि० [हिं० कान + सुनना] कान लगाकर सुनने वाली, आहट लेने वाली, भेद लेने वाली ।

उदा० ननद निगोड़ी कनसूवा कौरैं लागी रहैं सास सुनिहै तौ नाह नाहर सो करिहै ।
=केशव केशवराय

कनहेर—संज्ञा, पु० [हिं० कन = कनखी + हेंर = देखना] दर्शन, कनखी से देखना, कनखी से दर्शन करने का कार्य ।

उदा० तिखने चढ़ि ठाढ़ी रहूँ लेन करूँ कनहेर ।
—रसखान

कने—क्रि० वि० [सं० करणे] १. पास, निकट २. तक, पर्यंत ३. ओर ।

उदा० १. कारे लहकारे, कामछरी से छरारे, छरहरी छबि छोर छहराति पीड़ुरी-कने । —देव

कनै—अव्य० [सं० करणे] पास, निकट, समीप २. ओर ३. अधिकार में, कब्जे में ।

उदा० तैसी समसेर सेर काहू के कनै नहीं ।
—पद्माकर

कनौड़ी—वि० [हिं० कान + औड़ी] १. निंदित, कलंकित २. कृतज्ञ, एहसानमंद ।

उदा० १. ह्वै रही कनौड़ी मति, कौड़ी भई गोपी अति डौंड़ी फिरी लौंड़ी कीन लाज धारियतु है । 'रसकुसुमाकर' से

कनौती—संज्ञा, स्त्री० [सं० कर्ण + हिं० औती प्रत्य०] १. कान का एक आभूषण, बाली २. कानों का किनारा, नोक ।

उदा० अजौं करति उरझनि मनौ, लगी कनौंती कान । —घनानन्द

२. कनौती खुसी सीखड़ी खूब छोटी, नुकीली नचै सी कला कै जु कोटी ।
—पद्माकर

कपतपिलंग—[सं० कपोत + पिलक] पिलक कपोत रंग (श्वेत और लाल) रंग वाला घोड़ा ।

उदा० तहँ कपतपिलंगन उमड़ि उमगंन अंगन अंगन दुति उमही । —पद्माकर

कपाट मुख—संज्ञा, पु० [सं० कपाट + मुख्य = मुख्य कपाट] मुख्य कपाट, सिंह द्वार ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० कंचन रचित कोट, फटिक कपाट मुख, सीतल सघन देव द्रुम वन को विकास ।
—देव

कपिल—संज्ञा, पु० [सं०] १. चूहा २. अग्नि ३. शंकर ।
उदा० १. नाग जाके द्वादस विशेष कर जपनीय, सुमुख और दंत एक, कपिल विराज है ।
—ग्वाल

कपूर धूरि—संज्ञा, पु० [हिं० कपूर धूर] एक प्रकार का बढ़िया वस्त्र जो तिब्बत में बुना जाता है, अकबर ने इसका नाम कपूर नूर रखा था ।
उदा० बानी की कपूर धूरि ओढ़नी सी फहराति बात-बस आवति कपूर-धूरि फैली सी ।
—दास

छबि रही भरपूरि, पहिरे कपूर धूरि,
नागरी अमर मूरि मदन दरद की ।
—सेनापति

कपूर मनि—सं० स्त्री० [कर्पूरमणि] तृणमणि जो तृण को आकर्षित करती है ।
उदा० ह्वै कपूर मनिमय रही मिलि तन-दुति मुकतालि ।

कफनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कफन] गुदड़ी, फटा पुराना वस्त्र २. साधुओं की मेखला ।
उदा० मलय विभूति श्याम कंबुकी सो रघुनाथ फटी कफनी कै गजखाल गरे घाले हैं ।
—रघुनाथ

कबि—संज्ञा, पु० [सं० कवि] शुक्राचार्य, शुक्र नक्षत्र ।
उदा० जोति बढ़ावत दसा उतारि । मानो स्यामल सींक पसारि । कबि हित जनु रबि रथ तें छोरि । स्याम पाट की डारी डोरि ।
—केशव

कमण्डली—संज्ञा, पु० [सं०] १. साधु, सन्यासी २. पाखण्डी ।
उदा० १. कुंडलीस, चंडीस, कमण्डली सहित मुनि मण्डली विमोही, रास मण्डली विलोकि कै ।
—देव

कमलाकर—संज्ञा, पु० [सं०] १. सरोवर, तालाब २. कमलों का आकर ।
उदा० १. अन्तर सुधाजल विमल कमलाकर, गहीर छबि हीरन जटित तट आस-पास ।
—देव

कमलाग्रजा—संज्ञा, स्त्री० [सं० कमल + अग्रजा] लक्ष्मी की बड़ी बहन, दरिद्रा ।
उदा० कमला ज्यौं थिर न रहति कहूँ एक छिन कमलाग्रजा ज्यौं कमलनि तें डरति हैं ।
—केशव

कमेरा—संज्ञा, पु० [हिं० काम + एरा] (प्रत्य०) दास, सेवक, नौकर, मजदूर ।
उदा० जिनको तू मानत है मेरे ए कमेरे तौ, साथी नाहि तेरे जिन भ्रमै जग छल में ।
—सूरति मिश्र

करक—संज्ञा, पु० [सं०] १. कचनार नाम का पुष्प २. दाड़िम ।
उदा० १ ब्रजतिय पूरित प्रेम अखंडित कुंडल श्रवण करक मनि मंडित ।
—सोमनाथ

करकना—क्रि० अ० [हिं० कड़कना] १. कड़कना, डाँटना, दपेटना, गरजना, तड़पना २. सालना, कसक से भरे रहना ।
उदा० १. एक संग द्रोन द्रोनी भीषम प्रवीन बेनी, करन दुसासन कुलाहल कै करकै ।
—बेनी प्रवीन

२. द्विजदेव लखैं मन संतनहूँ के, अनंत कुढ़े करकेई रहैं ।
—द्विजदेव

करकर—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] कड़क, हूक ।
उदा० किरच कपूर कर कोरें बीरी भरि हरि, कर बीरी देत करकर उठी रस ही ।
—आलम

करकानि—संज्ञा, पु० [सं० करक] १. मौलश्री २. कचनार ।
उदा० कुमुद कलानिधि कपूर करकानि कुन्द, कास कै बिलास हास सदर जुन्हाई है ।
—हफीजुल्लाखाँ के हजारा से

करंज—संज्ञा, पु० [सं० कलिंग, फा० कुलंग] मुर्गा ।
उदा० पाढ़े पीलखाने औ करंजखाने कीस हैं ।
—भूषण

करकस—क्रि० वि० [सं० कर्कश] कठिनाई से, दुखों, से कठोरता से ।
उदा० आयौ तू कहाँ ते उपजायौ कौन कौन बिधि, पालि कैं बढ़ायौ कहो, कौन करकस तें ।
—ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करखना—क्रि० स० [सं० कर्षण] खींचना, आकर्षित करना, मोहित करना ।
उदा० छेंल हियो करखै निरखै जब । —बाँधा
हेम के तार लोनाई के जंत्र मनोज सोनार किधौं करखे हैं । —नन्दराम

करच्छ—संज्ञा, पु० [प्रा० कलक्ख, सं० कटाक्ष] कटाक्ष, तिरछी चितवन ।
उदा० लसैं बड़े लोचन लाल तिरखे ।
सरावली रीति करच्छ सिखे ।
—सोमनाथ

करछाल—संज्ञा, स्त्री० [हि० कर + उछाल] छलांग, उछाल, कुदान ।
उदा० हाव भाव प्रति अंग लखि छबि की झलक निसंक । भूलत ग्यान तरंग सब ज्यों करछाल कुरंग । —रसलीन

करटी—संज्ञा, पु० [सं०] हाथी, गयंद ।
उदा० जहिं दास अहित मति सकल कटी कटि सिंह बिलोकित गति करटी । —दास

करटीनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० करेटी] हथिनियाँ ।
उदा० मधुकरकुल करटीनि के कपोलनि तें उड़ि उड़ि पियत अमृत उड़पति मैं ।
—मतिराम

करठा—वि० [देश०] श्याम, अत्यन्त काली ।
उदा० देह करे करठा करेजो लीन्हों चाहति है ।
—आलम

करद—संज्ञा, स्त्री० [?] छूरी ।
उदा० दरद हरे हैं तब सरद-निसा में स्याम,
अब क्यों करद लै करेजा फारियतु है ।
—'हजारा' से

करनाल—संज्ञा, पु० [अ० करनाय] नरसिंह, भोंपू २. एक प्रकार का बड़ा ढोल ।
उदा० कहूँ सोभना दुंदुभी दीह बाजैं । कहूँ भीम झंकार कर्नाल साजैं । —केशव

करबर—संज्ञा, पु० [सं० कर्बर] १. चीता २. कलबल, छल ३. विपत्ति, आफत ।
उदा० १. डारी सारी नील की ओट अचूक चुकैं न । मो मन-मृग करबर गहैं अहे अहैरी नैन । —बिहारी

करभोरु—संज्ञा, स्त्री० [सं० करभ + उरु] हाथी की सूंड़ के समान जाँघ वाली नायिका ।
उदा० इन भांतिनि भोरु करै करभोरु सु, और न छोर कहा दुख दीजै । —गंग

करवा—संज्ञा, पु० [सं० करक] मिट्टी या धातु का बना टोंटीदार लोटा ।
उदा० करवा की कहाँ गंग तरबा न तीते होहिं,
सरवा न बूड़ै परवाह नदी नार के ।
—गंग

करवारी— संज्ञा, पु० [हिं० करिहारी या करियारी] एक पुष्प ।
उदा० झीने करवारी सों झमाइ झमझमे झमा झमकति झाईं सी झमकि भूपरन की ।
—देव

करवोटी—संज्ञा, पु० [देश०] एक चिड़िया का नाम ।
उदा० करवोटी बगबगी नाक बासा बेसर दै श्यामा बया कूर ना गरूर गहियतु है ।
—रघुनाथ

करस—संज्ञा, पु० [सं० कलश] घट, कलशा, घड़ा ।
उदा० एरी वृषभानु की कुमारि तेरे कुच किधौं, रूप अनुरूप जातरूप के करस हैं ।
—केशव

करसायल—संज्ञा, पु० [सं० कृष्णसार] काला मृग ।
उदा० घायल तराइल सी मानो करसाइल सी ।
—आलम
बालन की अवली गुण सो पुर अन्तरजाल मनोज पसारयो । पै नृप नैन दुओ करसायल फांसि सक्यो न किती कहि हार्‌यो ।
—गुमान मिश्र
घायल ह्वै करसायल ज्यौं मृग त्यौं उतहीं, अतुरायल घूमैं । —देव

करहरिया—संज्ञा, पु० [हिं० काल + हरा] काले और हरे रंग के घोड़े ।
उदा० दीरघ दल दरसत आनँद बरसत सोमनि सरसत करहरिया । —पद्माकर

कराई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० काला] कालापन, श्यामता ।
उदा० भनत कबिन्द कारे कान्हर के मिलिबे को, आज ही तो सिगरी कराई ही दिखाति है ।
—कवीन्द्र

कराचोली—संज्ञा, पु० [?] कवच ।
उदा० कराचोली काम की, कि सोभा करै स्याम की कि, जिय ही की बैरिनि बिराजमान बेनी है । —गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कराबीन—संज्ञा, स्त्री० [तु०] छोटी बंदूक; एक प्रकार की तोड़ेदार बंदूक जो सौ वर्ष पूर्व प्रचलित थी ।

उदा० कराबीन छुट्टैं करैं बीर चुट्टैं करी, कंध टुट्टैं इतै उत्त बुट्टैं । —पद्माकर

करिन्द—संज्ञा, पु० [सं० करीन्द्र] गजेन्द्र, श्रेष्ठ हाथी ।

उदा० आकै बरबानी बुद्धि बदन करिन्द को । —सोमनाथ

करि—संज्ञा, स्त्री० [सं० कांड] कांड, हाल, करनी ।

उदा० गहिये मुख मोन भई सो भई अपनी करि काहू सो का कहिये । —बोधा

करिया—संज्ञा, पु० [सं० कर्ण=नाव की पतवारी] पतवारी धारण करने वाला, मल्लाह, माँझी ।

उदा० यह बिरिया नहिं और की, तूँ करिया वह सोधि । पाहन-नाव चढ़ाइ जिहिं कीने पार पयोधि । —बिहारी

करूर—संज्ञा, पु० [सं० कटु] १. कष्ट, पीड़ा २. कटु, कड़ुआ ।

उदा० १. राखिये गरूर मिटै लखन करूर रघुराज रूर भेजिये जरूर द्रोनाचल को ।— समाधान

करूरा—संज्ञा, पु० [सं० कवल] करूला, कुल्ला; गंडूष २. हाथ में पहनने का कड़ा ।

उदा० भाखि तमोर विषयी मन हरै । मनहुँ कपूर करूरा करै । —केशव

करेंट—वि० [हिं० काला] श्याम, काला ।

उदा० गुंज छरा रसखानि बिसाल अनंग लजावत अंग करेटो । —रसखानि

करेटो—संज्ञा, पु० [हिं० करैत] काला फणदार सर्प जो अत्यन्त विषैला होता है ।

उदा० पुतरी अतुरीन कहूँ मिलि कै लगि लागि गयो कहुँ काहु करेटो । —रहीम

करोटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० काला+औटी] कालापन, श्यामता ।

उदा० दास बड़ी बड़ी बातैं कहा करौ आपने अंग की देखौ करोटी । —दास

करोर—संज्ञा, पु० [हिं० खरोंच] खरोंच, छिलना ।

उदा० खंजन कटारी नैन, अंग भर्यो काम भारी, भौंह के मरोर में करोर कहूँ कै गई । —गंग

करोरी—संज्ञा, पु० [हिं० करोड़] तहसीलदार ।

उदा० आयो है बसन्त ब्रज ल्यायो है लिखाइ आली; जोन्ह कै जलेबदार काम को करोरी है । —आलम

करौत—संज्ञा, पु० [सं० करपत्र] आरा, लकड़ी चीरने का औजार २. काँच का बड़ा बर्तन [हिं० करवा]

उदा० १. ज्यों ज्यों कर कोंगही लै बारन सँवारति हौ, सौतिन की आँखिन करौत दीजियतु है । —सुन्दर

करौलन—संज्ञा, पु० [हिं० कर+रौल=शोर] हँकवा करने वाले, शिकारी ।

उदा० भूषन भौ भ्रम औरँग के सिव भ्वैसिला भूप की धाक धुकाये । धाय कै सिंधु कह्यौ समुझाय करौलन जाय अचेत उठाये । —भूषण

कर्दम—संज्ञा, पु० [सं०] माँस, मास का चारा जो कँटिया में लगाया जाता, मछलियों को फँसाने का चारा २. पंक, कीचड़ ।

उदा० बंक हियेन प्रभा सँरसी सी । कर्दम काम कछू परसी सी । —केशव

कर्भ—संज्ञा, पु० [सं० करभ] ऊँट का बच्चा ।

उदा० इक कर्भ पै इक सर्भ पै खर अर्भ पै सतुरंग पै । —समाधान

कलंदर—संज्ञा, पु० [अ०] १. मदारी, बंदर भालू नचाने वाला । २. एक प्रकार का रेशमी वस्त्र ।

उदा० १. तदपि नचावत सठ हठी नीच कलंदर लोभ । —बिहारी

२. ताफता कलंदर बाफत बंदर मुसजर सुंदर गिलमिल है । —सूदन

कलकना—क्रि० अ० [हिं० कलकल] चिल्लाना, शोर करना ।

उदा० कहूँ समुहै आइ सुनाइ सुबोलनि, कान्ह देखाइ गयो झलकै । तबते वह बेनीप्रवीन कहै, नहिं बोलत बोल कितो कलकै । —बेनी प्रवीन

कलकान—वि० [अ० कलक=दुख] दुखित, बेचैन ।

उदा० निसि कैसी कोको हौं कलपि कलकान भई अब अति बिकस बिलोकी अलबेली मैं । —बेनी प्रवीन

कीर की कलह कलमल्यो मनु कोकिलाहू,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुहकि कुहकि कान कलकान करी है ।
—आलम

कलकी—संज्ञा, पु० [सं० कल्कि] कल्कि अवतार ।

उदा० कलकी ह्वै राखे रहैं हिंदूपति पति देत, म्लेच्छ हति मोक्षगति 'दास' ताको दास है । —दास

कलत्थना—क्रि० अ० [हिं० कलथना] कलथना, छटपटाना ।

उदा० उलत्थैं पलत्थैं कलत्थैं कराहैं न पावैं कहूँ सोक सिंधून थाहैं । —पद्माकर

कलप—संज्ञा, स्त्री [सं० कल्पन] विलाप, दुख ।

उदा० राखी न कलप तीनो काल विकलप मेटि, कीनो संकलप, पै न दीनो जाचकनि जोखि ।
—देव

कलपना—क्रि० अ० [सं० कल्पन] १. गिनना, विचार करना २. कलपना, चीत्कार करना, दुखी होना, विलाप करना ।

उदा० पल कलपै कलपै पिय प्यारो ।
सोभित घन बन लसत तिहारो ।
—पदमाकर

निसि कैसी कोकी हौं कलपि कलकान भई, अब अति विकल बिलोकी अलबेली मैं ।
—बेनी प्रवीन

कलबंकी—संज्ञा, पु० [सं० कलविंक] गौरैया पक्षी, चटक ।

उदा० कलबंकी कों कैसे भावै जदपि मुकुत है जगत प्रसंसी । संसारै नीको लागे पै अनकन कबहुँ चुगति नहीं हंसी । —दास

कलबत्तन—संज्ञा, पु० [तु० कलाबतून] कलाबत्तू, सोने चाँदी आदि का तार जो रेशम पर चढ़ा कर बटा जाता है,

उदा० कबि 'आलम' ये छबि ते न लहे जिन पुंज लये कलबत्तन के । —आलम

कलरव—संज्ञा, पु० [सं०] १. कबूतर २. कोयल ।

उदा० १. ललित लता, तरुवर कुसुम, कोकिल कलरव मोर । बरनि बाग अनुराग स्यों, भँवर भँवत चहुँ ओर । —केशव

कलरौ—संज्ञा, पु० [सं० कलरव] कोकिल, मधुर ध्वनि बोलने वाले पक्षी ।

उदा० सखि चैत हैं फूलनि को करता करने सु अचेत अचैन लग्यो । कहि दास कहा कहिये कल रौहि जु बोलन बैकल बैन लग्यो । —दास

कलाद—संज्ञा, पु० [सं०] स्वर्णकार, सोनार ।

उदा० जा दिन तैं तजी तुम- ता दिन तैं प्यारी पै कलाद कैसो पेसो लियौ अधम अनंग हैं ।
—द्विजदेव

कलाकन्त—संज्ञा, पु० [सं०] कलाधर, कलापति, चन्द्रमा ।

उदा० जारि लै रे कुटिल कलंकी कलाकन्त आजु मारि लै री सुरभि समीर मंद गति की ।
—चन्द्रशेखर

कलापात—संज्ञा, पु० [?] उपद्रव, बदमाशी ।

उदा० कूकि कूकि कोयल करैगी कलापात त्योंही कोकिल कलाप कै अलाप अनुसारि है ।
—चन्द्रशेखर

कलाबर—संज्ञा, पु० [सं० कला + बरः = पतिः] कलाधर, चन्द्रमा ।

उदा० वर बागे लला अनुरागे अलौकिक लागे कलाबर तै बन मैं । —चन्द्रशेखर

कलामुख—संज्ञा, पु० [सं०] चन्द्रमा,, कलाधर ।

उदा० चौहरी चौक सों देख्यो कलामुख पूरब तें कढ़्यो आवत है री । —दास

कलामिनी—वि० [अ० कलाम] बोलने वाली भाषिणी,

उदा० कानन करन फूल, कोमल कपोल, कंठ कंबुक, कपोत कौर कोकिल कलामिनी ।
—बेनी प्रवीन

कलाल—वि० [सं० कराल] कराल, भयंकर ।

उदा० निर्मलता गुन मोती बिंधाइ छिप्यौ कुटिलाल, कलाल फनिंद सों । —देव

कलालि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कलाछ] बेचैनी से इधर उधर घूमना ।

उदा० पालिक तें भुव भूमि तें पालिक आलि, करोरि कलाल करैं जूं । —केशव

कलाव—संज्ञा, [सं० कलापक] हाथी के गले की रस्सी ।

उदा० पीत कांछ कंचुक तियन, बाला गहे कलाव, जाहि ताहि मारत फिरै, अपने पियके ताव । —रहीम

कलिंदे—संज्ञा पु० [सं० कालिंदी] तरबूज ।

उदा० तासों बड़ाई करौ, कोई जानै न, काल्हि के जोगी, कलिंदे के खप्पर । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कलुखी—वि० स्त्री० [सं० कलुष] दोषी, कलुषित ।
उदा० बैरी इहि बंधु देव दीन बंधु जानि, हम बंधन में डारे, तुम न्यारे कलुखी भये ।
—देव

कलोरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० कल्या] वह गाय जो बरदाई या ब्याई न हो ।
उदा० लाड़िली लीली कलोरी लुरी कहें लाल लुके कहँ अंग लगाइ कै । —केशव

कल्प—संज्ञा, पु० [सं०] तन, शरीर ।
उदा० कल्प कलहंस को, कि छीरनिधि छवि प्रच्छ हिम गिरि प्रभा, प्रभु प्रगट, पुनीत है । - केशव

कल्हार—संज्ञा, पु० [सं कल्हार] श्वेत कमल ।
उदा० कुल कल्हार सुगंधित भनौ । मुभ सुगंधता के मुख मनौ । —केशव

कवनी—वि० [सं० कमनीय] कमनीय, सुन्दर ।
उदा० कछनी कटि स्वछ कछे कवनी बरही बर पुछ को गुछ बनो ।
कवनी भुज स्याम के कंध धरे
रवनी मनो प्रीति की रीति बढ़ी । —आलम
कहिये कहा महारुचि रवनी । कवनी निपट नंद-अज अवनी । —घनानन्द

कवि—संज्ञा, पु० [सं०]१. शुक्र २. काव्यकर्ता ।
उदा० कवि कुल विद्याधर, सकल कलाधर राज-राज वरवेश बने । —केशव

कवित:न-संज्ञा, पु० [हिं० कवि] कविगण, कवि-लोग ।
उदा० १. कैधो रतिनायक के पाट पै सिंगार लीक देखि कवितान की सुमति भटकति है ।
—श्रीपति
२. देव कवितान पुण्य कीरति बितान तेरे सुमृति पुराण गुणगान श्रुति भरिये ।—देव

कस—संज्ञा, पु० [फा०] १. बल, जोर, काबू २. खींचातानी ३. अँगिया कसने की डोरी रस्सी [हिं० कसन, स्त्री०]
उदा० हौं कसु कै रिस के करौं ये निसुके हंसि देत । —बिहारी
रहि न सक्यौ कस करि रहयो बस करि लीन्हौ मार । —बिहारी
३. अँगिया सित झीनी फुलेल मली तरकी ठौर ठौर कसी कस री । —आलम

कसबाती—वि० [अ०] कसबे के रहने वाले, शासक से मिल जाने वाले ।
उदा० सिमुता-अमल-तगीर सुनि भए और मिलि मैंन ।
कहौ होत हैं कौन के ए कसबाती नैन,
—बिहारी
ऐसी कसबाती तू तो नेक न डराती काहू छाती ना दिखाउ कोऊ छाती मारि मरिहै । —द्विजनन्द

कसबी—संज्ञा, स्त्री० [अ० कसब = वैश्यावृत्ति] वैश्या, रंडी, कुलटा ।
उदा० आप चढ़ो सीस यह कसबी सी दीन्ह औ हजार सीस वारे की लगाई अटहर है ।
—पद्माकर

कसाउ—संज्ञा, पु० [हिं० कसना] चोली का बंद, कंचुकी की डोरी ।
उदा० झीनी आंगी झलकै उरोज को कसाउ कसे, जावक लगायें पाउँ पावक तें गोरी है ।
—आलम

कसा—संज्ञा, स्त्री० [सं० कशा] चाबुक, सोंटा कोड़ा ।
उदा० काम कसा किधौ राजति हैं कल कीधौ शृंगार की बेलि सुधारी । —रघुराज

कसाकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कसक] कसक, पीड़ा, वेदना ।
उदा० कहै नंदराम बावरी सी ह्वै बिहाल भई ऊंची सी उसासन कसाकी उठी पासुरी ।
—नंदराम

कसार—संज्ञा, पु० [सं० कासार] छोटा तालाब ।
उदा० काम के कसारन की कूलन की कूपिका की असित तिलक कै सिंगार के सदन हैं ।
—बलभद्र

कसीसैं—संज्ञा, स्त्री०[फा० कशिश] १. कृपा, दया २. कष्ट, पीड़ा, वेदना ३. खिचाव ।
उदा० १. तुम्हैं निसि द्योस मनभावन असीसैं ।
सजीवन हौ करौ हम पै कसीसैं ।
- घनानन्द
२. सेखर इहाँ लौं सहै काम की कसीसैं हाय देखे को हिये की कठिनाई मौन धर की । —चन्द्रशेखर

कसूमी—वि० [हिं० कुसुंभी] लाल, कुसुम के रंग का ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० चाले की चूँदरि चारु कसूमी सुगंधसनी दमकैं तन गोरैं । —ग्वाल

कसौनी— संज्ञा, स्त्री० [हिं० कसनि] कंचुकी, चोली ।

उदा० एकै लिये करमें बिरी तेहू बनै नहिं खात एक लिये कर में कसौनी सो कसी नहिं जाय । —बोधा

कस्त—संज्ञा, पु० [अ० कस्द] इरादा, दृढ़, निश्चय ।

उदा० यह कस्त करि आए यहाँ कै रन हथ्यारन भेटबी । —पद्माकर

कहकहा – संज्ञा, स्त्री० [सं० काकली] काकली, कोयल की ध्वनि ।

उदा० देव केलि कानन में कहकहा कोकिल की, सुने धुनि लहलहा महामोद माधुरी । —देव

कहर– संज्ञा, पु० [अ०] आफत, संकट, आपत्ति,

उदा० देखत ही मुख बिष लहरि सी आवै लगी जहर सौं नैन करै कहर कहार की । – देव

कहलाना क्रि० अ० [हिं० कहल] १. गरमी से व्याकुल होना २. कसमसाना ।

उदा० कहलाने एकत बसत अहि मयूर मृग बाघ । —बिहारी

काँचरी—संज्ञा, पु० [हिं० केंचुल] साँप का केंचुल, निर्मोक ।

उदा० काँचरी सो चीर काच काँचन की ओप आँग, काच की चुरी की जेब जग मोहियत है । — गंग

काँधना—क्रि० स० [हिं० काँध] स्वीकार करना, अंगीकार करना २. भार लेना ।

उदा० १. पाग है आई अनेक इहाँ मन मैलो करौ कछु ना हम काँधै । — बेनी प्रवीन

काँपा—संज्ञा, पु० [सं० कंपा] हाथी के दाँत ।

उदा० मेह लौं गरजि मदधार बरसै, घनी काँति बहु भाँति काँपाति दाँते । —देव

काकनी— संज्ञा, स्त्री० [सं० कंकण] कंकण, कलाई में पहनने का एक भूषण, चूड़ी, बलय ।

उदा० झाँकनी दै कर काकनी की सुने, काननि बैन, अनाकनी कीने । —देव

काचली—संज्ञा, पु० [हिं० केंचुल] केंचुल, निर्मोक ।

उदा० कूबरी ह्वै कारो कान्ह द्वारिका निकारि गयो, देव ब्रज क्वारिका निकरि गयो काचली । —देव

काछ—संज्ञा, पु० [सं० कच्छ] नृत्य करते समय की वेशभूषा ।

उदा० काछ नयो इकतौ बर जेउर दीठि जसोमति रांज करयोरी । —रसखानि

काछैं क्रि० वि० [सं० कच्छ] समीप, पास ।

उदा० कान्ह प्रिया बनिकै विलसैं सखी साखि सहेट बदी जिहि काछै । —आलम

काजरि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० क़जरी] कजरी गाय

उद० काजरि के हित सों कवि 'आलम' आवत लै बछरू धरि कांधे । —आलम

काती—संज्ञा, स्त्री० [सं० कर्त्री] १. छोटी तलवार, कत्ती २. चाकू, छुरी ३. कैंची ४. सुनारों की कतरनी ।

उदा० १. बिरह- कतल-काती किधौं पाती आनंद कंद । —दास

कानीन—संज्ञा, पु० [सं०] कुमारी से उत्पन्न जारज पुत्र ।

उदा० आप कुंड, गोलक पिता, पितृ-पिता कानीन । लखो सु 'नागर' भक्ति, जस पाँडव नित्य नवीन । —नागरीदास

काबिली—संज्ञा, स्त्री० [अं० काबिलीयत] चतुराई, योग्यता, पांडित्य ।

उदा० चषमति सुमुखी जरद कासनी है सुख चीनी स्याम लीला माह काबिली जनाई है । —बेनी प्रवीन

काबिस—संज्ञा, पु० [सं० कपिश] काला और पीला मिश्रित रंग, एक रंग जिससे रंग कर मिट्टी के बर्तन पकाए जाते हैं ।

उदा० काबिस तिहारे अंग ठहरि गयो री बाल, काबिस को रंग तेरे तन में छहरि गो । —नन्दराम

कामपाल संज्ञा, पु० [?] बलराम, श्री कृष्ण के बड़े भाई ।

उदा० ह्वै है कामपाल की बरसगाँठि वही मिस अब मैं गोपाल की सौं पालकी मैं ल्याइहौं । —दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कामिनी—वि० [हिं० काम=स्वार्थ] स्वार्थिनी, वह स्त्री जो बड़ी स्वार्थ रखने वाली हो।
उदा० बामा, भामा, कामिनी कहि बोलौ, प्रानेस। —बिहारी

कारकुन—संज्ञा, पु० [फा०] प्रबन्धकर्ता २. करिंदा।
उदा० करि कारकुन पिक बानी चीठी आई जमा बिरह बढ़ाई छबि रैयसि मरोरी है, —आलम

कारचोबी—संज्ञा, पु० [फा०] जरदोजी, कसीदा कारी
उदा० कारचोबी कीमत के परदा बनाती चारु चमक चहूँधा समादान जोत जाला में। —ग्वाल

कार्मुक—संज्ञा, पु० [सं०] धनुष।
उदा० भ्रकुटी बिराजति स्वेत मानहु मंत्र अद्भुत सामके। जिनकें विलोकत ही विलात् अशेष कार्मुक काम के। —केशव

कालबूत—संज्ञा, पु० [फा० कालबुद] वह ढाँचा जिस पर कोई वस्तु आकार शुद्ध करने के लिए चढ़ाई जाती है। २. मिट्टी अथवा ईंट का वह ढाँचा जो छत या द्वार का कड़ा जोड़ते समय सहारे के लिए दिया जाता है।
उदा० कालबूत दूती बिना जुरै न और उपाइ। फिरि ताकैं टारै बनै पाकैं प्रेम लदाइ। —बिहारी

कावक—संज्ञा, स्त्री० [फा० काबुक] कबूतरों के रहने का दरबा २. चक्रवाक [सं०]।
उदा० १. संग ही बोलि उठे तजि कावक लाव कपोत कपोत के सावक। —देव
२. चौकहि की चुनरीं पहिरैं सुनरीं आमन उनरीं उई मनौ। पावन में जावक जनु छबि कावक परगट पावक सी जु घनीं। —पद्माकर

कास—संज्ञा, पु० [हिं० आकाश] आकाश, नभ।
उदा० केसर के रंग बहे छज्जन पै छातन पै नारे पै नदी पै औनिकास में उछाल है। —ग्वाल

कासनी—संज्ञा, स्त्री० [फा०] एक प्रकार का नीला रंग जो कासनी के पुष्प जैसा होता है।
उदा० चषमति सुमुखी जरद कासनी है। सुख चीनी स्याम लीला माह काविली जनाई है। —बेनी प्रवीन

काहरवा—संज्ञा, पु० [फा० कहरुबा] तृणमणि, एक हलका पत्थर जो तृण को अपनी ओर खींचता है।
उदा० काहरवा को रवाहित बालको खैंचे लगै तन दूब लौं बीछे। —पजनेस

काहल—संज्ञा, पु० [सं०] सेना की एक बडी ढोल, वाद्य विशेष।
उदा० गुंजत ढोलक रुंजक पुंज, कुलाहल काहल नादति तामें। —देव

किनका—संज्ञा, पु० [सं० कणिक] अन्न का टूटा हुआ अंश, कण।
उदा० भोड़र के किनका ये लाल के बदन पर निरखि जोन्हाई बीच ऐसे लसैं जगि जगि। —रघुनाथ

किनाने—वि० [हिं० किनना=खरीदना] खरीदे हुए, मोल लिए हुए, वशीभूत।
उदा० कूबरी दूबरी जाति न ऊबरी, डूबरी बात सुसाँची किनाने। —देव

किबला—संज्ञा, पु० [अ०] सम्मान, आदर, प्रतिष्ठा।
उदा० किबले के ठौर बाप बादशाह साहजहाँ वाको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है। —भूषण

किमाम—संज्ञा, पु० [अ० किवाम] शहद के तुल्य गाढ़ा बनाया गया शरबत, खमीर।
उदा० करि सकौं कैसे गोपिकान की बराबरी मैं, हौं न धारी सीस डाली दही के किमाम के। —ग्वाल

किरकिला—संज्ञा, स्त्री० [सं० कृकल, हिं० किल-किला] मछली खाने वाली एक छोटी चिड़िया।
उदा० मन मनभावन को मानो किरकिला, सोभा-सिंधु मैं थिरकि चख-झख पै झपटि पर्‌यो। —देव

किरच—संज्ञा, स्त्री० [सं० कृति] काँच आदि का छोटा टुकड़ा।
उदा० कोमल कूकि कै क्वैलिया कूर करेजनि की किरचैं करती क्यों। —देव

किरना—क्रि० स० [सं० विकीर्ण] बिखरना फैलना,।
उदा० जमुनातट कुंज कदम्ब के पुंज तरे तिनके नव नीर किरैं। —प्रतापसाहि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किरवान—संज्ञा, स्त्री० [सं० कृपाण] तलवार
उदा० तहाँ लच्छन सुजान झुकि झारैं किरवान
—खुमानकवि

किरवान सु धीर के अंग दई।
कटि टोप कछू सिर मांझ भई।
—जोधराज

किरवार—संज्ञा, पु० [सं० कृतमाल] अमलतास, एक वृक्ष जिसमें लम्बी और गोल फलियाँ लगती हैं।
उदा० केसरि किंसु कुसुंभ कुरौ किरवार कनैरिन रंग रची है। —देव

किरवारो—संज्ञा, स्त्री० [हिं० किलवारो] किलवारी, पतवार, २. तलवार।
उदा० रन समुद्र-बोहित कों छियौ। करिया सो किरवारो लियौ। —केशव

किलाएँ—संज्ञा, पु० [फा० कलावा] हाथी के गले में पड़ा हुआ रस्सा, जिसमें पैर फँसाकर महावत हाथी को चलाता है।
उदा० कहै पद्माकर महावत के गिरे कूदि किलकि किलाएँ आयो गज मतवारे की।
—पद्माकर

किसान—संज्ञा, स्त्री [सं० कृशानु] आग।
उदा० मदन किसान की लपट धूम लपिटी कि सान धरैं नैन बाण बेधनि किसान की।
—देव

कीकना—क्रि० अ० [अनु०] की की करके चिल्लाना।
उदा० खेलै देवकी को देव कीको न डराइ सब कीको व्रजमण्डल बकी को रूप देखि कै।
—देव

कीमखाप—संज्ञा, पु० [फा० कीमख्वाब] एक प्रकार का कपड़ा जिसमें जरी आदि का काम बना रहता है।
उदा० घेरदार पाँइचे, इजार कीमखापी तापै पैन्हि पीत कुरती रती को रूप लीपै है।
—ग्वाल

कीलना—क्रि० अ० [सं० कीलन] मंत्र द्वारा साँप को वशीभूत करना।
उदा० कारे हो कान्ह निकारे हो कीलि रहे गुन लीलि पै औगुन थाहत। —देव

कुंचिका—संज्ञा, स्त्री० [सं०] बांस की टहनी।
उदा० अलक अलिक भ्रू कुंचिका, किंशुक शुक मुखलेखि। —केशव

कुँड—संज्ञा, पु० [सं०] सधवा स्त्री का जारज पुत्र।
उदा० आपकुंड, गोलक पिता, पितृ पिता काननि, लखो सु नागर भक्ति, जस पांडव नित्य नवीन। —नागरीदास

कुंडलीस—संज्ञा, पु० [सं० कुंडलीश] शेषनाग।
उदा० कुंडलीस, चंडीस, कमण्डली सहित मुनि मण्डली विमोही, रास मण्डली विलोकि कै।

कुंडी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] पत्थर का प्याला, पथरी।
उदा० प्रेम की पाती प्रतीति कुंडी दृढ़ताई के घोटन घोटि बनावै। —बोधा

कुकुज—संज्ञा, पु० [सं० कु=कुत्सित+कु=पृथ्वी+ज=उत्पन्न] खराब वृक्ष।
उदा० चंदन! बंदन जोग तुम धन्य द्रुमन में राय देत कुकुज कंकोल लों देवन सीस चढ़ाय।
—दीनदयाल गिरि

कुकुरा—संज्ञा, पु० [सं० कुक्कट] मुर्गा, ताम्रचूड़।
उदा० कै बहिको कुकुरा बहु क्रूर कि वाकी तिया कहुं काहू हनी है। —देव

कुगंधि—संज्ञा, स्त्री० [सं० कुगंध] पातक, पाप।
उदा० दरस परस ही ते थिर चर जीवन की कोटि कोटि जन्म की कुगंधि मिटि जात है।
—केशव

कुगोल—संज्ञा, स्त्री० [सं० कु=पृथ्वी+गोल=मंडल] भूमंडल, पृथ्वी।
उदा० मच्छ ह्वै कै बेद काढ्यो कच्छ ह्वै रतन गाढ्यो कोल ह्वै कुगोल रद राख्यौं सविलास है। —दास

कुघा—अव्य० [सं० कोण] तरफ, ओर।
उदा० चौहूँ कुघा तड़िता तड़पै डरपै बनिता कहि केसव साचैं। —केशव

कुचना—क्रि० स० [सं० संकुचन] शिथिल होना, संकुचित होना, सिकुड़ना।
उदा० कँपै उर बानि डगै बर डीठि—त्वचाऽति कुचै सकुचै मति बेली।
—केशव

कुची—संज्ञा, स्त्री० [बु०] कुंजी।
ज्ञान कपाट कुची जनु खोलत। —केशवदास

कुज—संज्ञा, पु० [सं०] १. वृक्ष, पेड़ २. मंगल ग्रह।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. नदी कूल कुज मूल परसि विनसै रद करतें । —दीनदयाल गिरि

कुतरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कुत्ता, श्वान] कुतिया, श्वानी ।

उदा० सोयो सब सहर पहर देकै पाहरू औ जान्यो जब जागत न कहूँ कोऊ कुतरी । —रघुनाथ

कुनित—वि० [सं० क्वणित] बजता हुआ, मधुर ध्वनि करता हुआ ।

उदा० केसव कमल मूल अलिकुल कुनित कि मनु प्रतिधुनित सुमनित निचयके । —केशव

कुन्नस—संज्ञा, स्त्री० [फा०] प्रार्थना, विनती ।

उदा० इतने चरण जन एक तहं कुन्नसकर कर जोर, अर्जवन्त ठाढ़ो भयो नजर अग्र-भय छोर । —बोधा

कुबंड—संज्ञा, पु० [सं० कोदण्ड] धनुष ।

उदा० उदित प्रताप उदैसाहि के प्रताप साहि, रोस सुनि काहि रही कूबति कुबंड मैं । — गंग

कुबत—संज्ञा, स्त्री० [सं० कु + वार्ता] खोटाई बदमाशी, बुरी बात ।

उदा० कहति न देवर की कुबत कुल तिय कलह डरात । —बिहारी

कुबरी—संज्ञा, स्त्री० [हि० कुबड़ा] १. टेढ़िया, वह छड़ी जिसका अग्र भाग झुका हो २. कंस की दासी कुब्जा ।

उदा० १. पाठ करै सब जोग ही को जुपै काठहू की कुबरी कहूँ पावैं । —दास

कुबल—संज्ञा, पु० [सं० कुबलय] १. कुबलय, कमल २. मोती, ३. जल ।

उदा० १. केसरि असोक केस कुबल कदम्ब कुल कुंज-कुंज मंजु अलि पुंज भनि रहे हैं । —देव

कुमक– संज्ञा, स्त्री० [तु०] सहायता, मदद ।

उदा० केलि-रस साने दोऊ थकित बिकाने तऊ, हां की होत कुमक सुनाँ की धूम धाम पर । —द्विजदेव

कुमकुम– संज्ञा, पु० [तु० कुमकुम] कुमकुम एक प्रकार का लाख से निर्मित पोला गोला या कुप्पी जिसमें अबीर और गुलाल भर कर होली के अवसर पर लोग एक दूसरे पर मारते हैं ।

उदा० मारत कुंकुम केसरि के, पिचकारिन में रंग को भरि कै । —रसखानि

कुरंगसार संज्ञा, पु० [सं०] मृगमद, कस्तूरी ।

उदा० आंखिन मैं देखि तेरे कारी कजराई है कारोई कुरंगसार घसि के लगाउ अंग । —सुन्दर

कुरकुट—संज्ञा, पु० [सं० कुक्कट] मुर्गा ।

उदा० कुरकुट कोट-कोट कोठरी निवार राखो चुन दे चिरैयन को मूंदि राखों जलियो । —प्रबेनी राय

कुरना– क्रि० स० [हिं० कूरा-ढ़ेर] राशीभूत होना, एकत्रित होना, डटना ।

उदा० दाख दुरि जाइ मिसिरीयौ मुरि जाइ कंद कैसे कुरिजाइ सुधा सटक्यो सवारे को । —दास

कुरवा—संज्ञा, स्त्री० [अ० कुरबानी] बलि-दान ।

उदा० जुरवा जुलूस तौन उरवा परत काम कुरवा करत मंजु मुरवा तिहारे है । —भौनकवि

कुरहरे—वि० [बुं०] चितकबरा, आधा काला और आधा लाल ।

उदा० केसू कुरहरे अधजरे मानो क्वैला धरे क्वैल हाई कोयल करेजो भूँजे खाति है ।

—आलम

कुराई—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्रूरता] क्रूरता, दुष्टता ।

उदा० कोक की कहानी कहै तासों कहौ कहा कहौं ।
'आलम' जु कहि रहै जानि हौ कुराई कै ।
—आलम

कुरार—संज्ञा, पु० [हि० कुलेल] कुलेल, क्रीड़ा ।

उदा० नाक ते कीर कुरार करै कहि तोष छपाइ कै मोहि छपावैं । —तोष
तेहि ऊपर फूलि सरोज रह्यो तेहि मैं एक कीर कुरारि करे । —तोष

कुरी—संज्ञा, पु० [सं० कुल] कुल, परिवार वंशज ।

उदा० संग लिये छत्रिन की कुरी कबहूँ न जे रन में मुरी । —पद्माकर

कुरेवा– संज्ञा, पु० [?] काले रंग का एक कीड़ा ।

उदा० कहै कवि गंग देखौ भँवर कुरेवा दोऊ, एक रंग डार बैठे जाति अनुमानिये ।
—गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुरौ —संज्ञा, पु० [सं० कुरज] एक जंगली पेड़, जिसके पुष्प बहुत सुन्दर होते हैं।
उदा० केसरि किंसु कुसुंभ कुरौ किरवार कनैरनि रंग रची है। —देव

कुलकना क्रि० अ० [हिं० कुलकना] आनंदित होना, खुशी से उछलना।
उदा० लै लै सिर माही मांठ कुलकि कुलाहल कै, स्याम आये स्याम आये धाई जाति बन मैं। —बेनी प्रवीन

कुलफनि—संज्ञा, पु० [सं० फणि + कुल] सर्पों का कुल, सर्प समूह।
उदा० उतरत सेज ते सखीन सुखदेनी थाँमी, बेनी लांबी लखै लाज मरै कुलफनि के। —देव

कुलीर—संज्ञा, पु० [सं०] केकड़ा।
उदा० द्वीप रत्न जलजंतु पुनि, भ्रमर तरंग कुलीर। —काव्य प्रभाकर से

कुल्ले—संज्ञा, पु० [?] घोड़े की एक जाति।
उदा० कूदम कुल कुल्ले अमित अतुल्ले खूबनि खुल्ले फबि हेरै। —पद्माकर

कुल्हाट—संज्ञा, पु० [हिं० कुलांछ, कुलांट] उछलने या छलांग मारने की क्रिया, पैर ऊपर और सिर नीचे करके नटों की भाँति उलटना।
उदा० मारत ही भ ट तें भुकैं। भट नट मनौं कुल्हाटैं चुकैं। —केशव

कुसुमेषु—संज्ञा, पु० [सं०] कामदेव, मनोज, कुसुमशर।
उदा० चित चायतें लै लै मिली है मनो कुसुम-स्तवके कुसुमेषु की सैन सबै। —दास

कुसेस—संज्ञा, पु० [सं० कुशेशय] कुशेशय, कमल।
उदा० मोहनी कला सी मंजु कलिका कुसेस कैसी मुद्रित अरथ पर जैसे कोकछंद को। —चन्द्रशेखर

कुसैल—संज्ञा, पु० [हिं० कु + सैल] १, कुमार्ग, बुरा मार्ग।
उदा० संतन के पैंडे परैं कुसैलै सदा ही चलै, पर धन हरिबे कौं साधन करत हैं। —सेनापति

कुह—क्रि० अ० [फा० कुश्तन] मारना, मर्दन करना।
उदा० बन-बाटनु पिक बटपरा लखि बिरहिनु मत मैंन। कुहौ-कुहौ कहि-कहि उठै, करि-करि राते नैन। —बिहारी

कुही—संज्ञा, स्त्री० [सं० कुधि] बाज की तरह एक शिकारी चिड़िया।
ऊदा० लाज इतै, इत जी को इलाज, सुलाज भई अब लाज कुही सी। —देव

कूँचे—संज्ञा, पु० [अ० गुंचा] महुवे के गुच्छे।
उदा० नाँघत-नाँघत घोर घने बन हारि परे यों कटे मनो कूँचे। —भूषण

कूछित—वि० [सं० कुत्सित] कुत्सित, घृणास्पद।
उदा० करै नीचता नीच क्रूर कूछित ज्यौं कूकर। —ब्रजनिधि

कूजा—संज्ञा, पु० [फा० कूजा] लघु जलपात्र कुल्हड़, मिट्टी का एक छोटा पात्र।
उदा० कूजा कंचन रतनयुत, सुचि सुगन्ध जल पूरि —नरोत्तमदास

कूट—संज्ञा, पु० [सं०] १. समूह, २. पर्वत।
उदा० १. कठिन कुठाट काठ कुंठित कुठार कूट रूठि हठ कोठरी कपाट कपटन की! —देव

कूटि—संज्ञा, स्त्री० [सं० कूट] १. ढेर, राशि, समूह। २. हँसी, दिल्लगी, मजाक।
उदा० १. गुन अंत्र टूटि। पुनि मुंड कूटि। छिति गिरत खट्ट। हँसि अट्ट पट्ट। —सोमनाथ

कूब संज्ञा, स्त्री० [अ० कुव्वः] कुव्वत, बल, शक्ति, जोर, सामर्थ्य।
उदा० सखी से कहौ गहि ल्यावो। जिसी अब कूब सों पावो! —बोधा

कूर—वि० [?] १. मूर्ख २. क्रूर, दुष्ट।
उदा० कूरन की रीति है जु डेल ऐसो डारि देत —मतिराम
भये न केते जगत के चतुर चितेरै कूर। —बिहारी

कूरा - संज्ञा, पु० [सं० कूट, प्रा० कूउ] समूह, ढेर राशि।
उदा० यहि विधि वृथ कैसादिक सूरा।
दौरत भये सबै भट कूरा। —रघुराज

कूट संज्ञा, स्त्री० [हिं० कूक] चीख चिल्लाहट।
उदा० घर-घर कूहर सी भई कूहरही पुरछाय। ऊहर सब कूहर भई बनितन लगी बलाय। —बोधा

कूहर - संज्ञा, स्त्री० [हिं० कुहराम] कुहराम, चिल्लाहट, हलचल।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० घर घर कूहर सी भई कूह रही पुर छाय। ऊहर सब कूहर भई बनितन लगी बलाय।
——बोधा

कृपाउस——संज्ञा, स्त्री० [सं० कृपा] कृपा, दया।
उदा० आई रितु पाउस कृपाउस न कीनी कंत् छाइ रह्यो अंत् उर बिरह दहत है।
——सेनापति

केम——संज्ञा, पु० [सं० कदंब] कंदब नाम का वृक्ष।
उदा० खेल न रहिबौ खेम सौं केम कुसुम को बास
——बिहारी
लग्यो तरु तावन सावन मास।
प्रजारति कैम कुसुंमिय बास॥
——बोधा

केल-कुंज——संज्ञा, पु० [सं० कदलीबन] कदली-कुंज, केला का बन।
उदा० आली तजि मौन करि गौन हित-भौन चलि, केल करि केल-कुंज केलि के उपाइ करि।
——आलम

केवली——संज्ञा, पु० [सं० कैवल्य] मुमुक्ष, मोक्ष प्राप्त करने के इच्छुक २. वीतराग, विज्ञानी।
उदा० केवली समूढ़ लाज ढूँढ़त ढिठाई पैये।
चातुरी अगूढ़ गूढ़ मूढ़ता के खोज है॥
——देव

कैनि——संज्ञा, स्त्री० [फा० कोरनिश] प्रार्थना, बिनती, कुन्नस।
उदा० विधि विधि कैनि करै टरै नहीं परेहू पानु चितै कितै ते लै धरो इतो इते तनु मानु!
——बिहारी

कैफ——संज्ञा, पु० [अ० कैफ] नशा, नशीली वस्तु।
उदा० बद्दल बिलंद बरसा के बिरुदैत कछू, कठिन कजाक कैफ खाये से फिरत हैं।
——'चातुर'
ल्याई केलि मंदिर भोराय भोरी भामिनी को फूल गंध कैफबस कीन्हों पौन रूख तैं।
——पजनेस

कैबर——संज्ञा, स्त्री० [देश०] तीर का फल, गाँसी।
उदा० चमकै बरुनी बरछी भ्रुव खंजर कैबर तीछ कटाछ महै।
——दास

कैर——संज्ञा, पु० [हिं० करील] करील, काँटेदार एक वृक्ष।
उदा० सपत बड़े फूलन सकुचि सब सुख केलि निवास।
अपत कैर फूलत बहुत मन में मानि हुलास।

कैरव——संज्ञा, पु० [सं०] १. शत्रु, २. कुमुद, ३. सफेद कमल।
उदा० १. त्यों अलि कोकिल के कुल कैरव क्यों बचिहैं दुख सिंधु अगाधे। ——चन्द्रशेखर

को——संज्ञा, पु० [देश०] पुत्र, लड़का।
उदा० एरी मेरी बीर जैसे तैसे इन आँखिन सौं कढ़िगो अबीर पै अहीर को कढ़ै नहीं।
——पद्माकर
राजा मिले अरु रंक मिले कवि बोधा मिले निरंसक महा को। ——बोधा

कोठ——संज्ञा, पु० [सं० प्रकोष्ठ] कलाई, प्रकोष्ठ।
उदा० ठिले कोठ बाँधे धरे तेग काँधे।
तुरंगान साधे सबै जुद्ध नाधें।
——पद्माकर

कोत——अव्य० [देश०] ओर, तरफ से।
उदा० होत अरुनोत यहि कोत मति बसी आजु, कौन उरबसी उरबसी करि आए हौ। —दूलह
सीताजु की खबरि दियो जो आइ ताकी कोत जो जो मांगौ आजु हनुमान सो सो लीजियै। ——रघुनाथ

कोते——वि० [फा० कोताह] थोड़ा, कम।
उदा० राग बिरागनि के परिभन हास विलासनि ते रति कोते। ——केशव

कोंदर——संज्ञा, पु० [बुं०] खाँड़र, वृक्ष का छिद्र।
उदा० भूल बिसर जिन डारौ कबहूँ कोंदर खदरन हाथू। —— बकसी हंसराज

कोद——अव्य० [सं० कोण] ओर, तरफ।
उदा० केतकी रजनि अरगजनि मधुर मधु, राका की रजनि राजै रंजित चहूँ कोदनि।——देव

कोधो——अव्य० [हिं० कोद] ओर, तरफ।
उदा० या जिय मैं पिय मूरति है पिय मूरति देव सुमूरति कोधो। ——देव

कोपर——संज्ञा, पु० [बुं०] थाल।
उदा० कोपर हीरन को अति कोमल। ता महँ कुंकुम चन्दन को जाल। ——केशव

कोपरा——संज्ञा, पु० [हिं० कोंपर] भिक्षा-पात्र, एक पात्र।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० बरस असीक को मयो है इन भाँतिन सों,
माँगत फिरत भीख लीन्हे कर कोपरा ।
—अज्ञात कवि

कोर—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. पंक्ति, श्रेणी, कतार २. निकट [सं० क्रोड], समीप, ३. गोद ।
१. कोर बाँधि पाँचो भये ठाढ़े । आगे धरे जंजालन गाढ़े । —सूदन
चौंकत चकोर कोर बाँधत मराल मोर चहूँ ओर सोर करैं भौंर भरि भरि कै । —देव
२. कुंजन के कोरे मन केलि रस बोरे लाल तालन के खोरे बाल आवति है नित को ।
—देव

कोरना—क्रि० स० [देश०] छिद्र करना, काटना ।
उदा० ठाकुर आप सयाने बड़े मन मानिक पाय न कोरितु है । —ठाकु

कोरि वि० [सं० कोटि] करोड़, अत्यधिक ।
उदा० कोरि उपाय करे तेहि काल पै आली गोपाल सों बोलत ही बन्यों । —द्विजदेव
कोऊ कोरिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति जदुपति सदा, विपति बिदारनहार ।।
—बिहारी

कोरिकु—वि० [सं० कोटिक] करोड़ों, कोटिक ।
उदा० सुन्दर नन्द कुमार के ऊपर वारिये कोरिकु मार कुमारन । —देव
कोऊ कोरिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति जदुपति सदा, बिपत बिदारनहार ।।
—बिहारी

कोलना—क्रि० अ० [हिं० कहलना] व्याकुल होना, संतप्त होना ।
उदा० धुनि सुनि और होति थिर चर गति, भोरी विचारिनि की मति कोलै ।
—घनानन्द

कौंच—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] १. कलाई २. लचीली तलवार ३. कटार आदि का सामान्य घाव ।
उदा० १. कौंचन में पौंची अरु चूरा खएन बिजैठे बाँधे । —बकसी हंसराज ।
कंधन तें कंचुकी भुजान तें सु बाजूबंद, ।
कौचन तें कंकन हरेई हरे सटके ।
—पद्माकर
२. कौंचनि उमेठत हरषि पैठत लोह की मरभ्रमर में । —पद्माकर

कौंध—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कौंध] चमक, प्रकाश
उदा० आलम बयारि बर बिजना की छीजै तनु,
बिजुरी की कौदंनि पसीजि भीजि जाति है ।
—आलम

कौनप – संज्ञा, पु० [कौणप] राक्षस-रजनीचर ।
उदा० कौनप रावन देव सतावन, को लहै मार धरे धरती को । —दास

कौरई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कोरा-नवीन] नवीनता, अछूतापन, विचित्रता २. कोमलता ।
उदा० और कछू मति गति और कछू रति अति और कधू मन में मिली है आई कौरई ।
—रघुनाथ
कहैं कविगंग तन निंदै नवनील घन ।
कलाऊ न पूजति कमल दल कौरई ।
—गंग

कौरे - संज्ञा, पु० [बुं०] दरवाजे का एक पक्खा, दीवाल ।
२. मुहा० कौरे लगना—दरवाजे की ओट में छिपकर देखना ।
उदा० कौरे आनि लागै पिछवारे सखी जागै सौति
—आलम
सोरे अंग सूझत न, पौरे खोलि दौरे, राति आधिक लौं राधिका के कौरई लगे रहैं ।
—देव

कौल—संज्ञा, पु० [सं०] १. उत्तम कुल में उत्पन्न, कुलीन । २. वचन, वादा । [अ० कौल] ३. कमल ।
उदा० कौल कीहै पूरी जाकी दिन दिन बाढ़ैं छवि रंचक सरस नथ झलकति लोल है ।
—सेनापति

कौहर—संज्ञा, पु० [?] एक जंगली लाल रंग का फल ।
उदा० सुरुचि जीभ जौहर करत कौहर फल मुख चाखि । —देव
कौहर सी एड़ीन की लाली निरखि सुभाय ।
पाय महावर देइ को आप भई बे पाइ ।
—बिहारी
कै रहेंगी रोस वै जु कौहर सी कोंवरी हैं ।
ऐसो कोरा छांड़ि कत भोराभोर आये हौ ।
—आलम

ककद—संज्ञा, पु० [अ० कद्द] हठ, जिद्द ।
उदा० अक्कि ककद अकबक्कि सुतक्कि कक्करिकर
—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्वान—संज्ञा, पु० [सं० क्वण] आभूषणों की आवाज ।
उदा० किंकिन कंकन क्वान मिलै बर दादुर झींगुर की झनकारहिं । —आलम

क्वांरिका—संज्ञा, स्त्री० [सं०कुमारिका] कुमारी, पुत्री ।
उदा० द्वारिका सन्देश नृप क्वांरिका पठायो । —देव

ख

खंखर—संज्ञा,पु० [हिं० कंकड़] १. खेह, भस्म, राख, २. उजाड़, वीरान [सं० कंक]
उदा० औरहिं 'सूरति' दान की बानि सुनी रहै उन्नत ही मधि खंखर । —सूरति मिश्र

खँगवारी— संज्ञा, स्त्री०[देश०] गले में पहनने का एक भूषण, हसुँली ।
उदा० सोहत चम्प कली अति सुन्दर सोने की खँगवारी । — बकसी हंसराज
त्रिविध बरन पर्‌यो इन्द्र को धनुष, लाल पन्ना सौं जटित मानौं हेम खगवारौं है ।
—सेनापति

खंतु - संज्ञा, स्त्री० [सं० खड्ग हिं० खड़ग] खंता एक प्रकार की तलवार ।
उदा० लाजत कपोल देखै राजड़ त्रिबलिरेखैं मार मल्ल खंतु खाँत रंग को रसालु है ।
—केशव

खंडपरशु— संज्ञा, पु० [सं०] महादेव २. विष्णु ३. परशुराम
उदा० १. खंडुपरशु को शोभिजै, सभा मध्य को दण्ड । —केशव

खंडी—संज्ञा, स्त्री० [सं० खँडन] राजकर, मालगुजारी की किस्त, राजा की ओर से लिये जाने वाला कर ।
उदा० दतिया सु प्रथम दबा दई ।
खंडी सु मनमानी लई ।
— पद्माकर

खँवाखसी—संज्ञा, स्त्री [?] बहुत ज्यादा भीड़।
उदा० प्रेम गली बिच रूप की, खँवाखसी ह्वै पूर लोचन दुर्बल बापुरे, भये जात हैं चूर ।
—नागरीदास

खई— संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षयी] लड़ाई, युद्ध, तकरार, प्रपंच २. क्षय ।
उदा० मेरियै जानि कै सूधी सबै चुप ह्वै रहीं काहु करी न खई री । — रसखानि

खए—संज्ञा० पु० [सं० स्कन्ध] भुजदण्ड, खम ।
उदा० कौंचन में पौंची अरु चूरा खएन बिजैठे बांधे । —बकसी हंसराज

खखेट— संज्ञा, पु० [देश०] खटका, चिन्ता ।
उदा० सोच भयौ सुरनायक के कलपद्रुम के हिय माँझ खखेट्यौ —नरोत्तमदास

खखेना—क्रि० स० [हिं० खखेटना] पीड़ित करना, घायल करना, चोट पहुँचाना ।
उदा० रोम रोम भिजवै आनँदघन हियरा मदन खखेइ । — घनानँद

खग—संज्ञा, पु० [सं० ख = आकाश + ग = गमन करना] १ सूर्य २. पक्षी ।
उदा० धनुष कौं पाइ खग तीर सौं चलत, मानौं ह्वै रही रजनि दिन पावत न पोत है ।
—सेनापति

खगना—क्रि० अ० [हिं० खाग] १. मिलना, लिपटना, २. चुभना ३. स्थिर होकर रह जाना, अटक जाना ।
उदा० १. लोभ पट ओढ़्यो, सेज पौढ़्यो काम कामना की कामिनी कुमति कंठ खरोई खगत है । — देव
लोचन चकोरनिसों चोपनि खगत है ।
—घनानन्द
३. करिकै महाधमसान । खगि रहे खेत पठान ।
—सूदन

खगासन—संज्ञा, पु० [सं० खग = पक्ष,—गरुड़ +

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आसन] गरुड़ का आसन बनाने वाले, विष्णु ।
उदा० हीय पर देव पर बदे जस रटै नाऊँ खगासन नगधर सीता नाथ कौलपानि ।
—दास

खचना—क्रि० अ० [सं० खचन] रुक जाना, अटक जाना ।
उदा० घाँघरो झीन सों सारी मिहीन सों पीन नितंबनि भार उठै खचि । —दास

खचर—संज्ञा, पु० [सं ख = आकाश + चर = चारी,] सूर्य, आकाश चारी ।
उदा० हरिदल खुरनि खरी दलमली ।
खचरहि धूरि पूरि मनु चली ।।
—केशव

खत संज्ञा, पु० [सं० क्षत] १. क्षत, कलंक २. सरखत, दिए और चुकाए हुए ऋण का ब्यौरा ।
उदा० १. मोंहित तो हित है रसखानि छपाकर जानहि जान अजानहि ।
सोउ चवाव चल्यौं चहुघाँ चलि री चलि री खत तोहि निदानहि ।
—रसखानि
दैहैं करि मौंज सोई लैहैं हम हरबर ता छिन उआदो खत टीपन लिखाइहौ ।
—गंग

खज—वि० [सं० खाद्य,] खाद्य, खाने योग्य ।
उदा० भख मारत ततकाल ध्यान मुनिवर कौं धारत । बिहरत पंख फुलाय नही खज अखज बिचारत । —दीनदयाल गिरि

खटान—क्रि० अ० [देश०] टिकना, रुकना ।
उदा० कहै कवि गंग भट बिन न खटात खेत, कहा करै निपट निसानो रन बाजनो ।
—गंग

खटिका—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खरिया] खरिया । एक प्रकार की सफेद मिट्टी जो पोतने के काम में आती है ।
उदा० सीप, चून, भोड़र, फटिक, खटिका, फेन, प्रकास । —केशव

खटोल—वि० [देश] कंटीला, झाड़ीदार २. निबिड़, सघन ।
उदा० नन्द जी को बाछा मोहि मारिबे को दौरो देखि भागी मैं खटोल बन जान्यौ प्रान लै गयो । —नंदराम

खड़ंग—संज्ञा, पु० [सं० षाड़व] एक राग जिसमें छः स्वर लगते हैं ।
उदा० पुनि बीणा साज माधव अड़ंग ।
शिव शरण ध्याय गायो खड़ंग ।।
—बोधा

खडग पत्र—संज्ञा, पु० [सं० खड्ग पत्र] यमपुरी का एक कल्पित वृक्ष जिसकी पत्तियाँ खड्ग की तरह धारदार मानी जाती हैं ।
उदा० तची भूमि अति जोन्ह सों झरे कुंज ते फूल । तुम बिन वाको बन भयो खड़ग पत्र के तूल । —मतिराम
खड्ग पत्र सों सौगुनौ जाहर यहै कलेस ।
—बोधा

खड़गी—संज्ञा, पु० [सं० खड्ग] गैंड़ा ।
उदा० खड़गी खजाने खरगोस खिलवत खाने खोसैं खोले खसखाने खांसत खबीस हैं ।
—भूषण

खतरेटे—संज्ञा, पु० [हिं० खत्री + एटे (प्रत्य)] १. खत्री के बच्चे, २. क्षत्रिय पुत्र ।
उदा० बिद्रुम की झाँझरी विराजै बिबिराजै कैधौं लाल जाल पाट बैठे खूब खतरेटे हैं ।
—तोष

खरक—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खटक] खटक, चिन्ता ।
उदा० खरक दुहेली हो असूझ रेप रावरू की ।
—घनानन्द

खरिक—संज्ञा, पु० [सं० खड़क] गायों के ठहरने का स्थान, गौशाला ।
उदा० अब ही खरिक गई गाइ के दुहाइबे कौं, बाबरी ह्वै आई डारि दोहनीयौ पानि की । —रसखानि

खरी—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार की ईख ।
उदा० खारिक खरी कों मधुह की माधुरी को मुभ, सारदसिरी कों मीसरी कों लूटिलाई सी । —पद्माकर

खरीक—संज्ञा, पु० [हिं० खर] खर, तृण, तिनका ।
उदा० भूषन मनत, तेरे दान जल जलधि मैं गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक सो ।
—भूषण

खलार—संज्ञा, स्त्री० [सं० खात] नीची, जमीन, खाल ।
उदा० साकरी-गली की उतै कवि रघुनाथ घनी वह जो कदंब खड़ी गिरि के खलार है ।
—रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खलित—वि० [सं० स्खलित] रीते, अर्थशून्य, निरर्थक, अर्धस्पष्ट ।
उदा० खलित बचन, अध खुलित दृग,
ललित स्वेद -कन- जोति ।
अरुन बदन छबि मदन की खरी छबीली होंति । —बिहारी

खलीत—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खरीता] थैली, जेब ।
उदा० सीता कौं संताप, कि खलीता उतपात कौं,
कि काल कौं पलीता प्रलै काल के अनल कौं । —सेनापति

खलीता—संज्ञा, पु० [अ०] लिफाफा, थैली ।
उदा० खोल खलीतो लिख्यो यह बाँचत भाजियो राति न बीतन पावै । —चन्द्रशेखर

खवास—संज्ञा, पु० [अ० खवास] १. गुण, धर्म, विशेषता २. राजमहल की वह दासी जो राजा के पास आती जाती हो ।
उदा० ऐसै जिय भास तें, जु लाज के खवास तें,
कहै न खवास तें, कि उठि जाउ पास तें ।
—ग्वाल

खवासी—संज्ञा, स्त्री० [अ० खवास] नौकरी, चाकरी, खिदमतगारीं ।
उदा० दासो सों कहत दासी, यामें कौन ताहिनौ है, उनकी खवासी तौ न कीनी जोरि कर है । —ग्वाल

खसमाना—संज्ञा, पु० [अ० खसम] पति, प्रियतम ।
उदा० कहै कबि गंग हूल सागर के चहूँ कूल,
कियो न करै कबूल तिय खसमाना जू ।
—गंग

खहिनि—संज्ञा, पु० [हिं० खये-] भुजमूल, खम ।
उदा० रोकि रहे द्वार नेग माँगन अनेग नेगी बोलत न ख्याल, ब्याल खोलत खहिनि के ।
—देव

खाखरि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खंखाड़] १. अस्थि पंजर, कंकाल २. खोखला, सूराखदार [वि०]
उदा० १. स्वान मसान में खैंचिहैं खाखरि जंबुक खोहनि मैं खुपरी कौं ।
—देव
२. मड़हो मलीन कुंज खांखरो खरोई खीम । —आलम

खाड़ो—संज्ञा, पु० [सं० खात] गड्ढा, गर्त्त ।
उदा० कौने विधि कुबिजा पै पौढ़िबे को बनि आवै खाट काटि देत है कि खाड़ो खोदि लेत हैं । —देव

खाड़—संज्ञा, पु० [हिं० खाड़] गड्ढा, गर्त ।
उदा० द्वैरस हास के कूप किधौं पति प्रेम के पूजन को यह खाढैं । —रघुनाथ

खाती—संज्ञा, स्त्री० [सं० खात] खुदी हुई भूमि, खाने जहाँ सोना आदि प्राप्त होता है । २. बढ़ई ।
उदा० सरना जड़ का सरसाती मिली, चित सूम, को सोन की खाती मिली । —तोष

खाबर—संज्ञा, पु० [बुं०] गड्ढा, सूराख ।
उदा १. भूल बिसर जिन डारौ कबहूँ कोंदर खदरन हाथू । —बकसीहंसराज
नाहीं तौ न हील होन देरी झील झाबरनि,
ग्रीष्महि राखु खाली माखु खल खादरनि ।
—देव

खाम—वि० [फा० खाम] १. अनुभवहीन, कच्चा, अपुष्ट, अविवेक २. चिट्ठी का लिफाफा, लिफाफे में चिट्ठी का बंद रहना [संज्ञा, पु०, हिं० खामना]
उदा० १. धाम की न धनि की, न धन की न तन की, तपन की न पात, बात कीन्ही सब खाम की । —ग्वाल
२. बाँचति न कोऊ अब वैसिये रहति खाम जुवती सकल जानि गई गति बाकी है ।
—द्विजदेव

खारिक—संज्ञा, पु० [बुं०] छोहारा ।
उदा० खारिक खात न दारिम दाखहु, माखनहू सह मेटी इठाई । — केशवदास

खारिज—वि० [अ०] अलग की हुई, पृथक, भिन्न ।
उदा० पानी गये खारिज परबाल ज्यों पुरानी है ।
—पद्माकर

खाली—क्रि० वि० [अ०] सिर्फ, केवल ।
उदा० बेलिनि नवेलिनि के केलि-कुंज पुंज आली !
खाली बनमाली बिन काली से डसत है
— कुमारमणि
कहा कहौं आली खाली देत सब ठाली,
पर मेरे बनमाली को न काली तें छुरावहीं ।
—रसखानि

खासदान—संज्ञा, पु० [अ० खास + फा० दान] पान रखने का पात्र विशेष ।
उदा० खास दान सौं लै दई, बिरी खवासिन चारु ।
—गुमान मिश्र

खासा—संज्ञा, पु० [अ० खासा] १. एक प्रकार का महीन श्वेत सूती वस्त्र २. राजभोग ३.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा की सवारी का घोड़ा या हाथी ।
उदा० खासा तनजेब के बसन वेस धारि धारि
भूषन सम्हारि कहा सोवे सेज पाटी में ।
—ग्वाल
२. ताजी रंग रंग के तुरंगन की छाजी
छटा राजी गजराजन की पालकी औ
खासा ये । —चन्द्रशेखर

खिग—संज्ञा, पु० [फा० खिंग] सफेद रंग का घोड़ा जिसके मुँह पर का पट्टा तथा टाप गुलाबी लिए श्वेत रंग का होता हैं ।
उदा० तहँ खिग निहारे सुख दिलदारे अधिक सुढारे तन चमकैं । —पद्माकर

खित्त—संज्ञा, पु० [सं० क्षेत्र, हिं० खेत] क्षेत्र, रणक्षेत्र ।
उदा० कहिं केसव' मंडहि रार रन करि राखैं खित्तहिं भवन । —केशव

खिन—संज्ञा, पु० [सं० क्षण] क्षण, पल, थोड़ा समय ।
उदा० फेर सुन्यो प्रहलाद के साँकरे आवन को न खिनौ बितयो रे । —ठाकुर

खिरकन—संज्ञा, पु० [हिं० खरिक+न] खरिक, वह स्थान जहाँ गाएँ बाँधी जाती हैं, गोशाला ।
उदा० ग्वालकवि कबहू छिपी न खेत खिरकन में, खोरि में, न बन में, न बगिया अराम की ।
—ग्वाल

खिरकी—संज्ञा, स्त्री० [?] पाग की पेंच, एक आभूषण जो पगड़ी पर बाँधा जाता है ।
उदा० छूटि गयो मान लगी आपुही सँवारन कौं, खिरकी सुकवि मतिराम पिय पाग की,
—मतिराम

खिरना—क्रि० अ० [प्रा० खिर, सं० क्षर] गिरना, गिर पड़ना, धराशायी होना ।
उदा० सोमनाथ कहै तब्बै पब्बय खिरत रेनु दब्बै मारतंडहि तुरंग खुरतारे की ।
सोमनाथ

खिरे—क्रि० अ० [सं० खर हिं० खलना] दुखित होना, कष्ट पाना ।
उदा० कंपित करी पै साह साहब अलाउदीन दीन दिल बदन मलीन मन मैं खिरे ।
—चन्द्रशेखर

खिलत—संज्ञा, पु० [फा० खिलअत] पोशाक, सम्मान का चोंगा ।
उदा० मुंडन के माल की भुजंगन के जाल की सुगंगा गंज खाल की खिलत पहिरावैगी ।
— पद्माकर

खिलवत—संज्ञा, पु० [फा०] एकान्त, निर्जन ।
उदा० खेल मैं खिलावत खिलारी तैं मिलाई खूब, खुलिगे खजानै खिलिवत मैं खुसीन के ।
—ग्वाल

खिलवतिन—संज्ञा, पु० [अ० खिलवत] अभिन्न भिन्न, दिली दोस्त ।
उदा० निज खिलवतिन में हास है । भयरूप दुरजन पास है । — पद्माकर

खिलाई—वि० [हिं० खिलाना] केवल भोजन पर सेवा करने वाली ।
उदा० धाई नहीं घर दाई परी जुर, आई खिलाई की आँखि बहाऊँ । —केशव

खिवना—क्रि० अ० [राज०] चमकना, प्रदीप्त होना ।
उदा० विरहा रबि सों घट-व्योम तच्यौ बिजुरी सी खिवैं इकलौ छतियाँ । — घनानँन्द
बजैं सुखोनि बाजि बेग,
विद्यु ज्यौं खिवै खुरी ।
—मानकवि

खिसी—संज्ञा, स्त्री [हिं० खिसिआन।] १. लज्जा, शर्म २. धृष्टता, ढिठाई ।
उदा० १. हमहूँ को खोर देत, खरे हौ सयाने कान्ह, खिसी बेचि खाई अब नख जोइ-यत है । —गंग

खुटना—क्रि० अ० [सं० खुड्] खुलना, उद्घाटित होना ।
उदा० तौ लगि या मन सदन में,
हरि आवैं केहि बाट ।
निपट विकट जौ लौं जुटे,
खुटहिं न कपट कपाट ।
—बिहारी

खुटी—वि० [सं० खुड्] खुली हुई, नग्न ।
उदा० कहि तोष खुटी जुग जंघनि सो उर दै भुज स्यामै सलामै करै । —तोष

खुद्दू—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खुही] खुही, सिर पर ओढ़े जाने वाली पत्ते की घोंघी ।
उदा० हाल छरी पनही पग पात की सीस खुद्दू करि कामरि काँधे । —आलम

खुभराना—क्रि० अ० [सं० क्षुब्ध] उमड़ना, उपद्रव या बदमाशी करने के लिए घूमना ।
उदा० ऐयाँ गैयाँ बैयां लै लुगैयाँ लैयाँ पैयाँ चलो,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वारौं न अथैयाँ कहूँ जाट खुभराने हौ ।
—सूदन

खुरी—संज्ञा, स्त्री [सं० क्षुर=उस्तरा] छूरी, अस्तुरा ।

उदा० देवकीं की सेवकी न सेवकी पिता की करी नाइनसुता की भली गाँठ सी खुरी लगी ।
—ग्वाल

खुसी—संज्ञा, पु० [अ० खुस्या] अंडकोष, फोता ।

उदा० कनौती खुसी सीखड़ी खूब छोटी ।
नुकीली नचैं सी कला कै जु कोटी ।
—पद्माकर

खूटँना—क्रि० सं० [सं० खंडन] कम हो जाना, समाप्त होना २. टोकना ।

उदा० जाति भई सँग जाति लै कीरति, 'केसव' है कुल सों हित खूट्यो ।
—केशव

खूजो—संज्ञा, पु० [सं० कुब्जक] एक प्रकार का पुष्प, एक जंगली पौधा ।

उदा० आए बालम हे सखी लिए खूजे को फूल ।
—मतिराम

खूट—अव्य, [सं० खंड] ओर, तरफ ।

उदा० दौरि चढ़ि ऊँट फरियाद चहूँ खूट कियो ।
—भूषण

खूमरी—संज्ञा, पु० [?] एक पक्षी ।

उदा० चक्रवाक खंजन पपीहा मैना चांडूल दहिये दरेवा खूब खूमरी बिकानी है ।
—बोधा

खेट—संज्ञा, पु० [सं०] १. एक प्रकार का अस्त्र २. खेड़ा ३. घोड़ा ४. ढाल ५. शिकार ।

उदा० १. समर अमेठी के सरोस गुरुदत्त सिंह सादत की सेना पर बाहे खग्ग खेटे हैं ।
—कबीन्द्र

खेदान—संज्ञा, स्त्री [हिं खोदना] खान, वह गड्ढा जो किसी वस्तु को निकालने के लिए खोदा जाता है ।

उदा० बनन में, बागन में, जमुना किनारन में, खेतन खदान में खराब होत डोली मैं ।
—ग्वाल

खेरा—संज्ञा, पु० [सं० खेट, हिं० खेड़ा] छोटा गाँव, खेड़ा ।

उदा० गोगृह काज गुवालन के कहें देखिबे को कहूँ दूरि को खेरो ।
—पद्माकर

खेवा—संज्ञा, पु० [हिं० खेना] नाव द्वारा नदी पार करने की क्रिया ।

उदा० तात-मात वाहन सुता औ सुत बनिताहू भानजे भतीजे साथ चले हैं न खेवा पै ।
— ग्वाल

खोई—संज्ञा, स्त्री [देश०] लाई, धान की खील ।

उदा० आंब छाँड़ि आँबरी को काहे लागि छीयै कोऊ, छीर छाँड़ि छाछ पीए खोई खाए खाइगो ।
—गंग

खोगरी—संज्ञा, पु० [फा० खुगीर] वह ऊनी वस्त्र जो घोड़ों के चारजामे के नीचे लगाया जाता है ।

उदा० कारी औ पीरी कछूक है भूरी बुरी सो खोगीर सी दाढ़ी हलावै ।
—अज्ञात

खोंच—संज्ञा, स्त्री० [हिं० कोंछ] झोली, कोंछ ।

उदा० चातिक-चित कृपा घन आनन्द चोंच की खोंच सु क्यौं करि धारौं । त्यौं रतनाकर दान-समै बुधि जीरन-चीर कहा लै पसारौं ।
—घनानन्द

खोभ—संज्ञा, स्त्री [हिं० खोज] चिह्न, निशान ।

उदा० यौवन अंकुर खोभ सुहाइ न धाय सो पांय धुंवावन लागी ।
—देव

खोंट—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खोंटना] घाव पर पड़ी पपड़ी, खरोंट, चोट का दाग ।

उदा० सूखन देति न सरसई खोंटि-खोटि खत खोंट ।
—बिहारी

खोंपना—क्रि० अ० [देश०] घुसना, प्रवेश करना ।

उदा० चहुँघा चकित चंचरीकनि की चारु चौंप देख 'सेख' राती कोंप छाती खोंप जाति है ।
—आलम

खोभ—संज्ञा, पु० [देश०] कांटा ।

उदा० मन-मरकट के पग खुभ्यौ निपट निरादर खोभ ।
—बिहारी

खोम—संज्ञा, पु० [अ० कौम] समूह, झुंड ।

उदा० खलन के खेरन खबीसन के खोम हैं ।
—भूषण

खोरि—संज्ञा, स्त्री [हिं० खोट] दोष, क्रोध, कोप, नाराजगी ।

उदा० सास व्रत ठानै नन्द बोलत सयाने धाइ, दौरि-दौरि मानै-जानै खोरि देवतान की ।
— रसखानि

खोलना—क्रि० अ० [सं० खुड, खुल=भेदन] दूर करना, मुक्त करना ।

उदा० अति आदर सों ते सभा महँ बोल्यौ बहु

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूजन कै मग को श्रम खोल्यो । —केशव

खौन—संज्ञा, पु० [फा० ख्वान्चा] बड़ी परात या थाल २. कौन (सर्व०) ।

उदा० पौन कौ ना गौन होय, भरक्यौ सु भौन होय, मेबन कौ खौन होय, डिब्बियाँ मसाला की । —ग्वाल

२. खासे खसबीजन सु खौन-खौन खाने खुले खस के खजाने खसखाने खूब खस खास । —पद्माकर

खौप—संज्ञा, पु० [हिं० खोंचा] खोंचा, फटा वस्त्र ।

उदा० जियत मिलि सियत फागुन-गुन अन्तर खौपनि । —घनानन्द

खौरई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खोर, दोष] नटखटपन, बदमाशी ।

उदा० मचिहैं जब फाग कहा करिहौं अबही करी कान्हर खौरई सी । —घनानन्द

खौरना—क्रि० सं० [हिं० खौर-नटखट] १. बदमाशी करना, नटखटपन दिखाना, २. छेड़ना, परेशान करना ।

उदा० १. दैया दौरि-दौरि खौरत मोहीं सों यौं—गिधये किहि बाल हौ । —घनानन्द

मचि हैं जब फाग कहा करिहौं अबही करी कान्हर खौरई सी । —घनानन्द

२. मोही सों जब तब खौरत ही सब मिलि करैं चबाव । —घनानन्द

खौरौहीं—वि० [हिं० खोलना] खौलता हुआ सा, संतप्त ।

उदा० स्याम सुरति करि राधिका,
तकति तरनिजा तीर ।
अँसुवन करति तरौंस को,
खन खौरौहीं नीर ।।
—बिहारी

ख्यौर—संज्ञा, पु० [सं० खोल=आवरण] मोटा चादर, आवरण ।

उदा० ख्यौर कासमीरी चारु चम्पई बसन पर वारो तनमन तेरी चाल मतवाली पै ।
—लछिराम

ग

गंगाजल—संज्ञा, पु० [सं०] एक प्रकार का सफेद चमकीला रेशमी वस्त्र ।

उदा० गंगाजल की पाग सिर, सोहत श्रीरघुनाथ । सिवसिर गंगाजल किधौं चन्द्र चन्द्रिका साथ । —केशव

गंज—संज्ञा, पु० [फा०] १. ढेर समूह, २. नाश (सं०) ।

उदा० गब्बिन को गंजन गुसैल गुरु लोगन को, गंजन को गंज गोल गुंबज गजब को ।
—पद्माकर

गंधबन्धु—संज्ञा, पु० [सं०] आम का वृक्ष ।

उदा० न होम धूम देखिये । न गन्धबन्धु पेखिये ।
—केशव

गंधरबगाम—संज्ञा, पु० [सं० गंधर्व नगर] रात में पथिकों को दिखाई पड़ने और गायब हो जाने वाला ग्राम चिन्ह । २. मिथ्या ज्ञान भ्रम ।

उदा० तुरतहि गयो बिलाइ कै, हुत्यौ परम अभिराम । नाह रावरे नेह यह, भए गंधरब गाम ।
—मतिराम

आज लौं तो जियो बसि गंधरव गाउँ, खाइ भूत की मिठाई मृगतिसना को पानी पी ।
—देव

गंधसार—संज्ञा, पु० [सं०] चन्दन, सन्दल ।

उदा० सेनापति जीवन अधार बिन घनसार, गंधसार हार बिरहानल कौं छवि हैं ।
—सेनापति

अमल अटारी चित्रसारी वारी रावटी में, बारह दुबारी में किवारी गंधसार की ।
—श्रीपति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गंसी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गंस, सं० ग्रंथि] तीर या हथियार की नोक।

उदा० ताहि सुनत गोपन के उर में लगी प्रीति की गंसी। —बकसी हंसराज

गिंदुक—संज्ञा, स्त्री० [प्रा० गेंदुआ] १. कन्दुक, गेंद। २. तकिया [सं० गंडुक]

उदा० १. ग्वाल कवि गिंदुक गुविंद नै दिखाई तहाँ गोरी के रुमंच यों उठैरी प्रेम आसे के।

—ग्वाल

२. गोल गुल गादी गुल गिलमै गुलाब गुल, गजक गुलाबी गुल गिंदुक गुले गुलाब।

—पद्माकर

गुंज निकेतन—संज्ञा, पु० [सं० गुंज+निकेतन] भ्रमर, भौंरे।

उदा० अति मंजुल बंजुल कंज विराजैं। बहु गुंज निकेतन पुंजनि साजैं। —केशव

गँड़दार—संज्ञा, पु० [?] हाथी को सोंटे से मार-मार कर ले जाने वाला, महावत।

उदा० चली अली नवलाहि लै, पिय पै साजि सिंगार, ज्यौं मतंग अंड़ैदार को, लिए जात गंड़दार। —मतिराम

ऐंड़दार बड़े गड़ेदारन के हाके सुनि।
अड़े ठौर ठौर महा रोस रस अकसै।

—भूषण

गूँदना—क्रि० अ० [हिं० गोदना] १. धंसना, २. चुभना, प्रविष्ट होना ३. पीसना, दाबना।

उदा० १. खेलत गुपाल इत लीने ग्वाल बाल बनै पै····· चोर पालक बिसाल बनु गूँदि कै। —देव

२. विद्रम से अधरान धरे, मुख दाड़िम बीज से दंतन गूँदै। —देव

गूँदनि——संज्ञा, स्त्री० [हिं० गूँथना] गुत्थी, गांठ।

उदा० घूँघट के घटकी नटिकी सुछुटी लटकी लटकी गुन गूँदनि। —देव

गेंडुआ—संज्ञा, पु० [बु०] तकिया।

उदा० चंपक दल दुति के गेंडुए। मनहु रूपके रूपक उए। —केशवदास

गई करना—क्रि० अ० [हिं० मुहा०] टालजाना, भूल जाना।

उदा० देत कहा है दहे पर दाहु गई करि जाहु दई के निहोरै। —दास

गऊधूर—संज्ञा, स्त्री [सं० गोधूलि] गोधूली की बेला, सन्ध्या समय।

उदा० आवैंगे जरुर सूर दूर भयें गऊधूर, आये सूर पूर, माल बिना गुन जाप तें।

—ग्वाल

गच—संज्ञा, पु० [अनु०] फर्श, चूने सुरखी से बनी जमीन।

उदा० चौकि चली बिचली गच पै लचकी करिहाँ कुचभार छलासी। —बेनी

गचकी—वि० [हिं० गचना-कसकर भरना] कसी हुई, चुभी हुई।

उदा० लहलही लहरैं लुनाई की उदित अंग, उचके कुचन कैसी कुंचकी है गचकी।

—हजारा से

गचना—क्रि० सं० [अनु० गच] किसी वस्तु को कस कर भरना।

उदा० भनै दयानिधि पिय रहे गुन गचिकैं।

— दयानिधि

गच्छा—क्रि० अ० [सं० गच्छ] चले जाना, नष्ट होना।

उदा० सोमनाथ सुकवि निकाई निरखत जाकी, सुरनर किंनरनिहू को मद गच्छा है।

—सोमनाथ

गजक—संज्ञा, पु० [फा० कजक] शराब पीने के पश्चात् मुँह के स्वाद को बदलने के लिए खाई जाने वाली चटपटी वस्तु।

उदा० कहै पद्माकर त्यों गजक गिजा हैं सजी सेजै हैं सुराही हैं सुरा हैं अरु प्याला हैं।

—पद्माकर

गजगाह—संज्ञा, पु० [सं० गजन+ग्राह] हाथी की झूल।

उदा० कलँगी सड़क सेत गजगाहैं। यालनि जटित मंजु मुकता है। —चन्द्रशेखर

गजनी—संज्ञा, स्त्री० [?] पैर में पहनने का एक आभूषण।

उदा० यों सजनी सजनी सजि कै रजनी बजनी गजनी पहिरै ना। —नन्दराम

गजब—संज्ञा, पु० [अ० गजब] १. अन्याय, जुल्म २. आपत्ति, आफत ३. अत्यन्त [वि०]

मुहा० गजब गुजारना, जुल्म करना, अन्याय करना।

उदा० आस सों आरत सम्हारत न सीस पट गजब गुजारत गरीबन की धार पर।

—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐरे मेरे पाप जिय जारि लै कछूक ।
दिन गजब गुजारि ले चलाक चोपि चारा मैं
——नन्दराम

३. बेदरद बेपरद गजब गुनाहिन के ।
गंगा को गरद कीन्हे गरद गुनाह सब पद्माकर ।

गजबेलि——संज्ञा, स्त्री० [सं०] एक प्रकार का लोहा जो फौलाद से कुछ मुलायम होता है ।

उदा० पाउँ पेलि पोलाद सकेलि रसकेलि किधौं
नाग बेलि रसकेलि बस गजबेलि सी ।
——देव

गजा——संज्ञा, पु० [फा०] नगाड़ा बजाने का डंडा ।

उदा० सुर दुंदुभि सीस गजा, सर राम को रावन के सिर साथहि लाग्यो । ——केशव

गजाधिप——संज्ञा, पु० [सं०] ऐरावत, इन्द्र का एक हाथी जिसका रंग श्वेत माना गया है ।

उदा० ग्वाल कवि कहति गिरासी, गुनसत्व सी है, गंगा सी, गजाधिप सी, ज्ञान सो गहारीये ।
——ग्वाल

गजाना——क्रि० सं० [हिं० गाँजना, फा०, गंज] इकट्ठा करना, संचित करना ।

उदा० अवनि अकास भूरि कागद गजाइ लै, कलम कुस मेरु सिर बैठक बनावही ।
——दास

गज्जर——संज्ञा, पु० [हिं० गजर] सबेरे बजने वाला घंटा ।

उदा० जौ लौ हिय बाल को लगायबो चहत तौ लौ गजब गँवार गैर गज्जर बजायो हाय ।
——लालजी

गटकीली——वि० [हिं० गटक] दबाने वाली, हड़प लेने वाली ।

उदा० चटकीली पटकीली गटकीली बतियन, हटकीली होरी कत पारति विपति है ।
——बेनी प्रवीन

गटी——संज्ञा, स्त्री० [हिं० गाँठ] १. गाँठ, ग्रंथि २. समूह ।

उदा० पीत पहिराय पट बाँधि सिर सों पटी बोरि अनुराग अरु जोरि बहुधा गटी ।
——केशव

गड़काब——वि० [फा० गर्क+आब] पानी में डूबा हुआ ।

उदा० जिनकी गरज सुने दिग्गज बे-आब होत, मद ही के आब गड़काब होत गिरि है ।
——भूषण

गड़ारे——वि० [हिं० गड़ारी] मंडलाकार गोला, घेरा, वृत्त ।

उदा० 'दास' रसीली की ठोढ़ी छबीली की लीली के बिंदु पै जाइये वारे । मित्त की डीठि गड़ी किधौं चित्त को चोर गिर्‌यो छबिताल गड़ारे । ——दास

गण——संज्ञा, पु० [सं०] १. देवता, २. शिव के पारिषद, ३. दूत; सेवक ।

उदा० सेनापति बुधजन मंगल गुरु गण धर्मराज मन बुद्धि घनी । ——केशव

गतकारी——वि० [अनु० गद+कारी (प्रत्य)] मुलायम, कोमल ।

उदा० गुरु नितम्ब उंगरी गतकारी पिंडुरी गुल्फ सुढारु । ——बोधा

गती वि० [देश०] १. अधिक, अतिशय, २. ठीक ।

उदा० बाग गुन गती कौ, सुदाग रिपु रती कौ है, भाग छत्रपती कौ, सुहाग बसुमती कौ ।
——सोमनाथ

गत्थ——संज्ञा, पु० [सं० ग्रंथ] १. समूह, झुंड २. पूँजी ।

उदा० दंड तें प्रचंड होत नहूँ खण्ड खण्ड घोर कसत कोदण्ड जोर दोर दण्ड गत्थ के ।
——चन्द्रशेखर

गथी——वि० [सं० संग्रथन] संग्रथित, जुड़ी हुई, परस्पर गुथी हुई ।

उदा० कहूँ अति तरजति गरजति मन्द कहूँ कहै रघुनाथ कहूँ मधुरता गथी की ।
——रघुनाथ

गद——संज्ञा, पु० [सं०] रोग, रुज ।

उदा० गोपी गोप धेनु कन, पायन की रेनु कन, औषधि विषम, जम त्रास, महागद को ।
——देव

गदकारी——वि० [देश०] मांसल, मुलायम और दब जाने वाला ।

उदा० गोरी गदकारी परैं हँसत कपोलन गाड़ ।
——बिहारी

गदना——क्रि० सं० [सं० गदन] कहना ।

उदा० मदै उनमाद, गदै गदनाद, बदै रसबाद ददै मुख अंचल । ——देव

गदनाद——संज्ञा, पु० [सं० गद्‌गद+नाद] गद्‌गद्

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की आवाज, प्रसन्नता का शब्द ।
उदा० मदै उनमाद, गदै गदनाद, बदै रसबाद, ददै मुख अंचल । —देव

गदरताई—संज्ञा, स्त्री० [अ० गदर] १. बगावत पन, बलवा होना । उपद्रव होना । २. फल आदि का पकने की स्थिति में होना ।
उदा० चोरी एक चित की फलन में गदरताई, डांक रही कारन खबर दरबार के ।
—बेनी प्रवीन

गदराना—क्रि० अ० [अनु० गद]. पक्वोन्मुखः पकने के करीब, यौवन में अंगों का उभरना ।
उदा० गदराने तन गोरठी ऐपन आड़ लिलार ।
—बिहारी

गदशत्रु—संज्ञा, पु० [सं० गदशत्रु] रोगों का शत्रु, वैद्य ।
उदा० गदसत्रु त्रिदोष ज्यों दूरि करै बर ।
त्रिसिरा सिर त्यों रघुनन्दन के सर ।
—केशव

गनी—वि० [अ० गनी] धनवान्, अमीर ।
उदा० कौन मुख लैकै तोहि ऊधव पठायौ इहाँ कैसी कही वानैं हाय लंक लौं गनी बनै ।
—ग्वाल

गम के नसीब तें गनी है जैसे राज पाये,
आसक गरीब को गुमान मनी माल क्या ।
— आलम

गनीम— संज्ञा, पु० [अ० गनीम] शत्रु, दुश्मन ।
उदा० कहै पद्माकर त्यों दुंदुभि धुकार सुनैं, अकबक बोलै यों गनीम औ गुनाही है ।
—पद्माकर

गपना— क्रि० सं० [हिं० गपकना] खाना, गपक जाना ।
उदा० कीनो कोप कराकरि होत तहाँ सरासरि, भराभरि बोती जहाँ पहिले गपन की ।
—गंग

गबदुवा—संज्ञा, पु० [बुं] बालक ।
उदा० चारो दिसि ते धाय गबदुवन छेंकि लईं ब्रज बाला । —बक्सी हंसराज

गब्जना—क्रि० सं० [?] घुसेड़ना ।
उदा० गहि गहि पिसकब्जैं मरमनि गब्जैं तकि तकि नब्जैं काटत हैं । —पद्माकर

गब्बियान—वि० [सं० गर्व] घमंड़ी, गर्वीले ।
उदा० अदब्ब गब्बियान के सरब्ब गब्ब को हरे ।
—पद्माकर

गयन—संज्ञा, पु० [सं० गगन] आकाश ।
उदा० जहँ रतनसेन रण कहँ चलिब हल्लिव महि कंप्यो गयन । —केशवदास

गयारी—संज्ञा, स्त्री० [अ० गियार] १. धर्म चिह्न जो हर समय पास रहे, यथा जनेऊ आदि । २. सलीब या यहूदियों का पीला वस्त्र जिसे वे लोग कन्धे के पास कपड़ा में सिला रखते हैं ।
उदा० न्यारी करौ सारी कै गयारी सी प्रवीन बेनी, बचन न दैहौं तन बसन में गोपरी ।
—बेनी प्रवीन

गरई—वि० [सं० गुरु] १. भारी २. धृष्ट, बदमाश ।
१. समधी समधी मिलनि, गोप गरई सभा, प्रभा आनन्द कछु और आजैं । — नागरी दास
उदा० २. ज्यों उनको तू बकावत मोंहि सों आई बकावन ह्वै गरई । —केशव

गरउ—संज्ञा, पु० [सं० गर्व] घमंड़, गर्व, अभिमान ।
उदा० निरखि सौति जन हृदयनि रहै गरउ को ढंगना । —दास

गरगना— संज्ञा, पु० [?] कीड़े ।
उदा० झरत सीस तैं राधि रुधिर कृमि डारत डोलत । छुधा छीन अति दीन गरगना कंठ कलोलत — ब्रजनिधि

गरट—संज्ञा, पु० [सं० ग्रथ] १. समूह, झुंड २. गरिष्ट भारी ।
उदा० जानिये न कौन हेतु मोहन सखा सों कह्यो तुम सब रहो जाय गोधन गरट में ।
—रघुनाथ
२. हैबर हरट्ट साजि गैबर गरट्ट सबै पैदर के ठट्ट फौज जुरी तुरकाने की । — भूषण

गरद—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का रेशमी कपड़ा ।
उदा० सेमर फूल तूल के रये । गरद गात मखमल मढ़ि लए । —केशव

गरपरा—संज्ञा, पु० [देश०] दास, नौकर, सेवक ।
उदा० हौं तो सदा गरपरा तेरो परा भरो दधि पाऊँ । —बक्सी हंसराज

गरबत—संज्ञा, पु० [सं० गर्व] गर्व, अहंकार ।
उदा० सील के सुभाइनि सो महा सुखदायनि सो कहूँ काहू कबहूँ करत गरबत को ।
— देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गरावनि—संज्ञा, पु० [हिं० गला + आवनि (प्रत्य०)] गले में पड़ने वाला फंदा, गला फँसाने वाला बंधन ।

उदा० चोर हो हमारो प्रेम चौंतरा मैं हार्‌यौ गरावनि तें निकसि भाज्यौ है करि लजौहों सो । —रसखानि

गरबैं—वि० [सं० गर] तीक्ष्ण, तीता, तेज ।

उदा० सोंठ लगी गरबैं तबहीं भरि नैनन में अँसुवा मुख मौरै । एरी लखो एहि रूप सुहावन नारिन को मन को यह चोरै ।
—रसलीन

गरुवाना क्रि० अ० [सं० गर्व] गर्वित होना, घमंड़ी होना ।

उदा० पियहि अनन्द बढ़ाइ तिय चली मंद गरुवाइ । —रसलीन

गरेनी—वि० [हिं० गलना] गलाने वाली, नष्ट करने वाली ।

उदा० चैनी जमराज की अचैनी जी जरेनीं जोर, बोर देनी कागद गुपित्र के गरेनी है ।
—ग्वाल

गरेरना—क्रि० सं० [हिं० घेरना] घेरना, छेंकना

उदा० जोरे दृग सो दृग निहोरे मृगनैनी नेक औरे करी गूजरी गँवारिनि गरेरि कै ।
—देव

गरेरी—वि० [हिं० घेरना] घिरी हुई ।

उदा० बोले ते न बोलै अंग नेकहू न डोलै औ न खोलै नाहि नैन मैन गजब गरेरी है ।
—नन्दराम

गरैंठी—वि० [सं० गरिष्ट] टेढ़ी, वक्र ।

उदा० सूधे न चाहै कहूँ घनआनन्द सोहै सुजान गुमान गरैंठी । —घनानन्द

गर्‌यारना - क्रि० अ० [?] चक्कर काटना ।

उदा० राचे महावर पायनि त्यौं तकि चायनि आय गर्‌यारेई डोलै । —घनानन्द

गलका—संज्ञा, पु० [हिं० गलना] १. एक प्रकार का फोड़ा जो प्रायः हाथ की उँगलियों में होता है । २. एक प्रकार का कोड़ा, चाबुक ।

उदा० २. बड़ी बहुमोल गुलगुली गिलमै बिछी गड़ति गुलफनि लगे पाइ गलकै । —देव

गलगज्ज—संज्ञा, पु० [हिं० गाल + गाजना] १. आनन्द, हर्ष, विनोद, २. कोलाहल, शोर ।

उदा० रुहिरय रुहिर अपार पाइ भैरव गलगज्जिय
—मुरलीधर

गलगली—वि० [सं० गलन] गीला, अश्रुपूर्ण ।

उदा० ललन चलन सुनि चुप रही बोली आपु न ईठि । राख्यो गहि गाढ़े गरे मनो गलगली डीठि । —बिहारी

गलगुंज—संज्ञा, पु० [हिं० गाल + गाजना] कोलाहल, शोर गुल ।

उदा० तनु तिन कुंजनि मैं दृग मग पुंजनि मैं, मनु गलगुंजनि मैं प्रान प्राननाथ मैं ।
—बेनीप्रवीन

गलसुई—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] गाल के नीचे रखने की तकिया ।

कुसुम गुलाबन की गलसुई । बरणि न जाँय न नैनन छुई । —केशवदास

भरि रह्यो श्वेत कर तूलतूल ।
गोलसोई रूप विधु भयो कूल ।।
—गुमान मिश्र

गलीमन संज्ञा, पु० [फा० गलिम] तीव्रकाम, तीव्र काम वासना ।

उदा० गंज गलीमन के गिलमैं गुलदार गलीचन की छवि छावत । चारु चिराकन को अवली करि चरिउ द्वार केवार लगावत ।
—चन्द्रशेखर

गल्ल—संज्ञा, स्त्री० [पंजा०] बात ।

उदा० क्या भल्लै टुक गल्ल सुनि भल्लर भल्लर भाइ । —दास

गवड़ी - संज्ञा, स्त्री० [सं० गौरी] गौरी, गौरांङ्गी, गौरवर्ण की नायिका ।

उदा० बोधा बखानत माधवा यों तरुनी घरनी गवड़ी सुखदैनी । —बोधा

गलबल—संज्ञा, पु० [अनु०, हिं०] कोलाहल, शोर । कलबल

उदा० कंकन उभेर मुठभ—रहू के गलबल, वाजिद को दल सनमुख पल द्वै रह्यो ।
—केशव

गलारना—क्रि० अ० [हिं० गिलारना] कूजना, गाना ।

उदा० आये न नन्दकिशोर सखी । अब मोर मलार गलारन लागे ।
—'रसिक रसाल' से

गलीत—वि० [अ० गलीज] दुर्दशग्रस्त, मैला कुचैला ।

उदा० मीत न नीति गलीतु ह्वै जौ धरियै धनु जोरि । खायें खरचैं जौ जुरै, तौ जोरियै करोरि । —बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गलीम—संज्ञा, पु० [अ० गनीम] शत्रु, बैरी, दुश्मन ।

उदा० दिग-बिजय काज महूम की । अरि देस-देसन धूम की । गूजर गलीम लगाइकै सु बुन्देलखंडहि आइकै । —पद्माकर

गलेले—संज्ञा, पु० [अनु०] क्रीड़ा, किलकारी, हर्ष की ध्वनि ।

मु० गलेले देना, किलकारी मारना, क्रीड़ा करना, हर्षोल्लास प्रकट करना ।

उदा० लोहू के अलेल मैं गलेल देत भूत भिरैं, रुंडन कों प्रेत औ पिसाच सहचारी है । —चन्द्र शेखर

लोहू के अलेले गंग गिरजा गलेले देत ।
चौंथ चौंथ खात गीध चर्ब मुख चोपरी ।।
—गंग

गलौ—संज्ञा, पु० [सं० ग्लौ] चन्द्रमा, शशि ।

उदा० गंगा गाइ गोमती गलौ ग्रहपति अरु सुर-गिर । —सूदन

गवेले—[हिं० गँवार, सं० ग्रामीण] ग्रामीण, गाँव के रहने वाले लोग ।

उदा० नीचे खरे सुनत प्रवीन लोग बीन जानि कहत गबेले इहाँ कोकिल बसति है । —कालिदास

गस—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गाँस] गाँस, गाँठ ।

उदा० अरु जौ निलजे ह्वै मिलैं तौ मिलौं, मन तें गस-गूज न खोलियै री । —घनानन्द

गसना—क्रि० अ० [सं० ग्रसन] फँसना ।

उदा० बिधु कैसी कला बधू गैलन में गसी ठाढ़ो गोपाल जहां जुरिगो । — पजनेस

गसीले—वि० [हिं० गाँस] गाँस भरे हुए, कपटी, छली ।

उदा० कहाँ लौं तिहारे गुन गुनियै गसीले स्याम, सुखिया सुतंतरहौ अन्तर पिराय कै । —घनानन्द

गहकना—क्रि० अ० [सं० गद्गद] ललकना, उमंग से भरना, लपकना ।

उदा० माच्यो घमासान तहां तोप तीर बान चले, मंडि बलवान किरवान कोपि गहकी गंग गहकि, गाँसु और गहे रहे अधकहें बैन । —बिहारी

गहगहा—वि० [सं० गम्भीर] गाढ़ा, गहरा ।

उदा० लहलहयौ योबन हँसत डहडहयो मुख गह-गह्यौ काजर चखन चटकायो है । —देव

गहगहाना—क्रि० अ० [हिं० गहगहा] सोल्लास फूलना, विकसित होना ।

उदा० महमही मंद मंद मारूत मिलन तैसी, गह-गही खिलनि गुलाब की कलीन की । —रसखानि

गहन—संज्ञा, पु० [देश०] उच्च स्वर ।

उदा० गहन गहन लागे गावन मयूर माला ।
झहन झहन लागे रोम रोम छन में ।
—श्रीपति

गहब—वि० [सं० गह्व ?] १. मोटा, सघन, २. भरा हुआ ३ प्रफुल्लित ।

उदा० १. बिछे गहब गलीचा अरु गुलगुली गिलमैं । —पद्माकर

२. गोल गोल गहब गरूर गुन गेंदा एक मँजुल मुकुर कोमलाई कंज केरे हैं । —पजनेस

३. गुल पर गालिब कमल है कमलन पै सु गुलाब, गालिब गहब गुलाब पै मो सुरभि सुभाव । —पद्माकर

दस गुनी दीपति सों गहब गछे गुलाब ।
—द्विजदेव

गहभर—वि० [सं० गद्गद] आवेग, अवरोध, रुकावट, रुँधना ।

उदा० गहभरे कंठनि आप । ब्रज-सुन्दरी भरि ताप । —सोमनाथ

गहमह—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गहगह] चहल-पहल रौनक, धूम ।

उदा० गो रंभन गहमह खरिक, साँझ दुहारी बेर ।
पलकनि पौंछत रज तहाँ प्रिया पीय मुख हेर । —नागरीदास

गहर—संज्ञा, पु० [सं० गह्वर] प्रबल, शक्ति-शाली ।

उदा० गीषम गहर गनीम को, गारब गरब झुकारि । —चन्द्रशेखर

गहरत—क्रि० वि० [हिं० गहर] मंद-मंद ।

उदा० 'सेवक' त्यों गहरत आवै ज्यों-ज्यों बाँसुरी सों कहरत आवै मन मेरो मानि दूर को । —सेवक

गहरना—क्रि० अ० [सं० गह्वर] १. उलझना, टकराना, फँसना २. झगड़ना ३. बिलम्ब करना । [हिं० गहर=देर]

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. लागि पिय हिय सों सुहाग सनमान भरी पागि तन मन अनुराग में गहरि गई ।
—सोमनाथ

ककुभि कुंभि संकुलहि गहरि हिमगिरि हिय फट्यो । —गंग

गहीली—संज्ञा, स्त्री० [सं० गर्वीली] गर्वीली ।

उदा० गुननि गहीली गति लेति गरबीली अंग-अंग दरसावति उलटि पट ओट तैं ।
—चन्द्रशेखर

गहिली गरब न कीजिये समय सुहागहि पाइ ।
—बिहारी

ग्रहेस—संज्ञा, पु० [सं० ग्रह + ईश] १. सूर्य २. शनि ।

उदा० १. तीछन ग्रहेस 'देव' द्योस क्यों सहे री रैनि, मधुप मदंध को सुगंध गुन गींजि मारु
—देव

गांस—संज्ञा, स्त्री० [सं० ग्रास] वैर, द्वेष, रोक, पकड़ ।

उदा० गहकि, गाँसु, औरे गहे, रहे अधकहै बैन ।
—बिहारी

गाँसी—संज्ञा, स्त्री० [सं० ग्रास] तीर या बर्छी आदि का फल, हथियार की नोक ।

उदा० १. दीन्हीं ऐंचि गाँसी पंचबान बखियान में
—सोमनाथ

गाढ़िली—वि० [सं० गाढ़] १. अत्यधिक, बहुत, ज्यादा २. डुबाना [फा० गर्क]

उदा० अतरनि तर करि चोवन चुपरि देव, उबटि हबाये है गुलाबनि में गाढ़िली ।
—देव

गाढ़ति—संज्ञा, स्त्री० [सं० गाढ़] संकट, कठिनाई ।

उदा० देवजू दै चुकी कंचन सो तन लै चुकी पंचन की गुरु गाढ़ति । —देव

गाढ़ा—क्रि० वि० [सं० गंभीर] भली भाँति अच्छी तरह, खूब ।

उदा० लाडिली के कर की मेंहदी छबि जात कही नहिं शम्भुहूज पर । भूलिहु जाहि बिलोकत ही गड़ि गाढ़े रहे अति ही दृग दू पर ।
—शम्भू

गाढ़ै—क्रि० वि० [सं० गाढ़] भली भाँति सर्वथा ।

उदा० राख्यौ गहि गाढ़ैं गरैं मनो गलगली डीठि ।
—बिहारी

गाती—संज्ञा, स्त्री० [सं० गात्री] अंगौछा या वस्त्र के टुकड़े से सिर बाँधने या लपेटने की एक विशेष प्रक्रिया ।

उदा० ग्वालनि के संग नन्दनन्दन कलिंदी तट, राती गुन्जमाल गाती बाँधें पीतपट की ।
—सोमनाथ

गाथना—क्रि० सं० [सं० ग्रंथन] संग्रथन करना, एक में एक जोड़ना, संयोजित करना ।

उदा० 'आलम कूल के मूल कुदारि हौं मेटि कुमन्त सुमन्त को गाथी । —आलम

गादर—वि० [सं० कदर्य, प्रा० कादर] कायर, डरपोक, अक्षम, असमर्थ, शक्तिहीन ।

उदा० मेरे दोष देखौ तौ परेखो है अलेख एजू, मौन ढोलै निधि कैसैं बूझियत गादरौ ।
—घनानन्द

गाध—वि० [सं०] छोटी, सीमित ।

उदा० तो गति अगाध सिन्धु, गाध मति मेरी, या असाधुता को, राधे अपराध छिमा करिये ।
—देव

गाम—संज्ञा, स्त्री० [?] १. घोड़े की एक चाल २. ग्राम ।

उदा० १. चहैं गाम चल्लैं चहैं तौ दुगामा । चहैं ये बिया चाल चल्लै भिरामा ।
—पद्माकर

गारना—क्रि० सं० [सं० गलित] १. नष्ट करना, गलाना, २. निचोड़ना ।

उदा० यह आसा धरि अपने जिय में तप करि गारो गाता ।
—बक्सी हंसराज

गारब—संज्ञा, पु० [सं० गौरव] गौरव, मर्यादा, प्रतिष्ठा ।

उदा० गीषम गहर गनीम को, गारब गरब झुकारि । —चन्द्रशेखर

गारि—संज्ञा, पु० [सं० गर्त] गड्ढा, गाड़ ।

उदा० टारि दै वारी गुलाब को गारि मैं क्यों हठ छार जरे पर पारि दै । —तोष

गारौ—संज्ञा, पु० [प्रा० गार, सं० आगार] १. गृह, मकान, घर २. गर्व, घमन्ड ।

उदा० गोबर को गारौ सु तो मोहि लगै प्यारौ, कहा भयौ भौन सोने के जटित मरकत हैं ।
—रसखानि

गाला—संज्ञा, पु० [हिं० गाल] धुनी हुई रुई का गोला ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० गाले अति अमल भराले तोसकों में फेर, ऊपर गलीचे बिछवाले जाल वाले अब ।
—ग्वाल

गालिब—वि० [अ० गालिब] जीतने वाला, विजयी, श्रेष्ठ ।
उदा० गुल पर गालिब कमल है कमलन पै मु गुलाब । —पद्माकर

गालिम—वि० [अ० गालिब] बलवान, विजयी ।
उदा० गैरिकै ग्रस्यो है गजराज गोड़ गोट्यो ग्राह गालिम गंभीर नीर चाहयो सो गिरायो है
—रघुराज

गाल्यो—क्रि० सं० [हिं० गला] गले में कोई पदार्थ जबरदस्ती डालना ।
उदा० घास चरै पशु आपसों, गुड़ गाल्यो ही खाय
—'दोहासार संग्रह' से

गाह – संज्ञा, स्त्री [सं० ग्राह] १. घात पकड़ २. गाथा ।
उदा० १. कहै पद्माकर त्यों रोगन की राह परी दाह परी दुखन में गाह अति गाज की ।
—पद्माकर
२. युद्ध खन्ड पुनि गाह रुचिर शृंगार बखाने ।
—बोधा

गाहना—क्रि० अ० [सं० अवगाहन] १. घूमना, विचरण करना, थाह लेना, २. बन्धक, गिरवी, रेहन । [संज्ञा, पु०]
उदा० ब्रज-वन गैल गर्यारनि गाहत । लहत फिरत ज्यौं ज्यौं सुख चाहत ।
—घनानन्द
२. गति मेरी यही निस बासर है चित तेरी गलीन के गाहने है । —ठाकुर

गिनौरी—संज्ञा, स्त्री० [फा० गुनूरा = मजदूर] मजदूरनी, नौकरानी ।
उदा० सजि गाजै बजाज अवाज मृदंग लौं, बाँकियै तान गिनौरी लरै । —गंग

गिरद—संज्ञा, स्त्री० [फा० गिर्द ?] १. तकिया, उपधान २. आस-पास ।
उदा० १. विपरीति मंडित जघन खम्भ नीव किधौं लाह की गिरद गादी मैन महिपाल की ।
—केशव
२. गहगहे गिरद गुलाबन के बट्टा बने किंसुख अँगार मुख माँहि परचत हैं ।
—ग्वाल

गिरवान—संज्ञा, पु० [फा० गरेबान] गर्दन, गला, ग्रीव ।
उदा० तहँ इकन की गिरवान गहि पटके हयन तें समर में । —पद्माकर

गिरबीदे—वि० [फा० गिरवी] गिरो रखा हुआ, रेहन ।
उदा० राजा राईराने उमराइ उनमाने, उनमाने निज गुन के गरब गिरबीदे हैं ।
—देव

गिरवान—संज्ञा, पु० [सं० गीर्वाण] गीर्वाण, देवता ।
उदा० कहै कवि गंग यह देखिबे को आज काल, काबली की मुद्दति गिरीस गिरबान की ।
—गंग
सीख लीन्हो मेर औ कुबेर गिरआनो है ।
—ठाकुर

गिरह—संज्ञा, स्त्री० [फा०] कुलाँच, कलैया, उलटी, कलाबाजी ।
उदा० ऊँचे चितै सराहियत गिरह कबूतर लेत ।
—बिहारी

गिरापूर—संज्ञा, पु० [सं० गिरा = सरस्वती + पूर = जल समूह] सरस्वती का जल समूह ।
उदा० गिरापूर में है पयोदेवता सी । किधौं कंज की मंजु सोभा प्रकासी । —केशव

गृहचरी—वि० [सं० गृहचर] घरेलू, घर में रहने वाली, पालतू ।
उदा० गूढ़ गृहचरी चिरी चुरी चहचरी करैं, कुंथत कपौंत, भट काम के कटक के ।
—देव

गिलगिली—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. गुदगुदी २. सिरोही नामक एक चिड़िया ३. घोड़े की एक जाति ।
उदा० १. लाल लगावत अतर तर, राधे तन सुकुमार । चलत गिलगिली कुचन पर, लखत झिझक रिझवार । — ब्रजनिधि

गिलना—क्रि० सं० [सं० निगरण] निगलना, खाना, लीलजाना २. पकड़ना ।
उदा० उगिलत आगि सी गुलाब मुख लागे बिष गोली सी गिलति सिख बेली न सुहाति है ।
—देव
२. छवै छिगुनी पहुँचो गिलत अति दीनता दिखाय । —बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गिलम—संज्ञा, पु० [फा० गिलीम] मुलायम गद्दा, बिछौना ।

(क) उदा० झालरनदार झुकि झूमत बितान बिछे गद्दब गलीचा अरु गुलगुली गिलमैं ।
—पद्माकर

(ख) गिलम गलीचन पै अतर सु पुष्पन के, चन्दन कपूर पै फुहार पिचकारी को ।
—पजनेस

गिलान—संज्ञा, स्त्री० [फा० गिल] मिट्टी, २. गारा, गिलावा ।

उदा० मीन मृग-खन्जन सिखान भरे मैन-बान, अधिक गिलान भरे, कंज कल ताल के ।
—ग्वाल

गिल्ला—संज्ञा, पु० [फा० गिला] शिकायत, गिला, बुराई ।

उदा० मूरख अतिहि रिसाय माधवनल से गुनी पर । ढिग आवत उठ जाय फिर पीछू गिल्ला करै ।
—बोधा

गीता—संज्ञा, स्त्री० [सं०] वृतान्त, हाल, समाचार ।

उदा० राम चले सुनि शुद्र की गीता । पंकजयोनि गये जहँ सीता ।
—केशव

गीधना क्रि० आ० [बु०] परचना, लहटना ।

उदा० बीधे मों सों आन कै, गीधे गीधहि तारि ।
—बिहारी

गीर—संज्ञा, स्त्री० [सं० गीः०] वाणी, आवाज, ध्वनि ।

उदा० कुंज तजि गुंजत गम्भीर गीर तीर, तीर, रह्यो रँगभौन भरि भौंरन की भीर सों ।
—देव

गीरपति—संज्ञा, पु० [सं० गी०=वाणी+पति]
१. विद्वान्, गीर्णति, वृहस्पति ।

उदा० कवि सेनापति कुसल कलानिधि गुनी गीरपति ।
—केशव

गुजरान—संज्ञा, स्त्री० [फा० गुजरान] १. गुजर २. प्रवेश, पहुँच, आगमन ।

उदा० १. बोधा कवि धन गुण रूप की कहाँ लौ कहौं दान औ पुरान गुजरान द्योस रैन की ।
—बोधा

२. सो कजरा गुजरान जहाँ कन्नि बोधा जहाँ उजरान तहाँ को ।
—बोधा

गुझकना—क्रि० अ० [सं० गुह्य] छिपना, दुरना आड़ में होना ।

उदा० ऐपन पिंडी सी मीड़ी पिंडुरी उमड़ि, मेड़ बेड़न लगावै, पेड़ पाइन गुझकती ।
—देव

गुझनौट—संज्ञा, पु० [सं० गुह्य+हिं० ओट] कंडील, फानूस ।

उदा० दीपति देह मनोज कियो गुझनौट को दीप ज्यौं राजत आछै ।
—तोष

गुझाना—क्रि० सं० [सं० गुह्य] १. लुप्त करना, छिपाना २. नष्ट करना ।

उदा० देव दीनबन्धु दयासिन्धु सिन्धुरादि के । सहाय ह्वै अबन्धु की मदन्धता गुझाई है ।
—देव

२. मोह महामद के उनमाद मदान्यो नहीं मदनागिनि गूझ्यो ।
—देव

गुझौर—संज्ञा, पु० [सं० गुह्य+आवर्त्त] शिकन, कपड़े की सिकुड़न ।

उदा० गात में गुझौर परि अँगिया उमंग उर ताय तनि पोहीपीत पोति है तिफेरी की ।
—देव

गुधना—क्रि० अ० [हिं० गोदना] धंसना, घिरना, चुभना ।

उदा० जात बनै न तितै कँपै गात, इतै पर नैननि लाज रही गुधि ।
—बेनी प्रवीन

गुटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गुड़ी] ग्रन्थि, गाँठ ।

उदा० पंचतत्व प्रगट ते कपट गुटी सी खुली, ह्वै हैं औरै रंग बर संगिहि लगाइ लै ।
—सोमनाथ

गुड़ी—संज्ञा, स्त्री [बु०] १. गाँठ, दुराव २. पतंग ।

उदा० १. हिलमिल हमहिं करत चतुराई दिल की गुड़ी न खोलौ ।
—बक्सी हंसराज

२. गुड़ी उड़ी लखि लाल की अँगना अँगना माह ।
—बिहारी

गुढ़ना—क्रि० अ० [सं० गुह्य] छिपना, लुकना ।

उदा० बरुनी बन दृग गढ़नि में रही गुढ़ौ करि लाज ।
—बिहारी

गुढ़ाना—क्रि० सं० [सं० गूढ़] १. छिपाना, दुराना २. क्रि० अ० गुढ़ना छिपना ।

उदा० १. मृदु मुसकाइ गुढ़ाइ भुज घन घूंघट उल झारि ।
—पद्माकर

२. बरुनी बन दृग गढ़नि में रही गुढ़ौ करि लाज ।
—बिहारी

गुदरना—क्रि० सं० [फा० गुजर+हिं० ना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(प्रत्य)] प्रार्थना करना, दैन्य प्रदर्शित करना, चाटुकारिता करना ।

उदा० मीत न पैहै जान तूँ, यह खोजा-दरबार जो निसि दिन गुदरत रहै, ताही को पैठार —दास

गुदरैन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गुदरना] परीक्षा, जांच ।

उदा०सारो शुक सुभ मराल, केकी कोकिल रसाल बोलत कल पारावत भूरि भेद गुनिये । मनहु मदन पंडित रिषि शिष्य गुणन मंडित करि अपनी गुदरैन देन पठयै प्रभु सुनिये । —केशव

गुदी—संज्ञा, पु० [हिं० गुद्दी] सिर का पिछला भाग ।

उदा० लांबी गुदी लमकाइ कै काइ लियो हरि लीलि, गरो गहि पीर्‌यो । —देव

गुन—संज्ञा, पु० [सं० गुणनिका] . माला, हार २. सूत, डोरा ।

उदा० १. आलिन ओट करै नियरे ह्वै, हरे हँसि रामगरे गुन डार्‌यो । —देव

गुनगोरि—संज्ञा, स्त्री० [सं० गुणगौरि] पतिव्रता स्त्री, २. स्त्रियों का एक व्रत ।

उदा० गुनगोरि कियो गुरुमान, सु मैनु लला के हिये लहराइ उठ्यो । —देव

गुनी—संज्ञा, पु० [सं० गुणी] १. भाँड़ फूँक करने वाला ओझा, जादूगर ,इन्द्रजाली ।

उदा० चाम के दाम गुनीन के आम यों विस्वा को प्रीति पलीत को मेवा । —बोधा

गुनौती—वि० [सं० गुणन+औती (प्रत्य०)] गुणवती, गुण की राशि ।

उदा० धरि सगुनौती तू गुनौती हैं री ब्रज बीच राखौं कै मनौती ऐसो कब दिन पाइहौ । —रघुनाथ

गुपचुप—संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार की मिठाई २. चुपचाप, छिपकर [क्रि० वि० सं० गुप्त+हिं० चुप]

उदा० कहि कवि तोष गुपचुप अब लीजै चलि अब पेरो जिनि मोती दहि बरन बताई है । —तोष

गुबर्‌यारे—वि० [हिं० गोबर+हार] गँवार, मैले, कुचैले ।

उदा० संग मजूर फिरैं गुबर्‌यारे ए खैबे को सूर बड़े, सटकइया । —नागरीदास

गुमक—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का वाद्य, बाजा ।

उदा० ढोलकी गुमक वीणा बाँसुरी सितार बार कंदला तिया को ऐसी अति मृदु बानी है । —बोधा

गुमर—संज्ञा, पु० [फा० गुमान] घमन्ड, गर्व, कानाफूसी ।

उदा० मेरे नैन अंजन तिहारे अधरन पर शोभा देखि, गुमर बढ़ायो सब सखियाँ । —हरिजन

गुर—संज्ञा, पु० [फा० गुल] गुल, फूल ।

उदा० केसव सरिता सरनि कूल फूल सुगन्ध गुर । —केशव

गरकना—क्रि० अ० [फा० गर्क] डूबना, तन्मय हनो ।

उदा० गरकि गरकि प्रेम पारी परजंक पर धरकि धरकि हिय होल सो भमरि जात । —ग्वाल

गुरझनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० गुह्य] ग्रन्थि, गाँठ ।

उदा० जहाँ प्रान प्यारी-रूप-गुन को न दीप लहै, तहाँ मेरे ज्यौ परै विषाद गुरझनि है । —घनानन्द

गुरदा—संज्ञा, स्त्री० [सं० गोर्द] एक प्रकार की छोटी तोप ।

उदा० गज्जत गज दुरदा सहित बगुरदा गालिब गुरदा देखि परे । पद्माकर

गुरनि—संज्ञा, पु० [हिं० गुलेल] १. गुलेल, वह कमान जिससे मिट्टी या कंकड़ की गोलियाँ चलाई जाती हैं । २. गुण ।

उदा० १. मारे हैं गुरनि उन्हैं लाजौ ना लगति क्रूर, कूबरी के ह्वै कै होन चाहत हमारे हैं । — हफीजुल्ला खाँ के हजारा से

गुरा—संज्ञा, पु० [हिं० गुल्ला] मिट्टी की बनी हुई गोली जो गुलेल से चलाया जाता है । मिट्टी का ढेला ।

उदा० लगन वहै थल एक लगि दूजे ठौर बढ़ै न, कीच बीच जैसे गुरा खचकै फिरि उचटैन । - बोधा

गुराब—संज्ञा, पु० [देश०] तोप लादने वाली गाड़ी ।

उदा० तिमि घरनाल और करनालैं सुतरवाल जंजालैं । गुर गुराब रहँकले भले तहँ लागे बिपुल बयालैं । —रघुराज

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुलचाना — क्रि० सं० [हिं० गुलचा=गाल] धीरे से प्रेम पूर्वक गाल पर मारना ।
उदा० १. जोरि अंग अंग सों लचाइ गुलचाइ भाल, दीनी लाल बेंदी बोरि खैंचि कै अबीर की । — देव

गुलदार — वि० [फा० गुल + दार (प्रत्य)] फूलदार, वेलबूटे वाला ।
उदा० गंज गलीमन के गिलमैं गुलदार गलीचन की छवि छावत । — चन्द्रशेखर

गुल — संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार का मिष्ठान्न, गुलकंद
उदा० तकते सब सेब सुमुकुता को गुलसंकरिया चतुराई की । — बोधा

गुलिक — संज्ञा, स्त्री० [हिं० गुरिया] गोला रत्न ।
उदा० भेद न विचारयो गुंजमालै औ गुलीक मालै नीली एकेपटी अरु मीली एकलाई में ।
—दास

गुलुफ — संज्ञा, पु० [सं० गुल्फ] एँड़ी के ऊपर की गाँठ ।
उदा० कीरति दुलारी सुकुमारी प्रान प्यारी भारी जैसे लसै सुन्दर गुलुफ पग तेरे हैं ।
— पजनेस

गुलेला — संज्ञा, पु० [फा० गुलूला] मिट्टी का छोटा सा गोला जो गुलेल में फेंका जाता है ।
उदा० सोहत गुलेला से बलूला सुरसरि जू के, लोल हैं कलोल ते गिलोल से लसत हैं ।
— सेनापति

गुवार संज्ञा, पु० [अ० गुबार] १. धूल, गर्द, २. मन में दबाया हुआ क्रोध ।
उदा० १. जैसे मँझधार नाव आँधी कौ गुवार आएँ, बार आय सकत न पार जाय सके है । — ग्वाल

गुसुलखाना — संज्ञा, पु० [फा०] १. वह स्थान जहाँ बादशाह का खास दरबार लगता है । २. स्नानागार ।
उदा० अरे तें गुसुलखाने बीच ऐसे उमराय, लै चले मनाय महाराज सिवराज को ।
— भूषण

गूज संज्ञा, स्त्री० [देश०] लपेट ।
उदा० अरु जौ निलजे ह्वै मिलैं तौ मिलौ मन तें गस-गूज न खोलियैरी । — घनानन्द

गूजरी संज्ञा, स्त्री० [सं० गुजरी] १. पाँव में पहनने का एक भूषण, २. ग्वाला जाति की स्त्री, ग्वालिन ।
उदा० १. रचित महावर सों कंज से चरन मंजु, गूजरी गजनि अजौं काननि जगी रहै ।
— देव
२. गूजरी ऊजरे जोबन को कछु मोल कहौ दधि को तब दैहौं । — देव

गूढ़गेह — संज्ञा, पु० [सं० गूढ़ + हिं० गेह] गुप्त स्थान । यज्ञगृह, यज्ञशाला ।
उदा० प्रौढ़ रूढ़ि को समूढ़ गूढ़ गेह में गयो । शुक्र मंत्र शोधि शोधि होम को जहीं भयो ।
— केशव

गेरगेर — अव्य० [हिं० गैल] चारों तरफ ।
उदा० राधे राधे टेर टेर पीरो पट फेर फेर । हेर हेर हरि डोले गेर गेर बन में ।
— ठाकुर

गेरना — क्रि० सं० [ब्र०] १. गिराना, डालना, २. रोकना, घेरना, छेंकना ।
उदा० १. गोरी गुलाब के फूलन को गजरा लै गुपाल की गैल में गेरो ।
—पद्माकर
२. तुम हौ लाल ग्वाल ब्रज केरे गेरत वहुतक गायें । — बक्सी हंसराज

गेह साखी — संज्ञा, पु० [सं० गृह + शाखी] गृह का पेड़, गृहपति) ।
उदा० रानी बन लता गेह सारवी सों भिरति है ।
— दूलह

गैन — संज्ञा, स्त्री० [सं० गमन] १. गमन, चाल, गति, २. गैल, मार्ग, ३. दिन, ४. गगन ।
उदा० १. माथै किरीट, छरी कर लाल है, सालस आयौ गयन्द की गैननि ।
—कुमारमणि
सोभा सुख दैनी पाँव धारि गजगैनी ।
इत देखि मृगनैनी मीत लाय उर राखियो ।
— कुलपति मिश्र
२. ऐसे रिझवार को गिराइ गई गैन ही ।
— आलम
३. तारायनि ससि रैन प्रति, सूर होंहि ससि गैन । तदपि अँधेरो है सखी । पीऊ न देखै गैन । — रहीम

गैनी संज्ञा, स्त्री० [सं० गमन] मार्ग, रास्ता ।
उदा० गोपिन के दृग तारनि की यह रासि किधौं हरि हेरनि गैनी । —घनानन्द

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गैबर— संज्ञा, पु० [सं० गजबर] श्रेष्ठ हाथी ।
उदा० नदी-नद मद गैबरन के रलत हैं ।
—भूषण

गैर—वि० [अ० गैर] अनुचित व्यवहार, अन्याय ।
उदा० मेरे कहे मेल कर सिवाजी सों बैर करि गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं ।
—भूषण

गैरमिसिल—संज्ञा, पु० [फा०] अनुचित स्थान ।
उदा० भूषण कुमिस गैरमिसिल खरे किये कों, किये म्लेच्छ मुरचित करिके गराज़ को ।
— भूषण

जानि गैरमिसिल गुसीले गुसा धारि उर, कीनो न सलाम न बचन बोले सियरे ।
—भूषण

गोख— संज्ञा, पु० [अ० गौख] दरवाजे के ऊपर का कमरा ।
उदा० बैठि ग्यान के गोरब सुमति पटरानी सजिरे
—ब्रजनिधि

गोंछ—संज्ञा, स्त्री० [हिं० गुच्छा] गलगुच्छ, गल मोछ, श्मश्रु, गाल तक फैली हुई मूँछें ।
उदा० गंग गोंछ मोछा जमुन, गिरा अधर अनुराग । खान खानखानान के कामद बदन प्रयाग । —गंग

गोठ—संज्ञा, पु० [सं० गोष्ठ] समूह, मंडली, गोष्ठी २. गौशाला ।
उदा० १. रघुनाथ की दोहाई तबहो मैं जानि लयो भावती को मन भयो काहू भ्रम गोठ में । —रघुनाथ

गोठनि—क्रि० सं० [सं० गुंठन] छिपाना, बन्द करना, ढँकना, काढ़ना ।
उदा० रूप अघाति न छातनि देव, सु बातनि बातनि घूँघट गोठनि । —देव

गोड़ना—क्रि० सं० [हिं० गोडना] पददलित करना
उदा० नेकी-बदी बोड़िहैं विपति बरु गोड़िहैं, जो कान्ह हमैं छोड़िहैं तो हम तो न छोड़िहैं ।
—बोधा

गोधन—संज्ञा, पु० [सं०] १. ग्वालों का एक गान, २. गायों का समूह ।
उदा० १. जितही तितही धुनि गोधन की सब ही ब्रज ह्वै रह्यो रागमई । —रसखानि

गोन—संज्ञा, स्त्री [सं० गोणी] वह बोरिया जिसमें बैलों की पीठ पर सामान लादते हैं । बोरा ।
उदा० नोंन की न गोन लीहै आदी हैं न लादी हो । —रसखानि

दाम खरो दै खरीद खरो गुरु मोह की गोनी न फेरि बिकैहैं । —देव

गोफ—संज्ञा, पु० [स० गुंफ] नया निकला पत्ता, अंकुर ।
उदा० काटि किधौं कदली दल गोफ को दीन्हों जमाइ निहारि अगीठि है । —दास

गोंम—संज्ञा, पु० [सं० गोमायु] सियार, शृंगाल
उदा० गेहन मैं गोहन गरूर भरे गोम हैं ।
—भूषण

गोय—संज्ञा, स्त्री [फा०] गेंद, कंदुक २. गोपन, छिपाना (क्रि०) ।
उदा० १. गोय निबाहे जीतिये प्रेम खेल चौगान । —बिहारी

२. रहिमन निज मन की विथा मनही राखिय गोय । रहीम

गोल—संज्ञा, पु० [तुर्की] १. मुख्य सेना २. झुंड समूह ३. सेना का मुख्य भाग जिसमें सेनानायक रहता है ।
उदा० हलकी फौज हरौल ज्यौं परै गोल पर भीर । बिहारी

गोलक— संज्ञा, पु० [सं०] विधवा का जारज पुत्र ।
उदा० आप कुंड, गोलक पिता,
पितृ-पिता कानीन ।
लखो सु नागर भक्ति,
जस पांडव नित्य-नवीन ।।
—नागरीदास

गोला—संज्ञा, पु० [हिं० गोल] लटाई, जिसमें पतंग की डोर लपेटी जाती है ।
उदा० जैसें जिती डोर की सुगोला तें कढ़न होत तेती होत जात ऊच चढ़नि पतंग की ।
—ग्वाल

गोसा—संज्ञा, पु० [फा० गोशा] एकान्त, अकेले २. धनुष की कोटि, कमान् की दोनों नोकें ।
उदा० १. देव कहा भयो जो कबहू भुजडारी कहूँ उनके गल गोसे । —देव

२. प्रथम करी टंकार, फेरि गोसा सँवारि तहिं । —चन्द्रशेखर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गोसे—संज्ञा, पु० [फा० गोश] कान, श्रवण ।
उदा० दै लिखि बाहन में ब्रजराज सुगोल-कपोलन कुंज बिहारी । त्यौं पद्माकर या हिय में हरि गोसे गोविन्द गरे गिरधारी ।
—पद्माकर

गोह—संज्ञा, पु० [सं० गोधा] बिसखोपरा ।
उदा० गेहन मैं गोहन गरूर गहे गोम हैं ।
—भूषण

गोहन—अव्य [सं० गोधन] साथ, पीछे २. संग लगे रहने वाला साथी ।
उदा० कीन्ह्यो बहुतेरो कहूँ फिरत न फेरो मन, मेरो मनमोहन के गोहन फिरतु हैं ।
—दास

गोहरा—संज्ञा, पुलिंग [सं० गो + गृह] गौशाला, गायों के रहने का स्थान ।
उदा० गोहरे माझ गई मिलि साँझ कछू चिति में कछू छैल के कोछे । —देव
डारे ते लुटाय पै न राखी गाइ गोहरे ।
——देव

गौंच—स्त्री० पु० [सं गोचंदना] एक प्रकार
उदा० की जहरीली जोंक, गौंच अहि केंचुआ कान खजूरे भेख विच्छिन कोल पतंग डस मगदर बढ़हिं अलेख । —बोधा

गौरमदाइन—संज्ञा, पु० [बुं०] इन्द्र धनुष ।
उदा०—धनु है यह गौरमदाइन नहीं ।
सरजाल बहै जलधार वृथाहीं ।।
—केशव
घन गौरमदाइन दीसतयं । —जोधराज

गौंह—संज्ञा, स्त्री [सं० गम प्रा० गवं] मौका, अवसर, दाँव, सुयोग ।
उदा० देव जू सुगहि गहि गहिबे की गौहें अब सौंहे क्यों न राखो, कोई भौहें क्यों न राखो तानि । —देव

ग्रामसिंघ—संज्ञा, पु० [सं० ग्रामसिंह] कुत्ता, श्वान ।
उदा० सोधि सोधि रिपुसिंध कीने बन सिंघ नर सिंघ ग्राम गहि-गहि ग्रामसिंघ कीने है ।
—केशव

ग्यारसि—संज्ञा, स्त्री [सं० एकादशी] एकादशी ।
उदा० ग्यारसि निन्दत हैं मठधारी ।
भावति है हरिभक्त न भारी ।
—केशव

ग्यासि—संज्ञा, स्त्री [बुं०] एकादशी तिथि ।
उदा० ग्यासि तिथिहि छाँड़ि करत भोजन मनचेत ।
—केशव

ग्वासली—संज्ञा, स्त्री [बुं०] गायों की सेवा ।
उदा० करत ग्वासली ग्वाल घनेरे गायें नन्द दुहावैं । —बकसीहंसराज

ग्वैंडा—संज्ञा, पु० [देश०] गाँव के पास की जमीन, पार्श्ववर्ती भूमि, समीप, नजदीक ।
बदा० (क) देखादेखी भई ग्वैंडहि गाँव के बोलिबे की पैं न दाउँ रही है । —दास
(ख) तउ ग्वैंड़ो घर को भयो पेंड़ो कोस हजार । —बिहारी

घ

घँघोवना—क्रि० स० [हि० धन + घोलना] १. पानी को हिलाकर मैला करना, किसी वस्तु को पानी में हिलाकर घोलना, २. किसी बात को चारों तरफ फैला देना, प्रचारित करना
उदा० देखते ही सब घोष घँघोवत देखत ही हरि देख्योई भावै । —आलम

घघुरा—संज्ञा, पु० [हि० घाँघरा] लँहगा, घाँघरा
उदा० नथ मुकता भूमैं घघुरे घूमैं गड़बड़ भू मैं उभटि परैं । —पद्माकर

घटकी—संज्ञा, स्त्री० [सं० घटक] बीच में पड़ने वाली, मध्यस्थ ।
उदा० घूँघट के घटकी न टिकी सुछुरी लटकी लटकी गुन गूँदनि । —देव

घटी—संज्ञा, स्त्री० [सं० घट] छोटा शरीर ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० कोकिल की किलवार सुने बिरही बपुरे विष घूँटैं घटी मैं । —देव

घनबेली —वि० [हिं घनबेल] बेल बूटे वाला एक प्रकार का रेशमी वस्त्र, बेल बूटेदार रेशमी कपड़ा ।

उदा० कंचुकि कसी ललित घनबेली मंडित सुलफ किनारी । —वकसहंसराज

घनु—संज्ञा, पु० [सं० घनसार] १. घनसार, कपूर २. बादल ३. लोहारों का बड़ा हथौड़ा ।

उदा० न जक धरत हरि हिय धरैं, नाजुक कमला बाल, भजत, भार भय भीत ह्वै, घनु, चंदनु, बनमाल । —बिहारी

घबरना—क्रि० अ० [हिं० घबड़ाना] घबड़ाना, व्याकुल होना ।

उदा० घूँघट कहाँ लों आठो जाम मैं बनाये रहौं राम की दुहाई रोम रोम घबरत है । —ग्वाल

घरवाल —संज्ञा, पु० [हिं० घड़ी + वाल] घड़ी गिनने वाला, समय की गणना करने वाला, घरियारी ।

उदा० भावती के अंगन पै जितही परति डीठि, तितही घरवाल की घरी लौं ठहराति है । —सोमनाथ

घरहाइन—संज्ञा, स्त्री० [देश०] घर फोड़ने वाली ।

उदा० घैर सहो घरहाइन को अरु बानी सही कछु तीर तैं तीछी । —ठाकुर

घाटी—वि० [हिं० घाती = घातक] मायावी वंचक, धोखा देने वाला, छली, कपटी, झूठा ।

उदा० चोवा सार चंदन कपूर चूर चारु लै लै, अतर गुलाब का लगावै तन घाटी मैं । —ग्वाल

घरेर—संज्ञा, स्त्री० [सं० घर्षण] रगड़, कष्ट प्रद होने का भाव ।

उदा० ठाकुर कहत कोऊ जानत न भेद यह घाम की घरेर रहै दोऊ घर घिरकै । —ठाकुर

घरोदा—वि० [हिं० घर + पंजा० दा षष्ठी, विभक्ति] घर का, घर से संबंधित ।

उदा० होदा मन मुदिव घरोदा सुख देत भट्ट निबिड़ निकुंज जे जसोदा के नगर मैं । —चन्द्रशेखर

घलाघल —संज्ञा, स्त्री० [हिं० घलना] प्रहार, चोट, टक्कर २. प्रेक्षण, फेंकना, छिरकाव ।

उदा० नैनन ही की घलाघल कै घने घाइन कौं कछू तेल नहीं फिर, । —पद्माकर
लाल गुलाल घलाघल में दृग ठोकर दै गई रूप अगाधा । —पद्माकर

घाँकी—अव्य० [हिं० घां] तरफ, ओर ।

उदा० कान्ह कढ़े वृषभानु के द्वार ह्वै खेलन खोरि पिछावर घाँकी । —देव

घाइ—अव्य० [हिं० घा० घाई] और, तरफ ।

उदा० गाइ चराइ हिये ही हिये लखि सांझ समै घरघाइ को घेरति । —दास

घाई—संज्ञा, स्त्री० [देश०] धोखा, प्रवंचना चालाकी । मुहा० घाई पोढ़ी = धोखाधड़ी, बेईमानी ।

उदा० लीजियो चुकाइ दधिदान मेरी ओर ह्वै कै, बाबा की दोहाई घाई पोढ़ी कै कै थापने । —बेनो प्रवीन

घान—संज्ञा, स्त्री० [हिं० घन = बड़ा हथौड़ा] चोट, प्रहार, आघात ।

उदा० कहै पद्माकर प्रपंची पंच बान, केसु बानन की मान पै परी त्यों घोर घाने सी । —पद्माकर

घामरि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० घामड़ = मूर्ख] मूर्खता, अज्ञानता, नासमझी ।

उदा० स्यामहि चाहि चलै तिरछी, मन खोलौं खिलारि न घूँघट खोलै । आली सों आनंद बातनि लागि मचावति घातनि घामरि घोलै । —घनानन्द

घालन—संज्ञा, स्त्री० [सं घटन] फेंकने या चलाने की क्रिया ।

उदा० १ग्वाल कविकुंकुम की घालन रसालन पै, नारे पै, नदी पै औ निकास पै उछाल है । —ग्वाल

घालना—क्रि० स० [सं० घटन] १. डालना, रखना २ छोड़ना ३. मार डालना ।

उदा० १.लाज भरी गुरु लोगन में मुख घूँघट घालि सदा बतराती । —प्रतापशाहि
वंचक बिंबनि चंचु चुभावत कुंज के पिंजर में गहि घाल्यो ,
हौं सुकहूँ नहिं राखि सकी सो कहूँ सुनि तेहो परोसिनि पाल्यो । —देव

घावरिया—संज्ञा, पु० [हिं० घाव + वरिया] घावों की दवा करने वाला ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० तब चाल्यो लै लाठी कर में। पहुँच्यौ घावरिया के घर में। ताहि कह्यो फोहा अस दीजै। घाव पाँव को तुरत भरीजै। —अज्ञात

घावरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० घात] क्षत, जख्म।
उदा० बासर बिभावरी गनत बावरीये सुनि, आये घनस्याम, भई घावरी घरीक लौं। —देव

घावरे—वि० [हिं० घामड़] मूर्ख, अज्ञानी।
उदा० दास जुग संभु रूप श्री फल अनूप मन घावरे करन घावरेन किल कामनी —दास

घावरेनि घर दानि, बावरेनि बरदानि, साँवरे, सुघरदानि रावरे चरन ये। — देव

घोर घनी घनघोर सुने घनस्याम घरीक मैं घावरे ह्वै हौ। —देव

घींच—संज्ञा, स्त्री० [देश०] गला, गर्दन।
उदा० नित घींच पै मीच न नीचहि सूझत मोह के कीच के बीच फँस्यो हैं। —ठाकुर

जानु भुजान में जानु भुजा दिये खींचत घींचन मींचत आँखें। — देव

घुघुरून—संज्ञा, पु० [देश०] मंजीर
उदा० बैर परी पुरबासिनी ये सबै जाम करैं घुघुरून घना को। बीच परी टटिया तिनकी झकझोरत जोर धरे जोंबना को। —बोधा

घुचना—क्रि० अ० [हिं० घुसना] घुसना, प्रवेश करना, फँसना।
उदा० मैं तौ घुच्यौ कीच के बीच। ऊपर तै मोंहि मारै नीच। —जसवंतसिंह

घुटना—क्रि० अ० [सं० घुंटक] गाँठ या बंधन का कसना, उलझकर कड़ा पड़ जाना।
उदा० हठु न हठीली करि सकैं यह पावस ऋतु पाइ। आन गाँठ घुटि जाइ, त्यौं मान गाँठि छुटि जाइ। —बिहारी

घुरना—क्रि० अ० [हिं० घुटना] १. बँधना, २. घुलना, पिघलना फँसना।
उदा० १. घुरि आस को पास उसास गरें जु परो सु मरैहू कहा छुटिहै। —घनानन्द

घूँघुरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० घूँघुर] पायजेब, पैजनिया, नूपुर।
उदा० पिय बियोग ते तरुनि की पियरानी मुख जोति। मृदु मुरवा की घूँघुरी कटि में किंकिन होति। —सोमनाथ

पद पद्म की सुभ घूँघरी। मनि नील हाटक सों जरी। —केशव

घूँड़ि—संज्ञा, स्त्री० [सं० घुंटक] घुटन, सांस का भीतर ही भीतर दब जाना और बाहर न निकलना, दम की घुटन।
उदा० लखि मोहनैं मोहि मिलाय के सोच घने घने घायल घूँड़ि गई —नंदराम

घूघरि—संज्ञा, पु० [सं० घर्घर] लँहगा, घाघरा।
उदा० घूघरी की धरि डोरी कसी अँगियाहू के बंद कसे गहि गाढ़े। —सुन्दर

पहिले फँदि घूँघरिया के फँदा पुनि रोमावली मन भाइ गयो। —तोष

घूघरी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] नीवी, लहँगा की गाँठ बाँधने वाली डोरी, फुँफदी, कटिवस्त्रबंध
उदा० ठाढ़ी बाल आली सों कहत बात हँसि हँसि तके मैं तमासे जैसे घूघरी करति है। —सुन्दर

घूघरी की धरि डोरी कसो रलके लहँगाउ को बूँट सुधारो। —सुन्दर

घूमक—वि० [हिं० घूमाव] घिराव, घेर।
उदा० घूँघट की घूम के सु झुमके जवाहिर के झिलमिल झालर की भूमि लौं झुलत जात। —पद्माकर

घूरो—संज्ञा, पु० [सं० कूट] अंगड़ खंगड़ सामान।
उदा० मेरो चेरो, मेरो घोरो, मेरो घूरो, मेरो घरू मेरो मेरो कहत न रसना रसाति है। —गंग

घैरू—संज्ञा, स्त्री० [देश०] बदनामी, निंदा।
उदा० काहू की बेटी बहून की घैरू किते घर जाय कमंध से पारैं। —ठाकुर

घोर—वि० [स०] बुरा, खराब २. भयंकर विकराल।
उदा० कहत निसंक सिर धर्यो मैं कलंक, अरु मैले मति हूजो मिलि मोसौ महाघोर सौं। —देव

घोरना—क्रि० अ० [सं० घुर] गर्जना, ध्वनि करना, कठोर आवाज करना।
उदा० ठाकुर बोलि उठे मोखा घन घोरि उठै जितही तित गाढ़े। —ठाकुर

घोरिला—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] खूँटी।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० फूलन के बिबिध हार, घोरिलिन ओरमत उदार। —केशव

घौंचा—संज्ञा, पु० [देश०] झब्बा, तारों का गुच्छा जो सुन्दरता के लिये कपड़ों या आभूषणों में लगाया जाता है।

उदा० पायन तें घौंचा गिरि गये। भूषन तें फिरि दूषन भाए। —केशव

च

चंग—संज्ञा, पु० [?] १. गंजीफे के आठ रंगों में एक रंग २. पतंग ३. डफ के आकार का एक बाजा [फा० संज्ञा, स्त्री०]।

उदा० १. उठी गँजीका खेलते,
लखि प्रीतम को रंग।
चली अली कहि नहि,
हमै आवति वासा चंग। —तोष

चंदन—संज्ञा, पु० [सं० चंद्रिकाएँ] मोर पंख की चंद्रिकाएँ।

उदा० मोर के चंदन मौर बन्यौ दिन दूलह है—
अली नंद को नंदन। — रसखानि

चंदपखान=संज्ञा, पु० [सं० चन्द्र+पाषाण=चन्द्रमणि, चंद्र प्रकाश से द्रवित होने वाली एक मणि, चन्द्रकान्तमणि।

उदा० चंद-उदौ लखि लोचन स्वै चले चंदपखान से चंदमुखी के। —कुमारमणि

चन्दबधू—संज्ञा, स्त्री० [सं० चन्द्रबधू] बीरबधूटी, एक प्रकार का लाल कीड़ा जो बरसात में दिखाई पड़ता है।

उदा० चन्दबधू जावक लिलार कहि पाए हौ।
— सोमनाथ

चन्दुक—संज्ञा, पु० [सं० चन्द्रक] १. कर्पूर, २. चाँदनी।

उदा० १. शशिनाथ तरंगनि करनि सो,
कालिंदी चित भाइकैं।
सित चन्दुक चूर समान दिय,
तट-बालुका बिछाइकैं।
—सोमनाथ

चंद्रक—संज्ञा, पु० [सं०] १. मोर पंख की आँख २. चंद्रमा ३. चाँदनी ४. कपूर।

उदा० १. सिर सुभ चंद्रक धर, परम दिगंबर
मानो हर अहिराज धरे। —केशव
२. चहचही पहल चहूँघा चारु चंदन की
चन्द्रक चुनीन चौक चौकनि चढ़ी है
आब। —पद्माकर

चंद्रातप—संज्ञा, पु० [सं०] चंद्रिका, चाँदनी २. चँदोवा, वितान।

उदा० हिमगिरिबर दव सौ परसियौ।
चंद्रातप तन सौ दरसियौ॥
—केशव

चंगेरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० चगोरिक] फूल रखने की डलिया २. बाँस की छिछली डलिया।

उदा० चोसर चमेली के चँगेरिन में चुनियत हीरन के कुंडल जड़ाऊ करें धकि-धकि।—ग्वाल

चक—संज्ञा, पु० [सं० चक्षु] चक्षु, नेत्र २. चक्रवाक पक्षी।

उदा० चक-चकवान को चुकाए चक चोटन सों,
चकित चकोर चकचौंधी सों चकै गई।
—देव

चकचक—वि० [अनु०] दीप्त, कांतिमान।

उदा० बकबक सुनि-सुनि अकबक भूलि गयो चक-चक सौतिन की छाती भई धकधक।
—तोष

चकचकाना—क्रि० अ० [अनु०] भीग जाना, आर्द्र होना।

उदा० चख चकित चित्त चरबीन चुभि चकचकाइ चंडिय रहत। —पद्माकर

चकचौहट—संज्ञा, पु० [हिं० चकचौंह] चकाचौंध।

उदा० बेनी प्रवीन लग्यो चकचौहट, चोहट मांझ बिलोकि सकै क्यों। —बेनीप्रवीन

चकन—संज्ञा, पु० [सं० चक्र] गुल चाँदनी नामक पुष्प।

उदा० कमल गुलाब चकन की सैना।
होत प्रफुल्लित नव तिय नैना।
—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चकरा—वि० [हिं० चकला] चौड़ा ।
उदा० मणि साँवरे चकरे कचोरनि माँह चंदन पंक । —गुमानमिश्र

चकला—संज्ञा पु० [सं० चक्र, हिं० चक + ला पत्थर या काठ का गोल पाटा, (प्रत्य०] होरसा, जिस पर रोटी बेली जाती ।
उदा० दुकरा ओर परात डिबा पीतर के चकला । —सूदन

चकुला—संज्ञा, पु० [देश०] चिड़िया का बच्चा, चेंटुवा ।
उदा० मन पजनेस कैंधों चकवा के चकुला में सोहत बिसाल धरे उलटि नगारे हैं । —पजनेस

चक्क—संज्ञा, पु० [सं० चक्र] १. दिशा २. ओर, तरफ ।
उदा० १. भूषन भनत बाल-लीला गढ़-कोट जीत्यो, साहि के सिवाजी करि चहूँ चक्क चाह को । —भूषण
२. सुचक्क चारहूँ दियै चिलक्क चिल्लहाल की । —पद्माकर

चक्करा—संज्ञा, पु० [बुं०] बरा, उर्द की दाल से निर्मित एक भोज्य पदार्थ ।
उदा० चक्करा रैदास जूं चमारहू के खाये हैं । —ठाकुर

चक्करी—संज्ञा, स्त्री० [सं० चकी] चकई नामक खिलौना ।
उदा० फिरै चक्करी से गली सक्करी में ।
लियैं अक्करी ऐंड ज्यों हिक्करी में । —पद्माकर

चक्कवै—वि० [सं० चक्रवर्ती], जो समस्त विश्व का राजा हो ।
उदा० दीन होत चक्कवै चलत छत्र छाया के । —देव

चक्रन—संज्ञा, पू० [सं० चक्र] चक्रवाक पक्षी, चकवा, २. समूह, मंडली ।
उदा० चक्रन के चक्रन पसारे पाणि चक्रपाणि पीतिबर तानि तानि मिलत ललान को । —देव

चक्रवाल—संज्ञा, पु०[सं०] लोकालोक पर्वत. वह पहाड़ जो प्रकाश को रोकता है ।
उदा० चहूँ गिरि राहें परी समुद्र अथाहें अब, कहें कवि गंग चक्रबाल ओर चहूँ जू ।

चक्री—संज्ञा, पु० [सं०] १. सर्प, २. विष्णु, ३. कुम्भकार ।
उदा० १. उर चक्रर चारु चक्री बसतु संग कुमार हर मार मति । —केशव

चचेंड़ना—क्रि० अ० [देश०] चिढ़ना, खीझना ।
उदा० एक दिना मारग में देखी धारे सीस दहेंड़ी तनक छांछ मांगी मै वासों सुनतन बात चचेंड़ी । —बकसीहंसराज

चट—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चाट] १. चाट, लालसा २. शीघ्र ।
उदा० मोहन के मन भाइ गयौ इक भाइ सों ग्वालिनैं गोधन गायौ । ताकों लग्यो चट् चौहट सों दुरि औचक गात सों गात छुवायौ । —रसखानि

चटक—संज्ञा, स्त्री० [सं० चटुल=सुन्दर] १. कांति, चमक-दमक २. गौरैया पक्षी ।
उदा० १. चंचल चलाक चारु चौंपन चटक भरे, चोंकत चमंके चलें सजल सरोकदार । —ग्वाल
२. काम गिरि कुंड ते उठति धूम सिखा, कै चटक चरनालो सारदा में पीत पंक की । —देव
नभ लाली चाली निसा चटकाली धुनिकीन । —बिहारी

चटकाना—क्रि० सं० [हिं० चटक=गाढ़ा] रंगना, लगाना ।
उदा० लहलह्यो योबन हँसत डहडह्यो मुख गह-गह्यो काजर चखन चटकायो है । —देव

चटपटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चटपट] १. आतुरता, उतावली २. घबराहट, व्यग्रता ।
उदा० १. उलटि पलटि लोटि लटकि लपटि जाति चटपटी लागे खटपाटियै गहति है । —आलम
२. चित्त चटपटी अटपटी सब बात घात बनत न एकौ जात बनत न लात के । —चन्द्रशेखर

चटमट—वि० [?] चंचल, चपल ।
उदा० चंचल समेत भुव अम्बर मैं खेलत हैं देखत ही बाँधैं डीठि रहैं चटमट से । —सेनापति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चड़ैती—संज्ञा, स्त्री० [सं० चंड] १. बढ़ा-चढ़ी, २. उग्रता, उदण्डता, बदमाशी।
उदा० क्यों न बराबरी बेनी प्रवीन की जामैं कछू बढ़िहौ न चड़ैती। — बेनी प्रवीन

चदरा – संज्ञा, पु० [फा० चादर] नदी के बहाव का समतल जल।
उदा० वान सी बुंदन के चदरा बदरा बिरहीन पै बाहत आवैं। —पद्माकर

चनक – संज्ञा, स्त्री० [?] आँख की पुतली।
उदा० १. चनक मूँद खग मृग सब चकैं। मदन गुपाल केलि रस छकैं। घनानन्द
२. कूदत न मृगज चनक मूँदे साखामृग असि दृग बूँद बरसत रोझ रहचर। — देव
३. चनक मूँद, द्रुम कुंज उछीर। सोर करत किंकिन मंजीर। —नागरीदास

चपके—क्रि० वि० [हिं० चुपचाप] गुप्त रीति से, चुपचाप।
उदा० सूजा बिचलाय कैद करिकै मुराद मारे ऐसे ही अनेक हने गोत्र निज चपके। — भूषण

चपना—क्रि० अ० [सं० चपन = कूटना] दबना, कुचल जाना।
उदा० सेज करि ज्ञान की अदेह में न चपनो। — ग्वाल

चपरि—क्रि० वि० [सं० चपल] शीघ्रता से, जल्दी से।
उदा० राधा मोहन के हिय हिलगनि रचतिहुती बहुरंगनि भाव। सो सब सहज उघरि आई अब दबे चहूँघा चपरि चबाव। — घनानन्द

चपर्‌यौ—संज्ञा, स्त्री० [सं० चपल] शीघ्रता, जल्दी।
उदा० चौकस चपल चिकनिया चपर्‌यौ चहत बचावन। — घनानन्द

चपाना—क्रि० सं० [हिं० चाप, दबाव] दबाना, कान्तहीन करना।
उदा० चित जाके चाय चढ़ि चंपक चपायो कोन, मोचि सुख सोच है सकुचि चुप चली ह्वै। —देव

चमरी संज्ञा, स्त्री० [सं० चमर] सुरागाय।
उदा० चौंर करैं चमरी चय मोर चकोर, मृगी मृग चाकर मारी। —देव

चमोटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चाम + औटी] कोड़ा, चाबुक।
उदा० उछरि उछरि चोटी पीठ पै परत मोटी खोटी के परे ते ज्यों चमोटी काम गुरु की। — घनानन्द

चरख—संज्ञा, पु० [फा० चर्ख] आकाश, नभ, गगन।
उदा० चमचम चाँदनी की चमक चमक रही, राखो है उतारि कर चंद्रमा चरख तें। — ग्वाल

चरखी—संज्ञा, स्त्री० [फा०] एक प्रकार की आतिशबाजी जो मस्त हाथियों को भयभीत करने को छुड़ाई जाती हैं।
उदा० सेनापति धायौ मत्त काम कौं गयन्द जानि, चोपकरि चपैं मानौं चरखी छुटाई है। —सेनापति
चरखी तड़ित अरु चमकि गरज मंजु बरसत नीर मिस मद के पनारे हैं। — सोमनाथ

चरचना—क्रि० सं० [सं० चर्चन] १. माँपना अनुमान करना २. चंदन आदि लेपना।
उदा० चैनन चरचिलई सैनन थकित भई नैनन में चाह करै बैनन में नहियां। — मतिराम

चरजना– क्रि० अ० [सं० चर्चन] बहकाना, भुलावा देना।
उदा० चंचला चलाकैं चहूँ ओरन तें चाह भरी, चरजि गई ती फेरि चरजन लागी री। —पद्माकर

चरजैं – संज्ञा, पु० [सं० चर = खन्जन नामक पक्षी + चय = समूह ?] खंजन पक्षियों का समूह।
उदा० भूषण जौ होइ पातसाही पाइमाल औ उजीर बेहवाल जैसे बाज त्रास चरजैं। — भूषण

चरन— संज्ञा, स्त्री० [सं० चर + हिं० न] १. कौड़ियाँ, कपर्दिका २. कविता की पंक्ति।
उदा० १. सुनु महाजन चोरी होति चारि चरन की तातैं सेनापति कहै तजि करि ब्याज कौं। — सेनापति

चरनायुध—[सं० चरणायुध] मुर्गा, ताम्रशिखा।
उदा० कियौ कंत चित चलन कों तिय हिय भयौ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषाद। बोल्यो चरनायुध सु तौ भयो नखायुध नाद। —मतिराम

नीबी परसत श्रुति परी चरनायुधधुनि आइ। —जसवंत सिंह

चरुवा—संज्ञा, पु० [फा० चख:] प्रतिमूर्ति, खाका।

उदा० बसतो सदा तासु के हिरदै हिलिमिलि चरुवा चारू। —बक्सी हंसराज

चल—संज्ञा, पु० [सं०] १. अनिश्चय, २ फर्क अन्तर।

उरा० बिथा जौ बिनै सों कहै उतरु यही तौ लहै, सेवाफल ह्वै ही रहे यामें नहिं चल है। —दास

चलप—वि० [सं० चपल] चपल, चंचल।

उदा० जीभ में जलप देव देखिबे की तलप, पै-भूतल परी है, त्यों सुहात न तलप री रसकल सकल कलानिधि मिले न तोलौ कलानिधि मुखी चित आइ की चलपरी। —देव

चलाका—संज्ञा, स्त्री० [सं० चला] बिजली, विद्युत।

उदा० चंचला चलाकैं चहूँ ओरन तें चाह भरी चरजि गई ती फेरि चरजन लागी सी। —पद्माकर

चलाचली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चलना] भगदड़, चलने के समय की तैयारी।

उदा० हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले ऐसी चलाचली में अचल हाड़ा ह्वै रह्यो। —भूषण

चवना—क्रि० स० [प्रा० चव] कहना, बोलना, बताना।

उदा० हँसि अँगुलि दै मुख मांहि चवै, हटा छांड़ि दै कान्ह बिहान भयो। —गंग

चवाव—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चौवाई] निन्दा की चर्चा, चुगली, बदनामी।

उदा० कीजै कहा जुपै लोग चवाव सदा करिबौ करिहैं बजमारौ। —रसखानि

चषमना—क्रि० स० [फा० चश्म=नेत्र का क्रिया रूप] दृष्टिगत होना, दिखाई पड़ना।

उदा० चषमति सुमुखी जरद कासनी है सुख, चीनी स्याम लीला माह काचिली जनाई है। —बेनी प्रवीन

चहियत—अव्य० [हिं० चाहि] बढ़कर, अपेक्षाकृत।

उदा० मीन और खंजन से अलसे अनोखे देखे कंजदलहूँ तैं ये विशेष चहियत है। —ठाकुर

चसक—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. मंद पीड़ा, हलका दर्द २. मद्य-पात्र।
(सं० चषक)

उदा० बदन सुधाकर सुधाकर बतायो आजु सेखर चकोरन की चसक बुझाइ दै। —चंद्रशेखर

चसीली—वि० [हिं० चसना] सटी हुई, चिपकी हुई।

उदा० अलकैं बिथोरी गोरी गोरी भुज मूलनि पै, कंचुकी चसीली चढ़ी कढ़ी कुचकोर की। —बेनी प्रवीन

चहक—संज्ञा, स्त्री० [?] १. चिन्ह, निशान, २. पक्षियों की आवाज ३. नशे में अधिक बोलना।

उदा० चहचही चहकैं चुभी है चोक चुम्बन की। —पद्माकर

२. चहकि चकोर उठे भौंर करि सोर उठे। —द्विजदेव

३. छकनि की चाहनि चहक चित रही है। —गंग

चहकना—क्रि० अ० [हिं० चहक] लूकी लगना, जलन पैदा होना।

उदा० फाँसी से फुलेल लागे गाँसी से गुलाब अरु गाज अरगजा लागे, लोवा लागे चहकन। —देव

चहकि चहकि डारै चपला चखनि चाहें। —घनानन्द

चहचही वि० [हिं० चहचह] बहुत सुन्दर, मनोहर।

उदा० चहचही चहकैं चुभी है चौक चुम्बन की। —पद्माकर

चहचही सेज चहूँ चहक चमेलिन सों बेलिन सों मंजु मंजु गुंजत मलिन्द जाल। —द्विजदेव

चहरना—क्रि० अ० [हिं० चहल] प्रसन्न होना, आनन्दित होना।

उदा० बेनी प्रवीन विषै चहिरे, कबहूँ नहिं रे गुन गोविंद गाये। —बेनी प्रवीन

चहल—संज्ञा, पु० [हिं० चहला] कीचड़, पंक।

उदा० सुख की टहल मुकुताहल महलबीच केसरि कपूर कीच चंदन चहल सी। —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धोवन की चहल, गुलाबन की गागरे ।
—गंग

चहूँकन—संज्ञा, पु० [बुं०] १. बदनामी की चर्चा, अफवाह २. निन्दक, बदनामी की चर्चा करने वाले ।

उदा० १. देखि उन्हें न दिखाइ कछू ब्रज पूरि रह्यो चहु ओर चहूँकन । —ठाकुर
२. ऐसेई चाहि चवाई. चहूँकहैं एक की बात हजार बखानती । —द्विजदेव

चहोरना—क्रि० अ० [देश०] १. संभालना, सहेजना २. पौधा रोपना, बैठाना ।

उदा० १. चौंगुनी चोपनि तै सोई चाप चहोरि दै हाथ सज्यौ भटनायक ।
—घनानन्द

चाँचरि—संज्ञा, पु० [?] १. एक प्रकार का वस्त्र २. चर्चरी राग ।

गदा० १. पाँवरी पैन्हि लै प्यारी जराइ की ओढ़ि लै चाँचरि चारु असावरी । —दास

चांड़ी—वि० [सं० प्रचण्ड] प्रचण्ड, वेगवती ।

उदा० सरिता सुधा की सुख सुधाकर मन्डल तैं उरध कों उठी मिली धाराधर चाँडी है ।
—केशव

चाक—वि० [तु०] चुस्त, चालाक, फुर्तीला ।

उदा० चंचल चुटीले चिक्क चाक चटकीले सक्ति संगर तजै न लोथ लंगर लराई के ।
—पद्माकर

चाक चक—वि० [तु० चाक + अनु० चक] चारों ओर से चाकी हुई, सुरक्षित, दृढ़, मजबूत ।

उदा० चाक चक चमू के अचाक चक चहूँ ओर चाक सी फिरति चाक चंपति के लाल की ।
—भूषण

चाकरी—वि० [हिं० चकली] १. चौड़ी २. नौकरी ।

उदा० १. कन्ध तें चाकरी पातरी लंक लौं सोभित कैधौं सलोनी की पीठि है ।
—दास

चाटक—संज्ञा, पु० [सं० चेटक] चेटक, जादू ।

उदा० देन सुन्यो सब नाटक चाटक चाट उचाटन मंत्र अतंक को । —देव

चाड़िली—वि० [हिं० चाड़] उमंगवती, उल्लास रखने वाली, प्रबल अभिलाषिणी ।

उदा० मोती नग हीरन गहीरन बुनतहार, चीरन चुनत, चितैं चोप चित चाड़िली ।
—देव

चानक संज्ञा, पु० [हिं० चनक] १. दृष्टि, आँख की पुतली २. अचानक ।

उदा० १. मूरति अनूप एक आय कै अचानक में चानक लगाय अजौं हिय को हरति है ।
—दीनदयाल
२. हरिनी जनु चानक जाल परी ।
जनु सोनचिरी अबहीं पकरी ।।
—गुमान मिश्र

चाभुकी—संज्ञा, स्त्री० [?] घोड़े की चाल विशेष ।

उदा० चौधर चालि चाभुकी चारु, चतुर चित कैसो अवतारु । —केशव

चायल—वि० [सं० चपल] चपल, चंचल ।

उदा० चित चायल पायल घोर करै । मदनद्दल घायल से चिहरै । —बोधा

चार—संज्ञा, पु० [सं०] १. गुप्त दूत, जासूस २. सेवक, दास ३. भ्रमण, अटन गमन, गति ।

उदा० १. चोर हौ कि चार जो रहो जू निशिचार कहूँ, सोच न विचार हार हीरन हिरैबे की
—देव
३. जनी सहेली धाइ घर, सूने घर निसिचार अति भय उत्सव व्याधिमिस न्यौते सुबन बिहार । —केशव

चारना—क्रि० अ० [हिं० चालना] छिद्र होना, फटना, नष्ट होना ।

उदा० लीजै दधि पीजै जान दीजै और काज कीजै, खीझे ते पसीजे तनु भीजे पट चारि हैं । —आलम

चारी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चाटी] चुगली, निंदा शिकायत ।

उदा० चुप करिये चारी करत, सारी परी सरोट ।
—बिहारी

चारी तामस संज्ञा, पु० [सं० तामस चारी] तामसी स्वभाव वाले, खल, दुष्ट, राक्षस ।

उदा० सेवक सचेत गहिलै गये प्रचेत पुर, जानिके अचेत, चारी तामस तरुन को ।
—देव

चालना—क्रि० स० [हिं०] छिद्रमय करना, चाल डालना, नष्ट करना ।

उदा० नभ लाली चाली निसा, चट काली धुनि कीन । रति पाली, आली, अनत, आए बन माली न । —बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाला – संज्ञा, पु० [हिं० चाल] गौना, नववधू का पहले पहल ससुराल या मायके जाना ।
उदा० चाले की चूँदरि चारु कसूमी सुगन्ध सनी दमकैं तन गोरें । —ग्वाल,

चाबक संज्ञा, पु० [फा० चाबुक] चाबुक, कोड़ा सोंटा ।
उदा० देव मनोज मनो जू चलायो चितौनि मैं सोन सरोज को चाबक । —देव
चाबक चोट कटाच्छन की तन जाके लगी मन जानत सोई । —बोधा

चावरी – संज्ञा, स्त्री० [हिं० चावड़ी] पड़ाव, ठहरने का स्थान । —आलम
उदा० किधौं चंद बदनी को चिबुक बिराजमान, किधौं चारु चावरी बदन चंद्रभूप ।
—केशव

चाह—संज्ञा० स्त्री० [ब्र०] खबर, समाचार ।
उदा० हरि आगम की अँगना सुनि चाह सँवारत अंग हुलास हियो । —आलम
ननद चाह सुनि चलन की बरजति क्यों न सु कंत । आवत बन बिरहीन को बैरी बधिक बसन्त । —पद्माकर

चाहनि—संज्ञा, स्त्री० [देश०] चितवन, दृष्टि ।
उदा० एरी चलि 'नागरी' तू सींचि सुधा चाहनि सौं, आंखिनि के घायन कौं आँखैं ही उपाय हैं । —नागरीदास

चाहना—क्रि० अ० [बुं०] देखना ।
उदा० चाहे चकचौंधे वितु रबि की सी काँति है ।
—आलम

चाहने—वि० [हिं० चाहिए] उचित, ठीक ।
उदा० चित कीन्हों कठोर कहा इतनो अरी तोहिं नहीं यह चाहने हैं । —ठाकुर

चाहि—अव्य० [सं० चैव] बढ़कर, अपेक्षाकृत, अधिक ।
उदा० ऐसेई चाहि चवाई चहूँक हैं एक की बात हजार बखानती । —द्विजदेव

चिडार संज्ञा, पु० [सं० चान्डाल] चान्डाल, नीच व्यक्ति ।
उदा० कहन सुनन कों द्विज निरधारै । करम करै जैसे चिडारै । —जसवन्त सिंह

चितचूट—संज्ञा, पु० [सं० चित्त + त्रुटित = भंग] चित्तभंग, उचाट, मतिभ्रम, ध्यान न लगाना ।
उदा० सोक भरे रोवत, रिसात, धीर ध र लेत, घनी घिन मानत, चकित चितचूट सों ।
—देव

चितारना—क्रि० सं० [प्रा० चित्तल – मंडित] मंडित करना, भूषित करना, लगाना ।
उदा० धौरी ढार ढौरी लै बुलाय बोलि सौंपि देत, काजर कुरंग नैनी चोपनि चितारई ।
—घनानन्द

चित्रभानु – संज्ञा, पु० [सं०] १. अग्नि, पावक २. सूर्य ।
उदा० उदित पदुमराग रूचिर विचित्र रच्यो, चित्र गृह करतु विचित्र चित्रभानु तर ।
—देव

चिरना—क्रि० अ० [हिं० चिढ़ना] चिढ़ना, नाराज होना ।
उदा० जानि न परत धौं कियो है कहा रघुनाथ कीन्हे हूँ जतन घरघेरी न घिरति है ।
लोगन के मुख जऊ सुनति है निन्दा तऊ मन बच कर्म कै केहूँ न चिरति है ।
—रघुनाथ

चिरम—संज्ञा० स्त्री० [देश०] घुँघुची, गुंजा ।
उदा० पाय तरुनि-कुच-उच्च-पद चिरम ठग्यो सब गाँव । —बिहारी

चिरवादारनि—संज्ञा, स्त्री० [?] साइसिन, घोड़े की सेवा करने वाली ।
उदा० चौली मांहि चुरावई, चिरवादारनि चित्त ।
फेरत वाके गात पर, काम खरहरा नित्त ।
—रहीम

चिलक—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चिलकन] चमक, पीड़ा ।
उदा० चिलक चिकनई चटक स्यौं लफति सटक लौं आय । —बिहारी

चिलता—संज्ञा, पु० [चिलतः] एक प्रकार का कवच ।
उदा० काटत चिलता हैं इमि असि बाहैं तिनहिं सराहैं बीर बड़े । —पद्माकर

चिलतह—संज्ञा, पु० [फा० चिलता] एक प्रकार का कवच ।
उदा० आयुध और अनेक और चिलतह बहु अंगा
—सूदन
काटत चिलता हैं इमि असि बाहैं तिनहिं सराहैं बीर बड़े । —पद्माकर

चिल्लह—संज्ञा, पु० [हिं० चिल्ला] १. पगड़ी का छोर जिसमें कलाबत्तू आदि का काम बना रहता है ।
२. धनुष की डोर [देश०] प्रत्यंचा ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. सु चक्क चारहूँ दिपै चिलक्क चिल्लहान की ।
२. धरैं चिल्लहे हैं भले ऊमहे हैं ।
—पद्माकर

चिसकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चसका] शौक, चाट, आदत, लत ।
उदा० रति अन्त रही न कछू सुधि है, बुधि वैसी रही परिहैं चिसकी । लगी अंक मनो पर-जंक में लाल के वैसही बाल भरे सिसकी ।
—बेनी प्रवीन

चिहुटना—क्रि० अ० [हिं० चिपटना-लपटना] चिपट जाना, [क्रि० सं० चिकोटी काटना] लिपट जाना, चिपकना ।
उदा० बाल के लाल लई चिहुँटी रिस के मिस लाल सौं बाल चिहूँटी । —देव
नहिं अन्हाय, नहिं जाइ घर, चितु चिहुँट्यौ तकि तीर । —बिहारी

चीतना—क्रि० सं० [सं० चित्रित] चित्रित करना, रँगना, लगाना ।
उदा० मुख चीतैं चन्दन, परम अमंदनि, पूरि अनन्दनि हास करै । —सोमनाथ

चीन सारंग—संज्ञा, पु० [हिं० चीन + सं० सारंग = वस्त्र] चीनाशुक, चीन से आने वाला एक प्रकार का रेशमी वस्त्र ।
उदा० दुति चीन सारंग ज्यों कटि छीन सारँग ज्यौं, लटरी निसा रँग ज्यों करत अचेत है ।
—रसलीन

चीर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चिड़िया] चिड़िया, पक्षी ।
उदा० ग्वाल कवि सोभा तैं सरीर मैं उछीर हीन कढ़ी चंदचीर जाइ नहिं भाखे गुन ।
—ग्वाल

चुंग—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चुगना] चुगने की वस्तु, पक्षियों का खाद्य पदार्थ, चुग्गा २. बदनामी की चर्चा ।
उदा० १. चकचकी चारु मुख चंद चाँदनी को चितै चुंग चहूँ ओरन चकोरन की च्वै रहै ।
—पद्माकर
२. त्यों पद्माकर दीजै मिलाइ क्यों चुंग चबाइन की उमही है । —पद्माकर

चुकरैंड—संज्ञा, पु० [?] दुमुहाँ सांप ।
उदा० गजरद् मुख चुकरैंड के, कचासिखा बखानि ।
—केशव

चुटकना—क्रि० अ० [हिं० चुटक] कोड़ा अथवा चाबुक से घोड़ा आदि पशुओं को मारना ।
उदा० करै चाह सौं चुटकि कै खरैं उड़ौंहैं मैन ।
—बिहारी

चुटार—वि० [हिं० चोट] चोट करने वाले, घायल करने वाले, आक्रमण करने वाले ।
उदा० बदन के बेझे पै मदन कमनैती के चुटार सर चोटन चटा से चमकत हैं ।
—देव

चुनमा—संज्ञा, पु० [हिं० चुन्नी] सितारा ।
उदा० ग्वाल कवि चौसर चमेली के चंगेरन मैं, चुनमा चमंके चीर बादला बिसद मैं ।
—ग्वाल

चुनीदे—वि० [हिं० चुनिंदा] चुनिंदा, चुना हुआ, छँटा हुआ, बढ़िया, श्रेष्ठ ।
उदा० रीझि रही हरि बेनी प्रवीन जु है रसिया रस रंग चुनीदे । —बेनी प्रवीन

चुनौटी—वि० [हिं० चुनौती] चुनौती, उत्पीड़क, दुख देने वाली ।
उदा० लाल मन बूड़िबे कों देवसरि सोती भई, सोतिन चुनौटी भई वाकी सेत सारी री ।
—दास

चुबटना—क्रि० सं० [हिं० चुपड़ना] चुपड़ना, लेप करना, पोतना ।
उदा० पौंछति कपोलनि अंगौछति उरोजनि तिलो-छति सुदेस केस चोवा चुबटत ही ।
—देव

चुभकी—संज्ञा, स्त्री [अनु०] डुबकी, गोता ।
उदा० लै चुभकी चलि जाति जित जित जलकेलि अधीर । —बिहारी

चुर—संज्ञा, पु० [देश०] मांद, बाघ आदि के रहने का स्थान ।
उदा० जहाँ होहिं चुर सिंह बाघ की तहाँ न कीजो फेरी । —बक्सी हंसराज

चुरना—क्रि० अ० [हिं० चुराना] छिपना, दिखाई न पड़ना ।
उदा० घूँघट के घटकी नटिकी सुछुटी लटकी लटकी गुन गूँदनि, केहू कहूँ न छुरै बिछुरै बिचरै न चुरै निचुरै जल बूँदनि ।
—देव

चुलक—संज्ञा, पु० [सं०] चुल्लू, अंजलि ।
उदा० तहँ चुलक निर्मल में झलक नभलोक प्रति-बिंबित भयो । —गुमान मिश्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चुवा० वि० [देश०] कोमल, मुलायम ।
उदा० अपने हाथन खूब चुवा सी लै लै दूब चराऊँ
—बक्सी हंसराज

चुहटी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] चुटकी ।
उदा० गुलचि बनाय नचाय चुहुटियन छांड़ि देहि करि अधिकाई । —घनानन्द
ज्यों कर त्यों चुहँटी चलै ज्यौं चुहँटी त्यों नारि । —बिहारी

चुहुटिनी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] घुँघची, गुंजा ।
उदा० राखति प्रान कपूर ज्यौं वहै चुहुटिनी माल ।
—बिहारी

चूँटना—क्रि० सं० [सं० चयन] चुनना, तोड़ना ।
उदा० मन लुटिगो लोटनि चढ़त चूँटत ऊँचे फूल ।
—बिहारी

चूक—संज्ञा, पु० [सं०] १. अत्यन्त खट्टी वस्तु २. गलती, भूल [फा०]
उदा० तेरे मुख की मधुरई, जो चाखी चख चाहि । लगत जलज जंबीर सों, चंद चूक सो ताहि । — मतिराम

चून – संज्ञा, पु० [सं० चूर्ण] १. माणिक्य या रत्न का छोटा टुकड़ा, २. सितारा ।
उदा० दूनरी लंक लखे मखतून री चूनरी चारु चुई परै चूनरी । —रामकवि

चूनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० चूर्ण] मानिक या रत्न का छोटा टुकड़ा ।
उदा० चूनरी सुरंग अंग ईंगुर के रंग देव, बैठी परचूनी की दूकान पर चूनीसी ।
— देव

चूब—संज्ञा, स्त्री० [फा० चोब] शामियाना खड़ा करने का डंडा ।
उदा० दिशा बारहों द्वारिया चूब खोलै । हरीलाल पीरी उरी झर्पं डोलैं । —बोधा

चूरन—संज्ञा, पु० [सं० चूर्ण] मंत्रित भभूत, पवित्र राख ।
उदा० चखरुचि चूरन डारि कै ठग लगाय निज साथ ।
रह्यो राखि हठ, लै गयो हथाहथी मन हाथ ।।
—बिहारी

चूवना—क्रि० सं० [सं० चुम्बन] चूमना, चुम्बन करना ।
उदा० रूप के लालच, लाल चितौत चितै मुख चीकन, चूवन चाहौं । —देव

चूहरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चूहड़ी] मंगी की स्त्री, मंगिन, सफाई करने वाली ।
उदा० फूल से झरत रंग झर लागे झारू देत चूहरी चतुर चित चोरति चमंकनी ।
— देव

चेटका—संज्ञा, स्त्री० [?] चिता ।
उदा० जरे जूहनारो चढ़ी चित्रसारी, मनो चेटका में सती सत्यधारी । —केशव

चेटकी—संज्ञा, पु० [हिं० चेटक] जादू करने वाला, जादूगर, कौतुकी ।
उदा० चेटकी चबाइन के पेट की न पाई मैं ।
—ठाकुर

चेंप—संज्ञा, पु० [अनु०] चिड़ियों के फँसाने का लासा ।
उदा० दृग खंजन गहि लै चल्यौ चितवनि चेंपु लगाय । —बिहारी
लासा है सनेह को न छूटैं चेंप चपकन ।
—ग्वाल

चेपना—क्रि० अ० [हिं० चिपचिप] समझना, विचार करना ।
उदा० भेद फुरै मीलित बिष उन्मीलित चित चेप ।
—पद्माकर

चै—संज्ञा, पु० [सं० चय] समूह, झुंड ।
उदा० ठाकुर कुंजन पुंजन गुंजन भौंरन को चै चुपैबो चहैना । —ठाकुर

चैतुवा—वि० [बुं०] स्वार्थी, मतलबी ।
उदा० कवि ठाकुर चूक या नैनन की हमसों उनसों नव नेह बढ़े जू । हम जानती तौं हरि मीत ह्वै हैं न कढ़े हरी चैतुवा मीत कढ़े जू ।
—ठाकुर

चोई—वि० [प्रा० चोइअ, सं० चोदित] प्रेरित, डूबी हुई
उदा० ठाढ़ी ही बाग में भाग भरी मानो काम भुजंगम के विष चोई । —देव

चोखरे—वि० [देश] चालाक, धूर्त ।
उदा० नीके धर्‌यौ दधि दूधु सींके ते उतारि खायो, ऊँचे को न गौन जहाँ चोखरे बिलैया की । — देव

चोखीजाना—क्रि० सं० [देश०] बछड़े से दूध पिलाया जाना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० चोखी जाति गैया कोऊ और न दुहैया देव देवर कन्हैया कहा सोवत सबारेई ।
—देव

चोज—संज्ञा, स्त्री, [१] १. सौन्दर्य, रंग, दीप्ति २. सुभाषित ३. व्यंग्य, ताना ४, आनंद, विनोद ५. चमत्कार पूर्ण उक्ति
उदा० १. कंचन में नहीं चोज इती कि जु वाकी गुराई समान कहावै । —कुलपति मिश्र
३. किहि के बल उत्तर दीजै उन्हें सो सुने बनै चोज चवाइन् कै । —प्रतापसिंह
४. चोज के चंदन खोज खुले जहँ ओछे उरोज रहे उर में धिसि । —देव

चोंथना—क्रि० सं० [अनु०] नोचना, किसी वस्तु को बुरी तरह से नोचना ।
उदा० चौथते चकोरन सों भूले भये भौंरन सों चारों ओर चम्पन पै चौगुनो चढ़ो है आब ।
—द्विजदेव

चोंटना—क्रि० स० [सं० चुट = काटना] तोड़ना, नोचना ।
उदा० मन लुटिगौ लोटनु चढ़त, चैटत ऊँचे फूल ।
—गिहारी

चोटही—वि० [सं० चुट] आघात करने वाला, स्पर्धा करने वाला
उदा० उज्जल अखंड खंड सातएँ महा, मंडल सँवारो चंद-मंडल की चोटही । —देव

चोढ़—संज्ञा, पु० [हिं० चोप या चाव] उमंग, उत्साह
उदा० गूँज गरे सिर मोर-पखा 'मतिराम हो गाय चरावत चोढ़े । —मतिराम

चोप—संज्ञा, स्त्री० [देश०] उमंग, उल्लास
उदा० चोप सौं चटक पीतपट की निहारि छबि भैंटि बनमाल मिल्यौ मुरली की धोर में ।
—सोमनाथ

चोपी—वि० [हिं० चोप] १. मोहित, मुग्ध २. इच्छा रखने वाला, उत्साही ।
उदा० चोपी अति तुम सों प्रवीन बेनी गोपी रहै, उर ओपी तरुनी ते नजरि हमारी हैं ।
—बेनी प्रवीन

चोंब—संज्ञा, पु० [हिं० चोप] उमंग, उत्कट अभिलाषा ।
उदा० दृगन चकोरन को चोंब यह कहुँ देखो, चंद सो बदन दुख कदन को चहिए ।
—रसलीन

चोये—संज्ञा, पु० [प्रा० चोय] छिलका, त्वचा, अन्न की भूसी, छाल
उदा० प्रथम दरे दरि फटकि, छटकि-दलमलितन धोए । उज्जल पानि पखारि किये दूरन पुनि चोये । —गंग

चोराबोर करना—क्रि० सं० [देश०] अच्छी तरह से किसी वस्तु को डुबाना ।
उदा० चोर चोराबोर कै गुलाब छिरकाइ लै ।
—पद्माकर

चोल—संज्ञा पु० [[मंजीठ ।
उदा० चटक न छांड़त घटतहू सज्जन नेह गंभीर । फीको परै न बरु फटै रँग्यो चोल रँग चीर । —बिहारी

चोला—संज्ञा, पु० [सं० चोल] कुर्ता, खोल ।
उदा० छोड़ हरिनाम नहीं पैहै बिसराम अरे निपट निकाम तन चाम ही को चोला है ।
—पद्माकर

चोली—संज्ञा, स्त्री, [ब्रु०] १. पान रखने की पिटारी २. अँगिया ।
१. फिरि फिरि फणनि फणीश उलटतु ऐसे चोली खोलि ढोली ज्यों तमोली पाके पान की । —गुमान मिश्र
२. चोली जैसी पान तोको करत सँवारि बोई । —केशव दास
३. धर दीन्हीं आदर कर आगे भर पानन की चोली । —बक्सी हंसराज

चोव—संज्ञा, पु० [फा० चोब] शामियाना खड़ा करने की बड़ा खंभा २. सोने या चाँदी का मढ़ा हुआ डंडा ।
उदा० चाँदनी है चौवन पै, परदे दरीपन पै, दुहरे दुलीचे हैं, गलीचे गोल गद्दी में । —ग्वाल
चैत को रुचिर चंद चाँदनी सी चाँदनी में चाँदी सो चँदोवा चामीकर चोब चारि को । —देव

चोवा—संज्ञा, पु० [हिं० चुआना] चंदनादि कई सुगंधित पदार्थों से निर्मित एक सुगंधित द्रव पदार्थ ।
उदा० कंचुकी में चुपर्‌यो करि चोवा लगाय लियो उर सो अभिलाख्यो । —देव
कहै पद्माकर चुभी सी चारु चोवन में ।
—पद्माकर

चौकी—संज्ञा, स्त्री [सं० चतुष्की] १. गले में पहनने का एक भूषण २. पहरा, रखवाली, खबरदारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. मनि सोभित स्याम जराइ जरी अति चौकी चलै चल चारु हियें । - केशव
२. चौकी बँधी भीतर लोगाइन की जाम जाम बाहिर अथाइन उठति अधरात है । —दास

चौखटा—संज्ञा, पु० [?] १. दरवाजा, ड्योढ़ी २. कोठा, अट्टालिका, चौ मंज़िला मकान
उदा० २. चढ़ी चौखटा नार नवेली । निशिदिन जे प्रीतम सँग केली । —बोधा

चौखड़ा—संज्ञा, पु० [हिं० चौ + सं० खण्ड] चारों ओर की सैर, चारों तरफ ।
उदा० चलिकै घरिक चौखड़ा देखौ जहँ फूली फुलवारी । —बक्सी हंसराज

चौखाने—संज्ञा, पु० [फा० चारखाना] चारखाना, एक प्रकार का कपड़ा जिसमें रंगीन धारियों से चौखूंटे घर बने रहते हैं ।
उदा० श्री सकर बिलंदी दूरि धरन्दी मानिकचंदी चौखाने । —सूदन

चौगान—संज्ञा, पु० [फा०] गेंद का वह खेल जो मध्यकाल में घोड़ों पर सवार हो कर खेला जाता था ।
उदा० गोय निबाहे जीतिये प्रेम खेल चौगान । —बिहारी

चौघर—संज्ञा, पु० [देश०] १. लाल रंग के घोड़ों में लक्षित होनेवाला सफेद रंग २. घोड़े की चाल, चौपाल ।
उदा० चौघर बर सज्जत छवि निज छज्जत बचत न भज्जत हरिन हरैं । —पद्माकर

चौचंद—संज्ञा, पु० [हिं० चौथ + चंद] बदनामी की चर्चा, कलंक, निन्दा ।
उदा० आइगे तहाँ ही पद्माकर पियारे कान्ह आनि जुरे चौचँद चबाइन के वृन्द वृन्द । —पद्माकर

चौंडेल—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चंडोल = सं० = चन्द्र + दोल] एक प्रकार की पालकी २. हाथी के हौदे के आकार की पालकी ।
उदा० चित चौंडेल चढ़ाय लड़िहरी तनपुर राछ फिराई । —बक्सी हंसराज
२. उरजात चँडोलनि गोल कपोलनि जो लौं मिलाप सलाहकरी । — दास

चौधर—संज्ञा, पु० [१] घोड़े की चाल विशेष ।
उदा० चौधर चालि चाभु की चारू । चतुर चित कैसो अवतारु । —केशव

चौबिसमहीना—[हिं० चौबिसमहीना = दो साल] दुशाला ।
उदा० कंज घर घेरा पर्‌यो चन्द पर डेरा पर्‌यो ऊपर बसेरा पर्‌यो चौबिस महीना को ।
—देवकीनंदन

चौरासी—संज्ञा, पु० [सं० चतुर शीति] १. आभूषण विशेष जो हाथी की कमर में पहनाया जाता है ।
२. नाचते समय पैर में पहने जाने वाला घुंघरू
उदा० १. चौरासी समान, कटि किंकिनी बिराजति है, साँकर ज्यौं पग-जुग घुंघरू बनाई है । —सेनापति

चौरे—वि० [हिं० चौड़ा] विशद्, विस्तृत, व्यापक
उदा० चौरे चक्रपानि के चरित्रन को चाहिये ।
—पद्माकर

चौसर—संज्ञा, स्त्री० [चतुः + सृक] चार लड़ियों की माला, चार लड़ी ।
उदा० चाँदनी के चौसर चहूँघा चौक चाँदनी में चाँदनी सी आई चंद चाँदनी चितै चितै ।
—पद्माकर

चौहट संज्ञा, पु० [हिं० चतुर + हाट] नगर, चौक ।
उदा० चौहट कौ मिलिबौ तो रह्यो मिलिबौ रह्यो औचक साँझ सबेरो । —ठाकुर

चौहरी—वि० [हिं० चौहर] चार घेरे वाला ।
उदा० चौहरी चौक सो देख्यो कलामुख पूरब ते कढ़्यो आवत है री । —दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छ

छंछु—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छींट] छींटे, बूंद ।
उदा० कान्ह बली तन श्रोन की छंछु लसै अति जग्योपवीत सों मेलि ज्यों । —आलम

छंद—संज्ञा, पु० [सं० छंदस्] १. कपट, छल २. मण्डल, घेरा ३. समूह ४. चेष्टा, खेल, क्रीड़ा
उदा० १. जब ते छबीले जू के ईछन तीछन देखे, ताछिन तैं छींद कैसे छंदनि करति हैं । —सुन्दर
२. जोए पदमन को हरष उपजावति है, तजै को कनरसै जो छंद सरसति है । —सेनापति
४. बाम कर बार हार अंचल सम्हारै, करै कैयो छंद कंदुक उछारै कर दाहिनै । —देव

छंदना—क्रि० सं० [सं० छंदस्] छंद रचना, काव्य छंदबद्ध करना, रचना करना ।
उदा० गणेश गुण गावत सुरेश शेष छंदत । —देव

छकना—क्रिया अ० [पंजा०] पीना, नशे में चूर होना, २. खा पीकर तृप्त होना ।
उदा० छिनकु छाकि उछकै न फिरि, खरोविषम छवि छाक । —बिहारी

छकरा—संज्ञा, पु० [हिं० छकड़ा] लढ़ी, बोझ ढोने वाली बैलगाड़ी ।
उदा० तुलहि मिठाई गजलैं गावैं । छकरा भर जनवासे आवैं । —बोधा

छकाना—क्रि० स० [हिं० छकना] १. परेशान करना, दुख देना २. नशा आदि से उन्मत्त करना ।
उदा० परग सुजान भोरी बातनि छकाए प्रान भावति न आन बेई हियरा अरैं अरी । —घनानन्द

छक्कर—संज्ञा, पु० [हिं० छक्का] दाँव-पेंच ।
उदा० सीसन की टक्कर लेत डटक्कर घालत छक्कर लरि लपटैं । —पद्माकर

छग—संज्ञा, पु० [सं० छाग] बकरा ।
उदा० छार भरे छरहरे छग ज्यों छरकवारे छाए हैं छबिन छायघन छाइयत है । —गंग

छगुनना—क्रि० स० [देश०] विचार करना, सोचना ।
उदा० आँगन ही खरी हौं मगन भई छगुनत, स्याम अंग नीको बाके संग ही न गौनी मैं । —आलम

छगोड़ी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छः + गोड़ पाँव] १. मकरी २. भ्रमरी [सं० षट्पदी] ।
उदा० १. टूटे ठाट धुनधुने धूम धूरि सों जु सने, झींगुर छगोड़ी सांप बीछिन की घात जू । —केशव

छछारे—संज्ञा, स्त्री० [ ] छींटें, बूँदें ।
उदा० अंबर अडंबर सौं उमड़ि घुमड़ि छिन छिछकैं छछारे छिति अधिक उछार के । —सेनापति

छछिया—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छांछ] छाछ पीने का एक छोटा पात्र, दिअलिया ।
उदा० ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचावत । —रसखानि

छटा—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छांटना] १. लोहे की बड़ी कलछी जिससे भड़भूजे दाना भूंजते है २. बिजली ३, लड़ी [हिं० छरा, सं० शर]
उदा० १. बिज्जु छटा सी छटालिये हाथ कटाच्छण छांटति है छबि छोहनि । —देव
२. गरजैं ना मेघ तोम तरजैं ना छूटि छटा लरजैं ना लौंग लला दादुरि दरारैं ना —नंदराम
३. मोतिन की विथुरी शुभ छटैं । हैं उरभी उरजातन लटैं । —केशव

छटि—संज्ञा, स्त्री० [सं० छटा] बिजली २. शोभा, कांति ।
उदा० १. होन लागी कटि अब छटि की छलासी, द्वैज चन्द की कला सी तन दीपति बढ़ लगी । —रस कुसुमाकर से

छत—वि० [सं० छत] क्षय हुए, नष्ट ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० गनती गनिबे तैं रहे, छत हूँ अछत समान।
—बिहारी

छतना—संज्ञा, पु० [हिं० छत्ता] १. मधुमक्खियों के रहने का घर २. घाव ३. पत्तों का बना हुआ छाता।

उदा० १. दै पतियां कहियों बतियां अतना छतियां छतना करि डारी।
—मुरलीधर

२. सोहत सचाई बात करत रचाई दोऊ छबि सों, बचाई छीटैं ओट छतनान की। —अज्ञात

छतौ—वि० [सं० क्षत, अलक्षित] अलक्षित, छिपा हुआ।

उदा० छतौ नेहु कागर हियैं, भई लखाइ न टाँकु, बिरह तचैं उघर्‌यौ सु अब सेंहुड़ कैसो आंकु। —बिहारी

छद—संज्ञा पु० [सं०] १. पत्ता २. पंख, चिड़ियों का पंख।

उदा० १. बिन हरिभजन जगत सोहै जन कौन नोन बिनु भोजन बिटप बिना छद के।
—हजारा से

छदन—संज्ञा, पु० [सं० छदि-जीवित रहना] भोजन, खाद्य पदार्थ।

उदा० पट चाहे तन, पेट चाहत छदन, मन चाहत है धन, जेती संपदा सराहिबी। —रहीम

छनदै संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षणदा] १. रात्रि, रात २. बिजली।

उदा० १. कंचुकी कसन दैन, छाती उकसन दै न, छनदै गमाउ पिय हिय मैं हियोछन दै।
—देव

छनभा—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षणप्रभा] बिजली, दामिनि।

उदा० अम्बर ओट कियें मुख चंदहि छुटि छपै छनभा न छपाई। —केशव

छनभा छहरारी सुघन घहारी घटा, तामें छबि सारी हिमकारी उजियारी है।
—भुवनेस

छनरुचि—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षण छवि] बिजली, विद्युत्।

उदा० छनरुचि सरि चमकति निसिमुख में।
—दास

छनी—वि० [सं० आच्छादन] ढँकी हुई, आच्छादित, छिपी हुई।

उदा० मनी धनी के नेह की बनी छनी पट लाज।
—बिहारी

छपावन—संज्ञा, पु० [सं० षट्पद] भ्रमर, भौंरा।

उदा० पिंजर मंजरिका छहराइ रजच्छति छाइ छपाइ छपावन। —देव

छबिछोरन—संज्ञा, स्त्री० [सं० छवि=हिं० छोर सीमा] बहुत बड़ी सुन्दरता, असीम सौन्दर्य।

उदा० ग्वाल कवि भाखै छबि छोरन छवैया बेस सुख में सनैया दुख हिय के हरैया तू।
—ग्वाल

छमा—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षमा] क्षमा, पृथ्वी।

उदा० सायक एक सहाय कर जीवन पति पर्यंत तुम नृपाल। पालत छमा जीति दुअन बर्वंत। —कुमारमणि

छमाना—क्रि० सं० [सं० क्षमा] सहन कराना।

उदा० कौ लगि जीव छमावै छपा मैं छपाकर की छबि छाई रहै री। —देव

छमी—वि० [सं० क्षम] क्षमतावान, शक्तिशाली।

उदा० मदन बदन लेत लाज को सदन देखि, यदपि जगत जीव मोहिबे को छमी है।
—केशव

छरकना—क्रि० अ० [हिं० छटकना] अलग होना, निकलना, हटना, अलग-अलग फिरना।

उदा० पातहू के खरके छरकै धरकै उर लाय रहै सुकुमारी। —बोधा

छरकवारे—वि० [हिं० छड़] फुरतीले, तेज।

उदा० छार भरे छरहरे छग ज्यों छरक वारे, छाए हैं छबिन, छायघन छाइयत हैं।
—गंग

छरकी—वि० [सं० छल] मोहित, प्रवंचित, धोखा खाया हुआ, छला गया।

उदा० प्रीति पगी नटनागर की छरकी छरकी फिरै चाक चढ़ी सी। —नंदराम

छरदी—संज्ञा, स्त्री० [सं० छर्दि] वमन, कै, उलटी

उदा० छरदी करिकै मर्‌यो सो नीच। तातैं पाई महा कुमीच। —जसवंत सिंह

छरना—क्रि० अ० [हिं० उछलना] १. उछलना २. छलना ३. चूना, टपकना [सं० क्षरण]

उदा० परे परंजक पर परत न पीके कर थरहरे छुवत बिछौना पै छरति है। —देव

३. दरि दरि चंदन कपूर चूर छरि छरि भरि भरि हिम मही महल लिखाइयत।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छरहरे—वि० [हिं० छड़] तेज, शक्तिशाली, २. चीणाङ्गी।

उदा० छार भरे छरहरे छग ज्यों छरकवारे छाए हैं छविन छायघन छाइयत हैं। —गंग

छरहरी—वि० [हिं० छड़+हरा] चीणाङ्गी, तेज।

उदा० कारे लहकारे काम छरी से छरारे छरहरी छवि छोर छहराति पीडुरीनने। —देव

छरहू—संज्ञा, स्त्री० [सं० छटा+हिं० हूँ] छटा, बिजली, विद्युत्।

उदा० मघामेघ मुगदर सम लागति। छरहू बर दवागि नर दागति। —बोधा

छरा—संज्ञा, पु० [सं० शर] १. इजारबंद, नारा, नीबी २. छर्रा, गंडा, गले में पहनने का डोरा ३. माला की लड़ी ४. अप्सरा, परी [संज्ञा स्त्री० सं० अप्सरा]

उदा० १. बै गयो सनेह फिर ह्वै गयो छरा को छोर फगुवा न दै गयो हमारो मन लै गयो, —पद्माकर

२. रेसभ के गुन छीनि छरा करि, छोरत ऐंचि सनेह रचावै। —देव

३. काहू को चीर लै रूख चढ़्यो अरु काहू को गुंज छरा छहरायौ। —रसखानि

४. कहै कवि तोष करैं केतिकौ कला को तऊ नंद के लला को छरा छरने न पावती। —तोष

छराए—संज्ञा, पु० [हिं० छलावा] जादू, माया दृश्य।

उदा० लियौ दाँव हरि चखनि चौंध भरि, आई अलग छराए लौं छरि। —घनानंद

छराक—संज्ञा, स्त्री० [सं० छटा बिजली+हिं० +क (प्रत्य०)] विद्युत्, बिजली।

उदा० छावै न छराक छिति छोर लौं छबीली, छटा, छन्दन छपा में पौन डारना डहारैना —नंदराम

छरिया—संज्ञा, पु० [हिं० छड़ी+इया (प्रत्य)] छड़ीबरदार, द्वारपाल।

उदा० द्वार खरे प्रभु के छरिया तहँ भूपति जान न पावत नेरे। —नरोत्तमदास

छरी—वि० [सं० चरण] विनष्ट, मुक्त छूटा हुआ २. प्रवंचित, छला गया।

उदा० रोवत है कबहूँ हँसि गावत नाचत लाज की छांह छरी सी। — केशव

छरे—क्रि० वि० [१] अकेले, एकाकी।

उदा० दास खबास अवास अटा, धन जोर करोरन कोश भरे ही। ऐसे बढ़े तौ कहा भयौ हे नर, छोरि चले उठि अन्त छरे ही। — भूधरदास

छरौ—वि० [हिं० छली] छली, छलिया धोखेबाज।

उदा० भाजि चल्यौ छैल छरौ छोर पै छबीलिन ने छरी कों उठाय धाय मारी उर-माल पै। —ग्वाल

छलाले—संज्ञा, पु० [हिं० छलावा] भूत-प्रेत आदि की वह छाया जो दिखाई पड़कर गायब हो जाती है? उल्कामुख प्रेत, अगिया बैताल।

उदा० छांह न छुवत जा छबीली को छलाले कहि छैल छलि लै गयो अटारी बनी विधि की। —ग्वाल

छवा—संज्ञा, पु० [सं० शाव] १. पुत्र बच्चा, लड़का २. एंड़ी [देश]

उदा० १. अज के बबा हैं कै छवा हैं छत्रि ही के रन रोस के रेवाहैं कै लवा हैं श्री सवाई के। —पद्माकर

२. कारे चीकने ह्वै कछू काहै केस आपही तें। बढ़ि बढ़ि बिथुरि छवा लौं लागे छलकन। —रसकुसुमाकर

छवान की छुई न जाति, शुभ्र साधु माधुरी। —केशव

छहरना—क्रि० अ० [सं० चरण] फैल जाना, बिखर जाना।

उदा० छोहभरी छरी सी छबीली छिति माह फूल छरीके छुवत फूल छरी सी छहरि परी। —देव

नीरज तें कढ़ि नीर नदी छबि छीजत छीरज पै छहरानी। —पद्माकर

छहरारी—वि० [सं० चरण] फैलने वाली बिखरने वाली।

उदा० छनभा छहरारी-सुघन घहरारी घटा, तामें छबि सारी हिमकारी उजियारी है। —भुवनेस

छाँह—संज्ञा, स्त्री० [देश०] कपटमय शिक्षा।

मुहा० छांह छूना=पास जाना, पास फटकना।

यथा—मूँह माहीं लगी जक नाहीं मुबारक छांहीं छुए छरकै उछलै।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० आलम अकेली तू मैं आजु कछु और देखी और सुनी और चालि औरनि की छाँह सों। —आलम

छाउड़े—संज्ञा, पु० [हिं० छौना] पशुओं का बच्चा, शावक।

उदा० धरिये न पाउँ बलि जाउँ राधे चन्दमुखी वारौं मन्दगति पै गयंद पति छाउड़े। —देव

छाक—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छकना] नशा, मस्ती

उदा० छिनकु छाकि उछकै न फिरि, खरौ विषम छवि-छाक। —बिहारी

छाटी—वि० [प्रा० छंटिअ] सिंचित।

उदा० फहरैं फुहारे नीर नहरैं नदी सी बहै छहरैं छबीन छाक छीटिन की छाटी है। —पद्माकर

छात—संज्ञा, पु० [सं० क्षत] चोट, घाव, जख्म।

उदा० रूप अघाति न छातनि देव, सुबातनि बातनि घूँघट गोठनि। —देव

छाद—वि० [सं० छादन] छाई हुई, फैली हुई २. आच्छादित, छिपी हुई।

उदा० नाभि की गंभीरता विलोकि मन भूलि जात, सुरसरि सलिल के भ्रम छबि छाद री। —सिवनाथ

छान—संज्ञा, स्त्री० [सं० छादन] छप्पर, छानी।

उदा० श्री वृषभान की छान धुजा अटकी लरकान ते आन लई री। —रसखनि

छाननना—क्रि० सं० [सं० क्षरण] १. भेदना, छेद करना, भेद करके पार करना २. बाँधना।

उदा० प्रान प्यारे कंत, कित बसं हो इकंत, इत अंतक बसंत, तुम बिन डाई छाती छानि। —देव

छामता—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षाम] क्षीणता, दुर्बलता, कृशता।

उदा० छामता पाइ रमा ह्वै नई परंजक कहा करै राधिका रानी। —दास

छाय—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छार] छार, मिट्टी रज २. व्रण, घाव [हिं० छात] ३. छाया।

उदा० ब्रह्मादिक इंद्रादिक बंदना करत तिन, चरन की छाय ब्रज छायौ ही रहत हैं। —ब्रजनिधि

२. लाल पाग बाँधे, धरे ललित लकुट काँधे मैन सर साँधे सो करन चित छाय को। —घनानंद

छाली—वि० [?] निर्मल, स्वच्छ।

उदा० अधरा मुसकान तरंग लसै रसखानि सुहाइ महाछवि छाली। —रसखानि

छावर—संज्ञा, पु० [सं० शाव] हाथी का जवान बच्चा।

उदा० गुज्जरत गुंज सिंह गज्जन के कुंभ बैठे छोटे छौना छेके फिरैं छरहरे छावरनि। —गंग

छावा—संज्ञा, पु० [सं० शावक] गज शावक, छोटा हाथी, हाथी का बच्चा।

उदा० दीनी मुहीम को भार बहादुर छावो गहै क्यों गयंद को टप्पर। —भूषण

छिकरा—संज्ञा, पु० [बुं०] हरिण।

छरकत छैल पात के खरके छिकरा लौं भगि जाई। —बक्सी हंसराज

छिछि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छींटा] १. छींटा, बूंद २. फुहार, धारा।

उदा० १. अति उच्छलि छिछि त्रिकूट छयो। पुर रावन के जल जोर भयो। —केशव

२. उड़ि स्रोनित छिछि अयास तटैं, पय कों कम ज्यौं पिचकारि छुटैं। —मानकवि

छिक—संज्ञा, पु० [?] चैन, आराम,।

उदा० छाक छके छलहाइन में छिक पावै न छैल छिनौ छबि बाढ़ै। —पद्माकर

छिड़ियाना—क्रि० अ० [देश०] मचलना।

उदा० रस के निधान बसकरन बिधान कहौ आज इड़ियाने छिड़ियाने कैसे डोलौ हौ। —ठाकुर

छिद्र—संज्ञा, पु० [सं०] अवसर, मौका, अवकाश।

उदा० तब तिहि समै छिद्र यह पाइ। रामपूत यह बिनयो जाइ। —केशव

छिनकना—क्रि० [अनु० छनछना] जलना, छन-छना कर जलना।

उदा० मैं लै दयौ, लयौ सु, कर छुवत छिनकि गौ नीरु। लाल तिहारौ अरगजा उर ह्वै लग्यौ अबीर। —बिहारी

छिनछवि—संज्ञा, स्त्री० [क्षण-छबि] बिजली, विद्युत्।

उदा० घूँघट घटान छिनछवि की छटा सी छिति ऊपर बिलोकिबै को मुकुर मँजाइ लै। —पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छिपन—संज्ञा, पु० [हिं० छिपाना] गोपन, दुराव २. कपट ।
उदा० जो पीय ब्याहि लायौ, तासों रोपी है छिपन सब लोक लाज लोपी, दुरनीति करी है ।
—ग्वाल

छिपिया—संज्ञा, पु० [देश०] दरजी, कपड़े सीने वाला ।
उदा० छिपिया को दूधभात खीचरी हूँ करमा की चक्करा रैदास जू चमार हूँ के खाये हैं ।
—ठाकुर

छियरा—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छोर] खूँट, छोर किनारा ।
उदा० जोतिष देख ले ऐसी कहै गठियाय ले आंचर के छियरा सों । —ठाकुर

छिरद—संज्ञा, स्त्री० [?] हठ जिद ।
उदा० छाल कों उढ़ाइ जल छीटैं छिरकाइ नेक, नाग को छुवाइ याकी छिरद मिटाइ दै ।
—पद्माकर

छिरहरे—वि० [हिं० छरहरा] हलका, थोड़ा, कम ।
उदा० छिरहरे जल जैसे दुरी ह्वै कुमुदकली, ऐसे उरोजनि दीनी सुरुचि दिखाई सी ।
—गंग

छिहरना—क्रि० अ० [सं० क्षरण] छिछकारना छितराना, सींचना, पानी की छीटें देना ।
उदा० मोहिलगी गरमी अति ही अति सीत उपाइ थकी करिकै हौं । को जल कोठरी मै छिहरै कवि तोष तही महि सीतल पैहौं ।
—तोष

छीक—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षय] नाश, क्षय ।
'सेख' प्यारे आजु कालि आल चाल देखो आइ, छिन छिन जैसी तन-छीजन की छीक है । —आलम

छीजना—क्रि० अ० [सं० क्षयण] घटना, कमजोर होना, दुर्बल होना ।
उदा० सखि जा दिन तें परदेस गये पिय ता दिन ते तन छीजत है । —सुन्दरीसर्वस्व

छीड़ना—क्रि० सं० [सं० क्षीण] १. नष्ट करना हटाना २. छीनना ३. छूना, स्पर्श करना ।
उदा० खेलि हैं ना हम फागुअली पै छली बली है सिर के पट छीड़ै । —बेनी प्रवीन

छीत—वि० [प्रा० छित्त] १. स्पृष्ट, स्पर्श किया हुआ, छुआ हुआ, २. प्रभावित ।
उदा० १. प्रेम मतवारी, छवि छीते की खुमारी, छिति मूरछित डारी, नारी नारी में न लहिये ।
—देव

छीतना—क्रि० सं० [सं० क्षति] निंदित करना कलंकित करना, बुराई करना ।
उदा० कहै परताप आये मोहन रंगीले स्याम नख सिख देखि करि आनन छितै रही ।
—प्रतापसाहि

छींद—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छिनार] छिनार स्त्री, चरित्र भ्रष्टा नारी, व्यभिचारिणी ।
उदा० जब तें छबीले जू के ईछन तीछन देखे, ताछिन तैं छींद कैसे छेदनि करति है ।
—सुन्दर

छीबर—संज्ञा, स्त्री० [देश०] एक प्रकार का कपड़ा मोटी छीट, वह कपड़ा जिसमें बेल बूटे छपे हों ।
उदा० हा हा हमारी सौं साँची कहौ वह को हुती छोहरी छीबरवारी । —देव

छीर—संज्ञा, पु० [सं० छीर] पानी ।
उदा० नल छीर छींट बहाइयो । —केशव

छीव—वि० [?] उन्मत्त, मस्त ।
उदा० छपद छबीले छीव पीवत सदीव रस, लंपट निपट प्रीति कपट ढरे परत । —देव

छुटना—क्रि० अ० [हिं० छूटना] चमकना, दीप्त होना, दिखाई पड़ना ।
उदा०—बीजु छुटै उछटै छबि देव छटै छिनु नाहि कटै दिन कैसे । —देव

छुरना—क्रि० अ० [हिं० छुटना] छूटना, ।
उदा० घूँघट के घटकी नटिकी सुघुटी लटकी लटकी गुन गूँदनि । केहूँ कहूँ न घुरै बिछुरे बिचरै न चुरै निचुरै जल बूँदनि ।
—देव
सुथरे छुरि केस छवानि लगें ।
भृकुटी जुग चाप विसाल जगें ।
—सोमनाथ

छुहना—क्रि० सं० [हिं० छुवना] रँगना, रंजित होना, छू जाना ।
उदा० कहि देव कहौ किन कोई कछू तबते उनके अनुराग छुही ।
—देव

छुहावनी—वि० [हिं० छोह=प्रेम, स्नेह] प्रिय, अच्छी, प्यारी ।
उदा० यह लात चलावनी हाय दैया, हूर एक कों नाहिं छुहावनी है । सुनी तेरी तरीफ मिला-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बनी की, हित तेरे सुमाल पुहावनी है ।
—ग्वाल

छुही— वि० [हिं० छुवना] १. सिंचित २. रंगी हुई रंजित ।

उदा० त्यौं त्यौं छुही गुलाब सी छतिया अतिसिय-राति । —बिहारी

कवि देव कहौ किन कोई कछू, तब ते उनके अनुराग छुही । —देव

छूटा— संज्ञा, पु० [प्रा० छुड्डिया] पोत की कंठी ।

उदा० तिनके बीच बिचौली चमकै अरु छूटा छवि छाई । —बक्सी हंसराज

छून— वि० [प्रा० छुन्न, सं० क्षुण्ण] शक्ति हीन, शून्य, बेसुध २. क्लीब, नपुंसक ।

उदा० ऊजरी सी छतिया की तिया बतिया करिकै करि डारति छून री । —तोष

छूम—संज्ञा, पु० [हिं० छोम खोम] १. टोटका, टोना, छोम, २. चिकना, कोमल [वि० सं० क्षोम]

उदा० द्रोपदी की लाज काज द्वारिका तें दौरि आए, छूम छल छाइ रह्यो अचंभो अघाइयै । —गंग

छूरि— संज्ञा, स्त्री० [प्रा० छुरिआ] मृत्तिका, मिट्टी ।

उदा० डारि दै दूरि कपूर को छूरि में ढारि दै बीजनो पीर को वार दै । —तोष

छेक—संज्ञा, पु० [हिं० छेद] १. कटाव, खंड, २. नोक ३. छेद सुराख ।

उदा० पायो ना सहेट मैं छबीली वा छबीलो छैल छोलि गई छाती मैं छुरी को छेक ह्वै गयो । —नंदराम

छेटी—संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षिप्त, हिं० छेटा] बाधा परेशानी ।

उदा० चाल अटपेटी जात सखि लखि लेटी जात सकुचि सुभेटी जात छेटी जात सान की । —'हजारा, से

छेंड़ी—संज्ञा, स्त्री० [देश] १. छोटी गली २. बकरी [सं० छेलिका]

उदा० छेंड़ी में घुसौ कि घर ईधन के घनस्याम पर घरनीनि पहँ जात न घिनात जूं । —केशव

छेत—संज्ञा, पु० [सं० विच्छेद] विच्छेद, वियोग ।

उदा० हिंडोरैं झूलनि को रस पायौ अंग-संग सुख लेत । गौर स्याम जोबन माते सहि न सकत छिन छेत । —घनानन्द

द्रवित आनंदघन निरंतर परति नाहिन छेति । —घनानन्द

छेरवा—संज्ञा, पु० [प्रा० छेड़ी] १. छेड़ी, गली, छैला, सजीला, बाँका, शौकीन ।

उदा० १. आजु बधावन, सुन्दर बन घनस्याम पियरवा अइलौ मोरे छेरवा । —घनानन्द

छेव—संज्ञा, पु० [सं० छेद, प्रा० छेव] १. वार, चोट, २. घाव ३. नाश, छेद ४ भावी कष्ट या दुख ।

उदा० तहीं मेव करि छेव तुरंगम ते गहि डारी । —सूदन

२. अरिन के उर माहिं कीन्ह्यो इमि छेव है । —भूषण

३. कोसहीन जाको कुलभेव । ताको होय वेगि कुलछेव । केशव

४. सूरति कहत गनती न मेरे औगुन की, बिनती यहै है सर्न राखौ इहि छेव जू । —सूरति मिश्र

छेहना—क्रि० अ० [सं० क्षय] क्षय होना, नष्ट होना, समाप्त होना ।

उदा० छेहै कलेस सबै तनके मनके चहे ह्वैहै मनोरथ पूरे । — बेनी प्रवीन

छेहरा- संज्ञा, पु० [प्रा० छेअ=अन्त + हिं० रा० प्रत्य] अन्त ।

उदा० ब्रजमोहन नवरंग छबीले तिहारी बातनि घातनि कौन छेहरा । — घनानन्द

छैया - संज्ञा, पु० [हिं० छवना] १. पुत्र २. पशुओं का बच्चा ।

उदा० १. बलि को बलैया, बलभद्र जू को भैया, ऐसो देवकी को छैया, छाड़ि और कौन ध्याइयै । —गंग

२. हाथी कैसो छैया भई डोलति है दैया, इह कहा भयो मैया या सयान कब आइहै । —सुन्दर

छोई—संज्ञा, स्त्री० [प्रा० छोइआ] १. छिलका, ईख आदि की छाल २. दास, नौकर ।

उदा० १. धोई ऐसी सूरत बिसूरत सी सेज बीच पड़ी वह बाल देखी छोई सी निचोई सी । —बोधा

छोटैं—संज्ञा, स्त्री० [हिं० चोट] घाव, व्रण, चोट, आघात ।

उदा० कहूँ खींचि कम्मान को बान मारैं, मृगा जात भागे लगीं पूर छोटैं । —चन्द्र शेखर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छोनी— संज्ञा, स्त्री० [सं० क्षोणी] १.समूह, श्रेणी, पंक्ति। २. पृथ्वी

उदा० १.रस सिंगार को बींज मनोहर कै अलि छोनि सुखारी। —सोमनाथ

छोभक—संज्ञा, पु० [सं० क्षोभ] दुख देने वाले, राक्षस।

उदा० छोभक छिजै करि, विजै करि वा बाम सों विलास अद्भुत हास साहस जनाये हैं। छैल छल छोभक छपाचर चुरैल आगे पीछे गैल गेल ऐल पारत नकीब से। —देव

छोरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छोर = किनारा] शिखर, चोटी।

उदा० त्यौं रसखानि गयौ मनमोहन लैकर चीर कदंब की छोरी। —रसखानि

छौन—संज्ञा, पु० [सं० शावक हिं० छौना] बच्चा लड़का।

उदा० मानु करिबे की तुम सीख सिखवति — आनि कासौं करैं मानु कहु मान है री काकौ छौन —सोमनाथ

छौहैं—संज्ञा, स्त्री० [हिं० छोह सं० क्षोभ] चपलता, चंचलता तेजी

उदा० छाजति छौहैं अंगनि माहिं। छवा छबीले छुवे न जाहिं। —केशव

ज

जई— संज्ञा, स्त्री० [हिं० जौ] १. अंकुर २. जौ की जाति का छोटा अंकुर।

१. निरखैं परखैं करखैं उपजी अभिलाषनि लाख जई। —घनानन्द

जाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० जाती] चमेली की जाति का एक पुष्प, जाही।

उदा० जाई की सी माल सु लजाइ रही काहे तें सु, जाइ जाइ हरि जू के हिये में खँगति है। —आलम

जकंदना—क्रि० अ० [हिं० जकंद] कूदना, उछलना।

उदा० सजोम जकंदत जात तुरंग। चढ़े रन सूरन रंग उमंग। —चन्द्रशेखर

जकना— क्रि० अ० [हिं० जक] ठिठकना, भौचक्का होना, चकित होना, चकपकाना।

उदा० एकहि बार रही जकि ज्यों कि त्यों भौंहनि तानिकै मानि महादुख। —देव

जकित थकित ह्वै तकि रहे तकत तिलौंछे नैन। —बिहारी

जखीरा—संज्ञा, पु० [अ० जखीरा] १.कोष, खजाना २. संग्रह, ढेर, समूह।

उदा० १. गरब गुरज पै चढ़ाई तोप कोप करि सौतिन जखीरा कियो जोबन जमा को है। —कवीन्द्र

जगजाल—संज्ञा, पु० [हिं० जंजाल] जंजाल बखेड़ा, झंझट, प्रपंच।

उदा० तृष्णाहू तिनूंका जगजाल जाल पूर्‌यो जहां, लगी लोभ लौंनी कौंनी भाँति सुख पाय हैं। —सूरति मिश्र

जगन्नाथ— संज्ञा, पु० [सं०] १. लगँड़ा-लूला पैर हाथ विहीन २. ईश्वर।

उदा० १.एक सूरदास दासी एक जगन्नाथ दासी एक भृगुदास दासी ताकी एक आई है। —देवकी नंदन

जगंभरा— संज्ञा, स्त्री० [सं०] विश्वम्भरा, पृथ्वी।

उदा० तब लगि रहौ जगंभरा, राहु निबिड़ तम छाइ। —दास

जगा— संज्ञा, पु० [सं० यज्ञ] यज्ञ।

उदा० जट्ट का जानहि भट्ट को भेद कुँभार का जानहि भेद जगा को। —गंग

जगात— संज्ञा, पु० [जकात] दान, महसूल, कर, चुँगी।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० हीरा मनि मानिक की काँच और पोतिन को मोतिन की गात की जगात हौं लगायौ है। —रसखानि

जज्जला—वि० [सं० जाज्वल] ज्वलित, जलती हुई।

उदा० कैबा भेख भिक्षुक की ड्योढ़ी बीच आइ आइ सबद सुनायो दुपहर जज्जला मैं हैं। —दास

जटना—क्रि० अ० [हिं० जुटना] जुड़ना।

उदा० करौ सु ज्यौं चित चरन जटै। — घनानन्द

जदुभूभुज—संज्ञा, पु० [सं० यदु + भूभुज = राज यदुराज] यदुराज, श्रीकृष्ण।

उदा० दृ भुज पकरि जदुभूभुज सों जोरे, मुख पीयुख निचोरे, चित चोरे स्रम सीकरें। —देव

जपटना—क्रि० अ० [हिं० झपटना] झपटना, टूटना।

उदा० भूषन भनत काली हुलसी असीसन कौं सीसन कौं ईस की जमाति जोर जपटैं। —भूषण

जमजाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० यम + जाया] यमराज की स्त्री, मृत्यु।

उदा० जमजाई जामिनी जुगंत सम जाती क्यों। —देव

जफरी—संज्ञा, स्त्री० [अ० जफर] विजय प्राप्त करने वाली, विजयिनी।

उदा० नैननि निहारि जानी रंभा रति मनजानी, उर जानी आई अति आनन्द की जफरी। —बेनी प्रवीन

जफा—संज्ञा, स्त्री० [फा०] अत्याचार, जुल्म, सख्ती।

उदा० बात उजागर सोच कहा जो घटैगी जफा सो कढ़ै तखरी में। —ठाकुर

जबत—संज्ञा, पु० [अ० जाब्ता] कानून, कायदा, व्यवस्था, नियम।

उदा० दारासाह बजत रन छाज्यौ। जबत पात साही को भांज्यौ। —लालकवि

जबराना—क्रि० स० [फा० ज़बर] जोर दिखाना, बल प्रदर्शित करना।

उदा० सोच बड़ो मन में उपज्यौ तन मैं बड़ी बिह्वलता जबरायो। —रघुनाथ

जम—संज्ञा, पु० [अ० जम] १. निन्दा, बुराई २. यमराज।

उदा० १. कम न गोबिंद तें, जु जम ना त्रिलोक जाकी, न्हात जमुना में, ते न लेत जम नामै हैं। —ग्वाल

जमकातर—संज्ञा, स्त्री० [सं० यम + कर्त्तरी] यम का छुरा या खांड़ा।

उदा० ज्याइ लई पिय प्याइ पियूष, गई जिय की जमकातर टूट सी। —देव

जमदिसा संज्ञा, स्त्री० [सं० यमदिशा] यमराज की दिशा, दक्षिण दिशा।

उदा० मलय समीर परलै कों जो करत अति जम की दिसा तें आयो जम ही को गोतु है। —भूषण

जमल—वि० [सं० यमल] युग्म, दो, जोड़ा।

उदा० पात से उदर पर तेरी रोमराजी कैधौं जमल उरोजन को ठई मृदु बास है। —बलभद्र

जमान—संज्ञा, स्त्री० [अ० जमा] पूँजी, मूलधन २. धन, रुपया पैसा।

उदा० महाबीर सत्रुसाल नंदराव भावसिंह हाथ मैं तिहारे खग्ग जीति का जमान है! —मतिराम

जमींदोज—संज्ञा, पु० [फा०] १. एक प्रकार का खेमा २. धराशायी होना, गिरना, नीचे की ओर आना (क्रि०)।

उदा० १. रगमगे मखमल जगमगे जमींदौज और सब जे वे देस सूप सकलात हैं। —गंग
२. अजब अनूठे बिधि किले द्वै बनाये हैं सो ऊँचे होत आवत न होत जिमीदोज हैं। —ग्वाल

जमुर्रद—संज्ञा, पु० [फा० जमुर्रद] एक कीमती रत्न, पन्ना।

उदा० बिलौर की बारादरी जगै जोति जमुर्रद की कुरसी बजै बीन। —पजनेस

जमूरे—संज्ञा, स्त्री० [फा० जमूरक] एक प्रकार की छोटी तोप।

उदा० लिए तुपक जरजार जमूरे। —चन्द्र शेखर

जमेजाम—संज्ञा, पु० [फा० जामेजाम] एक विशेष प्याला जिसे ईरान के शासक जमशेद ने संसार का हाल जानने के लिये बनाया था। ऐसा अनुमान है कि उस प्याला में कोई मादक वस्तु पिलायी जाती रही, जिसे पीकर पीने वाला वास्तविक बातें बता देता था।

उदा या जमेजाम या सीसा सिकन्दरी या दुरवीन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लै देखिबो कीजै । —पजनेस

जमेस संज्ञा, पु० [सं० यम + ईश] यमराज मृत्यु का एक देवता ।

उदा० तारक जमेस की, विदारक कलेस की है, तारक हमेस की है, तनया दिनेस की ।
—ग्वाल

जर—संज्ञा, पु० [सं० ज्वर] ज्वर, बुखार, ताप

उदा० बिछुरै ते बलबीर धरि न सकति धीर, उपजी बिरह पीर ज्यौं जरनि जर की ।
—आलम

जरजार—संज्ञा, स्त्री० [सं० ज्वाल जाल] एक प्रकार की तोप ।

उदा० लिए तुपक जरजार जमूरे । —चन्द्रशेखर

जरब—संज्ञा, स्त्री० [फा० जरब] चोट, आघात ।

उदा० जोबन जरब महा रूप के गरब गति, मदन के मद मद मोकल मतंग की ।
—मतिराम

जरबाफ— संज्ञा, पु० [फा० ज़रबफ़त] जरी का काम किया हुआ रेशमी वस्त्र ।

उदा० झूमत झुलमुलात झूलैं जरबाफन की जकरे जंजीरैं जोर करत जिकिरि है । —भूषण

जरबीला— वि० [फा० जरब + ईला (प्रत्य०)] चमकीला, भड़कीला ।

उदा० नीले जरबीले छुटे, केस सिवार समाज । कै लपट्यो बृजराज रंग, कै लपट्यो रसराज ।
—भूपति कवि

जरा—संज्ञा, पु० [सं० जाल] जाल, सूत का वह फंदा जिसमें मछलियां फँसाई जाती हैं ।

उदा० दीन ज्यों मीन जरा की भई, सुफिरै फरकै पिंजरा की चिरी ज्यों । —देव

जरूल्यौ—वि० [सं० जटिल] गभुआरे बाल वाले ।

उदा० आनँदघन चिरजीवौ महरि को जीवन-प्रान जरूल्यौ हो । —घनानंद

जरैलुन—वि० [हिं० जलना] जलने वाले, ईर्ष्यालु

उदा० बोधा जरैलुन के उपहास अँगेजु कै कुंजनि जाइबे ही है । —बोधा

जरौट—वि० [हिं० जड़ना] जड़ाऊ ।

उदा० कोउ कजरौट जरौट लिये कर कोउ मुरछल कोउ छाता । —रघुराज

जलजाल—संज्ञा, पु० [सं०] समुद्र, सागर ।

उदा० जलजाल काल कराल माल उफाल पार धरा धरी । —केशव

जलथंभ = संज्ञा, पु० [सं० जलथंभ = रुकावट + स्तम्भन] जल के प्रभाव का स्तंभन या रुकावट, ठहराव ।

उदा० बिरह बिथा जल परस बिन बसियतु मो मन ताल । कछु जानत जल थंभ बिधि दुर्जोधन लौं, लाल । —बिहारी

जलप— संज्ञा, स्त्री० [सं० जल्प] कथन उक्ति, २. प्रलाप बकवाद ।

उदा० काल की कुमारी सी सहेली हितकारी लगे । गात रसबारी मानो गारी की जलप है ।
— दास

२. जल्पति जकाति कहरत कठिनाति माति, मोहति मरति बिललाति बिलखाति है ।
— दास

जलपना— क्रि० अ० [सं० जल्पन] डींग मारना, प्रलाप करना, व्यर्थ की बातें करना ।

उदा० कबि आलम आलस ही जलपै किलकै कुच खीन भई कलता । — आलम

जलाक — संज्ञा, स्त्री० [?] लू, भीषण गरमी ।

उदा० कहै पद्माकर त्यों जेठ की जलाकैं तहाँ पावैं क्यों प्रबेस बेस बेलिन की बाटी है ।
—पद्माकर

जलाजले—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झलाझल] झालर ।

उदा० सोने की सिंदूख साजि सोने की जलाजले जु सोने ही की घाँट घन मानहु बिभात के ।
—केशव

जलाहल— संज्ञा, पु० [देश०] दूर तक प्रसरित जल, अत्यधिक जल ।

उदा० 'द्विजदेव' संपा कौ कुलाहल चहूँघा नभ, सैल तैं जलाहल कौ जोगु उँमहतु है । —द्विजदेव
वे नद चाहतु सिंधु भये अब सिंधु ते ह्वै हैं जलाहल भारे । —तोष कवि

जलूलत—वि० [अ० जलालत] तेज ।

उदा० फैलत अनु फूलत भरैं जलूलत चित नहि भूलत रँग रँग के । —पद्माकर

जलूस—वि० [फा०] १. तड़क-भड़क २. ज्योति, प्रकाश, चमक ३. सिंहासनारोहण, धूमधाम की सवारी ।

उदा० १. भूषन जवाहिर जलूस जरबाफ जाल, देखि देखि सरजा की सुकवि समाज के ।
—भूषण

आपुही सुनार घर जाइ के जड़ाऊदार जेवर जलूस के बनावने बतावती ।
—नंदराम

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

३. भूपति भगीरथ के जस की जलूस, कैंधौ प्रगटी तपस्या पूरी कैंधो जन्हुजन की ।
—पद्माकर

जलेबदार—संज्ञा, पु० [फा०] मुसाहब ।
उदा० आयो है बसन्त ब्रज ल्यायो है लिखाइ आली, जोन्ह कै जलेबदार काम को करोरी है ।
—आलम

जव—संज्ञा, स्त्री० [सं०] तीव्रता, तेजस्विता, स्फूर्ति, शक्ति ।
उदा० देखिये जवन सोभा घनी जुगलीन माँझ नाम हूँ सौं नातौ कृष्ण केसौ को जहाँ न है ।
—सेनापति

जवा—संज्ञा, पु० [सं० यव] हाथ का एक आभूषण जिसमें जौ की अनेक आकृतियाँ गुँथी रहती हैं ।
उदा० हाथन लेत बिरी लटकैं मखतूल के फूँदनि जोर जवाके । —गंग

जवारे संज्ञा, पु० [अ० जवाल] निकट, पास २, जंजाल आफत ३. जौ के हरे अंकुर ।
उदा० देखे मतवारें गजराज न जवारें आवै, दई के सँवारे हौ सवारे क्यों न भागहू । —गंग

जवाल - संज्ञा, पु० [अ० ज़वाल] आफ़त, बला, जंजाल ।
उदा० ज्वाल सों कला निधि जवाल सी जोन्हाई जोति सीसा को अवास यहौ दावा सो दगत है । —चन्द्र शेखर

जवीले—वि० [सं० जव = स्फूर्ति, शक्ति + हिं० ईला प्रत्यय] शक्तिशाली, तेजस्वी, स्फूर्ति, सम्पन्न ।
उदा० नागरि नवेली नट नागर जवीले छैल कीन्ही चतुराई कोटि काटन कलेस की ।
—नंदराम

जसन—संज्ञा, पु० [फा० जशन] १. हर्ष, आनन्द २. उत्सव ।
उदा० १. विष से बसन लागैं आगि से असन जारैं जोन्ह को जसन कला मनहु कलप है ।
—दास

जसना - संज्ञा, पु० [सं० न + यश] अयश, अपयश ।
उदा० सुभ माल प्रसून फनी इक सौं रिपु मित्र समान जसौ जसना । —सूरति मिश्र

जहना—क्रि० अ० [सं० जहन] त्यागना, छोड़ना २. नाश करना ।
उदा० कहै पद्माकर परेहू परभात प्रेम पागत परात परमातमा न जहिये । —पद्माकर

जाँगरे—संज्ञा, पु० [देश० जाँगड़े] कीर्ति गायक, भाट, चारण ।
उदा० जहँ जाँगरे करखा कहैं अति उमँगि आनँद को लहैं । —पद्माकर

जाग—संज्ञा, स्त्री० [सं० जागृति] १. जागृति, जगना, उत्पन्न होना २. यज्ञ ।
उदा० १. रघुनाथ मोहन विदेस गये जादिन सों तादिन सौ गुजरेटी बिरह की जाग में ।
—रघुनाथ

जागना – क्रि० सं० [सं० जागरण] चमकना, प्रकाशित होना ।
उदा० तहाँ जाइ सखियन के सँग पवि सोभा निरखन लागी । चन्द्रक चूर समान बालुका भानु किरनि सौं जागी । —सोमनाथ

जाजर - वि० [सं० जर्जरित] छेददार ।
उदा० काजर की रेख उर जाजर करति है ।
—आलम

जाति—संज्ञा, स्त्री० [सं०] पंक्ति, समूह, वर्ग ।
उदा० आँखै कुमोदिनि सी हुलसी मनि दीपनि दीपक दान की जाति सी । —रघुनाथ

जादमा —संज्ञा, पु० [सं० यादव] यादव, अहीर ।
उदा० भारी विषधर भोगी द्वै जीभन बोलै डोलै मीचु ह्वै ममा की जादपा की आँच आ चली । —देव

जान—संज्ञा, पु० [सं० यान] रथ, यान ।
उदा० अजित अजान भुज भुजग भोजन जान, दुभुज सम्हारो, जदु भूभुज भुलिख्या हौं ।
—देव

जापता—संज्ञा, पु० [अ० ज़ाब्ता] राजदरबार का कायदा, नियम ।
उदा० आये दरबार बिललाने छरीदार देखि, जापता करनहार नेकहू न मनके ।
—भूषण

जाबुक—संज्ञा, पु० [हिं० जावक] जावक, महावर ।
उदा० सखियानि सो देव छिपै न छिपाये लग्यौ अँखियानि मैं जाबुक सो । —देव

जामक—संज्ञा, पु० [सं० यामिक] १. रक्षक २. प्रहरी ।
उदा० १. कवि तो वरनैं जस जामक कौ करुणा करि भारती भाय भरै । —कुलपति मिश्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जामा—संज्ञा, पु० [फा० जाम=वस्त्र] १. शरीर २. वस्त्र ।
उदा० १. जीरन जामा की पीर हकीम जी जानत है मन की मनभावत । —बोधा

जामिक—संज्ञा, पु० [सं० यामिक] प्रहरी, पहरा देने वाला ।
उदा० नूपुर रक्षाजंत्र मन लोचन गुनगन हार । जाचक जस पाठक मधुप जामिक बंदनमार । —केशव

जामिकी—संज्ञा, स्त्री० [फा० जामगी] पलीता, वह बत्ती जिससे तोप के रंजक में आग लगाई जाती है ।
उदा० रंजक दै छाती धरी, जलद जामिकी बारि । —चन्द्रशेखर

जामिनी रमन—संज्ञा, पु० [सं० यामिनीरमण] चन्द्रमा ।
उदा० तरनि मैं तेज बरनत 'मतिराम' जोति जगमगै जामिनो रमन मैं बिचारिये । —मतिराम

जाय—संज्ञा, स्त्री० [सं० जाती] १. चमेली की जाति का एक पुष्प, जाही २. मालती ।
उदा० १. कर सिंगार बैठीं हुती जाय फूल लिये हाथ । अर बर मन ही मैं रहै कब घर आवै नाथ । —मतिराम

जायन—संज्ञा, स्त्री० [सं० जाया+हिं० न] विवाहिता स्त्री, पत्नी ।
उदा० जोइ जोइ जायन को भायन भयेई रहै, लोयन लगालग में वपुष बिसारेई । —ग्वाल

जारि—संज्ञा, पु० [हिं० जाल] जाल, पाश ।
उदा० तहँ धीवर हो ब्रजराज गयो । मुरली स्वर पूजन जारि छयो । —बोधा

जारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० जार] १. व्यभिचार, पर स्त्री गमन २. जाल [संज्ञा, पु०] ।
उदा० १. आप करैं जारी हमैं जोग जरतारी भेजी, देई कहा गारी भलौ चीकनो घड़ा भयौ । —ग्वाल
२. कंज कितै अंजन ये खंजन हैं जारी के । —दूलह

जालदार—वि० [फा० जालदार] चमकदार, चमकीला, प्रकाशमय ।
उदा० नीलम के हार जालदार की बहारकर सारी सनी सोसिनी सँभारि कै करार पै । —ग्वाल

जावक—संज्ञा, पु० [यावक] महावर, पैरों में लगाया गया लाल रंग ।
उदा० कंचुकी सेत में जावक बिंदु बिलोकि मरैं मधवानि की सूलन । —रसखानि

जाहिबो—क्रि० अ० [हिं० जाना] जाना, पहुँचना प्रकट होना ।
उदा० कोऊ कहै जाहिबो कठिन मृगराज सों ही कोऊ कहै ढाहिबो कठिन सत्रु गेह को । —ग्वाल

जिजाना—संज्ञा, पु० [सं० ययाति] ययाति की स्त्री, देवयानी, शुक्राचार्य की कन्या जो ययाति के साथ ब्याही गई थी ।
उदा० कस्यप के तरनि, तरनि के करन जैसे, उदधि के इंदु जैसे भए यों जिजानी के । —गंग

जिटिना—क्रि० अ० [हिं० जड़ना] जड़ना ।
उदा० कन कन भर्यो, सोई कन कन भर्यो देव, जनु जगमगत जवाहिर जिटि रह्यो । —देव

जितवना—क्रि० सं० [हिं० जताना] बताना, जताना ।
उदा० चितवत, जितवत हित हियैं, कियैं तिरीछे नैन । भीजैं तन दोऊ कँपैं क्यौं हूँ जप निबरैन । —बिहारी

जिरह—संज्ञा, स्त्री० [अ० जुरह] हुज्जत, पेंच खुचुर ।
उदा० और अबलनि को बखान कहा कीजै यह बात सुनि लीजै न कहति हौं जिरह की । —रघुनाथ

जिरी—संज्ञा, स्त्री० [अ० जिल्लत] १. दुर्गति, दुर्दशा, कठिनाई २. अपमान, तिरस्कार ।
उदा० १. जानि कहावत है जग में जन जानै नहीं जम फाँसि जिरी को । —देव

जिलाहे—संज्ञा, पु० [अ० जल्लाद] अत्याचारी, जुल्मी ।
उदा० ज्वाला की जलूसन जलाक जंग जालिम की जोर की जमा है जोम जुलम जिलाहे की । —पद्माकर

जिल्ली—संज्ञा, स्त्री० [सं० झिल्लि] १. चमक, चिलक २. पीड़ा, टीस, चिलकन ।
उदा० १. चक्रहू तें चिल्लिन तें प्रलै की बिजुल्लिन तें, जम-तुल्य जिल्लिन तें जगत उजेरो है । —पद्माकर
२. कैसे ब्रजनाथ बिनु पावस बितैये जहाँ,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिल्ली सौं चहूँघा गन झिल्ली के झन-झनात । —सोमनाथ

जींगन—संज्ञा, पु० [हिं० जुगुनू] जुगुनू, बरसात के समय दिखाई पड़ने वाला एक कीड़ा, जिसके पृष्ठ भाग में चमक होती है ।

उदा० दसहूँ दिसि जोति जगामग होति, अनूपम जींगन जालन की । —गंग

बिरहजरी लखि जीगननि कहयो न उहिकै बार । —बिहारी

जीतब—संज्ञा, पु० [हिं० जीना] जीवन, जिदंगी ।

उदा० रूप की निकाई देखि हौं तो आई धाई कान्ह, ऐसी जुवती के पाएँ जीतब को फलु है । —आलम

जीरन—वि० [सं० जीर्ण] दुर्बल, क्षीण ।

उदा० जीरन सी जो अहीर की छोहरी, पीर अधीर परी रहै ठाढ़ी । दोहरी ह्वै गई बेनी प्रवीन मनौ, हरी दीपति देह में काढ़ी । —बेनी प्रवीन

जील—संज्ञा, स्त्री० [हिं० जिला] राग विशेष ।

उदा० जील की गीति सो सील की रीति सी, पील की चाल सी नील की चूनरी । —तोष

आखर सो समुझो न परै मिलि ग्राम रहे तजि जील परे की । —रघुनाथ

झांइ झांइ झिकरत झिल्ली धरि जील अरु को गनैं अनंत बन जीव के रवन कै । —सोमनाथ

जीलना—क्रि० सं० [अ० जिल्लत] अनादर करना, बेइज्जती करना, तिरस्कार करना, ईर्ष्या करना ।

उदा० यहि बाँसुरी मैं हरि मेरोइ नाउँ, सुनै सब गाउँ क्यों जीलतु हैं । —बेनी प्रवीन

जीली—वि० [सं० झिल्ली] १. स्वर, राग विशेष २. प्रकाश [हिं० उजेला] ।

१. झिल्ली ते रसीली जीली, रांटींहू की रट लीली । —केशवदास

२. प्यारी पिया की तियानि में राजित जैसे अंधेरे मैं जाहिर जीली । —तोष

जीवक - संज्ञा, पु० [सं०] १. सेवक २. सँपेरा ३. प्राण धारण करने वाला ।

उदा० १. सेनापति जासौं जुवजन सब जीवक हैं कवि अति मंद गति चलति रसाल है । —सेनापति

जीवनपति—संज्ञा, पु० [सं० जीवन = पानी + पति = स्वामी] समुद्र, वारिधि ।

उदा० सायक एक सहाय कर जीवनपति पर्यंत । तुम नृपाल ! पालत छमा जीति दुश्मन बर्वंत । —कुमार मणि

जुबाब—संज्ञा, पु० [अ० जबाद] एक सुगंधित पदार्थ, जिसे मुश्क बिलाव कहते हैं ।

उदा० कवि केसव मेद जुबाद सों मांजि इते पर आँजे मैं अंजन दै । —केशव

जुमकना—क्रि० अ० [हिं० जुमकना] डटना, सटना, पास-पास होना ।

उदा० थिरकत थिरकि चलत अँग-अँगनि । जीतत जुमकि पौन-मग संगनि । — पद्माकर

जुयती—संज्ञा, स्त्री० [सं० ज्योति] ज्योति प्रकाश, उजाला ।

उदा० एक समै तिय रूहि की सेज चली जुयती करि थारन कौं । मुकुताहल कंठ तें टूटि पर्‌यो सु लगी तिय नेकु निहारन कौं । —गंग

जुर—संज्ञा, पु० [सं० ज्वाल] लपट, लौं, आंच २. ज्वर ।

उदा० देव जो आन कछू सुने कान तौ, जारौ कुबो लनि के जुर सौं । —देव

जुरझना—क्रि० अ० [सं० ज्वल्] ज्वाला मैं, जलना ।

उदा० अब या ही परेखें उदेग-भर्‌यौ दुख-ज्वाल पर्‌यौ जुरझै मुरझै । —घनानन्द

जुरना—क्रि० अ० [देश०] १. अँगड़ाई लेना, आलस्य में अंग तोड़ना । २. मिलना, भेंट होना, प्राप्त होना, [हिं० जुड़ना] ।

उदा० १. झुकि झुकि झपकौंहैं पलनि फिरि फिरि जुरि जमुहाय । —बिहारी

२. बिधु कैं ी कला बधू गैलन में गसी ठाढ़ो गुपाल जहाँ जुरिगो । — पजनेस

जुराफा—संज्ञा,पु० [अ० जुर्राफा] अफरीका का एक पशु जो अपने जोड़े से अलग होने पर मर जाता है ।

उदा० नूतन बिधि हेंमत रितु जगत जुराफा कीन । — बिहारी

आयौ अब जाड़ौ जग करत जुराफा सौ । —ग्वाल

जुरी—वि० [सं० ज्वर] ज्वर ग्रस्त, बुखार से पीड़ित ।

उदा० कबहूँ चुटकि देति चटकि खुजावौ कान,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मटकि ऐंड़ात जुरी ज्यों जँभात तैसे हो। —केशव

जुर्रा—संज्ञा, पु० [फा०] नरबाज, एक पक्षी जो चिड़ियों पर आक्रमण करता है।

उदा० जुल्फ बावरिन को लखि जुर्रा। —बोधा

जुलकर्न—संज्ञा, पु० [?] सिकन्दर नाम का प्रसिद्ध यूनानी बादशाह।

उदा० जो न लई जुलकर्न जुधिष्ठिर, जो रबि के रथ चक्र न थापी। बामन के पग तें जु बची महि, सो महि मान महीपति मापी। —गंग

जुलहाल—संज्ञा, पु० [सं० छल + फा० हाल] धोखे की दशा, धोखाधड़ी, प्रवंचना।

उदा० जाल की ओढ़नी लाल, बटोही बिहाल करै, जुलहाल जुलाहिनि। —देव

जून—वि० [सं० जीर्ण] पुराना, जीर्ण।

उदा० तरुबर जून ज्वान अरु नये। मखमल जरबाफनि मढ़ि लए। —केशव

जूप—संज्ञा, पु० [सं० द्यूत] जुआ, द्यूत।

उदा० सुन्दरताई कौं जीतत जूप मैं, हारत हैं मन से धन भारे। —नागरीदास

जूमना—क्रि० अ० [अ० जमा] जमा होना, इकट्ठा होना, एकत्रित होना।

उदा० काहू पाय आहट न पायो कहा कहौ भट्ट रघुनाथ की दोहाई चेटकसो जूमिगो। — रघुनाथ

जूरी—संज्ञा, पु० [?] समूह।

उदा० धन अरु बिद्या सब सुख पूरौ। सेवै सदा भक्त को जूरौ। —जसवंत सिंह

जेउर—संज्ञा, पु० [फा० जेवर] आभूषण, गहना।

उदा० काछ नयौ इकतौ बर जेउर दीठि जसोमति रांज कर्‌यौ री। —रसखानि

जेट—संज्ञा, पु० [देश०] दोनों भुजाओं में भरने की क्रिया। मुहा० जेटभरन किसी व्यक्ति या वस्तु को दोनों भुजाओं के बीच में समा या भर लेना, अँकवार लेना, भेंटना।

उदा० भूलत नहि भट्ट कैसेहूँ भरनि सुपलकनि जेट की। —घनानन्द

यारी मोरी चोट भरैं। बिनु संके भेंटे, भरि भरि जेटैं। —सोमनाथ

जेटी—वि० [सं० जटिल] जटित, जड़ा हुआ।

उदा० नासिका मैं झमकै मुकुता, श्रुतिह झुमकी मनि कुंडल जेटी। —देव

जेठाई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० जेठ] बड़ाई, जेठापन, गुरुता, मर्यादा।

उदा० तोरी न जाइ जेठाइ सखीन को, देव ढिठाई करै नहिं थोरी। —देव

जेब—संज्ञा, स्त्री० [फा० जेब] सुन्दरता, सौन्दर्य।

उदा० जोबन जेब जकी सो कलारि छकी मद सौं झुकि झूमति डोलै। —देव

जेर—वि० [फा०] परास्त, पराजित।

उदा० टेर की जो ताकी बिपता को गहि जेर की है, बेर सी लुटावैं बीर सम्पति कुबेर की। —बलदेव

जेरी—वि० [फा० जेर] १. परास्त परेशान २. जकड़ा हुआ, बँधा हुआ ३. जेवर, रस्सी [संज्ञा, स्त्री०, हिं० जेवर]।

उदा० २. चित्र में चितेरी है कि सुन्दर उकेरी है कि जंजिरन जेरी है ज्यौ घरी लौं भरतु है। —सुन्दर

३. कैसे करियै भरियै कौ लौं कुल की कानि जैजर जेरी सों। —घनानन्द

जेल—संज्ञा, पु० [फा० जेर] जंजाल, परेशानी का काम, बंधन।

उदा० जिय गल डारि जेलनि। अजहुँ समुझि तजि मूरख पेलनि। —दास

रूप साँवरो साँचु है सुधा सिंधु में खेल लखि न सकैं अँखियाँ सखी परी लाज की जेल। —मतिराम

जेलि—संज्ञा, स्त्री० [फा० जेर] जंजाल, बन्धन, हैरानी, परेशानी।

उदा० लोक औ वेद दूहूनि की जेलि सो पेलि कै प्रेमहि में मिलिजैहै। —तोष

जेवन—संज्ञा, पु० [फा० जेब = सौन्दर्य] सौन्दर्य राशि, शोभाराशि।

उदा० सेवन उचित नर देवन अनोखी यह जेवन की मूल प्यारी मेवन की बेल है। —ग्वाल

जेहरि संज्ञा, स्त्री० [देश०] पायजेब पैर में पहनने का एक भूषण।

उदा० जेहरि को खटको जबही भयो सुन्दर देहरी आनि अटा की,। —सुन्दर

जेहरि मेरी धरैं नित जेहरि, तेहरि चेरी के रंग रचे री। — देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैतिवार—संज्ञा, पु० [हिं० जैत + वार] विजयी, जीतने वाला ।
उदा० इन्दु बार-बार देति बकसीस जैतिवारन कों, बारन को बाँधै जे पिछारी दुरे बचिकै ।
—देव

जैनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० विजयिन्] विजयी (जयिनी) ।
उदा०
इन्दु रविचन्द्र न फणीन्द्र न मुनीन्द्र न नरिन्द्र न नगोन्द्र गति जानै जग जैनी को । —देव
बान सों मैन कटाच्छ सों नैन सोये जग जैन बिख्यात हैं दोऊ । —रघुनाथ

जैयद—वि० [अ० जैयिद] प्रचण्ड, धुरंधर, बहुत बड़ा ।
उदा० जम को जहर, मानो जैयद कहर भयौ, हहर हहर चित्रगुप्त के करेजें होत । —ग्वाल

जैरज—संज्ञा, पु० [!] पिंडज, गर्भ से जीवित उत्पन्न होने वाला जीव ।
उदा० जैरज, अंडज, स्वेदज औ उद्भिभ्झ चहुँ जुग देव बनाई । —देव

जोगमाया—संज्ञा, स्त्री० [सं०] लक्ष्मी ।
उदा० जोगीस ईस तुम हौ यह जोग माया ।
—केशव

जोगीस—संज्ञा, पु० [सं० योगीश] शंकर, महादेव ।
उदा० जोगीस ईस तुम हौ यह जोगमाया ।
—केशव

जोट—संज्ञा, स्त्री० [सं० योटक हिं० जोड़ा] नायिका, सहचर ।
उदा० चंदन ओट करै पिय जोट, पै अंचल ओट दृगंचल मूँदै । —देव

जोतैं—संज्ञा, पु० [सं० ज्योति] तेज समूह, तेजस्विता की राशि ।
उदा० ए ही सुनि धाई, सुखदाई तें मिलन हेतु, आइगे तहाँई, कन्हाई अंग जोतैं ही ।
—ग्वाल

जोम—संज्ञा, पु० [अ० जोम] गर्व, अहंकार-उमंग उत्साह, जोश ।
उदा० सखि, नैनन को जनि जोम करो, इनके सम सोहत कंज बनो । —दूलह

जोयत—संज्ञा, पु० [?] एक सुगंधित पुष्प ।
उदा० माधवी न मालती में जुही में न जोयत में, केतकी न केबड़ा में, सरस सिताब में ।
—ग्वाल

जोयसी—संज्ञा, पु० [सं० ज्योतिषी] ज्योतिषी ।
उदा० फिरि हुलस्यो जिय जोयसी समुझ्यो जारज जोग । —बिहारी

जोर—संज्ञा, पु० [?] डोर बाँधने का बंद जो जेवर में लगा रहता है ।
उदा० हाथन लेत बिरी लटकैं मखतूल के फूँदनि जोर जवा के । —गंग

जोलना—क्रि० अ० [सं० ज्वल] जलना, संतप्त होना ।
उदा० फागु के आवत जैसी दसा भई सो रघुनाथ सुनौ मन जौलै । —रघुनाथ

जोला—वि० [हिं० जोड़] जोड़ा हुआ ।
उदा० करम करोरा पंच तत्वन बटोरा फेरि ठौर ठौर जोला फेरि ठौर ठौर पोसा है ।
—पद्माकर

जोलै—संज्ञा, स्त्री० [सं० ज्वाला] ज्वाला, आग, अग्नि ।
उदा० फागु के आवत जैसी दसा भई सो रघुनाथ सुनौ मन जोलै । —रघुनाथ

जोशन—संज्ञा, पु० [फार०] जिरह, कवच ।
उदा० चलत भई चकचौंध बाँधि बखतर बर जोशन । —केशव

जोह—संज्ञा, स्त्री० [हिं० जोहना = देखना] दृष्टि आँख ।
उदा० श्रीपति सुकवि महावेग बिन तुरीफीको, जानत जहान सदा जोह फीको धूम को ।
—श्रीपति

जौगरी—संज्ञा, पु० [?] घोड़े का एक दोष ।
उदा० राते ओठ जौगरीहीन । राती जीभ सुगंधनि लीन । —केशव

जौर—क्रि० वि० [फा० जौर] १. आवेश में, वेग पूर्वक २. जुल्म, अत्याचार [संज्ञा, पु०] ।
उदा० १. चौरे कलगी धरै, दौर बारिधि तरै, जौर चढ़ि लरै को इतहि भावै ।
—देव
२. नव नागरि तन मुलक लहि जोबन आमिर जौर । —बिहारी

ज्या—संज्ञा, स्त्री० [सं०] प्रत्यंचा, धनुष की डोरी ।
उदा० औरे भयौ रुख तातैं कैसे सखी ज्यारी, होति, बिफल भए हैं बंद कछू न वसाति है ।
—सेनापति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ज्यान—संज्ञा, पु० [अ० जियान] हानि, नुकसान क्षति, घाटा ।

उदा० उनको बहुरत प्रान हैं तुम्हैं न तनकौ ज्यान
—दास

ज्यारी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० जियारी] १. हृदय की दृढ़ता, साहस, जीवट, जिगरा २. जिलाने वाली ।

उदा० १. औरै भयो रुख तातैं कैसे सखी ज्यारी होति, बिफल भये हैं बंद कछू न बसाति है ।
—सेनापति

२. प्रान प्यारी ज्यारी घनआनंद गुननिकथा रसनौ रसीली निसि बासर करत गान ।
—घनानन्द

झ

झपना—क्रि० अ० [सं० झंप] १. उछलना, २. छिपना ३. लज्जित होना, झेंपना ४. बंद करना, ढकना [क्रि० सं०] ।

उदा० १. चुरइ सलिल, उच्छलइ भानु, जलनिधि जल झंपिय ।
—सेनापति

३. ता दिन ते वृजनायिका सुन्दरि, रंपति, झंपति कंपति प्यारी ।
—गंग

४. भयो सपेद बदन दृग झंपै । डोलत दंत गात सब कंपै ।
—चन्द्रशेखर

झांई—संज्ञा, स्त्री० [सं० छाया] १. प्रतिध्वनि गूँज २. परछांई, प्रतिबिम्ब ।

उदा० १. दीनी न दिखाई, छांह छोरध्यौ न छ्वाई परयौ बोल की सी झांई जाइ लंका के महल मैं ।
—सेनापति

झांकना—क्रि० अ० [हिं० झंकना] १. रोना, पछताना, व्याकुल होना २. खीझना, कुढ़ना ।

उदा० १. देहौं दिखाई तौ पैहौं घनो दुख, झाँको बिना जल की झखियानि मैं ।
—देव

झखराज—संज्ञा, पु० [सं० झषराज] घड़ियाल, नक्र, मगर ।

उदा० कहैं नंदराम भारी भीतिन के भौंरन मैं भूलि भूलि भ्रम झखराजन भिरा करै ।
—नंदराम

झझकाना—क्रि० सं० [हिं० झझक] डराना, भय उत्पन्न कराना ।

उदा० जज्यौ उझकि झाँपति बदन झुकति बिहँसि सतराय । तत्यौं गुलाब मुठी झुठी झझकावत पिय जाय ।
—बिहारी

झझकौन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झिझक] झिझक, संकोच, हिचक ।

उदा० कहै पद्माकर सु चंचल चितौनहूँ तें औझक उझकि झझकौन में फसत है ।
—पद्माकर

झपक—संज्ञा, स्त्री० [सं० झंप] शीघ्रता, जल्दी ।

उदा० इभ से भिरत, चहुँघाई सों घिरत घन आवत झिरत झीने झरसों झपकि झपकि ।
— देव

झपना—क्रि० अ० [सं० झंप] टूटना, एकबारगी गिरना ।

उदा० ठौर ठौर झूमत झपत भौंर भौंर मधु अंध ।
—बिहारी

झपने—संज्ञा, पु० [अनु० झप] आने की क्रिया, झपटना, आक्रमण करना ।

उदा० कहे पद्माकर सु जैसे हैं रसीले अंग तैसी ही सुगंध की झकोरन के झपने ।
—पद्माकर

झपाक—क्रि० वि० [सं० झंप, हिं० झप] जल्दी से, शीघ्र ।

उदा० उझकि झपाक मुख फेर प्यारो-रुख ओर हेरि हेरि हरषि हिमंचल पै अरिगो ।
—पजनेस

देखि दृग द्वै ही सों न नेकहू अघैये इन ऐसे झुकाझुक में झपाक झखियाँ दई ।
—पद्माकर

झपेटना—क्रि० अ० [सं० झंप] दबाना आक्रमण करना ।

उदा० किय बनबिहार इहिविधि स्यामघन त्रिभुवन रूप झपेटैं ।
—सोमनाथ

झबिया—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झब्बा] कपड़ों और गहनों में लगा हुआ तारों का गुच्छा ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० भजि गई लाज गाजि उठ्यो रतिराज जब चुरियाँ सु बिछियाँ औ झबियाँ बजी झकझक । —तोष

झमंक—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] प्रकाश, उजेला ।

उदा० झूमे झलाबोर झुकझूना पै झमंक झूम झपक झपाक झप झाकिन मैं झुलझुले । —पजनेस

झमक—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] प्रकाश, ज्योति, चमक ।

उदा० दीप की दमक, जीगनान की झमक छांड़ि चपला चमक और सौं न अटकत हैं । —सेनापति

झमकाना—क्रि० स० [हिं० झमक] पहनना, धारण करना २. चमकना ।

उदा० पीतम पठई बेंदुली सो लिलार झमकाइ सौतिन मैं बैठी तिया कछु ऐठी सी जाइ । —रसलीन

झमा—संज्ञा, पु० [हिं० झाम] १. छल, धोखा २. झांवा, पत्थर या ईंट का टुकड़ा जिससे पैर रगड़ा जाता है ।

उदा० १. कंदलै ध्याय के झमा खाय के शर लागे मृग जैसे । — बोधा

२. झीने करवारी सों झमाइ झमझमे झमा झमकति झांई सी झमकि भूपरन की । —देव

झमाकदार—वि० [हिं० झमाका + फा० वार (प्रत्य)] नखरे वाले, ठसक वाले ।

उदा० चतुर चमाक सो झमाकदार झुकि झाँके, चंचल चलाक, कोस कोक की कला के हैं । —ग्वाल

झमार—संज्ञा, पु० [?] वर्षा का जल ।

उदा० भूमि झमारहि दै घनआनँद राखत हाय बिसासनि सूखे । —घनानन्द

झरके—संज्ञा, पु० [हिं० झटका] झटका, चोट धक्का ।

उदा० अदले बदले भई बारहिबार, परे तरवारिन के झरके । —गंग

झरनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० झर] झड़ियाँ, लगातार वृष्टि, पानी की झड़ी ।

उदा० पजनेस झंझा झांझ झोकत झपाक झप झुराझूर झरनि झिरैं गे झुरवान में । — पजनेस

झरप—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झपट] लपट, झपट, प्रवाह, झकोर २. तेजी से [क्रि० वि०] ।

उदा० बँध्यो मन गंधी की सुगंध झरपन सो । —देव

२. झरपै झपैं कौंधे कढ़ै तड़िता तड़पै मनो लाल घटा में घिरी । —पजनेस

झरहरी—वि० [हिं० झरहरा] झँझरा वाला, छोटे छोटे छिद्र वाला ।

उदा० झुकि झुकि झूमि झूमि झिलि झिलि झेलि झेलि झरहरी झापन पै झमकि झमकि उठै । —पद्माकर

झर्प—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झरप] परदा, चिक, चिलमन ।

उदा० दिशा बारहों द्वारिया चूब खोलै । हरी लाल पीरी डरी झर्प डोलै । —बोधा

झराँ—क्रि० स० [हिं० झर होना] खोना, चोरी चला जाना, समाप्त होना ।

उदा० जकी ह्वै थकी हौं जड़ताई पागि जागि पीर, धीर कैसें धरौं मन सो धन झराँ गयौ । —घनानन्द

झवाँना—क्रि० स० [हिं० झांवा] झाँवे से पैर रगड़ना, या रगड़वाना २. काला पड़ जाना ।

उदा० २. झझकत हियैं गुलाब कै झँवा झँवैयत पाइ । —बिहारी

२ झीने करवारी सों झमाइ झमझमे झमा झमकति झांई सी झमकि भूपरनि की । — देव

झल—संज्ञा, पु० [सं० ज्वल] ज्वाला, आग, आँच, दाह ।

उदा० मेरु के हलत महि हलत महीध्र हालै महा-नागहालाहल झल उगिलत हैं । — गंग

झलकना—क्रि० अ० [हिं० झलक] चमकना, दीप्त होना ।

उदा० नैन छलकौंहै बर बैन बलकौंहै औ कपोल फलकौंहै झलकौंहैं भये अंग है । —दास

झलना—क्रि० अ० [हिं० झल्ल] बोलना, बकवाद करना ।

उदा० बीस बिसे बिष झिल्ली झलैं तड़ितौ तनु ताड़ित कै तरपै री । —दास

झला—संज्ञा, पु० [हिं० झड़] हलकी वर्षा, दँव-गरा २. समूह ।

उदा० १. चंडित मनोज कैसे झला भूमि भूमि आवैं । ठाकुर

हेम के हिंडोरनि झलानि के झकोरे मैं । पद्माकर

२. झमकत आवै झुंड झलनि झलान झप्यो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तमकत आवै तेगबाही और सिलाही है ।
——पद्माकर

हौं हूँ गई जान तित आइगो कहूँ ते कान्ह आन बनितान हूँ को झपकि झलो गयो ।
——पद्माकर

झलाझल— वि० [अनु०] चमकदार, चमकने वाले चमाचम ।

उदा० कंचन के कलस भराइ भरि पत्रन के ताने तुंग तोरन तहाँ ही झलाझल के ।
——पद्माकर

बातन बीच बड़ी है झलाझल पात्र करैं धर घूट के कल्ला । ——अज्ञात

अम्बर अमल मुख मंजुल सरद ससि, रूप की झलाझली बरफ हिम रितु की । ——ग्वाल

झलान——संज्ञा, पु० [?] झूला, दोला ।

उदा० ज्यों ज्यों तुम गाइ गहि-गुननि बिकासौ बन, ह्वै ह्वै अध ऊरध झलान के झकोरे मैं । ——द्विजदेव

झलाबोर——संज्ञा, पु० [हिं० झलमल] कलाबत्तू आदि से बुना हुआ साड़ी आदि का चौड़ा अंचल २ जरदोजी या कसीदे का काम ।

उदा० १. झूमे झलाबोर झुकझूना पै झमंक झूम झपक झपाक झप झाकिन मैं झुझुले ।
——पजनेस

झहनाना——क्रि० अ० [अनु०] १. रोएँ का खड़ा होना २. झनझन शब्द होना ।

उदा० १. गहन गहन लागे गावन मयूर माला- झहन झहन लागे रोम रोम छन में ।
—— रस कुसुमाकर

२. निझुकनि रैनि झुकी बादरऊ झुकि आए, देख्यौ कहौं झिल्लिनि की झाँई झहनाति है । ——आलम

झहरना——क्रि० अ० [अनु०] १. शिथिल पड़ना ढीला पड़ना २. झरझर शब्द करना ।

उदा० १. झहर झहर परै पासुरी लखाइ देह बिरह बसाइ हाइ कैसे दूबरे भये । —रघुनाथ

२. झहरि झहरि झीनी बूँद है परति मानो घहरि घहरि घटा घेरी है गगन में ।
——देव

झहरानां——क्रि० अ० [अनु०] झल्लाना, खिजलाना ।

उदा० ए ससिनाथ सुजान सुनो, सखियान सों पूछि चितै झहराति है । —सोमनाथ

झाँई— संज्ञा, स्त्री० [सं० छाया] झनकार, [हिं० झनकार] कांति, चमक ।

उदा० निझुकनि रैनि झुकी बादरऊ झुकि आए देख्यौ कहौं झिल्लिनि की झांई झहनाति है ।
——आलम

झांकनी— संज्ञा, स्त्री० [सं० झंकार] झनकार, ध्वनि, आवाज ।

उदा० झांकनी दै कर काकनी की सुनैं, काननि बैन अनाकनी कीने । ——देव

झंख——संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार का हिरन ।

उदा० ठाढ़े ढिग बाघ बन चीते चितवत दृग झांख मृग-साखा मृग रोझ रीझि रहे हैं । —देव

झाँझरियाँ——संज्ञा, स्त्री० [अनु०] पैजनी, पायल ।

उदा० झांझरियाँ झनकैंगी खरी खनकैंगी चुरी- तनकौ तन तोरे । ——दास

झाँझि——संज्ञा, पु० [हिं० झेंझ, झंझट] झंझट, अड़ियलपन, अड़न, झेंझ ।

उदा० रुक्यौ साँकरै कुंज-मग, करत झांझि, झकुरात । मंद-मंद मारुत तुरंग खूँदत आवतु जातु । ——बिहारी

पजनेस झंझा झांझ झोकत झपाक झप झुराझूर झिरनि झिरैंगै झुखान में ।
——पजनेस

झांवा——संज्ञा, पु० [सं० झामक] पत्थर का टुकड़ा या जली हुई ईंट, जिससे स्त्रियां अपने पैर की मैल छुड़ाती हैं ।

उदा० छाले परिबे कैं डरनु सकै न हाथ छुवाइ, झझकत हियैं गुलाब कै झँवा झँवैयत पाइ ।
——बिहारी

झाई——संज्ञा, स्त्री० [?] प्रतिध्वनि, गूँज ।

उदा० कुंज-कुंज सुखपुंज मधुप-गुंज कोकिला सुर की झाई । ——घनानन्द

झाप——संज्ञा, पु० [हिं० झड़प] पर्दा, चिक, चलमन ।

उदा झुकि झुकि झूमि झूमि झिलि झिलि झेलि झेलि, झरहरी झापन पैं झमकि झमकि उठै । ——पद्माकर

झाबर— संज्ञा, पु० [देश०] दलदल ।

उदा० नाही तौ न हील होन देरी झील झाबरनि । देव

झारना——क्रि० स० अनु० झर] तलवार चलाना ।

उदा० रायखेत जब झारन लागे । झुके निसान गये बढ़ि आगे । ——चन्द्रशेखर

तहाँ लच्छन सुजान झुकि झारैं किरवान
— खुमानकवि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह गैल है बिन मैन जस की हौंस
हथ्यारन झारिये । —पद्माकर

झारि—संज्ञा, पु० [बुं०] अमचुर १. जीरा, नमक आदि से निर्मित एक पेय २. एकदम ३ झुंड, समूह पदार्थ ।

उदा० १. पुनि झारि सो द्वै बिधि स्वाद घने ।
—केशव

कढ़ी झोर झोरी परसत बरजोरी भरे भाग झकझोरी झोरी झालि झबरे फिरैं । —देव

२. दीबो दधिदान को सु कैसे ताहि भावत है । जाहि मन भायो झारि झगरो गुपाल को । —पद्माकर

३. हीरन के हार जरतार झारि झमकत आज ही बियोग की विपति बिधि नासी है । —बेनी प्रवीन

झाल—संज्ञा, स्त्री० [सं० झाला] तरंग, लहर ।

उदा० तन स्याम के ऊपर सोभित यों लगि फूल रहे सतपत्तन के । जल झाल सरोवर मध्य मनो झलकैं प्रतिबिम्ब न छत्तन के ।
—आलम

झालरी—वि० [हिं० झालर] हरी भरी, प्रफुल्लित ।

उदा० आलबाल उर झालरी खरी प्रेम तरु डार ।
—बिहारी

झावर—वि० [सं० श्यामल] काला, श्याम, मलिन ।

उदा० रम्भा को रमा को इन्दुमा को औ तिलोत्तमा को उमा को रमा को की समा को हठी झावरो । —हठी

झिकाना—क्रि० स [हिं० धिकाना] संतप्त करना जलाना ।

उदा० भोर को चंद चितौत चकोर ह्वै, पौन झकोर ज्यों झारु झिकान्यो । —देव

झिकुराना—क्रि० स० [हिं० झकोर] झकोरना, २. झलमलाना, हिलना ।

उदा० कलि-काल पवन-झकोर जोर झिकुरात, इह मन-दीपक की लोय थिर क्यौं रहै ।
—नागरीदास

२. सेज सुख सिंधु के झकोरनि तैं झिकुरात कमल कली सी रस बिलसी अलिंद की ।
—नागरीदास

झिक्का—संज्ञा, स्त्री० [हिं० खीजना] प्रबल युद्ध, जोरों की लड़ाई ।

उदा० रन इक्का-इक्की झिक्का झिक्की फिक्का फिक्की जोर लगी । —पद्माकर

झिझिया—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] छिद्रों वाला मिट्टी का वह घट जिसे दीपक जलाकर क्वार मास में लड़कियाँ घुमाती हैं।

जालरंध्र मग ह्वै कढ़ै तियतनु दीपति पुंज ।

उदा० झिझिया कैसो घट भया दिनही मैं बन कुंज ।
—मतिराम

झिरना—क्रि० अ० [चरण] झरना, पानी आदि का गिरना ।

उदा० पजनेस झंझा झांझ झोंकत झपाक झप झुराझूर झरनि झिरैंगे झुरवान में ।
—पजनेस

इभ से झिरत, चहुँधाई से घिरत, घन आवत झिरत, झीने झरसों झपकि झपकि ।
—देव

झिरवाना—क्रि० स० [हिं० झड़ी] वर्षा कराना, पानी की झड़ी लगवाना ।

उदा० बोधा सुभान हितू सों कहै झिरवाइ कै झारि कै फेरि झिरैना । —बोधा

झिराव—संज्ञा, पु० [हिं० झरना] झड़ी, वृष्टि ।

उदा० बोधा सुभान हितू सों कहीवे झिराव कै झारि तें फेरि झिरैना । —बोधा

झिरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं०] झिड़की, फटकार, डाँट ।

उदा० पातरे अंग उड़ै बिनु पांखनु कोमल भाषनि प्रेम झिरी की । —देव

झिलकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झिड़की] डाँट, फटकार ।

उदा० झिलकी न जानै हिलमिल की न जानै बात हिलकी मैं सोम झिलमिल को उझलि परै ।
—ग्वाल

झिलना—क्रि० अ० [?] अघाना, तृप्त होना २. घुसना, प्रवेश करना ३. मग्न होना ।

उदा० झुकि झुकि झूमि झूमि झिलि झिलि झेलि झेलि झरहरी झापन पै झमकि झमकि उठै।
—पद्माकर

ब्रज सब अति आनंदनि झिल्यो ।
—नागरी दास

२. करि प्रेम वही की बटा करबी पतवारी प्रतीति कै लै झिलि हैं । —बोधा

घन ऐसे तन माँझ बिज्जुल बसन माँझ बग मोती माल माँझ चाह झिल्यो झिलजा ।
—ठाकुर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

झिलम—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] कवच, लोहे का बना एक झाँझरीदार पहनावा जो युद्ध में रक्षा के लिए पहना जाता था।

उदा० धरे टोप कुँडी कसे कौच अंगं झिलिम्मैं घटाटोप पेटी अभंगं। —चन्द्रशेखर

झिलमिल—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] एक प्रकार का बढ़िया बारीक और मुलायम वस्त्र।

उदा० उचके उचोहैं कुच झके झलकत झीनी झिलमिली ओढ़नी किनारीदार चीर की। —देव

झिली—संज्ञा पु० [सं० झिल्ली + न] झींगुर नामक कीड़ा।

उदा० मननात गोलिन की मनक जनु धुनि धुकार झिलीन की। —पद्माकर

झिल्यो—वि० [हिं० झिलना] तन्मय, मोहित, मग्न।

उदा० घन ऐसे तन माँझ बिज्जुल बसन माँझ, बग मोतीमाल माँझ चाह झिल्यो झिल जा। —ठाकुर

झीकने—वि० [देश०] चिकने, कोमल, २. बारीक। चीकने कपोल केस झीकने कुटिल कण्ठ मोतिन की माल मिले चम्पक चमेली के। —देव

झीना—वि० [सं० क्षीण] थोड़ा, कम २. बारीक महीन ३. पतली।

उदा० जौ तौ इतौ दुख पावति हौ तलफैं दृग मीन मनो जल झीने। —केशव

झीली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झड़ी] पानी की झड़ी, झिल्ली, जल की बूँदें।

उदा० देखो तौ झरोखन झकोरन झकोरै पौन झांपन मैं झालरि मैं झीली झहराति है। —नंदराम

झुकना—क्रि० अ० [देश०] क्रोध करना, नाराज होना।

उदा० आलम झुकति थोरी हँसे ते हँसति पुनि। —आलम

झुकति कृपान मैदान ज्यों उदोत मान। —गंग

झुकराना—क्रि० अ० [हिं० झकोर] झकोर लेना, झूमना, २. घोड़ा का आगे के दोनों पैरों को उठाना।

उदा० रुक्यौ साँकरैं कुंग-मग करतु झांझि झुकरातु। मंद मंद मारुत-तुरँग खूँदत आवतु जातु। —बिहारी

झुकारना—क्रि० [हिं० झोंका देना] झोंका देकर ढकेलना, हटाना।

उदा० गीषम गहर गनीम को, गारब गरब झुकारि।
चढ़यो प्रबल पावस नृपति,
दल बद्दल-बल धारि।
—चन्द्रशेखर

झुकाझुक—संज्ञा, पु० [अनु] दिव्य सौन्दर्य, अनुपम सुन्दरता।

उदा० देखि दृग द्वै ही सों न नेकहू अघैये, इन ऐसे झुकाझुक में झपाक झखियाँ दई। —पद्माकर

झुकामुकी—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] बहुत सुबह जब काफी अँधेरा रहता है, तड़के।

उदा० जानि झुकाझुकी भेख छिपाय कै गागरि लै घर से निकरी ती। —ठाकुर

झुखान—संज्ञा, पु० [हिं० झूरा] सूखी वस्तुएँ।

उदा० पजनेस झंझा झांझ झाँकत झपाक झप झुराझूर झरनि फिरैंगे झुखान में। —पजनेस

झुरहुरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झुरझुरी] कँपकँपी, कंपन।

उदा० हार बार बसन निहारन न पावै, मोर भौंरन चकोरन झगरि झुरहुरी लेति। —देव

झुराझूर—क्रि० वि० [अनु०] झरझर शब्द युक्त, २. लगातार, बराबर ३. वेग सहित।

उदा० पजनेस झंझा झांझ झोकत झपाक झप झुराझूर झरनि झिरैंगे झुरखान में। —पजनेस

झुरी—वि० [हिं० झूर] १ बेकार, निकम्मी, वक्र कुटिल [प्रा० झूर] २. निष्प्रयोजन ३. संतप्त।

उदा० १. कौन चतुराई करी जायकै कन्हाई वहाँ, कूबरी लोगाई करी और तो झुरी लगी। —ग्वाल

२. झारैं कर झुरी उर काम जुर झुरी लेत लाज फुरहरी। —देव

झुलझुला—वि० [हिं० झोल] ढीला, शिथिल, श्लथ।

उदा० झूमे झलाबोर झुक झूला पै झमंक झूम झपक झपाक झप झाकिन मैं झुलझुले। —पजनेस

झुलमुली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० झाला] एक प्रकार का भूषण जो कानों में पहना जाता है, झाला,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीपल पत्ता ।
उदा० झीनैं पट मैं झुलमुली झलकति ओप अपार । — बिहारी

झुल।झुल—वि० [हि० झलझलना] झलझलाती हुई, चमकती हुई ।
उदा० झुलाझुल्ल झूमैं सु झूलैं लदाऊ । मनो चंचला चौंधि कूदैं सदाऊ । — पद्माकर

झूझना—क्रि० अ० [हि० जूझना] जूझना, मरना ।
उदा० स्वारथ न सूझत, परारथ न बूझत, अपारथ ही झूझत, मनोरथ मयो फिरै । —देव

झूनरिया—संज्ञा, पु० [हि० झूना] लहँगा ।
उदा० अंग अंग अनंग तरंग मई, लखिये अंगिया यह झूनरिया । — बेनी प्रवीन

झूना– संज्ञा, पु० [देश०] घाघरा, लँहगा २. झीना, महीन, पतला ।
उदा० झूना की झकोरन चहूँधा खोरि खोरिन में खूब खुसबोइ के खजाने से खुलत जात । — पद्माकर
झूमे झलाबोर झुक झूना पै झमंक झूम झपक झपाक झप झाकिन मैं झुलझुले । — पजनेस

झूमरि—संज्ञा, स्त्री० [हि० झूमर] घेराव, घेरा, भीड़, समूह ।
उदा० सखिनि के संग में अनंग मद भीनी जापै, झूमरि सी परति अनंत उपमानि की ।। —सोमनाथ

झूरी—संज्ञा, स्त्री० [हि० झूर] १. शुष्कता, रुखाई, न्यूनता, कमी ।
उदा० तैं अब मेरी कही नहिं मानत राखति है उर जोम कछू री । सो सब की छुटि जात भट्ट जब दूसरो मारि निकारत झूरी । — बोधा

झेंटना—क्रि० अ० [हि० झेंपना] झेंपना, शरमाना, लजाना ।
उदा० चाल अटपेटी जात सखि लखि लेटी जात सकुचि सुझेटी जात छेटी जात सान की । —हंजारा से

झेंर—दे० "झेल" ।
उदा० लाजनि रचति झेंर भली अभिसार-बेर, हेरत वे भग, जाकी प्रीति सों पगति है । —कुमारमणि

झेरी—संज्ञा, स्त्री० [हि० झेल] १. व्याकुलता उद्विग्नता २. बखेड़ा, झगड़ा, झंझट ।
उदा० १. आनंदघन रसपियन जियन कौं प्रान पपीहा तरफरात है उर-झरी सौं । —घनानंद

झेल—संज्ञा, स्त्री० [फा० देर] १. विलंब, देर २. झगड़ा ।
उदा० १. व्यभिचारिन को केलि में झेल न रंचक होय लाज तजै उर उर भजै हरबरात है दोय । —बोधा
ताते नाथ झेल नहिं कीजै ।
मेरो एकरार सुनि लीजै ।
—बोधा

झेलना—क्रि० स० [हि० झेल] १. फेंकना, छोड़ना, डालना २. हटाना, रोकना ।
उदा० १ पै इक या छवि देखिबे के लिए मो बिनती कै न झकोरन झेलौ ।
—पद्माकर
२. पर्वत पुंज जिते उन मेले ।
फूल के तूल लै बानन झेले ।
—केशव

झेलाझेल—संज्ञा, स्त्री० [हि० झेल] किसी वस्तु को जल्दी जल्दी फेंकना २. ग्रहण, लेना ३. ठेला ठेल, धक्की धक्का ।
उदा० झेलाझेल झोरिन की मूठिन की मेलामेल रेलारेल रंग की उमंग सरसत है । — पद्माकर

झैं—वि० [हि० झावा] श्याम, काला ।
उदा० को सकै बरनि बारि-रासि की बरनि, नभ झैं गयौ झरनि, गयौ तरनि समाइ कै ।
—सेनापति

झोप— संज्ञा, स्त्री० [हि० झोंपा] झब्बा, गुच्छा, तारों का गुच्छा शोभा के लिए आभूषणों और कपड़ों में लटकाया जाता है ।
उदा० नंदराम कामिनी अतर तर कीन्हे बास केस पास गुंफित मुफित झोप झलकी । — नंदराम

झोपना—क्रि० अ० [सं० झंप] उछलना, कूदना मस्ती के साथ झूमना ।
उदा० गोपन के झुंड झोपै करैं चौपै चाँचरि मैं, तोपे देत अबिरन बन बाम गैल भौन । — बेनी प्रवीन

झोर—संज्ञा, पु० [हि० झालि] तरकारी का

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रस, शोरवा ।
उदा० कढ़ी झोर झोरी परसत बरजोरी ।
—देव

झोल—संज्ञा, पु० [सं० ज्वाल] भस्म, राख २. २. दाह, जलन ।
उदा० पापी कलापी के ये कढ़त बोल श्रुति छोल कीन्हे मन झोल डोल पुरवाई अरि है ।
—रघुनाथ

झौंक—संज्ञा, पु० [हिं० मुट्ठी] फंका, मुट्ठी ।
उदा० सोच भयो सुरनायक के जब दूसरि बार लियौ हरि झौंको । —नरोत्तमदास

झौड़ना—क्रि० स० [हिं० झौंर] फैलना, छाना ।
उदा० बीर नरप्पति के भुजदंड अखंड पराक्रम मंडप झौंडी ।
—केशव

झौर—संज्ञा, पु० [हिं० झपट] १. झपट, दबाने का भाव । २. तकरार, विवाद, डाँट फटकार [हिं० झांव] ।
उदा० रघुनाथ बूझति हौं बूझत सकोच लागै बिन बूझे चैन जात छेक्यौ सोच झौर सों ।
—रघुनाथ

झौरना—क्रि० अ० [अनु०] १. हिलना २. गूंजना ।
उदा० १. आम मौर झौरैं मौर झौरन पै झूमैं अली बिकल वियोगिन की तापन तवाई मैं ।
—ठाकुर

झौल—संज्ञा, पु० [हिं० झिल्ली] झिल्ली जिसमें बच्चे या अंडे रहते हैं, गर्भ, अंडा ।
उदा० कहै कवि गंग उड़ै झिल्ली झौल झांसिन में बासन अरुझि लील गोय भटकत है,
—गंग

ट

टंक—संज्ञा, पु० [सं०] १. एक तौल जो चार माशे की होती है; किंचित, थोड़ा [वि०] ।
उदा० १. छीरधि मैं पंक, कलानिधि मैं कलंक, यातैं रूप एकटंक ये लहैं न तव जसके ।
—भूषण

टंच—संज्ञा, स्त्री० [हिं० टांकना] सिलाई ।
उदा० नैन मुदै पै न फेर फितूर को टंच न टोभ कछू छियना है । —पद्माकर

टकोर—संज्ञा, स्त्री [सं० टंकार] साधारण चोट, सामान्य आघात, ठेठ ।
उदा० टप्पे की टकोर टक्करन की तड़ातड़ित माचैं जब कूरम करिदों की लड़ालड़ी ।
—पद्माकर

टगर—संज्ञा, पु० [हिं० टुकुर] किसी वस्तु को गौर से देखना, टकटकी बाँधने की क्रिया ।
उदा० सोभा सदन बदन मोहन को देखि जीजियै टगर टगर । —घनानंद

टट—अव्य० [सं० तट] तट, निकट, समीप ।
उदा० अटकावे मनु सु नटावै तनु टट आवै, हटक्यों न रहै हारी निपट हटकि कै । —आलम

टटकार—संज्ञा, पु० [हिं० टोटका] १. टोटका, टोना २. तत्काल, शीघ्र, तत्क्षण ।
उदा० १. लाल रहौ चुप लागिहै डीठि सु जाके कहूँ उर बात न भेटी । टोकत ही टटकार लगी रसखानि भई मनो कारिख पेटी ।
रसखानि

टटकी—वि० [देश०] तुरन्त की, ताजी ।
उदा० टटकी धोई धोवती चटकीली मुख जोति । फिरति रसोई के बगर जगर मगर दुति होति ।।
बिहारी

टटल बटल—वि० [अनु०] ऊटपटांग अंडबंड, निरर्थक
उदा० टटल बटल बोल पाटल कपोल देव दीपति पटल मैं अटल ह्वै के अटक्यो ।
—देव

टटोहना—क्रि० स० [हिं० टटोलना] जांच करना, परखना, देखना ।
उदा० जोहति कंचुकी पोहति माल, टटोहति है

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसना रद के छत । — बेनी प्रवीन

टप्पर—संज्ञा, पु० [हिं० छप्पर] भार, बोझ ।
उदा० दीनौ मुहीम को भार बहादुर छावो गहै क्यौं गयंद को टप्पर । —भूषण

टहल - संज्ञा, पु० [सं० तत् चलन] १. गृह कार्य, घर का काम २. सेवा ।
उदा० १. झमकि झमकि टहलैं करै लगी रहँचटे बाल । — बिहारी
महल टहल की चहल पहल है । जमुना लहरानि भरी लहलहै । — घनानंद

टाँक—संज्ञा, स्त्री० [हिं० टाँका] सूई ।
उदा० टाँक सी लाँक भई रसखानि सुदामिनि तें दुति दूनी हिया की । — रसखानि

टांड़—संज्ञा, स्त्री० [देश०] हाथ का भूषण, अनन्ता ।
उदा० (क) कहूँ हार कंकन हमेल टाँड़ टीक है —आलम
(ख) लूटती लोक लटैं सफूलेल, हमेल हिये भुज टाँड़ न होती । —देव

टामक— संज्ञा, पु० [अनु०] डुगडुगी नामक बाजा, डिमडिमी ।
उदा० दुंदुभि पटह मृदंग ढोलकी डफला टामक । मंदरा तबल सुमेरू खंजरी तबला धामक । — सूदन

टिप्पना—क्रि० अ० [?] चोट पहुँचाना, घाव करना ।
उदा० छुटे सब्ब सिप्पे करैं दिग्घ टिप्पै सबै सत्रु छिप्पे कहूँ हैं न दिप्पे । — पद्माकर

टप्पे—संज्ञा, पु० [हिं० टाप] धीरे-धीरे भिड़ना, उछाल, कूद, फलांग ।
उदा० टप्पे को टकोर टक्करन की तड़ातड़ित माचै जब कूरम करिदों की लड़ालड़ी ।
—पद्माकर

टिकासरो—संज्ञा पु० [हिं० टेक + सं० आश्रय] ठहरने का स्थान, शरण ।
उदा० मलैं, मल्ली, मालती, कदम्ब, कचनार चम्पा, चपेहू न चाहे चित, चरन टिकासरो । — देव

टिपरना—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] पिटारी ।
उदा० अपने अपने खोलि टिपरना पुतरी सब विस्तारी । —बकसीहंसराज

टिप्पारो— संज्ञा, पु० [हिं० टिप्पा] टीका, तिलक, टिप्पा ।
उदा० मोतिन की मुथरी दुलरी गर सोहत, सुन्दर सीस टिपारो । — नागरीदास

टीप— संज्ञा, स्त्री० [हिं० टीपना] गाने में ज़ोर की तान २. टंकार, घोर शब्द ।
उदा० १. जात कहूँ ते कहूँ को चल्यो सुर टीप न लागति तान धरे की । — रघुनाथ

टीपना— क्रि स० [सं० टिप्पनी] लिखना, अंकित करना, टाँकना ।
उदा० लीपी अबरख तें कै टीपी पुंज पारद तें कैंधों दुति दीपी चारु चाँदी के बरख तें ।
— ग्वाल

टीम— संज्ञा, स्त्री० [देश०] टीप, जोड़ बंद करने की क्रिया ।
उदा० वाको मन फाट्यो हुतो हों दे लाई टीम, बोलत ही जिहि विष बयौ निपट पातरी-जीभ । — बिहारी

टुक्का - संज्ञा, पु० [हिं० टोटका] टोना, टोटका, जादू, नजर ।
उदा० बाँके समसेर से सुमेर से उतंग सूम, स्यारन पै सेर टुनहाइन के टुक्का से ।
— पद्माकर

टुनवा—संज्ञा, पु० [?] दाना, फल ।
उदा० कंचुकी लाल उरोजन औं मुकुता-नथुनी मै बड़े टुनवा के । —तोष

टूकना—क्रि० स० [हिं० टुकड़ा] टुकड़े-टुकड़े करना, विदीर्ण करना ।
उदा० घन की चमूकें संग दामिनी हरू कें टूकैं, गरज चहूँकें, दूँके नाहर सी पारतीं ।
— ग्वाल

टूट—संज्ञा, स्त्री० [सं० भुट] घाटा, टूटा, नुकसान ।
उदा० घटै कीमत बोधा जो माल फिरै बंजिकै-बेवपार में टूट ठई । —बोधा

टूटना— क्रि० स० [सं० भुट] वेग के साथ प्रवाहित होना, बहना ।
उदा० काटे हय, गय, नरकंधर कबंधनि तें रुधिर की धारैं अध ऊरध टुटति है ।
—कुमारमणि

टेटी— संज्ञा, स्त्री० [हिं० टेंट] ऐंड़, मरोड़, घमंड ।
उदा० जाके सुख पेटी जात चन्द्र छबि मेटी जात छबिहू धुरेटी जात टेटी जात भानु की ।
—'हजारा' से

टेम—संज्ञा, स्त्री० [हिं० टिमटिमाना] दीपशिखा, दिए की लौ ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० दूबरी भई है देह इति न गई है बाल तब ही मसाल अब दिया की सी टेम है। —रघुनाथ

टैंठी—वि० [प्रा० टेटा] चंचल, अस्थिर।
उदा० पैठत प्रान खरी अनखोली सुनाक चढ़ाएई-डोलत टैंठो। —घनानन्द

टोडिस—वि० [?] शरारती, बदमाश।
उदा० टोडिस नयो भयो डोलत आनंद घन तिन ही सों पगि खगि जिनसों पूजी जियआस। —घनानंद

टोड़िक—वि० [सं० तुंदिक] पेटू, पेटवाला।
उदा० टोड़िक ह्वै घनआनंद डाँटत काटत क्यौं नहीं दीनता सों दिन। —घनानन्द

टोम—संज्ञा, पु० [हिं० डोम] टोंका।
उदा० नैन मुदै पै न फेर फितूर को टंच न टोम कछू छियना है। —पद्माकर

टोभ देना—क्रि० स० [देश०] किसी फटी वस्तु को जोड़ना, बन्द करना, सी देना।
उदा० बैरिनि जीभहि टोभ दै री मन बैरीको भूँजि के मौन धरौंगी। —देव

टोया—संज्ञा, पु० [हिं० टोना] टोटका, टोना, नज़र।
उदा० भूषन वे मनि मोतिन के लखि, सौतिन के उर लागत टोया। —देव

टोह—संज्ञा, स्त्री० [देश ?] खोज, खबर।
उदा० और ठौर कहूँ टोहे हू न अहटाति है। —आलम

टोहना—क्रि० स० [हिं० टोह] खोजना, टटोलना, २. छूना।
उदा० बृन्दा सी वृन्द अनेक छली तहँ गूजरी-नेह सों को अंग टोहै। —ठाकुर

टौर—संज्ञा, पु० [हिं० टेर ?] दाँव, घात, अवसर २. जाँच, थाह, परीक्षण।
उदा० यह औसर फाग को नीको फब्यौ गिरिधारी हिले कहूँ टौरनि सों। —घनानन्द

ठ

ठटना—क्रि० अ० [हिं० ठाठ] सज्जित होना, शोभा पाना, सजना।
उदा० दमकि दमकि जाति दामिनी चहूँघा चारु चमकि चमकि चूनरी में अंग ठठि उठै। —ऋषिनाथ
संगति कै फनि की, मनि सीस तैं चाहत, देव सुकैसे ठटैगी। —देव

ठट्ठ—संज्ञा, पु० [हिं० ठट] १. समूह, झुंड २. बनाव, सजावट, रचना।
उदा० १. ठट्ठ मरहट्टा के निघट्टि डारे बानन सौं, पेस कसि लेत हैं प्रचंड तिलगाने की। —सोमनाथ
२. उतै पात साहजू के गजन के ठट्ठ छूटे, उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन कारे हैं। —सोमनाथ

ठठकना—क्रि० अ० [सं० श्रेष्ठ] स्तंभित होना, डरजाना, एक बारगी रुक जाना।
उदा० ठहरैं नहिं डीठि फिरै ठठकी इन गोरे कपोलन गोलन पै। —ठाकुर

ठठुकना—क्रि० अ० [हिं० ठिठुकना] ठहरना चलते-चलते सहसा रुक जाना।
उदा० प्यारे सुजान समीप कों बाल चलै ठठुकै मुरिकै मुसिकाति है। —सोमनाथ

ठभरना—क्रि० स० [बुं०] धोखा देना, छलना।
उदा० काहे को तुम हम को लालन दबरत ठभरत ठाढ़े। —बकसी हंसराज

ठयना—क्रि० अ० [अनुष्ठान] १. स्थित होना, खड़ा होना, ठहरना लगना, जमना २. करना, ठानना।
उदा० १. इतनी सुनि दीन मलीन भई, मुख मोहनी ही की चितौत ठई। —देव
चित दै चितऊँ जित ओर सखी तितनंद किसोर की ओर ठाई। —देव
२. आलम कहत आली अजहूँ न आये पिय कैधौं उत रीत बिपरीत बिधि ने ठई। —आलम

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ठयो— वि० [सं० अनुष्ठान] स्थित, ठहरा हुआ, बैठा हुआ ।
उदा० कंचन के कलसा कुच ऊँचे समीपहि मैन महीप ठयो है । —देव

ठरना— क्रि० अ० [सं० स्तब्ध] ठहर जाना, रुकना, खड़ा हो जाता, २. स्तब्ध होना ।
उदा० राति कै बुलाई प्यारी अनंदी अकेली आई देखि कै कन्हाई आपु लेन आगे ठरिगो । —रघुनाथ

ठरी—वि० [हिं० ठरना] अत्यन्त शीतल ।
उदा० अरी सीअरी होन को ठरी कोठरी नाहिं । जरी गूजरी जाति है, घरी दूघरी माहिं । —दास

ठलवारी—संज्ञा, स्त्री० [?] हँसी-मजाक, ठट्ठा बाजी ।
उदा० तोहि ठलवारि घरबसै न जानत बात बिरानी । —घनान्द

ठवीजना—क्रि० सं० [हिं० ठानना=रखना] रखना, स्थापित करना ।
उदा० द्वै कोठा दोहरो लिखि लीजै । तातर दोहरो तीन ठवीजै । —दास

ठहकना—क्रि० अ० [हिं० ठहरना] ठहरना, रुकना, स्थिर होना ।
उदा० तुंड काटि मुंड काटि जोसन जिरह काटि, नीमा, जामा जीन काटि जिमी आनि ठहकी । —गंग

ठहकाना—क्रि० स० [सं० स्थग, प्रा० ठय] बन्द करना, रोक रखना ।
उदा० पूरब पौन के गौन गुमानिनि नंद के मंदिर में ठहकाई । गावती काम के मंत्र मनो गन जंत्रन सो गहकाई । —देव

ठाँठ—वि० [अनु०] वह गाय या भैंस जो दूध न देती हो २. नीरस, जो सूख गया हो ।
उदा० भूपति मँगैया होत, ठाँठ कामधेनु होत, गैयर झरत मद, चेरो होत चाँटी को । —गंग

ठाई—संज्ञा, पु० [हिं० ठय, सं० अनुष्ठान] १. सत्य २. अनुष्ठान, संकल्प, ३. स्थान ४. समीप ।
उदा० १. पान भाखे मुख नैन रची रुचि, आरसी देखि, कहौं यह ठाई । —केशव

ठार—संज्ञा, पु० [हिं० ठाँव] स्थान, जगह ।
उदा० सो आधेई पग छिति मँझार । उघरे हैं देखौ ठार ठार । —सोमनाथ

ठाली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० निठल्ला] बैठकी, टाल मटोल, आना कानी ।
मु० ठाली देना—बैठकी देना, तमाशा देखना, आना कानी करना, किसी कार्य में टाल मटोल करना ।
उदा० कहा कहौं आली खाली देत सब ठाली पर मेरे बनमाली को न काली तें छुड़ावहीं । — रसखानि

ठिकु—वि० [हिं० ठीक] स्थिर, ठहरा हुआ ।
उदा० राति द्यौस हौंसे रहै, मानु न ठिकु ठहराइ । —बिहारी

ठिगारी—संज्ञा, पु० [देश०] एक बरसाती कीड़ा पांखी ।
उदा० राती परी बरषै ठिगारी उड़ै धुवाँधार, ऐसी भाँति मादौं आली भोर ही तें भोध्यो है । —गंग

ठिर—संज्ञा, स्त्री० [सं० स्थिर] गहरी सरदी, अत्यधिक ठंडक ।
उदा० 'ग्वालकवि' बरफ बिछायत कुहर दल, ठिरनि प्रबल, नीकी नौबत बजाई है ।

ठिव्व—संज्ञा, पु० [हिं० ठाँव] स्थान, ठाँव ।
उदा पिक्कत इक्कन इक्क ठिव्व तजि लिक्कन तक्कत । —पद्माकर

ठीहैं—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] हिनहिनाहटें, घोड़ा की आवाज ।
उदा० छैंडो हैं तुरंगान ने तेज ठीहैं । मनौ सत्रु पै हंक मीचैं उठी हैं । —पद्माकर

ठुमकी—वि० [?] नाटी, छोटे कद वाली ।
उदा० जाति चली बृज ठाकुर पैं ठमकाँ ठमकाँ ठुमकी ठकुराइन । —पद्माकर

ठूरहुरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ठरन] कँपकँपी, कम्पन ।
उदा० लूटि सी करति कलहंस युग देव कहै टूटि मुति सरी छिति छूटि ठुरहुरी लेति । —देव

ठेगा—संज्ञा, स्त्री० [देश०] छोटी लाठी ।
उदा बंदीसुत तेही समय आयौ केसव एक ठेगा कर कौपीन कटि उर अति अमित बिबेक । —केशव

ठेंठी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] गाँठ, ग्रंथि ।
उदा० गाँठि से कठोर कुच जोबन की ठेंठी है । —आलम

ठेवा—सज्ञा, स्त्री० [हिं० ठेस, ठेहा] ठेस, ठोकर, ठेहा, धक्का ।
उदा० हाथी हथियार हय गय ग्राम धाम घोरे भूषन बसन छुटि जैहैं नैंक ठेवा पौ । —ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ठोठ—वि० [हिं० ठूंठ=सूखा वृक्ष] जड़, निःसार
उदा० पुनि लगे फरकन होठ। रहि गईं फिर जिम ठोठ। —सोमनाथ
ठोढ़े—संज्ञा, पु० [हिं० ठौर] स्थान, जगह।
उदा० कौंधत दामिनि कूकत मोर रहैं मिलि भेकी भयानक ठोढ़े। —रघुनाथ
ठोली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ठठोली] हँसी, दिल्लगी।
उदा० अजों मसि भीजी नहीं ऐसी मन बसी बातैं, बोली ठोल हाँसी के कन्हाई दिन आगे हैं। —आलम
ठौका—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ठोकरा] चोट, प्रहार।
उदा० यथा चोर को चेत भूल जात पनहीं मिलै। भरि आये दोउ नैन गहे आइ ठौका लग्यौ। —बोधा
ठौन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ठवनि] मुद्रा, ढंग।
उदा० बैन खुले मुकुले उरजात जकी विथकी गति ठौन ठई है। —दास

ड

डंबर—संज्ञा, पु० [सं०] सजावट, आडंबर।
उदा० तापर संवारयो सेत अंबर को डंबर सिधोरी स्याम संनिधि निहारी काहू न जनी। —दास
डकना—क्रि० अ० [हिं० डाँकना=पार करना] पार होना, व्यतीत होना।
उदा० सुनि उद्धव मद्धि वसंत वसंत सु मास न कोउ डकै तन में। —सूरति मिश्र
डगल—संज्ञा, पु० [प्रा०, हिं० डेल] ढेला, रोड़ा ईंट या पाषाण का टुकड़ा।
उदा० चिरी, चुगत कोइ डगल उठावै। जिव तब चिरिया कौ उडि जावै। —जसवंतसिंह
डगैना—संज्ञा, पु० [बुं०] बांस की लम्बी छड़ी जिसमें लासा लगा कर बहेलिया लोग पक्षी पकड़ लेते हैं।
उदा० मोर मुकुट की टटिया लीन्हें कीन्हें नैन डगैना। चितवनि चेंपु लगाय पलक में बिधवत खंजन नैना। —बकसीहंसराज
डडा—संज्ञा, पु० [?] हाथ का एक आभूषण, कंगन।
उदा० गोरे डडा पहुँचानि बिलोकत रीझि रंग्यौ लपटाय गयौ है। —घनानन्द
डरना—क्रि० अ० [हिं० डालना] पड़े रहना, २. डर जाना।
उदा० आंखन के मारे कैयो लाखन डरे रहैं। —ठाकुर
इकली डरी हौं घन देख कै डरी हैं, खायर विष की डरी हौं घनस्याम म जाइहौं। —सेनापति
डरौल—वि० [हिं डर] डरपोक, कायर।
उदा० अमल कठोरे गोरे चीकने उतंग भौरे बरबस मोरे मन नेक ना डरौल ये। —सिवनाथ
डहकना—क्रि० अ० [हिं० दहाड़] दहाड़ मारना, जोर से चिल्लाना।
उदा० ताल देत भैरव पिसाच, मिलि प्रेत डहक्कै। —चन्द्रशेखर
डहारना—क्रि० स० [हिं० डाहना] डाहना, जलाना तंग करना।
उदा० छावैं ना छराक छिति छोर लौं छबीली छटा छंदन छया मैं पौन डारन डहारैं ना। —नन्दराम
डाँडरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० डिंब] लड़की।
उदा० बाहिर पौरि न दीजिये पाउँरी बाउरी होय सु डाँडरी डोलै। —देव
डांग—संज्ञा, पु० [?] १. पहाड़, पर्वत, २. पहाड़ी जंगल।
उदा० दान साहि जू के बैर बैरिन की बरनारि, भजि भजि सृंग चढ़ी एते ऊँचे डाँग के। डाँग चौकिया पहुँचे सेख। गंगा— बीर सिंघ देख्यौ सुभवेख। —केशव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डाटना—क्रि० स० [हिं० डाट] संतुष्ट करना, बुझाना, २. कसकर भरना, खूब पेट भर खाना।
उदा० ग्वाल कवि सुन्दर सुराही फेर, सोरा मांहि, ओरा को बनाय रस प्यास डाटियत है।
—ग्वाल

डाढ़—सं० पु० [सं० दंष्ट्र] दाँत, चौभड़।
उदा०—धँसिकै धरा के गाढ़े कोल की कड़ाके डाढ़े आवत तरारे दिगपालन तमारे से
—भूषण

डाढ़े—वि० [सं० दग्ध०] जले हुए, संतप्त।
उदा० गोरस लै सब गोप चले सिगरे बृज लोग बियोग के डाढ़े। —देव

डाबर—संज्ञा, पु० [सं० दभ्र] तलैया, गड़ही २. गंदा पानी।
उदा० अग्नि होत जल रूप सिंधु डाबर पद पावत। होत सुमेरहु सेर स्यंघ हू स्यार कहावत। —ब्रजनिधि

डाबरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० डिंब] लड़की, नवोढ़ा।
उदा० तरुनी की डग कहाँ मुनही डुलावै सुर, मुरली के सुनत डुलावै डाबरी। आलम

डासन—संज्ञा, पु० [सं० दंशन] . दंशन, काटने की क्रिया २. बिछौना।
उदा० बासन बास भये विष केसव डासन डासन की गति लीने। —केशव

डिढ़—वि० [सं० दृढ़] दृढ़, अटल।
उदा० कैयो देस परिब्रढ़ कैयौ कोट-गढ़ी-गढ़ कीन्हे अढ़ अढ़ डिढ़ काहू में न गति है।
—भूषण

डिढ़ाना—क्रि० स० [सं० दृढ़] स्थिर करना, दृढ़ करना, जमाना।
उदा० अरु इक भृकुटी कुटिल डिढ़ायें। मनु मन्मथ कौ चाप चढ़ायें। —सोमनाथ

डिलारे—वि० [हिं० डील + वार] डीलडौल वाले, बड़े कद वाले।
उदा० बलक्कैं झलक्कैं ललक्कैं उमंडैं। बुखारेहु के हैं डिलारे घुमंडैं। —पद्माकर

डीबी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० डिब्बा] मिद्दा-पत्र, एक छोटा ढक्कनदार बर्तन।
उदा० जोगही गरीबी, तौ गुमान करि लीबी कहा, हाथ गही डीवी, तब बादी अरु बीबी कहा। —देव

डुंड—संज्ञा, पु० [सं० दण्ड] ठूँठ, वह पेड़ जो सूख गया हो।
उदा० देव जू अनंग अंग होमि कै भसम संग, अंग अंग उलह्यो अखैबर ज्यों डुंड मैं।
—देव

डुंडि—संज्ञा, पु० [सं० द्वंद्व] झगड़ा, लड़ाई।
उदा० चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि डुंडि मचत जहँ। —भूषण

डेल—संज्ञा, पु० [हिं० ढेला] ढेला, कंकड़।
उदा० डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच लोगन कवित्त कीबो खेल करि जानो है।
—ठाकुर

डोंगर—संज्ञा, पु० [सं० तुंग] पहाड़ी, पर्वत २. टीला।
उदा० कोपि कुँवर मधुसाह हनिय हथ्थी मतवा-रिहु। कटिय दंत जुर बांह डील डोंगर से डारिहु। —केशव

डोडा—संज्ञा, पु० [सं० तुंड] बड़ी इलायची के आकार का फल।
उदा० कामरी फटी-सी हुती डोंडन की माला, ताक, गोमती की माटी की न सुद्ध कहूँ माटकी। —नरोत्तमदास

डोरैं—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] बूँदें।
उदा० डोरैं जलधरन की सरन हिलोरैं आजु, घनन की घोरैं धरा फोरें कढ़ी जाती हैं।
—चातुर कवि

डौर—संज्ञा, पु० [हिं० डौल] १. रचना, बना-वट, ढंग २. प्रयत्न, मार्ग, ढब।
उदा० १. केसर की खौरि करि कुंडल मकर-डौर कान मैं पहिरि कान्ह बंशी अधरा धरो।
—तोष
२. उतर हेत इहि प्रस्न के, रचो पताका डौर।
—दास

डौल—संज्ञा, पु० [हिं० डोल] बरावरी, युक्ति, उपाय।
मुहा० डौल बाँधना, युक्ति बैठाना; बराबरी करना, उपाय करना।
उदा० पवन को तोल करै, गगन को मोल करै, कवि सों बाँधहि डोल ऐसो नर भाट है।
—गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ढ

ढंपना—क्रि० स० [हिं० ढाँपना] ढाँपना, ढकना, छिपाना ।

उदा० केहू चली छुटि कै लुटि सी, अँग कंपत ढंपत सीस किये नत । —बेनी प्रवीन

ढई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ढहना = गिरना] धरना देना, आग्रह ।

उदा० सुख मूल गये दुख मूल लये पुनि पापरु पुण्य छड़ाइ दई । कबौं काम ना क्रोध औ लोभ गहे समुझै सपने की बदी की ढई । —बोधा

ढगरना—क्रि० अ० [हिं० ढाल] ढलना, बहना, नष्ट होना ।

उदा० औरन सौं बतराइ सकै न, छुधा अरु-नींद तृषा ढगरी है । —सोमनाथ

ढरारा—वि० [हिं० ढार] चंचल, लोल, हिलने वाला ।

उदा० केसरिया पट, केसरि खौर, बनौ गर गुंज को हार ढरारो । —रसखानि

ढरारे—वि० [हि० ढलना] ढलने वाले, किसी की ओर शीघ्र ही द्रवीभूत या आकर्षित होने वाले ।

उदा० नीके, अनियारे, अति चपल, ढरारे, प्यारे, ज्यौं-ज्यौं मैं निहारे त्यौं त्यौं खरौ ललचात है । —सेनापति

ढलैत—संज्ञा, पु० [हिं० ढाल + ऐत (प्रत्य०)] ढाल लेने वाले, सेना, रक्षक ।

उदा० चोर सों छिपि हौं चल्यो यह जानि चित्त-लजाइ । देखि द्वार ढलैत गण तब रहे मोह चढ़ाइ । —गुमान मिश्र

ढांगन—संज्ञा, पु० [हिं० डंग] छुहारा, खजूर ।

उदा० ढाँगन कै रस के चसके रति फूलनि की रसखानि लुटाऊँ । —रसखानि

ढानौ—क्रि० स० [हिं० ढाहना] प्रवाहित करना, बहाना, करना ।

उदा० जानै न बात तिन दै मन बांछित श्री जिन सों हित ढायौ । —सोमनाथ

ढार—क्रि० वि० [हिं० ढाल] ढाल से, सुंदर चाल ढाल से ।

उदा० ढरकि ढार ढुरि ढिग भई ढीठि—ढिठाई आइ । —बिहारी

ढारना—क्रि० स० [हिं० ढालना] १. झुकाना २. ढालना ।

उदा० १. ढारैं निज कंधनि, नवल सुगंधनि अरु मनि-बंधन-कनक करैं । —सोमनाथ

ढिग—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] १. गोटा, संजाफ २. पास, निकट ।

उदा० १. लांक की लचक लसै लहँगा की ढिग ढुरै चूरी ही में चाहि चूर भयो वाही घरी को । —आलम

ढिरना—क्रि० अ० [हिं० ढरना] १. गिरना, चू पड़ना २. ढलना ।

उदा० १. भने समाधान अभिमानी हनुमान मैं मैं, पौन-चक्र फेरा लगि ढेरा सो ढिरत भो । — समाधान

ढीलना—क्रि० स० [हिं० ढीला] बंधन मुक्त करना, छोड़ना, एक स्थान से दूसरे स्थान जाने के लिए मौका देना ।

उदा० बिसवासिनि सासु निगोड़ी ननंद न गेह सो नेकऊ ढीलतु है । - बेनी प्रवीन

ढुंकना—क्रि० अ० [देश०] किसी बात को सुनने के लिए आड़ में छिपना, २. प्रवेश करना । मु० ढूंका देना—छिपकर सुनना ।

उदा० दुखहाइनि चरचा नहीं आनन आनन आन । लगी फिरति ढूंका दियें कानन कानन कान । —बिहारी

२. देव मधुकर ढूक ढूकत मधूक धोखे, माधवी मधुर मधु लालच लरे परत । —देव

ढुरकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ढरकी] जुलाहों का एक औजार, जिससे बाने का सूत फेंका जाता है ।

उदा० देव कर जोरि कर अंचर को छोर गहि,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छाती मूठि छूटति न नीठि ठनि ढुरकी ।
—देव

ढुरना—क्रि० अ० [हिं० ढलना] अनुरक्त होना, प्रसन्न होना, आसक्त होना ।

उदा० लांक की लचक लसै लहँगा की ढिग ढुरै चुरी ही में चाहि चूर भयो वाही घर को । —आलम

ढरकि ढार ढुरि ढिग भई ढीठि ढिठाई आइ । —बिहारी

ढुराना क्रि० स० [हिं० ढाल] १. चलाना, फिराना, मटकाना, २. झलना, हाँकना, [हिं०, डुलाना] ।

उदा० . लोचन ढुराय, कछू मृदु मुसक्याय, नेह भीनी बतियानि लड़काय बतराय हौ ।
—घनानन्द

२. बीजनौं ढुरावती सखीजन त्यौं सीतहूँ मैं ।
—देव

ढूक—संज्ञा, पु० [प्रा० ढुक्क] दाँव, घात, ताक, अवसर ।

उदा० देव मधुकर ढूक ढूकत मधूक धोखे, माधवी मधुर मधु लालच लरे परत । —देव

छैल भये छतियाँ छिरकौ फिरौ कामरी ओढ़े गुलाल कों ढूके । —पद्माकर

ढूकना—क्रि० अ० [प्रा० ढुक्क] प्रवृत्त होना, तन्मय होना, लगे रहना ।

उदा० देव मधुकर ढूक ढूकत मधूक धोखे माधवी मधुर मधु लालच लरे परत । —देव

ढूरी—संज्ञा, स्त्री [हिं० ढोरी] धुन, रट ।

उदा० निकस जु सबै लरिका हठ सों, इन नैननि आइ कै लाइहै ढूरी । —गंग

ढेरा—संज्ञा, पु० [हिं० ढेला] ढेला, मिट्टी का टुकड़ा, कंकड़ ।

उदा० मेघन को राखै ढेरा, तख्त का लुटावै डेरा-मन का सँभारे झेरा, ऐसो नर भाट है ।
—गंग

ढोक—संज्ञा, पु० [हिं० झुकना] नमन, नमस्कार, दण्डवत ।

उदा० दया सबन पै राखि गुरन के चर- न ढाकत ।
—अजनिधि

ढोर अव्य० [हिं० ढुरना] १. साथ, पीछे २. पीटने की क्रिया [सं० ढोल] ।

उदा० १. निसि द्योस खरी उर माँझ अरी, छबि रंग भरी मुरि चाहन की । तकि मोरनि त्यों चख ढोर रहे, ढरिगौ हिय ढोरनि बाहनि की । —घनानन्द

२. कहै जगंमनि माथौ ढोरि, यह सब राम-साहि का खोरि । —केशव

ढोरना—क्रि० स० [प्रा० ढोयण] १. भेंट करना, देना, गिरना, डालना २. प्रवाहित करना, बहाना ३. हिलाना, चलाना ।

उदा० १. रीझनि प्रान अरगजा ढोरि करैगी आनंदघन ख्याल । —घनानंद

कोऊ बाल गुलाल लै लालैं भरै, कोऊ कुंकम सीस तैं ढोरत है । — सूरति मिश्र

२. अंगनि रंग-तरंग बढ़ी सु किती उपमानि के पानिप ढोरति है । —घनानन्द

३. कारन कौन सीस इन ढोर्‌यो । मोहि देखि अपनौ मुख मोर्‌यौ । —जसवंत सिंह

ढोरनि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ढाल] १. ढर्रे, ढंग २. ढलने की क्रिया, बहना, मुड़ना ।

उदा० १. तकि मोरनि त्यों चख ढोर रहे, ढरिगौ हिय ढोरनि बाहनि की । घनानन्द

ढोलिया—संज्ञा, पु० [हिं० ढोल] ढोल बजाने वाला, नट का सहायक ।

उदा० ढोलिया यों कहै हौं न बदौं इत आपु दिवैयन के कन फोरत । —बोधा

ढोलै—संज्ञा, पु० [हिं० ढोर] १. पास निकट, २. किनारा ।

उदा० मेरे दोष देखौ तौ परेखो है अलेखो एजू मीन ढोलै निधि कैसें बूझियत गादरौ ।
—घनानन्द

ढोवा—संज्ञा, पु० [?] आक्रमण, चढ़ाई ।

उदा० मनहु पर्वतन अति बल भयौ । इन्द्रपुरी कौ ढोवा ठयो । —केशव

ढौका—संज्ञा, पु० [देश०] हिचकी घिघ्घी २. प्यास ।

उदा भरि आए दोउ नैन गरे आइ ढौका लग्यो ।
—बोधा

ढौर—संज्ञा, पु० [बुं०] ढंग, तरीका ।

उदा० चाल न वा चरचान वा चातुरी वा रसरीति न प्रीति को ढौर है । —ठाकुर

ढौरी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] आदत, रट, धुनि ।

उदा० ढौरी कौन लागी ढुरि जैबे की सिगरोदिन छिनु न रहत घरै कहौं का कन्हैया को ।
—आलम

ढोरी लाई सुनन की कहि गोरी मुसुकात ।
—बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त

तंकित—वि० [सं० आतंकित] आतंकित, भयभीत, संत्रस्त ।

उदा० साजि चल्यो विक्रम समर्थ दलदीह दिग्गज तिनके दंतन दरे से दीजियतु हैं ।
पारवार वार के फुहारे से बढ़त देखि,
तंकित दिगीसन के हिय सीजियतु है ।
—बोधा

तंड—संज्ञा, पु० [सं० तांडव] तांडव, नृत्य ।

उदा० बहत गुलाब के सुगंध के समीर सने परत फुही हैं जल यंत्रन के तंड की ।
—'शृंगार संग्रह' से

तंत—संज्ञा, पु० [सं० तंत्र] १. उपाय, आधार सहारा २. घात, दाँव ३. निश्चयी, ।

उदा० १. पिय विदेश हिय बिरह युत किहि जीवै को तंत । —बोधा
कछु तंत नहीं बिनु कंत भट्ट अबकी धौं बसंत कहा करि है । —बोधा

२. त्यों पद्माकर आइ गो कंत इकंत जबै निज तंत में जानी ।
—पद्माकर

३. नोन उबारन सीसते कियो लरन को तंत ।
—केशव

तंबूर—संज्ञा, पु० [फा० तंबूरः] एक तार वाला बाजा, जिसमें नीचे की ओर तुंबी होती है ।

उदा० काम के कंगूरे छबिदार हैं तंबूरे ऐसे कैधौं मनभावती नितंब ये तिहारे हैं ।
—पजनेस

तंभन—संज्ञा, पु० [सं० स्तंभ] शृंगाररसान्तर्गत स्तंभ नामक भाव ।

उदा०—आरंभन तंभन संदभ परिरंभ रन कच ग्रह सरंभन चुंबन घनेरेई । —देव

तंभित—वि० [सं० स्तंभित] निश्चल, सुन्न, निःस्तब्ध, अवरुद्ध ।

उदा० जगमातक धुनि बात तंभित गात है रही मौन है । —देव

तंत्री—वि० [सं० तंत्र] १. खानदानी, परिवार वाले २. वीणा ।

उदा० १. बूझि बूझि हम देखियै मंत्री । पुत्र मित्रजन सोदर तंत्री । —केशव

तंसी—वि० [सं० त्रस—डर] त्रस्त, भयभीत ।

उदा० अनगन मन—मीन बेध डारे छिनक मैं, किये बड़े काम भट्ट देखत में तंसी है ।
—सूरतिमिश्र

तक—संज्ञा, पु० [?] बिचार, बात ।

उदा० छांडि सबै तक तोहि लगी बक आठहु जाम यहै जक ठानी । —नरोत्तमदास

तकब्बरी—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार की तलवार ।

उदा० रिपु झलनि झकोरैं मुख नहिं मोरैं बखतर तोरैं तकब्बरी । —पद्माकर

तका—संज्ञा, पु० [अ० तकीअ=निंदा करना] निन्दा, कलंक ।

उदा० या घर ते कबहूँ न कढ़ौ कवि बोधा धरौ घर भीत तका की । —बोधा

तक्कर—वि० [?] बलशाली ।

उदा० करि करि इमि टक्कर हटत न थक्कर तन तकि तक्कर तोरत हैं । —पद्माकर

तखरी—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] . व्यापार, वाणिज्य २. तराजू, कांटा वह साधन जिससे तौलने का काम लिया जाय ।

उदा० १. बात उजागर सोच कहा जो घटैगी जफा सो कढ़ै तखरी में । —ठाकुर

तखियान क्रि० वि० [सं० तत्क्षण] तत्क्षण, उस समय ।

उदा० तीर पर तरनि तनूजा के तमाल तरें तीज की तयारी ताकि आई तखियान मैं ।
—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तगीर—संज्ञा, पु० [अ० तगय्युर] परिवर्तन ।
उदा० सिसुता अमल तगीर सुनि भए और मिलि मैन । —बिहारी

तगीरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तगीर] अवनति, पदावनति ।
उदा० मनसब घटे तगीरी होई ।
—लाल कवि

तचलै—संज्ञा, पु० [हिं० तचना] आग, तपन, गर्मी २. जलना, [क्रि० अ०] ।
उदा० येरी गरवोली भूलि जैहै जो विरह, विष खैहै को बचैहै मैन महीपति तचलै ।
— बेनी प्रवीन

तड़—संज्ञा, स्त्री० [सं० नड़ित्] तड़िता, बिजली, दामिनी ।
उदा० सुरचाप गड़ी तड़ तेग तये कवि आलम उत्तर दच्छिन री । — आलम

ततच्छ—क्रि० वि० [सं० तत्क्षण] शीघ्र, तुरन्त ।
उदा० नैन ते निकरि मन मन ते तमाम तन तन ते ततच्छ रोम रोम छवि छै गई ।
—पजनेस

ततबितत—संज्ञा, पु० [?] नृत्य के भेद ।
उदा० सहचरि चुहल चोप हो चहुँ ओर आनँद घन तत बितत । —घनानन्द

तती—संज्ञा, स्त्री० [सं० तति] श्रेणी, पंक्ति, तांता २. समूह ।
उदा० इंदु उर अंबर ह्वै निकसी तिमिर तती, सुधाधर केलि करै बेलि ज्यों सिवालिनी,
—देव
सूक्ष्म उदर में उदार निरै नाभी कूप, निकसति ताते तती पातक अतंक की ।
—देव
महा उच्च माथैं सिरी सोहती हैं । मनों सिद्ध को सुद्ध सोभा तती है ।
—पद्माकर

तत्ती—वि० [सं० तप्त] दाहक, तप्त ।
उदा० कर करी सुकत्ती तीखन तत्ती हनि रिपु छत्ती नहिं बिनसी । —पद्माकर

तताई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तात] ताप, ज्वाला, गर्मी ।
उदा० धोखौ बढ़यौ जिय जानि कुमार अहें परसे यह अंभ तताई ।
— कुमारमणि
बरनि बताई, छिति ब्यौम की तताई, जेठ आयौ आततताई पुट पाक सौ करत है ।
—सेनापति

तनगना—क्रि० अ० [हिं० तिनगना] नाराज होना, क्रुद्ध होना, झल्लाना, चिढ़ना ।
उदा० होनजल मोन सो नवोन तिय अंकहूँ मैं, डीठि करि पैनी ह्वै तनैनी तनगति है ।
—सोमनाथ

तननि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तानना] विस्तार, खिचाव ।
उदा० किंकिनी रटनि ताल ताननि तननि देव, नाचत गुविंद फन फननि फनिंदु के ।
—देव

तनाखना—क्रि० स० [हिं० तनाना] तनाना, टाँगना ।
उदा० ग्वाल कवि उरज उतंग तंग तोफन पै, कर्मनैं कछूक केस कुंडल तनाखे है ।
—ग्वाल

तनाय—संज्ञा, पु० [फा० तनाब] रस्सी, डोरी ।
उदा० जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय हैं । मानो गगन तंबू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं । —भूषण

तनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तनाव] बंद, चोली को डोर, बंधन २. चोली, तनिया ।
उदा० बसन लपेटि तन गाढ़ो कै तनीनि तनि सोन चिरिया सो बनि सोई पियसंग में ।
—दास

तपकना—क्रि० स० [सं० ताप] जलना, संतप्त होना ।
उदा० टपकत आँसू तपकत हियरा है सियरा, है अति कहति बिसारी दसा तन दी ।
—बेनी प्रवीन

तपन—संज्ञा, पु० [सं] सूर्य, रवि ।
उदा० सहिहों तपन ताप, पर को प्रताप, रघुवीर को बिरह बीर मोपै न सह्यौ परौ ।
—केशव

तपनीय—संज्ञा, पु० [सं०] स्वर्ण, सोना ।
उदा० कोटिक लपटैं उठी अंबर दपेटे लेति, तप्यौ तपनीय पयपूर ज्यौं बहत है ।
—सेनापति

तपु संज्ञा, पु० [सं० तपुस्] अग्नि, आग ।
उदा० तपन तेज, तपु-ताप तपि, अतुल तुलाई माँह । —बिहारी

तबक—संज्ञा, पु० [फा०] चाँदी अथवा सोने का बर्क ।
उदा० किधौं कमनीय गोल कामिनी कपोल तल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किधौं कलधौत के तबक ताई काढ़े है।
—केशव

कवि पजनेस कंज मंजुलमुखी के गात
उपमाधिकात कल कुन्दन तबक सी।
—पजनेस

तबल—संज्ञा, पु० [फा० तबर] कुल्हाड़, कुल्हाड़ी की भाँति एक हथियार २. नगाड़ा, बड़ा ढोल।

उदा० तोमर तबल तुफङ्ग, दाव लुट्टियो तिही छन। —सूदन

सैफन सों, तोपन सों, तबल रु ऊनन सों दक्खिनी दुरानिन के माचे झकझोर हैं।
—कवीन्द्र

तबेला—संज्ञा, पु० [?] १. पशुशाला, २, जन्तुशाला ३. अश्वशाला।

उदा० फुंकरत मूषक को दूषक भुजंग, तासों जंग करिबे को झुक्यो मोर हद हेला मैं।
आपुस मैं पारषद कहत पुकारि कछु रारिसी मची है त्रिपुरारि के तबेला मैं।
—भूधर

तबेली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तलाबेली] तलाबेली, व्याकुलता, छटपटाहट।

उदा० कहा करौं कैसे मन समझाऊँ व्याकुल जियरा धीर न धरत लागिये रहति तबेली।
—घनानन्द

तमंका—संज्ञा, पु० [हिं० तमकना] जोश, आवेश २. क्रोध, तेजी।

उदा० आगें रघुबीर के समीर के तनै के संग, तारी दै तड़ाक तड़ातड़ के तमंका में।
—पद्माकर

तमई—संज्ञा, स्त्री० [सं० तमी] तमी, रात्रि,।

उदा० है तम सों तमई बितई अब द्योस चढ़्यो सु चढ़ी कुल गारी। —आलम

तमचोर—संज्ञा, पु० [सं० ताम्र चूड़] ताम्र चूड़ मुर्गा।

उदा० सारस चकोर खंजन अछोर।
तमचोर लाल बुलबुल सु मोर॥ —सूदन

तमा—संज्ञा, स्त्री० [अ० तमअ] लोभ, लालच।

उदा० खाने को हमारे है न काहू की तमा रहै, सु गाँठ मैं जमा रहे तौ खातिर जमा रहै।
—ग्वाल

तमाम—वि० [अ] १. खत्म, समाप्त २. सब पूरा।

उदा० १. डूबी बन बीथिन चकोर चतुराई मन-सूबो तुरगन की तमाम करियतु है। —देव

तमामी—संज्ञा, स्त्री० [फा०] एक प्रकार का देशी रेशमी वस्त्र।

उदा० सोने के पलंग मखमल के बिछावने हैं, तकिया तमामी के तमाम तरकीप के।
—बेनी प्रवीन

तमिल—वि० [सं० तम, तमिस्र] क्रुद्ध, नाराज।

उदा० तमीपति तामस तें तमिल ह्वै उयो आली, तियनि बधनि कहँ दूनोई दवतु है।
—आलम

तमोतखारे-संज्ञा, पु० [सं० ताम्बाकू + हिं० वार] पान या ताम्बूल देने वाले।

उदा० खौखरे बरुन तमोखारे तारापति चौंखारे चारु चतुरानन चतुर हैं। —पद्माकर

तरकीप—संज्ञा, स्त्री० [अ० तरकीब] तरकीब, ढंग, रचना, बनावट।

उदा० सोने के पलंग मखमल के बिछावने हैं। तकिया तमामी के तमाम तरकीप के।
—बेनी प्रवीन

तरच्छ—संज्ञा, पु० [सं० तर्क्षु, हिं० तरच्छ] लकड़बग्घा नामक पशु।

उदा० पुच्छन के स्वच्छजे तरच्छन को तुच्छ करैं। कैयो लच्छ लच्छ सुभ लच्छनन लच्छे हैं। —पद्माकर

तरछना—क्रि० अ० [हिं० तिलछना] छटपटाना, बेचैन रहना।

उदा० भारी सो भुजंग भागीरथी के सुतोर पर्‌यौ, ताहि लखि खाइबे कों तरछत पार भो।
—पद्माकर

तरजना—क्रि० अ० [सं० तर्जन] डाँटना, डपटना संत्रस्त करना।

उदा० ग्वाल कवि चातकी परम पातकी सों मिल, मोरहू करत सोर तरजि-तरजि कै।
—ग्वाल

तरना—क्रि० स० [हिं० तलना] १. तलना संतप्त करना। आग में किसी पदार्थ को घी या तेल में पकाना, २. पार होना।

उदा० दारुन तरनि तरैं नदी सुख पावैं सब सीरी घन छांह चाहिबोई चित धर्‌यौ है।
—सेनापति

तररानां—क्रि० अ० [हिं० तरारा] तेजी से बहना, निरन्तर प्रवाहित होना।

उदा० भाग भले तिनके सु कबिंद जु रावरे की रस रीति निहारैं। यों कहि कै तिय नैननि ते

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तरराइ चलीं अँसुवान की धारैं ।
—कवीन्द्र

तरह—संज्ञा, स्त्री० [अ०] ढंग, रीति, ढब ।
उदा० संगति में बानी की कितेक जुग बीते देखि गंगा पै न सौदा की तरह तोहि आवती ।
—दास

तरहदार—वि० [फा०] सुन्दर आकृति वाले, अच्छी बनावट के ।
उदा० तावगोर तरुतोर तरुन तरहदार, तरायल सहित मैगल धाइयत हैं । —गंग

तराग—संज्ञा, पु० [सं० तड़ाग] तड़ाग, तालाब ।
उदा० जोबन की बनक कनक मनि मोतिन सों तनक तनक पूरी पानिप तराग सी ।
—देव

तराइल—वि० [सं० तरल] चंचल, अस्थिर ।
उदा० घायल तराइल सी मानो करसाइल सी, बार-बार बाइल सी घूमति घरिक ते ।
—आलम

तराना—क्रि० स० [हिं० तरियाना] किसी वस्तु का पानी आदि के नीचे जाना, नीचे पड़ना, कम होना, दब जाना ।
उदा० उतराती सी बैन तराती भई इतराती बधू इतराती जगी । —देव

तरायल—क्रि० वि० [सं० त्वरा] त्वरा से, जल्दी से, शीघ्रता से
उदा० आगें आगें तरुन तरायले चलत चले, जिनके अमोद मंद मंद मोद सकसै ।
—भूषण

तरारे—वि० [अ० तर्रार] चंचल, मुखर ।
उदा० धँसिकै धरा के गाढ़े कोल की कड़ाके डाढ़े आवत तरारे दिगपालन तमारे से ।
—भूषण

तरासना—क्रि० स० [फा० तराशना] काटना, कुतरना ।
उदा० तिनही तिनही लखि लोभ डसै ।
पट तंतुन उंदुर ज्यों तरसै । —केशव

तरिता—संज्ञा, स्त्री० [सं० तड़ित्] बिजली, विद्युत् ।
उदा० तारिका बलय बीच तारापति के नगीच तरनि तिमिर तरे तरिता तरप सी ।
—देव

तरी अव्य [सं० तटी] १. निकट, पास २. नाव [संज्ञा, स्त्री०]
उदा० १. हेरत घातैं फिरै चहुघा तैं ओनात है बातैं देवाल तरी सों । —दास

तरेरी—वि० [हिं० तरेरना] तिरछी ।
उदा० रावरी हाँसी बिलोकन सों, अरु बांसुरी की सुनि तान तरेरी । —सोमनाथ

तरौटा—संज्ञा, पु० [सं० अंतरपट] अँतरौटा, साड़ी के नीचे पहनने का कपड़ा, साया ।
उदा० सुरँग तरौटा सोहै सारी सार सेत की ।
—आलम

तरौंस—वि० [सं० तल + औस (प्रत्य०)] निचली तह का, नीचे की सतह का
उदा० स्याम सुरति करि राधिका तकति तरनिजा तीर अँसुवन करति तरौंस को खिन खौरौंहो नीर । —बिहारी

तर्णी—संज्ञा, स्त्री० [सं० तरणी] तरणी, नाव, नौका ।
उदा० दीरघ मत सत कबिन के अर्थाशय लघुतर्णी, कबि दूलह याते कियो कवि-कुल-कंठा भर्णी ।
—दूलह

तलप—संज्ञा, स्त्री० [सं० तल्प] १. शय्या, सेज, पलंग २ अटारी ।
उदा० १. आवा सी अजिर औनि तावा सी तलप है । —दास
२. तलप सुहाती पीकी तलप सुहाती जी की तलप अलप जाती प्राण सुख पावते ।
—देव

तला—संज्ञा, पु० [हिं० तालाब] तालाब, सरोवर ।
उदा० तला तोयमाना भए सुखमाना ।
—केशव

तलाबेली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तलबेली] आतुरता, बेचैनी, छटपटाहट ।
उदा० जौलौं हौं न चली तौ लौं कैसी करी तलाबेली । —सुंदर

तलीम—संज्ञा, स्त्री० [अ० तालीम] तालीम, शिक्षा, उपदेश ।
उदा० सब सुखदायक सुसील बड़े कीमति की, भई है तलीम तलबेलियो मनोज की
—तोष

तवना—क्रि० अ० [सं० तपन] जलना, संतप्त होना ।
उदा० सत्व के समत्व सौं असत्व सत्व सूझि परयो, तत्व के महत्व सौं ममत्व मात त्वै गई ।
—देव

तवाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० ताप] विपत्ति, कष्ट ।
मुहा० तवाई पड़ना—कष्ट पड़ना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० सखि ! कौंमल चित्त चकोरन पैं, यह नाँहक हायं तवाई परी । —द्विजदेव

तहतही—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] शीघ्रता, जल्दी ।

उदा० तहतही करि रसखानि के मिलन हेतु बह-बही बानि तजि मानस-मलीन की ।
—रसखानि

तहना क्रि० अ० [?] जलना, तप्त होना, खटकना ।

उदा० जमुना तट बीर गई जब तें तबतें जग के मन माँझ तहौं । —रसखानि

तहराना—क्रि० स० [हिं० तेहा] क्रोध करना, झगड़ा करना ।

उदा० तहराती गोविंद सो गोप सुता, सिर ओढ़-नियाँ फहराती फुही । —बेनी प्रवीन

तांकना क्रि० स० [सं० तर्क] तर्क करना, विचार करना ।

उदा० नावक सर से लाइ कै, तिलकु तरुनि इत तॉकि । पावक झर सी झमकि कै, गई झरोखा झाँकि । —बिहारी

तांदुर—संज्ञा, पु० [सं० तंदुल] तंदुल, अचत, चावल ।

उदा० तांदुर बिसर गई बधु तें कह्यों ले आव तब तैं पसीनों छूट्यौ मन तन को तयो ।
—ग्वाल

तांसी—संज्ञा, पु० [सं० त्रास] १. दुख २. धमकी, डॉट ।

उदा० १. राधिका के मिलिबे को गोविंद, कितेक दिनान लौं देत हौं तांसी ।
—ग्वाल

ताई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तवा, तई (स्त्री०)] एक प्रकार की छिछली कढ़ाई ।

उदा० बिरह रूप विपरीत न बाढ़ी । हिये मनो ताई के काढ़ी । —बोधा

ताछन—संज्ञा, पु० [सं० तच्छण]-कटाब, कावा ।

उदा० उड़त अमित गति करि करि ताछन । जीतत जनु कुलट'न-कटाछन ।
—पद्माकर

ताछना—क्रि० सं० [प्रा० तासन, सं० त्रासन्] त्रस्त करना, संतप्त करना ।

उदा० कान्ह प्रिया बनिकै बिलसैं सखी साखि सहेट बदी जिहि काछें । कवि 'आलम' मोद विनोदनि सों तन स्वेद समै मदनज्जल ताछें । —आलम

ताजन—संज्ञा, पु० [फा० ताजियाना] कोड़ा, चाबुक ।

उदा० तुरत तुरंग करि तातौ ताहि ताजन दै, फफकि फँदाइ दियौ बाहर कनात को ।
—चन्द्र शेखर

ताते—वि० [?] चंचल, तेज ।

उदा० ठिले अत्ति हैं मद्द मातंग माते । उमंगत्त तैयार तूरंग ताते । —पद्माकर

तातो—वि० [?] तीव्र, तेज ।

उदा० तुरत तुरंग करि तातो ताहि ताजन दै, फफकि फँदाय दियो बाहिर कनात के ।
—चन्द्रशेखर

ताब—संज्ञा, स्त्री० [फा०] दीप्ति, चमक, आब २. ताप ३. शक्ति ।

उदा० पारिजात-जातहू न, नरगिस छातहू न चम्पक फुलात हू न, सरसिज ताब में ।
—ग्वाल

तावुक—संज्ञा, पु० [सं० तापक, हिं० तावा] १. तावा, लोहे का चक्राकर वह पात्र जिसमें रोटियाँ सेंकी जाती हैं । २. तापक ३. ज्वर ।

उदा० खिन एक ते खोइ गयो कछु है तरुनी को तप्यौ तनु तावुक सो । —देव

तामरा—वि० [सं० ताम्र] लाल, ताँबे जैसे रंग का ।

उदा० तामरा बदन क्यों करित मोती चूर आँखैं, सुरुख सुपेद हयाँ सिराइ जी में आई है ।
—बेनी प्रवीन

तायफा—संज्ञा, स्त्री० [फा० तायफ़ा] १. वेश्याएँ और उनके साथ रहने वाली मंडली २. वेश्या ।

उदा० १. तनन तरंग तान तोमद कलश तैसी तायफा तड़ित गति भरत नई नई ।
—घनश्याम

तायल—वि० [हिं० तरायल] तेज, चंचल २. उतावले, शीघ्र गामी जल्दबाज ।

उदा० चली छार से करत खुर—थारनि पहार, अति तायल तुरंगम उड़त जनुबाज ।
—चन्द्रशेखर

तार—संज्ञा, पु० [सं० तल] तल, सतह ।

उदा० गौतम की नारी सिला भारी ह्वै परी ही नाथ, ताही पै पधारे, त्यागि महामृदु तार है । —ग्वाल

तारक—वि० [सं० ताड़ना] १. दण्डक, ताड़ना देने वाला, सजा देने वाला २. तारने वाला पापों से उद्धार करने वाला ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० तारक जमेस की, विदारक कलेस की है, तारक हमेस की है, तनया दिनेस की। —ग्वाल

तारायन—संज्ञा, पु० [सं० तारा पुष्प] एक प्रकार का पुष्प।

उदा० फल मेवा बिधना रच्यौ फल गुठली दोउ काम। तारायन के फूल कौं लाए मेरे धाम। —मतिराम

तारिछ—संज्ञा, पु० [सं० तार्क्ष्य] गरुड़ पक्षी।

उदा० गंग कहै तारिछ के त्रास ते मुकुत कियो, कालीनाग कहाँ ते तिलक मुद्रा दिये तो। — गंग

तारे—संज्ञा, पु० [हिं० ताड़] १. ताटंक—नामक कर्णाभूषण २. आँख की पुतली [सं० तारा]।

उदा० बाट मैं मिलाइ तारे तौल्यौं बहु विधि प्यारे दीनौ है सजीउ आप तापर अरत हौ। —सेनापति

ताले—संज्ञा, पु० [अ०] भाग्य, किस्मत, प्रारब्ध।

उदा० बनक बिलोकि वाकी बरणौं कहाँ लौं-पर एतिक कहत सेवै ताके बड़े-ताले हैं। — रघुनाथ

तावगीर—वि० [फा० तावगीर] घमंडी, अभिमानी, २. शक्तिशाली।

उदा० तावगीर तरुतोर तरुन तरहदार तरायल सहित मैगल धाइयत हैं। —गंग

तास—संज्ञा, पु० [अ ताश] एक प्रकार का ज़रदोज़ी कपड़ा, जरबफ्त।

उदा० तासन की गिलमैं गलीचा मखतूलन के झरफै झुमाऊ रही भूमि द्वार द्वारी मैं। —पद्माकर

ताहिनौ—संज्ञा, स्त्री० [फा० तौहीन]—अपमान, अनादर, अप्रतिष्ठा।

उदा० दासी सों कहत दासी, यामें कौन-ताहिनौ है, उनकी खवासी, तौ न कीनी जोरि कर है। —ग्वाल

तिखने—वि० [सं० त्रय+खण्ड] तिखंड, तिमंजला।

उदा० देवर डग धरिबो गनै (मेरो) बोलत नाह रिसाय। तिखने चडि ठाढ़ी-रहूँ लैन करूँ कनहेर। —रसखानि

तिख्ख—वि० [सं० तीक्ष्ण] तीक्ष्ण, तेज।

उदा० कर मैं बरख्खिय तिख्ख है। चमकै तडित्त सरिख्ख है। —सोमनाथ

तिनाना—क्रि० अ० [हिं० तन्नाना] कड़े पड़ना, नाराज होना।

उदा० पालि लएँ दधि दूध महो, जिन ऊधमही तिनहूँ सौं तिनाने। — देव

तमारो—संज्ञा, पु० [सं० ताप] मूर्च्छा, ताप, चक्कर २ ज्वर, बुखार,

उदा० अंचर अरुण फबि रबि छबि छूटी दुति देखि दबि आये तम जोम को तमारो सो। —देव

तिमिर संज्ञा, पु० [सं० तिमिंगिल या तिमि] १. समुद्र में रहने वाला मत्स्य के आकार का एक भारी जंतु २. अंधकर ३. रतौंधी।

उदा० १. दीरघ उसास लेत अहि रहै भारी जहाँ तिमिर है बिकट बतायौ पंथ जोग कौं। —सेनापति

३. मैलन घटावै महा तिमिर मिटावै सुभ डीठि कौ बढ़ावै चारिवेदन बतायो है। —सेनापति

तिरनी—संज्ञा, स्त्री० [?] नीबी, घांघरा बाँधने की डोरी।

उदा० चौंकहिं जिमि हिरनीं सिथिलित तिरनीं रबि की किरनीं तन न सहैं। इमि चली झपटकैं नेकु न लटकैं कहुँ पट फटकैं अटकि रहैं। —पद्माकर

तिरप—संज्ञा, पु० [सं० त्री०] नृत्य की एक गति, त्रिसम।

उदा० उर पै तिरप लाग डाट बीर परत अभीर भीर अंग कोई अंग न मुरत हैं।—देव

तिरह—वि० [सं० त्रय] तीन प्रकार,—त्रिगुणात्मक।

उदा० हरिहर इनको लिखे हैं बेद बड़े करि सब मैं जो बनी यह सृष्टि तिरह की।—रघुनाथ

तिलंग—संज्ञा, पु० [सं० तैलंग] अँग्रेजी फौज में रहने वाले देशी सिपाही।

उदा० तरल तिलंगन के तुंग तेह तेजदार कानन कदंब को कदंब सरसायो है। —ग्वाल

तिलक—संज्ञा, पु० [सं०] १. एक वृक्ष जो वसंत में प्रफुल्लित होता है २. टीका ३. ढीला ढाला लम्बा कुर्त्ता ४. थोड़ा।

उदा० १. मोहन-मधुप क्यों न लट्टू ह्वै लुभाय भट्टू! प्रीति को तिलक माल धरे भगवंत है। —घनानन्द

३. तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनिया न। —भूषण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

४. तरुनी-तिलक नन्दलाल त्यों तिलक ताकि, तोपर हौं वारौं तिलतिल कै तिलोत्तमै । —गंग

तिलकु—वि० [सं० तिल + एक] तिलमात्र, क्षण मात्र ।

उदा० नावक-सर से लाइ कै, तिलकु तरुनि इत ताँकि पावक-झर सी झमकि कै, गई झरोखा झाँकि । —बिहारी

तिलाम संज्ञा, पु० [?] गुलाम का गुलाम, दासानुदास ।

उदा० राम को कोऊ गुलाम कहै ता गुलाम को मोहि तिलाम लिखीजौ । पद्माकर

तिलोरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तिलौरी] तेलिया, मैना ।

उदा० लाल तो चकोरै मोर मानत कहो न कछू, कैसी कर बानक तिलौरी तैं तकत है । —द्विज बलदेव

तिलौंछ—वि० [सं० तैल + हि० औछ] जिसमें तेल न हो, रूखा, स्नेहहीन।

उदा० हँसि हँसाय उर लाय उठि, कहि न रुखौंहैं बैन । जकित थकित से ह्वै रहे, तकत तिलौंछे नैन । —बिहारी

तिलौंछना—क्रि० अं० [हि० तिल + औंछना]—तेल से पोंछना, सुरमा आदि का चिह्न तेल से भीगे कपड़े से छुड़ाना, तेल लगाकर चिकना करना ।

उदा० हँसि, हँसाइ, उर लाइ उठि, कहिन रुखौं हैं बैन । जकित थकित ह्वै तकि रहे तकत तिलौंछे नैन । —बिहारी

तिलौनी—वि० [हिं तेल + औनी] सुगंधित, तेल फुलेल से युक्त ।

उदा० आछी तिलौनी लसैं अँगिया गसि-चोवा की बेलि बिराजति लोइन । —घनानन्द

तिष्य—वि० [सं० तीक्ष्ण] तीक्ष्ण, तेज धारवाली ।

उदा० बुगदा गुपती गुरज डाँढ़ जमकील बतारी । सूल अंकुसा छुरी सुधारी तिष्य कुठारी । —सूदन

तिसरी संज्ञा स्त्री० [हिं० तीन + सरी = लड़ी] तीन लड़ियों का एक आभूषण, टीका ।

उदा० तिसरी कंटी भ्रुव डँडी द्रिग दोउ पला बनाइ । तोलत प्रीति दुहून की घटि-बढ़ि करी न जाइ । —जसवंत सिंह

तिसार—संज्ञा, स्त्री [सं० अतिसार] अतिसार, संग्रहणी नामक एक रोग ।

उदा० कहै पद्माकर चतुर्भुज को रूप भयो, बड़े-बड़े पापनिहूँ ताप को तिसार भों । —पद्माकर

तीखन—वि० [सं० तीक्ष्ण] तीक्ष्ण, तेज ।

उदा० सीखति सिंगार मति तीखति प्रवीन बेनी, सौतिन की मीखति गई है सुखसारे की । —बेनी प्रवीन

तीतुरी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] कान का एक आभूषण जो खुटले के साथ लटकता रहता है और जिसकी आकृति पत्ते के समान होती है । २. एक उड़ने वाला सुन्दर कीड़ा, तितली ।

उदा० १. तनक-तनक तन तीतुरी तरल गति मानहुँ पताका पीत पीड़ित-पवन है । —केशव

तीते—वि० [सं० तीमित, प्रा तिंत] आर्द्र, गीला, भीगा हुआ ।

उदा० सो सुनि पियारी पियगमन बराइबे कौं, आंसुनि अन्हाइ बोली आसन सु तीते पर । —पद्माकर

करवा की कहाँ गंग तरबा न तीते होंहि, सरवा न बूड़ै परवाह नदी नारि के । —गंग

तुंगतनी—वि० [सं० तुंग + तनी = स्तनी] तुंगस्तनी, उन्नतपयोधरा ।

उदा०—अपनी तनु छांह सों तुंगतनी तनु छैल छबीले सों छ्वै चलती । —दास

तुंड—संज्ञा, पु० [सं०] १. मुख २. सूंड़, सुण्ड ।

उदा० १. त्रिबली त्रिवेणीतट रोमावलि धूम लट यौवन पटल ज्योति बेंदी छबि तुंड मैं । —देव

२. ग्वाल कवि जैसौ कुंभ कान दंत तुंड तैसो तैसी फुतकार औ चिंघार अति मोटी है । —ग्वाल

तुंद—वि० [फा०] १. तेज, प्रचण्ड २. पेट, उदर [सं०] ।

उदा १. होते अरविंद से तो आयके मलिंदे अंद, लेते मधुबुंद कंद तुंद के तरारे से । —ग्वाल

और अमरन अब काहै को सजैगी बीर, एक ही में बाढ़ी अंग-अंग छबि तुंद है । —बेनी प्रवीन

देह लता नैन अरविंद भौंह भौंर पांति, अधर ललाई नव पल्लवनि तुंदरी ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

—सोमनाथ

बुंद तुंद दुंदि कै प्रवीन बेनी बरसत सरसत मदन बदन मुंदि रहे को । —बेनी प्रवीन

तुका—संज्ञा, पु० [फा०] बिना फल का तीर, वह तीर जिसमें गाँसी की जगह घुंडी होती है ।

उदा० गाड़े ह्वै रहे ही सहे सन्मुख तुकानि लीक ।
—दास

काम के तुका से फूल डोलि डोलि डारैं, मन औरे किये डारैं ये कदंबन की डारैं री ।
—कवीन्द्र

तुझाना—क्रि० स० [?] छोड़ाना, दूर करना

उदा० नित बोलि अमी रस पान करै यह कान के बान तुझावैरीं को । —रघुनाथ

तुठी—संज्ञा, स्त्री० [सं तुष्टि] तुष्टि, प्रसन्नता ।

उदा० पूछत या हित सों तुम सों चित सों हहा दीजै बताय तुठी मैं । —ग्वाल

तुति—संज्ञा, स्त्री० [सं० स्तुति] स्तुति ।

उदा० यह सुनि विरंचि ने सुख सु पाइ । तुति करी ईस की हित बढ़ाइ ।
—सोमनाथ

तुन—संज्ञा, पु० [सं० तुन्न] एक विशाल वृक्ष जिसके फूलों से बसंती रंग निकलता है ।

उदा० ओऊ रहे हेरि मोहि मैहू उन्है हेरि रही ह्वै रहे चकित दोउ ठाढ़े तरे तुन के ।
—रघुनाथ

तुपक—संज्ञा, स्त्री० [तु० तोप] एक प्रकार की छोटी तोप ।

उदा० लिए तुपक जरजार जमूरे ।
—चन्द्र शेखर

तुफंग—संज्ञा, स्त्री० [तु०] हवाई बंदूक ।

उदा० तोमर तबल तुफङ्ग दाव लुट्टियो तिही छन ।
—सूदन

तुर—क्रि० वि० [सं० आतुर] जल्दी, शीघ्र ।

उदा० हरष सों पागे महालगन की सिद्धि पाइ आगे राह रोकी जाइ अति गति तुरसों ।
—रघुनाथ

तुरमती—संज्ञा, स्त्री० [तु० तुरमता] बाज की भाँति एक शिकारी चिड़िया ।

उदा० तुरमती तहखाने तीतर गुसुलखाने सूकर सिलहखाने कूकत करीस हैं —भूषण

तुराय—क्रि० वि० [सं० त्वरा] तेजी से, त्वरा वेग से, झोंके से ।

उदा० बिरह बारि बाढ़ी नदिया चली तुराय । मोरो नवो जीवन बिरवा उखरि न जाय ।
—बोधा

तुर्रा—संज्ञा, पु० [अ०] कलगी, पगड़ी में लगाये जाने वाला पंख ।

उदा० सोहे पाग जरकसी तुर्रा । —बोधा

मान दैकै तोरा तुर्रा सिर पै सपूती को ।
—पद्माकर

तुरुराना—क्रि० अ० [सं० तुर] घबराना, आतुर होना ।

उदा० अनमनी बानि पहिचानि पति सौमनाथ, बिनती करत जब जीभ तुरुरानी री ।
—सोमनाथ

तुलही—संज्ञा, स्त्री० [सं० तुला] तुला, तराजू ।

उदा० कपोल ज्यों प्रेम पला तुलही के । —देव

तुलाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० तूल] रजाई, सौड़ ।

उदा० तपन तेज, तपु-ताप तपि अतुल तुलाई माँह । —बिहारी

तूख—संज्ञा, पु० [सं० तुष] सींक, तिनके का टुकड़ा ।

उदा० तीखी दीठि तूख सी, पतूख सी अरुरि अंग, ऊख सी मरूरि मुख, लागत महूख सी ।
—देव

तूचह—संज्ञा, पु० [सं० त्वचा] त्वचा, चर्म ।

उदा० तूचह मन तजि जमपुरी बसै सो स्वप्न बखानि । —रसलीन

तूटना—क्रि० अ० [सं० तोट] टूटना, नष्ट होना, छूटना ।

उदा० अरु तुम कमलजोनि तैं छूटौ । श्राप ताप कौ सासौ तूंटौ । —जसवंतसिंह

तूती संज्ञा, स्त्री० [फा०] १. छोटी जाति का तोता २. मटमैले रंग की एक छोटी तथा सुन्दर चिड़िया ।

उदा० काम की दूती पढ़ावत तूती चढ़ी पग जूती बनात लपेटा । —देव

भारथ अकर कर तूतिन निहारि लही, यातें घनस्याम लाल तोते बाज आए री ।
— दास

तूदा—संज्ञा, पु० [फा०] राशि, ढेर, समूह ।

उदा० ज्यों ज्यों मोरन को कहति मोर पच्छ धर लाल । काम खाक तूदा करत त्यों त्यों हनि शर जाल । —नंदराम

तून—संज्ञा, पु० [सं० तूण] तूण, तरकश, बाण रखने का चोंगा २. तृण ।

उदा० जाहिर जोर प्रभा दरसै सरसै तिनतें छबि काम के तून की । —प्रतापसाहि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तूमना—क्रि० सं० [सं० स्तोम] हाथ से भींजना, मसलना ।

उदा० करि परतीति वाकी सावधान रही साथ सखिन के नैन चैन नींदन को तूमिगो ।
—रघुनाथ

तूर—संज्ञा, पु० [सं०] १. नगाड़ा २. तुरही ।

उदा० बेनी जू प्रबीन कहै मंजरी सँगीन पौन, बाजत तँबूर भौंर तूर तासु संगी है।
—बेनी प्रवीन

तूरन क्रि० वि० [सं० तूर्ण] शीघ्र, जल्दी, झट ।

उदा० सैन में पेखि चुरीन को चूरन तूरन-तेह गई गहि गाढ़ी । —दास
लागे उरोजन अंकुर तूरन त्यों लगी तूं लखि सौति विसूरन । —तोष

तूलना— क्रि० अ० [हिं० तूल-विस्तार] बढ़ना, बड़ा होना, विस्तृत होना ।

उदा० गंग कहै यहै अंग के जोर में कंचुकी पैन्हि कै तूलि रहे हैं । —गंग

तूसना—क्रि० अ० [सं० तुष्ट] तुष्ट होना, प्रसन्न होना ।

उदा० और तो आगे कहां लौ कहौं पर एति कहै पल तू नहिं तूसै । —रघुनाथ

तेखी—वि० [हिं० तेहा] क्रुद्ध, नाराज, रुष्ट ।

उदा० कालिंदी कूल कदम्ब की छांह में ठाढ़ी ही आपु सखीन सों तेखो । —रघुनाथ

तेज—संज्ञा, पु० [सं०] १. अग्नि, पावक २. तेजस्विता ।

उदा० १. थल सो अचल सील, अनिल सो चल चित्त, जल सो अमल, तेज तेज को सो गायो है । —केशव
तेज गयो गुन लै अपनो अरु भूमि गई तनु की तनुता करि । —देव

तेबन—संज्ञा, पु० [सं० अतेवन] आमोद-प्रमोद का स्थान, या बन २. नजर बाग . क्रीडा ।

उदा० तेबन की लौज में, न हौज में हिमामह के, मृगमद मौज में, न जाफरान जाला मैं,
—ग्वाल

तेल फनूना— संज्ञा, पु [बुं०] नमक और तेल चुपड़ी रोटी ।

उदा० मचलि मचलि फिरि कहत मातु सों लैहों तेल फनूना । —बकसी हंसराज

तेलाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० तिल] तेल निकाला हुआ अंश, खली ।

उदा० हिलि-मिलि फूलन-फुलेल-बास फैली देव तेल की तिलाई महकाए महकत नाहि ।
—देव

तेली—संज्ञा, पु० [बुं०] तुरन्त की ब्यानी गाय का दूध, पेवस ।

उदा० ब्यानी गाय तुरत जो तेहिकी तेली भूल न पीजो । — बकसी हंसराज

तो—सहा०, क्रि० [हि० हतो] था, बुंदेलखंडी और ब्रज की भूतकालिक सहायक क्रिया ।

उदा० पढ्यो गुन्यो करी न कुलीन हुतो हंस-कुल, छुयो गीध छुतिहा न छाती छाप कियो तो । —गंग

तोत—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. खेल, क्रीड़ा २. अतिशयता, अधिकता ३. थोथा, असत्य ।

उदा० १. दिन भूलनि संकेत मिस मिलत मीत करि तोत, फिर पावस कारी निसा, अति सुखकारी होत । —नागरीदास
२. तैसैं जाकैं जानैं बिन जग्त सति जानियत, जाकैं जानैं जानियत बिस्व सबै तोत है ।
—जसवंत सिंह

तोद— संज्ञा, पु० [सं० तोदन] व्यथा, पीड़ा, २. चाबुक, क्रीड़ा आदि ।

उदा० आनँद घन रस बरसि बहायौ जनम जनम को तोद ।
—घनानन्द

तोफन—संज्ञा पु० [अ० तोहफा] सौगात, भेंट उपहार ।

उदा० ग्वाल कवि उरज उतंग तंग तोफन पै, कर्मनैं कछूक केस कुंडल तनाखे हैं ।
—ग्वाल

तोम—संज्ञा, पु० [सं० स्तोम] समूह, ढेर ।

उदा० सूरज के उदै तूरज की धुनि सूर जितै सुनि कै चले तोमनि । —देव

तोर—संज्ञा, पु० [अ० तौर] व्यवहार, चाल, चलन ।

उदा० संपति सों जो प्रवेश नहीं तो वृथा क्यों दरिद्र सों तोर नसावे । —बोधा

तोरा—संज्ञा, [हिं० टोटा सं० त्रुटि] टोटा, कमी, घाटा २. तोड़ेदार बंदूक ३ तोड़ा, सोने चाँदी की वह साँकर जो पाग के चारों तरफ बाँधी जाती है ।

उदा० जर बलै चलै रती आगरी अनूप बानी, तोरा है अधिक जहाँ बात नहिं करसी ।
—सेनापति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. तुपक तमंचे तीर तोरा तरवारन तें, काटि काटि सेना करी सो चित सितारे की । —पद्माकर

३. मान दै कै तोरा तुर्रा सिर पै सपूती को —पद्माकर

तोसना— क्रि० स० [सं० तोष] संतुष्ट करना ।

उदा० बेद मरजाद लोक लीक लाज लोगन की कुल को धरम सो छोंड़ायो कैसे तोसों जी । —रघुनाथ

तोसेखाने— संज्ञा, पु० [तु० तोशक + फा खाना] वस्त्रों तथा आभूषणों का भंडार ।

उदा० तोसेखाने, फीलखाने, खजाने, हुरमखाने, खाने खाने खबर नवाब खानखाना की । —गंग

तौ—संज्ञा, स्त्री० [फा० ताब] १. ताब, गरमी, ताप, क्रोध, आवेश . शक्ति, धैर्य ।

उदा० 'आलम' बिलोकि मोंहि मुख मोर्‌यो तौ में आइ, मैं हूँ मन में कह्यो, सुबीतौ रैनि आजु ही । —आलम

तौरा— संज्ञा, पु० [अ० तुर्रा] शिखा, चोटी, प्रतिष्ठा ।

उदा० लग्यो होन तुरुकन को जौरा । को राखै हिंदुन को तौरा ।। —लाल कवि

त्यायो—क्रि० सं० [सं० तप्त] तप्त करान, गर्म करना ।

उदा० भूतल तें तलप, तलपहू तें भूतल में, तलप दढ़ति जब भूतलहि त्यायो है । —गंग

त्यों—अव्य० [देश०] तरफ, ओर ।

उदा० सौतिन त्यों सतराइ चितौति, जिठानिन त्यों जिय ठानति प्रीतिहि । —देव

त्यौनार—संज्ञा, पु० [हिं० तेवर] ढंग, तर्ज, तरीका ।

उदा० रहौ गुही बेनी लख्यौ गुहिबे को त्यौनार । —बिहारी

त्यौर—संज्ञा, पु० [सं० त्रिकुटी] १. क्रुद्ध दृष्टि दृष्टि, चितवन ।

उदा० अधर मधुरता, कठिनता कुच, तीक्ष्णता त्यौर । रस कवित्त परिपक्वता जानै रसिक न और ।। —दास

सोभा सहज सुभाय की नवता सील सनेह । ये तिय के माधुर्ज हैं जानत त्यौरन तेह ।। —दास

त्रसना— क्रि० स० [सं० त्रास] चौंकना, चकित होना ।

उदा० सुतनु अनूप रूप रुतनि निहारि तनु, अतनु तुला में तनु तोलति त्रसति है । —देव

त्रसरैनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० त्रसरेणु] पुराणों में उल्लिखित सूर्य की पत्नी, धूलिकण ।

उदा० त्यौं त्रसरैनि के ऐन बसै रबि, मीन पै दीन ह्वै सागर धावै । —घनानन्द

त्रिदश—संज्ञा, पु० [सं०] देवता, सुर ।

उदा० त्रिदशांजन फूलन वृष्टि करै । —बोधा

त्रियदेवता—वि० [सं०] एक स्त्रीव्रत, जो केवल अपनी स्त्री से ही प्रेम करता है ।

उदा० तैंही त्रियदेवता पै पायों पति केसोदास पतिनी बहुत पतिदेवता बखानी है । —केशव

त्रिसोता—संज्ञा० स्त्री० [सं० त्रिसोत] गंगा, देव नदी ।

उदा० भस्म त्रिपुण्डक शोभिजैं, बरणत बुद्धि उदार । मनो त्रिसोता सोत दुति बंदति लगी लिलार । —केशव

थ

थनैत—संज्ञा, पु० [हिं० थान सं० स्थान] गाँव का मुखिया ।

उदा० फौजदार के फिरत ज्यों थाने रहत थनैत । —बोधा

थपना—क्रि० अ० [सं० स्थापन] ठहरना, जमना, स्थापित होना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० थपनो न मोकों जग-जाल के जंजालन में, याते अब नाम जमुना को रोज जपनो ।
—ग्वाल

थपा—संज्ञा, पु० [अनु० थप] घड़ा पीटने की मुँगरी, घड़ा थपथपाने की मोटी लकड़ी या पिटना ।

उदा० लसैं गोल चौरे मथं सुंम ऐसे । घड़े थोपवे के थपा होत जैसे । —पद्माकर

थरचरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० स्थल + हिं० चरा] मैदान, पशुओं के चरने का मैदान ।

उदा० कहै कबि गंग महागढ़ बढ़ अढ़ कीने मींडि डारे चटपट चढ़ि थरचरी सी । —गंग

थरहरे वि० [प्रा० थरहरिअ] कंपित काँपता हुआ, हिलता हुआ ।

उदा० परे परजंक पर परत न पीके कर थरहरे छुवत बिछौना पै छरति है । —देव

थलज—संज्ञा, पु० [सं०] गुलाब, एक पुष्प ।

उदा० थलज को फूल कौन दारिम की कली कहा बोलत ही चुयो परै सुधा से अधर तें ।
—सुन्दर

मणिमय आलबाल थलज जलज रवि मंडल में जैसे मति मेरी है कवितान की । —केशव

थसरि—वि० [प्रा० थसल] विस्तीर्ण, शिथिल ।

उदा० पिचका लियेंई रहे रहयौ रंग तोहि देखें, रूप की धसक लागे थके हैं थसरि कै ।
—घनानंद

थाँवरो—संज्ञा, पु० [हिं० थाँवला] थाला, आल बाल, मिट्टी का घेरा जिसमें पौधा लगाया जाता है ।

उदा० कामना कलपतरु जानि कै सुजान प्यारो सीचैं घनआनंद सँवारि हिय थाँवरों ।
—घनानंद

थानुसुत—संज्ञा, पु० [सं० स्थाणुसुत] गणेश, गजानन ।

उदा० थोरे-थोरे मदनि कपोल फूले थूले-थूले डोलैं जल थल बल थानुसुत नाखे हैं । —केशव

थापना—क्रि० सं० [सं० स्थापन] १. धाक जमाना, प्रतिष्ठा बढ़ाना २. पाथना, गोबर की उपली बनाना ३. स्थापित करना ।

उदा० १. लीजियो चुकाइ दधिदान मेरी ओर ह्वै कै, बाबा की दोहाई घाई पोढ़ी कै कै थापने । —बेनी प्रवीन

२. ग्वाल कवि कहै एक घाटौ तो जरूर मोमें, गोबर न थाप्यो औं न खोयौ में उकर है । —ग्वाल

थायी—वि० [सं० स्थायिन्] स्थिर, स्थायी २. रहने वाला ।

उदा० बिसवासिन वह बैरिनि निंदिया इकछन रही न थाई । —बकसी हंसराज

थार—संज्ञा, स्त्री० [?] चोट आघात ।

उदा० बाजी खुर-थारनि पहार करै छार, गढ़ गरद मिलावै जोर जंगन जकत है ।
—चन्द्रशेखर

थिगरी—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] प्यौंदा, चकती ।

उदा० बादर फटै धरनि पर बैठे थिगरी कौन लगावै । —बकसी हंसराज

कवि ठाकुर फाटी उलंक की चादर देउँ कहाँ कहँ लौं थिगरी । —ठाकुर

अरे हानि नही थिगरी पहिरे सिगरी बिगरी जु न राम भजे । —सूरति मिश्र

थित्त—वि० [सं० स्थित] स्थित ।

उदा० चरच्चि कै ईसहिं थित्त आगें । बिनै करी चित्तहिं हित्त पागें । —सोमनाथ

थीता—संज्ञा, पु० [सं० स्थित] स्थिरता, शांति, चैन ।

उदा० थीतो परै नहि चीतो चवाइन, देखति पीठि दै दीठि कै पैनी । —देव

थुरहथी—वि० [हिं० थोड़ा + हाथ] छोटे हाथ वाली, जिसके हाथ में कोई वस्तु थोड़ी आवै ।

उदा० कन दैबो सौंप्यौ ससुर बहू थुरहथी जानि ।

थूहर—संज्ञा, पु० [सं० स्थूण] सेंहुड़ का वृक्ष ।

उदा० बेद होत फूहर, थूहर कलपतरु, परमहंस चूहर की होत परिपाटी को । —गंग

थौंद—संज्ञा, स्त्री० [हिं० तोंद] पेट का अग्र भाग जो फूला रहता, पेट का फुलाव ।

उदा० मदजल श्रवत कपोल गुंजरत चंचरीक गन । चंचल श्रवण अनूप थौंद थरकति मोहति मन । —सोमनाथ

थ्यावस—संज्ञा, पु० [सं० स्थिर] स्थैर्य, शांति धैर्य ।

उदा० बिन पावस तो इन थ्वास हो न, सु क्यौं करिये अब सो परसैं । —घनानन्द

आवस परे हैं पूखी का वस पराये देस पावस मैं थ्यावस रह्यो न विरहीन मैं । —पूखी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द

दण्ड—संज्ञा, पु० [सं०] १. समूह, २. शाखा।
उदा० दावा द्रुम-दण्ड पर चीता मृग-झुंड पर,
भूषन बितुंड पर जैसे मृगराज है।
—भूषण

दंतपत्र—संज्ञा, पु० [सं०] कर्ण का एक आभूषण।
उदा० सिद्धि सुन्दरी को जनु धर्‌यौ। दंतपत्र सुभ सोभा भर्‌यौ। —केशव

दंभोलि—संज्ञा पु० [सं०] वज्र, इन्द्र का हथियार।
उदा० अंभोनिधि की सी सुता सौति पर दंभोलि-अदंभोदित दुति है सरीर की। —देव

दगदगी संज्ञा, स्त्री० [हिं० दगना] चमचमाहट, ज्योति, प्रकाश।
उदा० बेनी सों सोहागिनि चलायो मृदु नागिनि को देव द्युतिदेव मदनागिनि दगदगी।
—देव

दगरै—संज्ञा, पु० [हिं० डगरा] डगरा, मार्ग २. बिलम्ब, देर।
उदा० हौं सखि आवत ही दगरे पग पैंड़ तजी रिझई बनवारी। —रसखानि

दगल्ल—संज्ञा, पु० [हिं० दगला] भारी लबादा, कवच।
उदा० सु पैन्हे दगल्ले महाबीर भल्ले।
उमाहौं उछल्ले करे हाँकि हल्ले।
—पद्माकर

दगा—संज्ञा, पु० [?] अग्नि, आग, दाह, ज्वाला।
उदा० आगहूँ ते अधिक अगाध बिरहाग ही तें, बाग ही के बाग ये दगा सों दहि जायेंगे।
—पद्माकर

दच्छना—क्रि० स० [सं० दक्षिणा] भेंट करना, दान में किसी वस्तु को देना।
उदा० कहै पद्माकर प्रताप नृप-रच्छ, ऐसे तुरग ततच्छ कबि-दच्छन कों दच्छे हैं।
—पद्माकर

दट्टना—क्रि० अ० [हिं० डँटना] डँटना, सामना करना, झपटना।
उदा० मृगाधीस जैसे करी जूह दट्टै।
षगाधीस ज्यों व्याल जालै झपट्टै॥
—सूदन

दढ़ना—क्रि० पु० [हिं० डढ़ना] जलना, संतप्त होना।
उदा० भूतल तें तलप, तलपहू तें भूतल में तलप दढ़ति जब भूतलहि त्यायो है। —गंग

दतना—क्रि पु० [हिं० डटना] डटना, भिड़ना, जमना, सामना करना।
उदा० नौहू खंड सात दीप भूतल के दीप आजु समै के दिलीप तैं दिलीप जीत्यौ दति है।
—भूषण
तबकरि लीबौ तैसो मतौ। अब ही तें उन सों जनि दतौ। —केशव
अध बीच पर्‌यो दुख-ज्वाल जरै सठ। को सुख कौं हठि द्वार दतैं। —घनानन्द

दतियाँ—संज्ञा, पु० [हिं० दाँव] बैर, शत्रुता।
उदा० बडरी रतियाँ हम सौं दतियाँ, कहि को छतियाँ जिन तोषतु है। —सूरतिमिश्र

दपेट संज्ञा, स्त्री० [हिं० दपट] दबाव, भय, चपेट डाँट, फटकार।
उदा १ लोभ की लपेट, काम क्रोध की दपेट बीच, पेट को चपेट लागे, चेटकी भयों फिरै। —देव
बहु दाबि डारे सुभट अरि निज तुरंग दोह दपेट सों। —पद्माकर

दफ—संज्ञा, पु० [अ०] १. प्रकार, किस्म, ढंग [हिं० ढब] डफला, चमड़े से मढ़ा हुआ एक बाजा जो होली में बजाया जाता है। २. चंग, लावनी गाने वालों का बाजा।
उदा० धाइ धरि लीन्ही लाइ उर में प्रवीन बेनी, कहाँ लौं गनाऊँ अब कौतुक के दफरी। —बेनी प्रवीन

दफेर संज्ञा पु [फा०-दफ] बड़ी डफली, एक गोलाकार खाल मढ़ा बाजा।
उदा कारी घटा काम रूप काम को दमामो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाज्यो, गाज्यो कवि ग्वाल देखि दामिनि दफेर सी । —ग्वाल कवि

दबरना—क्रि० अ० [हिंदी दौड़ना] १. दौड़ना। २. धमकाना [बुं]।

उदा० १. पौढ़े जगनायक अँगूठनि कौ चूसत दसूठनि की जूठनि कौ देव दबरे फिरैं ।
—देव

२. काहे को तुम हम को लालन दबरत ठभरत ठाढ़े । —बकसीहंसराज

दम—संज्ञा, पु० [?] १. एक प्रकार का हथियार २. तलवार या छुरी आदि की धार ।

उदा०—गुरदा बगुरदा छुरी जमधर दम तमंचे कटि कसे । —पद्माकर

दमल— संज्ञा, पु० [फा० दमामा] नगाड़ा, डंका।

उदा० रघुनाथ मन में मनोरथ की सिद्धि तानि नूपुर बजन लागे पाइ में दमल सो ।
—रघुनाथ

दमानक—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. तीरों की बौछार, तीर चलाना २. तोपों की बाढ़ ।

उदा० जाति भई फिरि कै चितई तब भाव रहीम 'यहै डर आनो । ज्यों कमनैत दमानक में फिरि तीर सौं मारि लै जात निसानो ।
—रहीम

दमामो—संज्ञा, पु० [फा०] छोटा नगाड़ा ।

उदा० दादुर दमामें झांझ झिल्ली गरजनि धौंसा, दामिनि मसालै देखि दुरै जग जीव से ।
—देव

दमारि—संज्ञा, स्त्री० [सं० दावानल, हिं० दवारि] दावाग्नि, दावानल ।

उदा० अरि-तोम-तम-तिमरारि है । अरि-नगर-दग्ध-दमारि है । —पद्माकर

दरगाह—संज्ञा, पु० [फा०] १. दरबार, कचहरी २. मकबरा ।

उदा० १. जाय दिली दरगाह सुसाहिको, भूषन बैरि-बनाय ही लीनो । —भूषण

दरदामन—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का गोटा ।

उदा० बादले की सारी दरदामन किनारी, जगमगी-जरतारी, झीनी झालरि के साज पर ।
—देव

दरपक—संज्ञा, पु० [सं० दर्पक] कामदेव ।

उदा० तोहि पाइ कान्ह, प्यारी होइगी-विराजमान, ऐसे जैसे लीने संग दरपक रति है ।
—सेनापति

दरपेस—क्रि० वि० [फा० दरपेश] आगे, सामने ।

उदा० फरस दुरुस्त दरपेस खसखानन में झालरन मुकुता मुकेस झरिबो करे ।
—पजनेस

दरब—संज्ञा, पु० [सं० द्रव्य] धन, द्रव्य, संपति ।

उदा० दरबर दौरि-करि-नगर उजारि डारे कटक कटायो कोटि दुजन दरब की । —भूषण

दरबर—क्रि० वि० [?] शीघ्र, जल्दी, २. सेना का बल [संज्ञा, सं० दल + बल]

उदा० दरबर दासनि को दोष दुख दूरि करै भाल पर रेखा बाल दोषाकर रेखिये । —दास

अहोहरि आये महा दरबर मैं, कहा बनि आवै टहल दरबर में । — घनानन्द

२. दरबर दौरि करि नगर उजारि डारे कटक कटायो कोटि दुजन दरब की ।
—भूषन

दररानें— क्रि० वि० [हिं० दरारा] तेजी से, धक्का देते हुए, बिना किसी रोक के ।

उदा० भाई न गेह में आवन पावत, आवत सारे घरै दररानें ।
—सूरति मिश्र

दरब—संज्ञा, पु० [सं० दर्प] दर्प, अभिमान ।

उदा० बारिध बिरह बड़ी बेदन की बाड़वागि, बूड़े बड़े-बड़े, पार परे प्रेम पुलते । गरुओं दरब देव-जोवन गरब गिरि पर्‌यो गुन टूटि, बुद्धि ना डुले अडुलते । —देव

दर— संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. प्रतिष्ठा, कदर । २. डर, भय ३. ईख [सं० दारु] ४. द्वार, दरवाजा (फा०) ५. दल [सं०] ।

उदा० १. घर-घर द्वार-द्वार गली-गली फिरवैया, भोर तें धँसत साँझ, जिनकी कहा दर है । —ग्वाल

दरस—संज्ञा, पु० [सं० दर्श०] १. अमावस्या, अमावस्या का अन्धकार । २. सुन्दरता, छवि । ३. दीदार, दर्शन ।

उदा० १. दरस कौ अन्त्य ज्यौं उजेरौ ना अँधेरो पाख । —सोमनाथ

२. आज घाम-घाम पुरइन है कहायौ नाम जाके बिहँसत मैलौ चन्द को दरस है ।
—सेनापति

दराज—वि० [फा०] बड़ा, विशाल, २. दरार, दरज, ३. ऊँचा ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० सूरत के साह कहै कोऊ नरनाह कहै कोऊ कहै मालिक ये मुलुक दराज के ।
— पद्माकर
२. कीन्हीं करजनि की दरजैं दरजी की बहू बरजे नहिं मानै । —देव

दरारना—क्रि० सं० [हिं० दरार + ना (प्रत्य०)] विदीर्ण करना, नष्ट करना ।
उदा० गरजैं ना मेघ तोम तरजै ना-छूटि छटा लरजैं न लौंग लता दादुरि दरारै ना ।
—नंदराम

दरीचिका—संज्ञा, स्त्री० [फा० दरीचा] खिड़की, झरोखा ।
उदा०—धरि और ही की जनु देह धरीक दरीचिका में मुरझाइ रही । —द्विजदेव

दरेवा— संज्ञा, पु० [?] एक पक्षी ।
उदा० चक्रवाक खंजन पपीहा मैना चाँडूल दहिये दरेवा खूब खूमरी बिकानी है । —बोधा

दलगीर—वि० [फा० दिलगीर]१. उदास, दुखित, रंजीदा २. पत्तों का गिरना ।
उदा० क्यों है दिलगीर रहि गए कहूँ पीरे पीरे, एते-मान मान यह जानै बागवान जू ।
—दास

दलदार संज्ञा, पु० [सं० दल=सेना + फा० दार प्र०] सेनापति ।
उदा० बारह हजार असवार जोरि दलदार ऐसे-अफजलखान आयो सुर-साल है ।।
—भूषण

दलेल—संज्ञा, स्त्री० [अं० ङ्रिल] कष्ट, सजा ।
उदा० दौरि दावदारन पै द्वादसौ दिवाकर की दामिनी दमंकनि दलेल दृग दाहे की ।
—पद्माकर

दवन—संज्ञा, पु० [सं० दमनक] दौना, दौना नामक एक पौधा २. एक छंद ।
उदा० केतकि गुलाब चंपक दवन, मरुअनेवारी छाजहीं । — दास

दवना—क्रि० अ० [सं० दव] जलना, प्रज्वलित होना ।
उदा० तमीपति तामस ते तमिल ह्वै उयो आली, तियनि बधनि कहूँ दूनोई दवतु है ।
—आलम

दशा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] वर्तिका दीपक की बत्ती, २. दीपक की जलती बत्ती ।
उदा० भीजि सनेह सो देह दशा विरहागिन लागि-खरी पजरी जू । —देव
पंच दसानि को दीपक सो कर कामिनि को लखि दास प्रबीने । —दास
२. दामिनी दमंकनि दिसान में दसा की है । —पद्माकर

दसइँ दसा—संज्ञा, स्त्री० [सं० दशवीं दशा] वियोग की दसवीं अवस्था, मृत्यु ।
उदा० खरी है निसाँसी तैंतो कीन्ही है बिसासी मारि, दसई दसा सी लाख भांति लखि लेखिहौं । —आलम

दसना—संज्ञा, पु० [हिं० डासना] बिछौना, बिस्तर ।
उदा० छोरि धरी रसना दसना पर पायन मैं बिछियान करै ना । —नन्दराम

दसौंधिय—संज्ञा, पु० [सं० दास + बंदी = भाट] दसौंधी, चारण, भाट, यश-गायक ।
उदा० बहु बंदी मागध सूत गुनि गुनी दसौंधिय सोधि नित । रैयत राउत राजहित चार्‌यौ बरन बिचारि चित । —केशव

दह—संज्ञा, पु० [सं० ह्रद] ह्रद, गहरा जल, नदी में वह स्थान जहाँ अथाह जल हो ।
उदा० कंज सकोचि गड़े रहैं कीच में मीनन बोरि-दियो दह-नीरनि । - दास

दहन दुति—संज्ञा, स्त्री० [सं० दहन + द्युति] अग्नि प्रकाश ।
उदा० जल देविन कैसो श्रमवारि किधौं—दहन-दुति सी सुखकारि । —केशव

दहपटना—क्रि० स० [हिं० दहपट] ध्वस्त करना, नष्ट करना, चौपट करना ।
उदा० देस दहपट्टि आयो आगरे दिली के मेंडे बरगी—बहरि मानौ दल जिमि देवा को ।
—भूषण
दिल्ली दहपट्टि, पटनाहू को झपट्टि करि कबहुक लत्ता कलकत्ता को उड़ावै गो ।
—पद्माकर

दहल—संज्ञा, पु० [हिं० दह, सं० ह्रद] १ कुंड, हौज ।
उदा० गोधन खरिक खेत अरु क्यार । गोरस दहल नाज अरु न्यार । —घनानंद

दहलीज—संज्ञा, पु० [फा०] बैठक ।
उदा० बेई हेम हिरन दिसान दहलीज मैं, त्रेई गज-राज हय गरज पिलन कों ।
—नरोत्तमदास

दहिये—संज्ञा स्त्री० [हिं० दहिगंल ?] एक पक्षी जिसे महरि या ग्वालिन कहा जाता है,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दहिंगल ।
उदा० चक्रवाक खंजन पपीहा मैना चांडूलदहिये दरेवा खूब खूमरी बिकानी है । —बोधा

दहुचाल—संज्ञा, स्त्री०, [बुं०] शरारत, उपद्रव बदमाशी ।
उदा० हाल चवाइन कौ दहुचाल सु लाल तुम्हैं या दिखात की नाहीं । —ठाकुर

दहेली—वि० [सं० दिग्ध] ठिठुरी हुई, ठंड से संकुचित ।
उदा० गाहत सिंधु सयाननि के जिनकी मति की अति देह दहेली । —केशव

दाँइ—संज्ञा, स्त्री० [हिं० दँवरी] दँवरी, अनाज के सूखे दाने को बैलों द्वारा रौंदवाने का कार्य ।
उदा० ज्यों दाँइ देत में वृषभ पाँति, चहुँ ओर फिरति है चपल भाँति । —सोमनाथ

दाउन—संज्ञा, पु० [सं० दाम] रस्सियाँ, डोरियाँ ।
उदा० जीनन के दाउन अति मनभाउन लगत सुहाउन सबहीं कौं । —पद्माकर

दाऊदी—संज्ञा, स्त्री० [फा०गुल + दाउदी] गुल-दाउदी नामक सुन्दर गुच्छेदार पुष्प ।
उदा० सेवत हजार मखमल में कमल पद, रसलीन पछतानी दाऊदी सुहाई है ।
—रसलीन

दाग—संज्ञा, स्त्री० [सं० दग्ध] १. जलन दाह, २. आग ।
उदा० उर मानिक की उरबसी डटत घटतु दृग-दाग । —बिहारी
ग्वालकवि गोरी को गरौ यों भरि आयो सुनि जिगर जगर जरन लाग्यौ विरहाग दागें दहि । —ग्वाल

दाघ—संज्ञा० पु० [स०] दाह, ज्वाला, गरमी ।
उदा० कहलाने एकत बसत अहि मयुर मृग बाघ जगत तपोवन सों कियो दीरघ दाघ निदाघ ।
—बिहारी

दाटना—क्रि० सं० [हिं० डाँट, सं० दांति] दबाना, संत्रस्त करना, आतंकित करना ।
उदा० जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह ता दिन दिगंत लौं दुवन दाटियतु है ।
—भूषण

दात—वि० [सं० दाँत] दमित, दबाया हुआ ।
उदा० गर्जति तर्जति पाप कँपात । बात करति जनु पातक दात । —केशव

दातुरी—संज्ञा, स्त्री० [स० दातृत्व] दान की वृति या भाव, दानशीलता ।
उदा० हरि हू के जेतिक सुभाव हम हेरि लहे, दानी बड़े पै न माँगे बिन ढरै दातुरी ।
—घनानन्द

दादनी—संज्ञा, स्त्री० [फा०] १. किसी को दी जाने वाली रकम २. पेशगी ।
उदा० दादनी की बेर जब देनी होत सौ की ठौर बड़े हैं निदान तब दोसै एक देत हैं ।
—सेनापति

दादि—संज्ञा, स्त्री० [फा० दाद] न्याय, इंसाफ
मु० दाद देना = न्याय करना ।
उदा० करी-साहि सों जाय फिरादि । अधिक अनाथन दीजै दादि । —केशव

दाना—वि० [फा०] बुद्धिमान, अक्लमन्द ।
उदा० प्यारी तेरे दंतन अनारी दाना कहि कहि दाना ह्वै कै कवि क्यों अनारी कहवाइहै ।
—दास

दाप—संज्ञा, स्त्री० [सं० दर्प] घटा, शोभा, कांति २. धाक ३. गर्व ।
उदा० १. राती भई भूमि सो तो यावक की छाप चूनरी की दाप रंग ऐसो बरसैं अशेष घन ।
—द्विजदेव
नील घन धूम पै तड़ित दुति धूम-धूम धूँधरि सी धाई दाप पावक लपटि सी ।
—देव
२ चंड चक्र चाप लौं उदंड दंड दाप लौं सुमारतंड-ताप लौं प्रताप के छरा परैं ।
—पद्माकर

दापन—संज्ञा, पु० [सं० दर्प] ताप, ज्वाला-जलन ।
उदा० चातक यातें करौं बिनती कवि काम चमौ अपनी जा अलापन । तैं अपने पिय को सुमिरै मरै हम तेरी जुबान के दापन ।
—बोधा

दामा—संज्ञा, स्त्री० [सं० दावा] दावानल ।
उदा० नन्द के किसोर ऐसो आजु प्रभु को है—कहौ पान करि लीन्हो वृज दीन लखि दामा को । —रघुनाथ

दायबी—संज्ञा, पु० [हिं० दाँव] दाँव या अवसर की ताक में रहने वाला ।
उदा० छूटी छबि-रसमैं चटक चोखे बसमैं, बिलो कें मन बस मैं न रोकें रहै दायबी ।
—घनानन्द

दायल—संज्ञा, पु० [हिं० दाँव] दाँव लेने वाले ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० दायल दगा के देत हाय जिन्हैं गाइये ।
—ठाकुर

दायो—संज्ञा, पु० [हिं० दाँव] बैर, दुश्मनी ।
उदा० सूरति कहत सब जग ही कौं ऐसो यह, किधौं याकौ हम ही सों पूरबलौ दायो है ।
—सूरतिमिश्र

दारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० दारिका] १. वैश्या, रंडी २. दासी, लौंडी ।
उदा० जूठन की खानहारी कुबिजा नकारी दारी, करी घरवारीं तऊ ब्रह्म तू कहत है ।
—ग्वाल

दारू—संज्ञा, स्त्री० [फा० ?] बारूद ।
उदा० गढ़ मैं सोधि-सुरंग लगाई । सत सहस्र मन दारू पाई । —चन्द्रशेखर

दारो—संज्ञा, पु० [सं० दाड़िम] दाड़िम, अनार ।
उदा० चुम्बन की हौंसै उपजावति हँसत-मुख सारो सी पढ़ति बैन दारो दुति दन्त की ।
—देव

दार्‌यो—संज्ञा, पु० [सं० दाड़िम] दाड़िम, अनार नामक एक फल जो खाने में कसैला होता है।
उदा० दाड़िन के फूलन मैं दास दार्‌यो दानो भरि चूमि मधु रसनि लपेटत फिरत है ।
- दास

दाव— संज्ञा, पु० [सं०] बन, जङ्गल ।
उदा०—नील घन धूम पै तड़ित दुति घूमि-घूमि, धूँधरि सों धाई दाव पावक लपटि सी ।
- देव

दावन - संज्ञा, पु० [फा० दामन] कुरते या अंगरखे का वह भाग जो नीचे लटकता रहता है, अंचल ।
उदा० दावन खैंचिकै भावन सो कहती तिय मो मन यौं प्रनकै पर्‌यौ । —तोष

दावनगीर—वि० [फा० दामनगीर] दामनगीर, दामन पकड़ने वाला ।
उदा० सदा सुखदायक जे लखिबीर, भये इहि श्रावन दावनगीर । —बोधा

दिगति—संज्ञा, स्त्री० [सं० दिग्गति (दृग्-गति)] जहाँ तक नेत्रों की गति है सुदूर ।
उदा० धीर धुनि बोले डोलैं दिगति-दिगंतनि लौं, ओज भरे अमित मनोज-फरमार ए ।
—द्विजदेव

दिग-दरिअ ई—संज्ञा, पु० [सं० दिग् + फा० दाराई = एक प्रकार का रेशमी-वस्त्र] दिग्वसन ।
उदा० जटाजूट सोहत सिरहिं त्रिदस न पावत भेव । सदा बसत कैलास पर दिग-दरिआई देव । —कुमार मणि

दिति—संज्ञा, स्त्री० [सं० अदिति] अदिति, देवताओं की माता ।
उदा० मोहति मूढ अमूढ, देव संग दिति सों सोहै । —केशव

दिनरी संज्ञा, पु० [देश०] राग विशेष ।
उदा० कोऊ दैना देन परस्पर कोऊ दिनरी गावै ।
—बकसी हंसराज

दिनाई—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] बिष प्रयोग की वस्तु, बाघ की मूंछों के बाल जो विषाक्त होते हैं ।
उदा० लगी मिम को अतुल दिनाई । तुरतहि मीच समै बिन आई ।। —लालकवि
सो तौ देत ब्याधैं बिष दुखन दिनाई देत पापन के पुंज के पहारन कों ठीक ठाक ।
—पद्माकर

दिप्पै—क्रि० अ० [सं० दीप्ति] झलकना, दिखाई पड़ना ।
उदा० छुटे सब्ब सिप्पे करैं दिग्घ टिप्पे-सबै सत्रु छिप्पे कहूँ हैं न दिप्पे । —पद्माकर

दिब—संज्ञा, पु० [सं० दिव्य] प्रमाण, सौगंध, कसम ।
उदा० जैसे अब चाहौ तुम तैसे बावन दिब मैं दैहौं । —बकसी हंसराज

दिमाकदार—वि० [अं० दिमाग + दार फा०] १. बुद्धि वर्धक, मस्तिष्क को शीतल रखने वाला, दिमाग बढ़ाने वाला, २. अभिमानी ।
उदा० १. आई मैं अकेली, या कलिंदजा के कूलन पै, न्हाई लाय केसन दिमाकदार सोंधे ये ।
—ग्वाल

दिलगीरी— संज्ञा, स्त्री० [फा० दिलगीर] दुख, पीड़ा, संताप ।
उदा० यह दिल में दिल गीरी लखतु न आन । कै दिल जाने आपनो कै दिलजान ।
— बोधा

दिवक—संज्ञा, पु० [सं० दिव्यक] एक प्रकार का सर्प, शेषनाग ।
उदा चिवकरि दिक्करि उठहि दिवक भुवभार न थंभहि । —पद्माकर

दिवान—संज्ञा, पु० [अ० दीवान] दरबार, राजसभा, कचहरी ।
उदा० केसव कंस दिवान पितान बराबर ही

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पहिरावनि पाई । —केशव

दीद—संज्ञा, पु० [फा०] दीदार, दर्शन ।

उदा० तिहारा दीद हम पावें । दिलदार दर्द बिसरावें —बोध

दीपवृक्ष—संज्ञा, पु० [सं०] वृक्ष के आकार की बड़ी दीवट, जिस पर दीपक रखे जाते हैं ।

उदा० राजमौन आस पास, दीपवृक्ष के विलास, जगत ज्योति यौवन जनु ज्योतिवंत आये । —केशव

दुंदुज—संज्ञा, पु० [सं० द्वंद्वज] द्वंद्व से उत्पन्न दशा, राग द्वेष से उत्पन्न-स्थिति ।

उदा० दुंदुज असेष सहि लेइ सब बिपदादि संपदादि अभिमान जी के मन मानिये । —केशव

दुंदव—संज्ञा, पु० [सं० दुंदुभि] दुंदुभि, नगाड़ा ।

उदा० कहै पद्माकर त्यों करत कुलाहल न किंकिन कतार काम दुंदव सी दै रही । —पद्माकर

दुंबर—वि० [सं० दुर्बल] दुर्बल, कमजोर ।

उदा० अंबर एक न दुंबर हाथ, फिरै हर रातो—अडम्बर बाँधें । —बेनीप्रवीन

दुआनल—संज्ञा, पु० [सं० दावानल] दावाग्नि-आग ।

उदा० त्यों जम आवत आज कै नीठिहू आऊ के ओर दुआनल टूटै । —आलम

दुकति—संज्ञा, स्त्री० [सं० द्विरुक्ति] दो बार कथन, द्विरुक्ति ।

उदा० जानैं जे न जानैं ते यों गोपनि तें कही बात जानत जे जान जानै तिनकी दुकति है । —सुन्दर

दुकाना—क्रि० स० [देश०] लुकाना, छिपाना ।

उदा०—बन बन के तुम होहु फिरौ हथियार दुकावत । —बोधा

दुकौंहीं—वि० [सं० द्वि] दूसरे ।

उदा० तिहि पैंड़े कहा चलिये कबहूँ जिहि काँटो लगै पग पोर दुकौंहीं । —केशव

दुखहाइन—संज्ञा, स्त्री० [सं० दुख + हती = मारी हुई] दुख से हती हुई, दई मारी, निन्दा करने वाली ।

उदा० दुखहाइन चरचा नहीं आनन आनन आन । लगी फिरैं ढूका दिए कानन कानन कान । —बिहारी

दुगैंची—वि० [सं० द्विगुणित] दुहरी, दुगुनी ।

उदा० ह्वै रस रीति सरीति जनावत नेह की गेह की देह दुगैंची । —पद्माकर

दुचंद—वि० [फा० दो चंद] दुगना २. उत्तम, बढ़िया ।

उदा० गुल गुलकंद को सुमंद करि दाखन कों, देखहु दुचंद कला कंद की कमाई सी ।
मन्द दुचंद भये बुध बैनहि —पद्माकर
भाषि सकै कबहू कबितान न । —द्विजदेव

दुचिताई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० दुचित्त] चिन्ता, अस्थिरता, खटका, आशंका ।

उदा० और की ओर कहै सुनै देव महा दुचिताई सखीन कै बाढ़ति । —देव
हित न हितैये मति औसर बितैये दुचितैये बल सौतिन चितैये बन चैत को । —देव

दुगई—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] दालान ओसारा ।

उदा० अति अद्भुत थंमन की दुगई । गजदंत सुकंचन चित्रमई । —केशव

दुगामा—संज्ञा, स्त्री० [?] घोड़े की एक चाल ।

उदा० चहैं गाम चल्लैं चहैं तौ दुगामा चहैं ये बिया चाल चल्लै मिरामा । —पद्माकर

दुचोवैं—संज्ञा, पु० [फा० दुचोबः] दो बाँसों वाला खेमा ।

उदा० विविध बनातें कीमखाप की कनातें तामें दीरघ दुचोवै हैं, सिचोवैं हक्क हद्दी में ।
—ग्वाल

दुजाति—संज्ञा, पु० [सं०] द्विज, ब्राह्मण ।

उदा० गंग को नीर कियो असनान दियो बहुदान दुजातिन ही को । —चन्द्रशेखर

दुजान—संज्ञा, पु० [सं० द्वि + जानु] दो जंघाएँ ।

उदा० नासा लखे सुकतुंड नाभी पै सुरस कुंड, रद है दुरद-सुंड देखत दुजान के । —दास

दुधा—वि० [सं० द्वि०] दोनों ओर वाली, दोनों तरफ की २. दो प्रकार से [सं० द्विधा] ।

उदा० डोलति है जहँ काम लता सु लची कुच गुच्छ दुरूह दुधा की । —देव
२. एकहि देव दुदेह दुदेहरे देव दुधा यक देह दुहू मैं । —देव

दुनाली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० दो० + नाल] दो नलों वाली वह बंदूक जिसमें दो गोलियाँ एक साथ भरी जायँ ।

उदा० दमके दसौ दिसा दुनाली ड्योढ़ दामिनि के घन के नजारे मारे उर उलझन के ।
—'हपीजुल्ला खाँ के हजारा से'

दुनौना—क्रि० अ० [सं० द्विर्नमन] झुकना, लचना ।

उदा० लंक नवला की कुचभारन दुनौने लगी, होन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लगी तन की चटक चारु सोने सी । —दास

दुपंच-स्यंदन—संज्ञा, पु० [सं० द्विपंच=दश+स्यंदन=रथ] दशरथ ।

उदा० है दुपंचस्यंदन सपथ, सौ हजार मन तोहि । —दास

दुबाले—संज्ञा, पु० [हिं० दुमाला] फंदा, पाँश ।

उदा० इक मीन बिचारो बिध्यो बनसी फिरि जाल के जाइ दुबाले पर्‌यौ । —पद्माकर

दुभीख—संज्ञा, पु० [सं० दुर्भिक्ष] अकाल, दुर्भिक्ष

उदा० प्यौ चरचानि परै नहिं चैन भरै नहिं भीख दुभीख की भूखै । —देव

दुमची—संज्ञा, स्त्री० [देश०], झूला झूलते समय पेंग बढ़ाकर झोंका देने की क्रिया ।

उदा० टूटत कटि दुमची मचक, लचकि लचकि बचि जाइ । —बिहारी

दुमात—संज्ञा, स्त्री० [सं० द्वि+मातृ] दूसरी माता, सौतेली माँ ।

उदा० मात को मोह न द्रोह दुमात को, सोच न तात के गात दहे को । —श्रीपति

दुमाला—संज्ञा, पु० [फा० दुमंजिलः] दुमंजिला घर, दो मालावाला घर ।

उदा० ऐसी तो न गरमी गलीचन के फरसों में है न बेसकीमती बनात के दुमाला में । —ग्वाल

दुरंत—वि० [सं०] १. भारी, बहुत बड़ा, २. कठिन ।

उदा० पाइये कैसिक सांझ तुरन्तहि देखुरी द्यौस दुरन्त भयो है । —देव

दुर—संज्ञा, पु० [फा०] मोती मुक्ता ।

उदा० दीन्हो दुर लुरुक में गुलाब को प्रसून गौस झूलत झुकत झुलि झांकति परी सी है । पजनेस

दुरजो—वि० [सं० दुर्जय] अजेय, दुर्जेय, जिस पर जल्दी विजय न प्राप्त की जा सके ।

उदा० हैं उमगे उरज्यों उरज्यों दुरजो दुरजोग दुहूँ सर काढ़यो । —देव

दुरजोग—संज्ञा, पु० [सं० दुर्योग] गाढ़े समय, संकट का समय ।

उदा० हैं उमगे उरज्यो उर, ज्यों दुरजो दुरजोग दुहूँ सर काढ़यो । — देव

दुरदा—वि० [सं० द्वि०+रद] १. दो दाँतों वाला २. हाथी, [सं० द्विरद] ।

उदा० गज्जत गज दुरदा सहित बगुरदा गालिब गुरदा देखि परे । —पद्माकर

दुरुह—वि० [सं० दुरुह] प्रगाढ़, दुरुह, अतर्क्य २. सघन, मोटा ।

उदा० १. बढ़ै बियोग दशा दुरुह मान बिरह सो जान । —दास

२. डोलति है जहँ काम लता सु लची कुच गुच्छ दुरुह दुधा की । —देव

दुरेधा—वि० [हिं० दूर] दूर का, दूरी से सम्बन्धित ।

उदा० आली दुरेधे को चोटनि नैम कहौ अब कौन उपाय बचैगो । —रसखानि

दुरोदरु—संज्ञा, पु [सं० दुरोदर] १. जुआ, २. जुआ का दाँव ।

उदा० बाहनि के जोर काय कंचन के कोट गयो ओट ह्वै दमोदरु दुरोदरु को दामु सो । —देव

दुसह—वि० [स० द्विदश+फा० हजार] बारह हजारी सेना ।

उदा० नौरंगसाह कृपाकर भारी मनसब दीन्हो दुसह हजारी । —लालकवि

दुसार—वि० [सं० द्वि०+शल्य] दोनों ओर छिद्र वाला, आरपार, दो टुकड़े, जिसके दोनों ओर छेद हो ।

उदा० रहि न सक्यौ कस करि रहयौ बस करि लीन्हौ मारि, भेदि दुसार कियौ हियो तन दुति भेदै सार । —बिहारी

उदा० बेधि कौं होय दुसार कियो तउ ताही की मोचित चाह भरी है । —ग्वाल

दुसाखा—संज्ञा, पु० [हिं० दो+शाखा] शमादान, मोमबत्ती रखने का आधार ।

उदा० लै चल्यो दुसाखा सुनि दीपक जगाइबे को जोबन महीपति के आगे ह्वै अनंग है । —कालिदास

दुहाग—संज्ञा, पु० [सं० दुर्भाग्य] अभाग्य, बुरा भाग्य ।

उदा० अब ही की घरी ऐहै घरी कि पहर ऐहै, कत पीरी जाति तेरो केतक दुहागु है । —आलम

दुहुप—वि० [सं० द्वि०] दोनों, दो, द्वि ।

उदा० मोहे मुनि मानव बिलोकि मधु-मधुबन आन बुधि होत देव दानव दुहुप की । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुहेली—वि० [सं० दुर्हेल] कठिन, मुश्किल ।
उदा० धरी ही में देहली दुहेली भई घर तें ।
—आलम

दूँदना - क्रि० स० [हिं० दौंदना] सं० द्वंद्व, दुख देना, परेशान करना ।
उदा० ग्वाल कवि बूँदें दूँदें रूँदें बिरहीन हीन, नेह की नमूँद ये न मूँदें है गमाके सों,
—ग्वाल

दूकनि वि० [सं० द्वि] दो-दो ।
कवि देव घटा उनई जु नई बन भूमि दल दूकनि सों । —देव

दूखना—क्रि० स० [सं० दूषण] दोष निकालना, दोष देना, आलोचना करना निन्दा करना ।
उदा० का कहिये इन सों सजनी मकरन्दहिं-लेत मलिन्दहिं दूखतीं । —प्रतापसाहि

दूनर—वि० [सं० द्विगुणित, हिं० दूना] दुगुनी, दुहरी ।
उदा० दंतनि अधर दाबि दूनर भई सी चापि, चौअर पचौअर कै चूनर निचोरै है ।
—पद्माकर

दूनरिया—संज्ञा, पु० [हिं० दुनौना] नमन, झुकाव ।
उदा० लखि तैं हरि काहे संभारि उठी न भई कच भारन दूनरिया । —बेनीप्रवीन

दूभर—वि० [सं० दुर्भर] कठिन, मुश्किल ।
उदा० डीठि-विष डासी ह्वै विसासी विषधर स्याम सेवत सुधा ही देव दूभर दुधा भरे ।
—देव

दूषक—संज्ञा, पु० [सं०] १ शत्रु, दुश्मन २. दोष लगाने वाला ।
उदा० १. फुंकरत मूषक को दूषक भुजंग, तासो जंग करिबे को झुकयो मोर हद हला मैं ।
—भूधर

देव—संज्ञा, पु० [फा०] १. राक्षस, एक नरभक्षी प्राणी २. देवता [सं०] ।
१.देस दहपट्टि आयो आगरे दिली के मेंडे बरगी बहुरि मानौ दल जिमि देवा को । —भूषण

देवता—संज्ञा, स्त्री० [सं०] देवी, देवाङ्गना ।
उदा० तहँ एक फूलन के विभूषन एक मोतिन के किये, जनु छीर सागर देवता तन छीर छीटनि को छिये । —केशव

देव दुआर—संज्ञा, पु० [सं० देव + द्वार] मंदिर, देव स्थान ।
उदा० देव दुआरे निहारि खड़ी मृग नैनी करै रबि की छबि छोटी । —बोधा

देवाल कहकह—संज्ञा, स्त्री० [फा० दीवारे क़ह क़हः] चीन की एक दीवार, जिसके संबंध में कहा जाता है कि जो इसमें से झाँकता है वह अनायास खूब हँसता है ।
उदा० बार बार बरजौं बिलोकै जनि जाइ कोई कारो दईमारो हाइ है देवाल कहकह ।
—तोष

देना—संज्ञा, पु० [हिं० दहिनावर्त] परिक्रमा, किसी वस्तु के चारों तरफ चक्कर लगाना ।
उदा० कोऊ देना देत परस्पर कोऊ दिनरी गावैं ।
— बकसी हंसराज

दोचन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० दबोचन] दबाव, २. दुबधा ३. कष्ट, पीड़ा, दुख ।
उदा० १. बरजोरी पिया यह गोरी सबै, गहि-ल्याई गोबिन्दहिं दोचन सों ।
—बेनी प्रवीन
३. परि पीरी गई कहि बेनी प्रवीन रहै निसि बासर दोचति सी । —बेनी प्रवीन

दोत—संज्ञा, स्त्री० [हिं० दवात, अ० दावात] मसि-पात्र, दावात, स्याही रखने का पात्र ।
उदा० कहै 'पद्माकर सुनौ तौ हाल हामी भरौ लिखौ कही लैकै कहूँ कागद कलम दोत ।
पद्माकर

दोष—संज्ञा, पु० [सं०] १. अंधकार, अँधेरा २. त्रुटि ।
उदा० १. राखति न दोषै पोषै पिंगल के लच्छन कौं बुध कवि के जो उपकंठ ही बसति है ।
—सेनापति
उघरहिं विमल विलोचन ही के । मिटहिं दोष-दुख भव रजनी के । —तुलसी

दोहन—संज्ञा, पु० [सं०] १. दुहना, निकालना, २. समाप्त करना ।
उदा०—ढिग बैठे हू पैठि रहै उर मैं घर कै दुख को सुख दोहत है । घनानन्द

दौंदना क्रि० स [अव] १. रति क्रीड़ा में ऊधम करना, दबाना २. कुचलना, नष्ट करना ।
उदा० . गाय उठी अति रूठी बाला । ज्यौं-माधोनल दौंदि खुसाला । - बोधा

दौन—संज्ञा, पु० [सं० दमन] १. दमन, दबाने की क्रिया . दोनों [वि] ।
उदा० अंगना अनंग की सी पहिर सुरंग सारी, तरल तुरंग मृग चाल दृग दौन की । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दौर—संज्ञा, पु० [अ०] चक्कर, फंदा २. आक्रमण, चढ़ाई ।
उदा० १. जोबन जोर अनंग मरोर उठे कुच फोरि कै दौर तनी के । —गंग
२. दारा की न दौरि यह खजुए की रारि नाहिं, बांधिबो न होय या मुरादसाह-बाल को । —भूषण

दौरई—संज्ञा, स्त्री० [सं० दव] दौरहा आग, दावाग्नि ।
उदा० दौरई सी बन, दौरई फूलनि, झौरई झारि, बयारि की झौंकै । —देव

दौवा—संज्ञा, पु० [हि० दादा] १. दादा, २. पिता, ३. बड़ा भाई ।
उहा० काली कैसे छौवा काल जौनकैसे दौवा महानीच कैसे भैया चेति हौवा परदेस के । —केशव

दौहें—संज्ञा, स्त्री० [सं० दव = आग] ताप, ज्वाला, आग की लपट ।
उदा० बिछुरत वे दृग लाल के भरौंहें भये-लाल हिय दौहें लगी क्योहूँ नसिरात है । —ग्वाल

द्योहर—संज्ञा, पु० [हिं० देव घर] मंदिर, देवालय ।
उदा० कौन दसा बूझत हौ एहो रघुनाथ मनोरथ सिद्धि करिबे को नेक न थिरत है । देवी देव द्योहरन केते पुर ग्रामन मे राखे मानि जेते तेते पूजत फिरत है । —रघुनाथ

द्वारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० द्वार + ई प्रत्य०] छोटा दरवाजा, द्वार ।
उदा० द्वारी निहारि पछीति की भीति में टेरि सखी मुख बात सुनाई । —प्रताप साहि

ध

धंका—संज्ञा, स्त्री० [हिं० धाक] १. धाक, रोब आतंक २. प्रसिद्धि ।
उदा० १. एक यह कहा ऐसे मारिकै अनेक बीर पालने बिरद मोहि दसरथ धंका को । —रघुनाथ

धंध—संज्ञा, स्त्री० [हिं० धंधार] ज्वाला, लपट ।
उदा० तूलन तोपिकै ह्वै मतिअंध हुतासन-धंध प्रहारन चाहैं । —दास

धुंधर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० धुंध] हवा में उड़ती हुई धूल २. अँधेरा ।
उदा० धूर धुंध धूंधर धुवात धूम धुंधरित । —पजनेस

धुंधरित—वि० [हिं० धुंधूर] धूमिल, धुंधला किया गया ।
उदा० धूर धुंध धूंधर धुवात धूम धुंधरित धुंधर सुधुंधरित धुनि धुरवान में । —पजनेस

धक—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] चोप, उमंग ।
उदा० रहत अछक पै मिटै न धक पीवन की निपट जू नाँगी डर काहू के डरै नहीं । —भूषण

धका—संज्ञा, पु० [हिं० धक्का] १. आपत्ति, संताप २. हानि, नुकसान ।
उदा० हा हम सों बलि कौल करौ कहती हमै नाहिनै संक धका की । —बोधा

धच्छना—क्रि० अ० [अनु०] धक्का देना, मारना ।
उदा० सुद्ध सहसच्छ के बिपच्छिन के धच्छिबे कों मच्छ कच्छ आदि कलाकच्छिबो करत हैं । —पद्माकर

धजा—संज्ञा, पु० [सं० ध्वजा] १. मस्तक, सिर २. ध्वजा ।
उदा० १. कहूँ देत बाह के प्रवाह ऊदावत राम, कहूँ कुँजर धजानि धूरि धूसरै । — गंग

धधकी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] १. ढोलक नामक एक बाजा , २. डफली, जिसे होली के अवसर पर लोग बजाते हैं ।
उदा० धूम धधकौअन की धधकी बजत तामे ऐसो अति ऊधुम अनोखो दरसत है । —पद्माकर
धधकी है गुलाल की धूंधर में धरी गोरी लला मुख माड़ि सिरी । —पजनेस

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धधकौअन—संज्ञा, पु० [हिं० धधकना] होलिका में आग जलाने वाले, होली खेलने वाले, होरिहार।

उदा० धूम धधकौअन की धधकी बजत तामे ऐसो अति ऊधुम अनोखो दरसत है।
— पद्माकर

धधाना—क्रि० सं० [हिं० धधकाना] आग-दहकाना, प्रज्वलित करना।

उदा० धावत धधात धिग धीर धम धुंधाधुंध धाराधर अधर धराधर धुवान में।
—पजनेस

धनंजय—संज्ञा, पु० [सं०] अग्नि, पावक, २. अर्जुन।

उदा० प्रफुलित निरखि पलासबन परिहरि-मानिनि मान। तेरे हेत मनोज खलु-लियो धनंजय-बान। — दास

धमंकना—क्रि० अ० [हिं० धमक] प्रकंपित होना, हिलना, विचलित होना।

उदा० धंड सोर चहुँ ओर सुनत धुवधाम धमंकै
—चन्द्रशेखर

धमारि—संज्ञा, स्त्री० [अनु० धम] धम धम की आवाज, बजने की क्रिया २. एक राग।

उदा० ऐसी भई धूंधरि धमारि की सी ताहि समय पावस के भोरैं मोर शोर कै उठे अपीच। —द्विजदेव

धरनी धरैया—संज्ञा, पु० [सं० धरणीधर] शेषनाग, शेषावतार लक्ष्मण।

उदा० भनै 'समाधान' गाज्यौ धरनी धरैया सुनि, ससकि ससंक लंक पतिहू लुठत भो।
—समाधान

धराधरी—संज्ञा, स्त्री०[सं० धराधर] पहाड़ी।

उदा० उमड़ि अमित दल हय गय पयदल, भूधर बिदरि दरी भई धराधरी सी। —गंग

धरिहरि—संज्ञा, पु० [हिं० धुर+ह] धैर्य।

उदा० अरी हरी अरहरि अजौं धर धरहरि हिय नारि। — बिहारी

धरू—वि० [हिं० धरुआ] कर्जदार, ऋणी।

उदा० रति तो धरू कै है, रमासी एक टूकै, सो मरू कै हौ सराहौं, हौंस राधे के सुहाग की। —देव

धलकना—क्रि० अ० [हिं० धड़कना] भयभीत होना, दहल जाना, धड़कना।

उदा० दास कहै बलकत बल महाबीरन्ह के, धलकत डर में महीप देस देस को। —दास

धाँधना—क्रि० स० [देश०] बन्द करना, कैद करना।

उदा० जान न देहुँ कहूँ घर बाहर नैन कोठरियन धाँधौं। — बकसी हंसराज

और मैं कहाँ लौं कहौं नाम नर नारिन के, दुःख ते निकासि सुख भौन धाँधियतु है।
— ठाकुर

उरझो सुरझो त्रिबली की बली पुनि नाभि की सुन्दरता-धधिगो। —ठाकुर

धँधाना— क्रि आ० [हिं० धूंआ] जलना, तप्त होना।

उदा० आग सी धँधाती ताती लपटैं सिराय गई पौन पुरवाई लागी सीतल सुहान री।
— ठाकुर

धाधना— क्रि० स० [हिं० धाधि=ज्वाला] जलाना, प्रज्वलित करना।

उदा० चित लाग्यो जित जैये तितही 'रहीम' नित, धाधवे के हेत इत एक बार आइये।
—रहीम

धानी—संज्ञा, स्त्री० [सं०] स्थान, जगह।

उदा० संका तैं सकानी, लंका रावन की रज-धानी, पजरत पानी धूरि-धानी भयौ जात है। —सेनापति

धाप—संज्ञा, पु० [हिं० टप्पा] दोड़ने का लंबा मैदान।

उदा० छेकी छिति छीरनिधि छाँड़ि धाप छत्रतर कुंडलीकरत लोल चाकै मोल लेत हैं।
—केशव दास

धाम—संज्ञा, पु० [सं०] १. ज्योति, किरण २. गृह।

उदा० धाम की है निधि जाके आगे चंद मंद दुति, रूप है अनूप मध्य अंबर लसत है।
—सेनापति

धामरि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० घुमरी] बेहोशी, मूर्च्छा, गश।

उदा० आली सों आनँद बातनि लागि मचावति घातनि धामरि घोल। —घनानन्द

धार—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. सेना २. तलवार ३. युद्ध, आक्रमण ४. समूह झुंड।

उदा० नीके निज ब्रज गिरिधर जिमि महाराज राख्यौ है मुसलमान धार तैं बचाइ कै।
—सेनापति

दृग लाल दोऊ मुख विसाल कराल करि रिपु धारि में। —पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

३. सूर-सिरोमनि राम इतै, उत रावन धीर धुरन्धर धार मैं। —देव

धारि—संज्ञा, पु० [सं० धार] धार, समूह।

उदा० हिमगिरि, हेमगिरि, गिरत गिरीस गिरि, और गिरि गिरत गिराए गजधारि के।
—गंग

आस सों आरत सम्हारत न सीस पट गजब गुजारत गरीबन की धार पै। —पद्माकर

धावन—संज्ञा, पु० [सं०] दूत, संदेशवाहक।

उदा० पाती लिखी अपने कर सों दई हे रघुनाथ बुलाइ कै धावन। —रघुनाथ

धिगानो—संज्ञा, पू० [सं० डिंगर=शठ] ऊधम बाजी वाला खेल।

उदा० धिरिग बैताल ताल खेलत धिगानो मानो लोहू की भमक भैरो ऐरो पैरो ह्वै रह्यो।
—गंग

धिराना—क्रि० अ० [सं० धीर] १. कम होना मंद पड़ना २. डराना धमकाना ३. धैर्य रखना (क्रि० सं०)।

उदा० जबते बिछुरे कवि बोधा हितू तब ते उर दाह धिरातो नहीं। —बोधा

३. रितु पावस स्याम घटा उनई लखि कै मन धीर धिरातो नहीं। —बोधा

धीजना—क्रि० सं० [सं० धैर्य] ठहरना, स्थिर होना २. अंगीकार करना ३. धैर्य रखना ४. प्रसन्न होना, संतुष्ट होना।

उदा० चाह बढ़्यौ चित चाक-चढ़्यौ सो फिरै तित ही इत नेकु न धीजै। —घनानन्द

धीड़ा—संज्ञा, पु० [?] छोटा बच्चा।

उदा० कहा चिड़ी की लात, कहा गाड़र का धीड़ा। —गंग

धुंध—संज्ञा, स्त्री० [सं० धूम्र+अंध] हवा में मिली हुई धूल के कारण उत्पन्न अंधकार २. हवा में उड़ती हुई धूल।

उदा० धूर धुंध धूँधर धुवात धूम धुंधरित धुंधर सुधंधरित धुनि धुखान में।
—पजनेस

धुकना—क्रि० अ० [बुं०] जलना, प्रज्वलित होना २. झुकना, टूट पड़ना गिर पड़ना, ३. दौड़ना, झपटना। ४. हट जाना, नशे आदि का उखड़ जाना।

उदा० कीनो कहा मोसों कहौ स्याम हौं बलाइ लेउँ, जात धकधकी उर अनल धुकति है।
—आलम

२. ग्रीषम की गजब धुकी है धूप धाम धाम।
—ग्वाल

३. धौरे ही तें धाय धकि आलम अधीन करि। —आलम

४. गंध धकानि धुकी हर सिद्धि, कबंध के धक्कन सो धर धूके। —गंग

धुकार—संज्ञा, स्त्री० [अनु० धु] ध्वनि, आवाज, नगाड़े की ध्वनि २. बादल की गर्जना।

उदा० १. धौसा धुकारन धसमसैं धर के धरैया कसमसैं। —पद्माकर

२. लहकि लहकि सीरी डोलति बयारि और बोलत मयूर माते सबनि लतान में। धुरवा धुकारैं पिक दादुर पुकारैं बक बाँधि कै कतारैं उड़ैं कारे बदरान में।
—षट्ऋतु काव्य सग्रह।

धुजाना—क्रि० सं० [सं० ध्वज] हिलाना, प्रकंपित करना।

उदा० पगन धरत मग धरनि धुजावैं, धूरि लावैं निज ऊपर अतोल बलधारे तो।
—चन्द्रशेखर

धावत प्रबल दल धूजत धरनि फन फुंकरत फूरत फनीस लरजत है। —चन्द्रशेखर

धुतरी—वि० [सं० धूर्त] दगाबाजिन, धूर्ता, छल-करने वाली, धोखा देने वाली, छद्मवेशी।

उदा० कुंज के अवास पास भावते के जाइबे को देखिकै अंधेरी राति ऐसी बनी धुतरी।
—रघुनाथ

धुर—संज्ञा, पु० [सं० धुर] प्रारम्भ, २. अतिशय ३. ध्रुव अटल ४. प्रधान ५. बोझ भार।

उदा० १. धुरते मधुर मधु रसहू विरस करे मधुरस बेधि उर गुरु रस फूली है। —देव

२. हैं हम ही धुरकी दुखहाई विरंचि विचारि कै जाति रची ती। —घनानन्द

३. हाथ गह्यौ ब्रजनाथ सुभाव ही छूटि गई धुर धीरजताई। —देव

धुरकी—वि० [हिं० धुर — सीमा] १. अत्यधिक, बहुत अधिक, चरम सीमा की २. धुकधुकी, जुगनू नामक गले का एक भूषण [संज्ञा, स्त्री०]

उदा० कोऊ एक रजक सु धोवत हौ वस्त्रनि कौं, तहाँ गंग वासी आयो लीनै धूर धुरकी।
—सूरति मिश्र

धुरकी लगन लगी अति गाढ़ी बाढ़ी चोप चटक जो प्यारी। नवल नेह रस झर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आनँद घन लाग्यौइ रहत सदा री ।
—घनानन्द

२. इंदिरा के उरकी धुरकी, अरु साधुन के मुख की सुख की सज । देव

धुरन्धर—संज्ञा, पु० [सं०] बैल, वृषभ, भारवाहक ।

उदा० एक बिना न चलै रथ जैसे धुरन्धर सूत कि चक्र निपातै । —दास

धुरलीक—संज्ञा, स्त्री० [सं० धुर्+हिं० लीक] आर्य मर्यादा, श्रेष्ठ रीति, उत्तमरीति ।

उदा० मुरली सुनत बाम, कामजुरलीन उठि धाई धुरलीक तजि, बीधी विधुरनि सौं ।
—देव

धुरवा—संज्ञा, पु० [?] घटा ।

१. धुरवा होंहि न अलि इहै धुंआ धरनि चहुँ कोद । जारत आवत जगत को पावस प्रथम पयोद । —बिहारी

कारे कारे धुरवा चिकुर चारु चमकत चंचला बरंगना सुअति अलबेली है ।
—शिवदास

धुरीन—संज्ञा, पु० [धुरीण] बैल, वृषभ ।

उदा० भार चलाइहि आये धुरीन भलेन के अंग सुभावै भलाई । —दास

धुरेटी—वि० [हिं० धूर+एटी (प्रत्य०)] धूल युक्त, मिट्टी में सनी हुई ।

उदा० जाके सुख पेटी जात चन्द्र छबि मेटी जात छबिहू धुरेटी जात टेटी जात मान की ।
—'हजारा' से

धूँधरि—संज्ञा, स्त्री० [देश०] ढोलक ।

उदा० ऐसी भई धूँधरि धमारि की सी-ताहि समय पावस के भोरे मोर शोर कै उठे अपीच ।
—द्विजदेव

धूकन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० अनु०] गड़गड़ाहट की आवाज, गर्जना, घोर शब्द ।

उदा० कूकन मयूरन की धुखा के धूकन की झूकन समीरन की खसन प्रसून की । —नाथ

धूकना—क्रि० अ० [अनु० धुकधुक] काँपना, हिलना ।

उदा० गंग धकानि धुकी हरसिद्धिकबंध के धक्कन सों धर धूके । —गंग

धूपकाल—संज्ञा, पु० [हिं० धूप+सं० काल] ग्रीष्म ऋतु, गर्मी का समय ।

उदा० धूपकाल चंदन सी बरषा में बुंदन सी सीत काल सीतरच्छा कासमीरी साल सी ।
—गंग

धूमधुज—संज्ञा, पु० [सं० धूमध्वज] आग, पावक ।

उदा० काढ़े तेग सोह यों सेख । जनु तनु धरे धूमधुज देख । केशव

धैसो—संज्ञा, पु० [सं० दंश हि० धौंसा] त्रास, भय ।

उदा० एक दिन ऐसो जामें दुस्मन को धैसो है ।
—गंग

धोकना—क्रि० अ० [हिं० धुकना] झपटना, टूट पड़ना ।

उदा० बीच बीच बाम, बीच बीच स्याम, सुन्दर ज्यों बीजु दाम स्याम घन देव धरि धोकि कै । —देव

धोप—संज्ञा, स्त्री० [सं० धूर्वा] तलवार, खड्ग ।

उदा० करि करि चित चौपैं रन पग रोपैं धरि धरि धोपैं धूम करैं । —पद्माकर

भीरन के अवसान गये मिलि धोपनि सों चपला चमकें ते । —भूषण

धौनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० धमनी] नाड़ी ।

उदा० हिये धकधकी है न धीरजु है धोनी मैं ।
—आलम

धौरा—संज्ञा, पु० [सं० धौरेय] भारवाहक, बैल ।

उदा० कष्ट मांहि छूटे जब प्रान । धौरा को तन धर्‌यो निदान । —जसवंत सिंह

धौरे—अव्य० [देश०] निकट, पास ।

उदा० धौरे ही तें धाय धुकि आलम अधीन करि ।
—आलम

धौवा—संज्ञा, पु० [हिं० धाई] धाई के वंशज ।

उदा० तजि सबै नात मात तात की न बात कहै धौवा धाइयै कहाय केहूँ विधि जीजिये ।
—आलम

धौंसा—संज्ञा, पु० [हिं० धौंसना] बड़ा नगाड़ा डंका, सामर्थ्य ।

उदा० दादुर दमामें झांझ झिल्ली, गरजनि धौंसा, दामिनि मसालै देखि दुरै जग जीव से । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

न

नन्द—संज्ञा, पु० [सं०] हर्ष, आनन्द [नंदित० वि०]

उदा० (क) जुहारे जिन्हैं इन्द्रानी सुयश बरणे बानी कहानी जिनकी कहि कहो सु को न नन्दत,
—देव

(ख) जानति हौं नंदित करी यहि दिसि नंद किसोर । —बिहारी

नकना—क्रि० स० [हिं० नाखना] लाँघना, पार करना, डाँकना ।

उदा० पेटनि पेटनि ही भटक्यौ बहु पेटनि की पदवी न नक्यो जू । —केशव

आवनि अटकि मोही तोही सौंह सांवरे की छोड़ी कुलकानि लोक लोकनि नकन दै ।
—ठाकुर

नकारी—वि० [फा० नाकारः, स्त्रीः नाकारी] निकम्मी, खराब ।

उदा० जूठन की खानहारी कुबिजा नकारी दारी करी घरवारी तऊ ब्रह्म तू कहत है ।
—ग्वाल

नकीब—संज्ञा, पु० [अ०] चारण, भाट, प्रशस्ति गायक २. कड़खा गाने वाला व्यक्ति ।

उदा० छैल छल छोभक छपाचर चुरैल आगे-पीछे गैल गैल ऐल पारत नकीब से ।
—देव

नख—संज्ञा, स्त्री० [फा०] रेशम की डोर ।

उदा० लोटन लोटत गुली बंद तीरा रेखता की, नख तंग घाघरा न सुतरी बनाई है ।
—बेनी प्रवीन

नखना—क्रि० स० [हिं० नाखना] उल्लंघन करना, नष्ट करना ।

उदा० दीह दुख खानी ते अयानी जे अठान ठानै पति रति रीति की प्रनाली प्रेम नखि कै ।
—चन्द्रशेखर

नखायुध—संज्ञा, पु० [सं०] सिंह, शेर ।

उदा० बोल्यो चरनायुध सु तौ, भयो नखायुध नाद । —मतिराम

नखी—वि० [सं० नष्ट] नष्ट हुई, समाप्त ।

उदा० जाके बिलोकत बेनी प्रवीन, कहै दुति मैनका हू की नखी है । —बेनी प्रवीन

नग—संज्ञा, पु० [सं०] १. वृक्ष २. रत्न, मणि ३. पहाड़ ।

उदा० १. लाह सौं लसति नग सोहत सिंगार हार छाया सोन जरद जुही की अति प्यारी है । —सेनापति

मोहे महा पन्नग अनेक नग खग कान दै दै कोल भील केते रीझि रहे हैं । —देव

नगी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नग + ई (प्रत्य०)] १. पहाड़ी स्त्री० २. पार्वती ।

उदा० आसुरी सुरी के कहा पन्नगी-नगी के कहा, ऐसे ना परी के हैं सो—जैसे कूबरी के हैं ।
—राम रसिक

नचैन—संज्ञा, पु० [हिं० न + चैन] अचैन व्याकुलता ।

उदा० मिलत ही जाके बढ़ि जात घर मैंन चैन, तनकौं बसन डारियत बगराइ कै ।
—सेनापति

नछीछै—वि० [सं० अक्षुण्ण ? न + छीछै = क्षीण] अक्षुण्ण, जो क्षय न हो ।

उदा० लाज की आँचनि या चित राचन नाच नचाई हौं नेह नछीछैं । —देव

नज्जलन—वि० [हिं० न + सं० जल] जल रहित, बिना पानी के, सूखा ।

उदा० नज्जलन देखियत सज्जल जलद कारे—कज्जल गिरीश कारे उपमा न पावहीं ।
—नंदराम

नजीली—संज्ञा, स्त्री० [अ० नज़ील, पु०] १. अतिथि, मेहमान २. संत्रस्त, भयभीत, [अ० नज़ीर, वि०] ।

उदा० २. होति न नजीली आँखि सखिन लजीली करै ढीली उर आँगी ढीली ढीली पलकनि सो । —देव

नजूम—संज्ञा, पु० [अ०] ज्योतिष विद्या ।

उदा० बैदक पढ़े हौ की नजूम को निसारत हौ,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कविता करत हौ कि समुद्रिक संचारी जू ।
—नंदराम

नजूमि—संज्ञा. पु० [अ० नजूमी] ज्योतिषी ।
उदा० नेकु सुनो बतियां न छतियां चलैये हाथ आधी रतियां मैं रति कहत नजूमि है ।
— तोष

नटसाल—संज्ञा, स्त्री० [सं० नष्ट शल्य] कसक, पीड़ा, बाण, काँटे आदि का वह अंश जो टूट कर शरीर के अन्दर रह जाता है ।
उदा० सालत करेजें नटसाल नित नये हैं ।
—आलम
सालत है नटसाल सी क्योंहूँ निकसति नाहिं ।
—बिहारी

नटा—संज्ञा, स्त्री० [हिं० नटना] इन्कार, अस्वीकृति ।
उदा० भूलि ही जाइगो बेनी प्रवीन, कहो बतियाँ जे सदा की नटा पर ।
—बेनी प्रवीन

नठाना—क्रि० स० [सं० नष्ट] नष्ट करना, समाप्त करना ।
उदा० पूतना आदि बड़े बड़े केसी लौं दानव के कुल मारि नठाये ।
—देव

नतनारु—संज्ञा, पु० [देश०] मटकी का मुँह ढँकने वाला कपड़ा ।
उदा० सखि बात सुनौ इक मोहन की निकसी—मटुकी सिर री हलकै । पुनि बाँधि लई सूनिये नतनारु कहूँ कहूँ बूँद करी छलकै
—केशव

नथ—संज्ञा, स्त्री० [हिं० नाथना] १. नाक का एक आभूषण २. तलवार की मूठ पर लगा हुआ छल्ला ।
उदा० कौल की है पूरी जाकी दिन दिन बाढै छबि, रंचक सरस नथ झलकति लोल है ।
—सेनापति

नद—संज्ञा, पु० [सं० नाद] १. आवाज, ध्वनि, शब्द २. बड़ी नदी ।
उदा० १. सूनौ कैं परम पद, ऊनो कै अनंत मद नूनो कै नदीस नद, इंदिरा मुरै परी ।
—देव

नदीपतिकुमारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नदी पतिः सागर+कुमारी=पुत्री] सागर की पुत्री, लक्ष्मी ।
उदा० ऐ सीपति देव, मोहिं ऐसी पति दीन्ही, आजु मेरी सो न दीपति, नदीपति कुमारी की ।
—देव

ननकारना क्रि० अ० [हिं० न+करना] इनकार करना, अस्वीकार करना ।
उदा० अधखुले नैननि निहारै रूप भावते को बिहसै बिहारै ननकारै टारै मुख सों ।
—रघुनाथ

ननसार—संज्ञा, पु० [हिं० ननिहाल] ननिहाल, नाना का गृह ।
उदा० मोहू कों चातुरता बहरावति मौसिन सों ननसार की बातैं ।
—गंग

ननु—संज्ञा, पु० [सं० नवनीत, हिं० नैनू] नवनीत, मक्खन ।
उदा० रति सदन अकेली काम केली भुलानी, ननु मय बरबानी मालिनी की सुहानी ।
—देव

निबद्द—संज्ञा, पु० [सं० निर्बंध] हठ, आग्रह ।
उदा० नच्चैं निबद्द । करि के बिहद्द
—सोमनाथ

नबरना—क्रि० स० [हिं० नबेड़ना] १. निपटाना झगड़ा तै करना २. चुनना ।
उदा० चलो नबरिये परघर आई । नाहक मरजादा पुनि जाई ।
—बोधा

नबेरना—क्रि० स० [बुं०] छाँटना, चुनना ।
उदा० खेत कुटुंब ते लीन्ही उखारि नबेर नबेर कैं स्वाद नबीनी ।
—ठाकुर

नबौटी—वि० [सं० नव+हिं० औटी प्रत्यय] नवीन, नई, नूतन ।
उदा० खरसल स्यन्दन बहल बहुत गाड़ी सु नबौटी ।
—सूदन

नभजया—संज्ञा, स्त्री० [सं०] आकाश को विजित करने वाली, रेणु ।
उदा० रेनु रेल गहिहै रथुद्धतो । नभजयाहि द्रुतपाउ सुद्धतो ।
—दास

नभजरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नभ+फा० जरी=बेल] आकाश बेलि, आकाशलता ।
उदा० निज जरि पावत मालति सदा । नभजरीहि पठवै प्रियंबदा ।
—दास

नभश्री—संज्ञा, पु० [सं०] सूर्य, आकाश की शोभा ।
उदा० नभश्री कैसो सुभ तारंक । मुकता मनिमय सोभत अंक ।
—केशव

नमूंद—वि० [हिं० न+मूंद=बंद होना] खुले हुए, उन्मीलित ।
उदा० नूर भरे नमित न मूंदन नमूंद नैन, नागर नवेली के नसीले नैन नोकदार । —ग्वाल
कीन्हे बदन निमूंद, दृग मलंग डारे रहत ।
—बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नयना—क्रि० अ० [हिं० नवना] १. ढल जाना, समाप्त हो जाना, २. झुकना, नम्र होना ।
उदा० नीर के कारन आई अकेलियै भीर परे संग कौन कौं लीजै । ह्याऊँ, न कोऊ नयो दिव-सोऊ अकेले उठाए घरो पट भीजै ।
—दास

नरजा—संज्ञा, पु० [?] तराजू की डाँड़ी ।
उदा० नरजा मैं मिलै पलरा मैं देखि दूनौं सोई सेनापति समुझि विचारि कै बतायौ है ।
—सेनापति

नरजी—संज्ञा, पु० [?] नाप-तौल करने वाला ।
उदा० नैन किये नरजी दिन रैन रती बल कंचन रूपहि तोलैं । —घनानन्द
जा दिन तैं तुम प्रीति करी ही घटति न बढ़ति तूल लेहु नरजी । —सूर

नरियाना—क्रि० अ० [देश०] जोर-जोर से चिल्लाना, आवाज करना ।
उदा० पट धोबी धरै, अरु नाई नरै, सु तमोलिन बोलिन बोल धरै । —गंग

नरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० नली] नली, पैर की पिंडली ।
उदा० महा सुछ्छ पुछ्छैं रही हैं उनैं सी । नरी—पाँतरी आतुरी हिन कैंसी । —पद्माकर

नरीन—संज्ञा, स्त्री० [सं० नर] नारियाँ, स्त्रियाँ ।
उदा० भजत प्रवीन बेनी छूटे सुखपाल रथ, छूटी सुखसेज सुख साहिबी नरीन मैं ।
—बेनी प्रवीन

नरीसुर—संज्ञा, पु० [हिं० नली + सं० स्वर] नली से निकलने वाले स्वरों से बजने वाले बाजे ।
उदा० भेरी घनेरी नरीसुर नारि नरीसुर नारि अलापी सभा में । —देव

नल—संज्ञा, स्त्री० [हिं० नलिका] नावक की नलिका, नाल, एक प्रकार का अस्त्र २. तरकश
उदा० अनल सी अनिल नलिनमाला नल मयी, अनिल न लाउ री न लाउ मलया अली ।
—आलम

नव अवस्त—संज्ञा, स्त्री० [सं० नव अवस्था] नवबय, युवावस्था ।
उदा० नव अवस्त बिरही तन जबही ।
अतन-सतन बरणत कवि तबही ।। —बोधा

नवढ़ी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नवोढ़ा] नवोढ़ा, नव विवाहिता स्त्री ।
उदा० गवढ़ी नवढ़ी द्विजराज मुखी ।
परबीन प्रिया बनिता सुमुखी ।। —बोधा

नवाजसि—संज्ञा, स्त्री० [फा० नवाजिश] कृपा, मेहरबानी ।
उदा० रामदास सों कह्यो बुलाय ।
करौ नवाजसि बाकी जाय ।। —केशव

नवारे—संज्ञा, पु० [हिं० नाव] बड़ी नावें ।
उदा० इंदीवर सुन्दर कलिंदी तीरवारे कहा, मारे अँसुवान के नवारे बहि जायँगे ।
—पद्माकर
नैन अनियारे मैं न तेरे से निहारे प्यारी, लाज धन वारे नेह नृप के नवारे हैं ।
—सोमनाथ

नवासनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सुआसिनी] सौभाग्यवती स्त्री, सधवा ।
उदा० नन्द के अवास ब्रजवासिनु को भागु खुल्यो खुलत सम्हारि पैन्हि वासन नवासनी —देव

नहना—क्रि० अ० [हिं० नधना] १. नधना, हल में बैल आदि का जुतना, फँसना २. बँधना; आबद्ध होना ।
उदा० चक्र तर्‌योना, जुवा भृकुटी, मृगनैन नहे, ससि को रथ संभवि । —देव
२. मोंहि काहे गहि-गहि राखती हौ गेह ही में, नेह ही में नख ते सिखा लौं नही तन मैं । —बेनीप्रवीन

नहियाँ—संज्ञा, स्त्री० [सं० नाथ हिं० नाह] नायिका, प्रियतमा, स्त्री ।
उदा० भोर भये भौन के सुकोन लगि गई सोय, सखिन जगाइबे को जाय गही बहियाँ ।
चौंकि परी चकि परी औचक उचकि परी, सकि परी जकि परी बकि परो नहियाँ
— बेनीप्रवीन

नाँदना—क्रि० अ० [सं० नन्दन] दीपक का बुझने के पहले भभक उठना, चेतना आना । २. आनन्दित होना ।
उदा० उठति दिया लौं नाँदि हरि लिये तिहारो नाम । —बिहारी

नाँदनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० नाँदना] बुझने के पूर्व दीपक की भभक ।
उदा० सूरति सुकवि दीप दीपति कहा है जो पै, भई इकबार क्यौंहू नेह बिन नाँदनी ।
—सूरति मिश्र

नाकंद—वि० [फा० ना + कंदः] अल्हड़, अप्रशिक्षित, न निकाला गया घोड़ा आदि पशु ।
उदा० बछेरे करैं कूदि आछी कलोलैं ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लखे नीक नाकंद जे हैं अमोलैं ।।
—पद्माकर

नाका—संज्ञा, पु० [हिं० नाकना] प्रवेश-द्वार, अन्दर जाने का रास्ता, फाटक ।
उदा० ऐसो राज रसा महँ करै ।
भुमिया के नाके भुव धरै ।। —केशव

नाकाधीस—संज्ञा, पु० [सं० नाक=स्वर्ग + आधीश=स्वामी] स्वर्ग के स्वामी, इन्द्र ।
उदा० सोने की सलाका सी सुनीं है हम साका ऊधो, काम की पताका किधौं नाकाधीस परी है । —'हफीजुल्लाखाँ के हजारा' से

नाखना—क्रि० सं० [सं० नष्ट, प्रा० नंख] छोड़ना, डालना २. रखना, पहनना ३. नष्ट करना ।
उदा० भई हौ सयानी तरुनाई सरसानी प्रीति प्रीतम पत्यानी दूरि लाज उर नाखियों ।
—मतिराम
२. गैयन की भीर हूँ जै संगबलवीर मेरे, देखी तहाँ वीर चीर चंपक से नाखे चुन । —ग्वाल

नागबेलि—संज्ञा, स्त्री० [सं०] एक प्रकार का लोहा ।
उदा० पाउँ पेलि पोलाद सकेलि रसकेलि किधौं नागबेलि रसकेलि बस गजबेलि सी ।
—देव

नागा—वि० [सं० नग्न] १. दूषित, बुरा २. अंझा,
उदा० नागा करमन कौं करत दुरि छिपि पीछे, हरि मैं परत कै वे सूली मैं परत हैं ।
— सेनापति

नाजिर—संज्ञा, पु० [अ० नाजिर], देख-भाल करने वाला, सरदार २. अन्तःपुर का प्रबन्ध करने वाली मुख्य परिचारिका [संज्ञा स्त्री०]
उदा० १. नाजिर आनि दियो कर कागद भाजु कही उठि देर न लावै । — चन्द्रशेखर
२. हाजिर पास खवास जे, जे नाजिर सब धाम ।
सब मिलि देति, ममारषी, झुकि-झुकि करैं सलाम ।।
—चन्द्रशेखर

नाथना—क्रि० सं० [सं० नाश], नष्ट करना, समाप्त करना २. नत्थी करना ३. बैल आदि की नाक छेद कर रस्सी डालना ।
उदा० १. राघवराइ को दूत बली जिहि दूखन खंडि कै तारिका नाथी । —आलम

नादर—वि० [अ० नादिर] १. श्रेष्ठ, उत्तम २. अद्भुत, अजीब ।
उदा० आदर कै राखौं प्रान कैसे हुक्म नादर लै जम के बिरादर ये बादर उनै रहै ।
—नन्दराम

नादौट—संज्ञा, स्त्री० [?] विशेष प्रकार की तलवार ।
उदा० असिबर नादौटैं घलत न लौटैं मुंडनि मोटैं काटि करैं । —पद्माकर

नाफा—संज्ञा, पु० [फा० नाफा] कस्तूरी की थैली, यह थैली कस्तूरी वाले मृगों की नाभि में मिलती है ।
उदा० ग्यानिन को ध्यान, अरु ध्यानिन को ध्यान, मान मानिन कौ मान, फार्‌यौ मृगमद नाफा सौ । —ग्वाल

नायक—संज्ञा, पु० [सं०] पदिक, माला के मध्य का भूषण, हार के मध्य का रत्न ।
उदा० नन्द-मन्दिर कान्त कौतुक बनि रह्यौ भरि भाव ।
मनहु मधिनायक विराजत अति अभूत जराव ।।
—घनानन्द

नाय—संज्ञा, स्त्री० [सं० नायिका] स्वामिनी, लक्ष्मी, भगवान की पत्नी ।
उदा० एक होत इन्दु, एक सूरज औ चन्द, एक होत है कुबेर, कछु बेर देत नाया के ।
—देव

नारि—संज्ञा, स्त्री० [सं० नाल] १. गर्दन, ग्रीवा, गला २. एक प्रकार की तोप ३. समूह, खानि ।
उदा० सोचतें हिये में लाल लागी नारि है नई ।
आलम
२. नारि कमान तीर असरार ।
चहुँ दिसि गोला चले अपार ।।
—केशव
३. अति उच्च अगारनि बनी पगारनि जनु चिन्तामणि नारि । —केशव

नाल—संज्ञा, पु० [अ०] १. तलवार आदि के म्यान की साम जो नोक पर मढ़ी रहती है २. पास, निकट (पं०)
उदा० दसहूँ दिसि जोति जगामग होति, अनूपम जीगन जालन की । मनोकाम चूम के चढ़े

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किरचैं उचटैं कलधौत के नालन की ।
—गंग

२. मानै क्यौं कनौड़ी बाल कीन्हों तुम ऐसो ख्याल भोड़िन के नाल लाल भटकि मटकि जू ।
—तोष

नालकी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नाल=डंडा] खुली हुई पालकी जिस पर मेहराबदार छाजन होती है ।

उदा० कंचन रंजित सुभग टुटीं अरु लुटी नालकी ।
—सूदन

पालकी मैं चढ़ि मति भूलै मूढ़ नालकी मैं ।
—ग्वाल

नासर—संज्ञा, पु० [सं० नाश] नाश, ध्वंस ।

उदा० लोक चतुर्दश को करता कर तेरे रहै उतपात औ नासर ।
—बोधा

नावक—संज्ञा, पु० [फा०] १. शिकारी २. एक प्रकार का छोटा बाण ।

उदा० सतसैया के दोहरे ज्यों नावक के तीर ।
—अज्ञात

नासी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नाश] दुःख, विषाद ।

उदा० जा मुख हाँसी लसी घनआनंद, कैसें सुहाति बसी तहाँ नासी ।
—घनानंद

निकासि—संज्ञा, पु० [हिं० निकसना] मैदान, रणक्षेत्र ।

उदा० देखत न पीछे कौं निकासि कैयौ कोसन तैं, लैकै करवाल बाग लेत बिलसत हैं ।
—सेनापति

निकुंभिला—संज्ञा, स्त्री० [सं०] लंका की पश्चिम दिशा की एक गुफा जिसमें मेघनाद देवी के समक्ष यज्ञादि क्रियाएँ करके रणस्थल के लिए प्रयाण करता था ।

उदा० साधे करबालिका चढ़ाई मुंडमालिका, निकुंभिला में कलिका की मालिका जपतभो ।
—समाधान

निखसमी—वि० [सं० नि=बिना+अ० खस्म=पति] बिना पति के, रांड़, विधवा ।

उदा० दीपमाला साधुन असाधुन अमावस सु मानति सराध बैरी बधु ह्वै निखसमी ।
—देव

निखोट—क्रि० वि० [हिं० नि+खोट]—१. बेधड़क, निस्संकोच २. निर्दोष ।

उदा० निपट निखोट करैं चोट पर चोट, लौटि जानत न, जुद्ध जुरैं उध्धत अवाई के ।
—पद्माकर

२. साँझ समैं बीथिन मैं ठानी दृगमीचनी भोराई तिन राधे को जुगुति कै निखोटि खोटि ।
—दास

निगार—संज्ञा, पु० [फा०] १. चित्र, प्रतिमा, बुत, २. प्रेमपात्र, प्रेमिका ।

उदा० आनंद होय तबै सजनी, दर सोहबते यार निगार नशीनम् ।
—गंग

निग्रह—संज्ञा, पु० [सं०] त्याग, मुक्ति, छोड़ना,

उदा० अघ निग्रह संग्रह धर्म कथान, परिग्रह साधुन को गनु है ।
—केशव

निघट्टना—क्रि० सं० [हिं० निघट] समाप्त करना, नष्ट करना ।

उदा० ठठु मरहट्टा के निघट्टि डारे बानन सौं, पेसकसि लेत हैं प्रचंड तिल गाने की ।
—सोमनाथ

निघरा—वि० [हिं० नि+घर] वह व्यक्ति जिसके घर-बार न हो, खाना बदोश, निगोड़ा, २. निर्लज्ज ।

उदा० देव तहाँ निघरे नट की बिगरी मति को सगरी निसि नाच्यो ।
—देव

निचल—वि० [सं० निः+चल] स्थिर, अटल ।

उदा० यह जीव नाच नाना करत निचलौ रहत न एकदम ।
—ब्रजनिधि

निचली—वि० [सं० नि+चल] स्थिर, अचल ।

उदा० खिचली भुजा सों लाल पिचली हिये सों लाय निचली रहे न डोले विचली पलंग पर ।
—ग्वाल

निचोर—संज्ञा, पु० [हिं० निचोल] स्त्रियों की ओढ़नी या चादर ।

उदा० ग्वाल कवि कहै ऊन अंबर निचोरै जहाँ, सूती बसनन तें तौ बहे सात घोरा से ।
—ग्वाल

निछर—वि० [हिं० निछल, सं० निश्छल] निश्छल, निष्कपट ।

उदा० रोगनि में सोगनि में, विपति में, कैसे लहै, ऐसे निछरे में मन राधा कृष्ण कहिरे ।
—सूरति मिश्र

निछौरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० निछावर] निछावर, बलिहारी ।

उदा० माता बरदायनि हौ दीन सुख दायनि हौ गिरिजा गोसायनि हौ पग पै निछौरी मैं ।
—नंदराम

निजर—संज्ञा, स्त्री० [नजर] दृष्टि, निगाह ।

उदा० हाथी निजर संत मैं दीनी । सूड पसारि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चरण रज लीनी । —जसवंतसिंह

निजु—अव्य० [?] निश्चय ही ।
उदा० निजु आई हमको सीख देन ।
— केशव

निझनक—वि० [?] १. अवधि, २, नीरव, निर्जन ।
उदा० अंजन दै री राधे न करि गहर हे हा हा । निझनक बार टरी जाति मनभावन ब्रज-मोहन मिलन-उमाहा । —घनानन्द

निझुकनि— वि० [प्रा० णिज्झरो=क्षय] क्षय-कारी, दुखद, पीड़ित करने वाला ।
उदा० निझुकनि रैनि झुकी बादरऊ झुकि आये, देख्यौ कहौं झिल्लिनि की झाँई झहनाति है, —आलम
अबुध बुधनि में पढ़त हीं निझुकत लच्छन-हीन । भृकुटी अग्र खरग्ग सिर कटतु तथापि अदीन । —केशव

निझूटी— वि० [प्रा० णिच्छूढ=निक्षिप्त] निर्गत निष्कासित, निकाली गई ।
उदा० बंधन ते छूटी प्रेम बंधन बधूटी, बित हित चित लूटी सी, निझूटी सी झगरि कै ।
—देव

निझ्झल— संज्ञा, पु० [निझोल] हाथी, गज ।
उदा० निझ्झल कज्जल संजुत मिड्डि कै भालुक पिड्डि कै भूमि गिराये । —दास

निथंभ—संज्ञा, पु० [सं० स्तम्भ] खम्भा, स्तम्भ ।
उदा० रची बिरंचि बास सी निथंभराजिका भली जहाँ तहाँ बिछावने बने घने थली थली ।
— केशव

निथोरी—वि० [सं० नि+हिं० थोड़ा] अत्यधिक बहुत ज्यादा ।
उदा० आई हो निथोरी बेस सेखर किसोरी बैस थोरी रस बातन सनेह भीजियतु है ।
—चन्द्रशेखर

निदंभ— वि०[सं० निर्दंभ] घमंड,रहित, गर्वहीन
उदा० आरंभित जोबन निदंभ करै रंभा रुचि रंभोरू सुगंभीर गुराई गुन भीर की ।
— देव

निदाह—संज्ञा, पु० [सं० निदाघ] ग्रीष्म ऋतु, षट् ऋतुओं में एक ऋतु जो बसन्त के बाद आती है, गरमी की ऋतु ।
उदा० दास आस पास पुर नगर के बासी उत, माह हू को जानति निदाहै रहयो लागिकै ।
—दास

निधरे—वि० [हिं० निधड़क] निधड़क, निर्भीक, निडर ।
उदा० देव तहाँ निधरे नट की बिगरी मति को सिगरी निसि नाच्यो । —देव

निनद—संज्ञा, पु० [सं० निनाद] आवाज, ध्वनि ।
उदा० कहै पद्माकर त्यों निनद नदीन नित नागर नवेलिन की नजर निसा की है ।
—पद्माकर

निनवारना—क्रि० स० [सं० निवाररंग] सुल-झाना ।
उदा० मकराकृत कुंडल में उरझी जुलफ सुलफ घुंघुरारी । कोमल गोल कपोल परस कर सो राधा निनवारी । —बकसीहंसराज

निनारा—वि० [सं० निम्+निकट] बिल्कुल, एक एकदम २. न्यारा, विलक्षण ।
उदा० १. ऐसोई जौ हिरदै के निरदै निनारे हौ तौ काहे कों सिधारे उत प्यारे परबीन जू । —दास

निपच्छ—वि० [सं० निः+पक्ष] जिसका कोई पक्ष करने वाला न हो, अनाथ, असहाय ।
उदा० कहै पद्माकर निपच्छन के पच्छ हित पच्छि तजि लच्छि तजि गच्छिबो करत हैं ।
—पद्माकर

निपजना—क्रि० अ० [सं० निष्पद्यते] उत्पन्न होना, पैदा होना २. बढ़ना ।
उदा० पेट परै को लखै फल ज्यौं निपजे हौ सपूत सु भागनि जागै । —घनानन्द

निपेटी— वि० [हिं० नि+पेटी=पेट्ट] भुक्खड़, अतिशय भूखा, पेट्टू ।
उदा० देखिये दसा असाध अँखियाँ निपेटिनि की, भसमी विथा पै नित लंघन करति है ।
—घनानन्द

निबटे—वि० [सं० निपट] निपट, अत्यंत ।
उदा० नये छैल निबटे आनँदघन करत फिरत अति ही बरजोरी । —घनानन्द

निबरना—क्रि० अ० [सं० निवृत्त] छूटना, मुक्त होना, छुटकारा पाना, निकलना, गुजरना २. समाप्त होना, ३. दूर होना ।
उदा० १. आस-पास पूरन प्रकास के पगार सूझै बनन अगार, डीठि गली ह्वै निबरते ।
— देव
२. बीति सब रैनि नभ निबरीं तरैयां और चहकी चिरैयाँ चारु बिधि लै अनंद की । —सोमनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भीजे तन दोऊ कँपैं क्योंहूँ जप निबरै न। —बिहारी

निबाधि—सं० पु० [सं० नि + बाध] सुखद, सुख पहुँचाने वाला, निर्दोष, जो किसी को कष्ट न दे।

उदा० नाधि-उपाधि, निबाधिहि तू गन सौतिन को नित दुःख दियो तै। —देव

निबारन—संज्ञा, पु० [सं० निवारण] रुकावट, अवरोध, ठहराव।

उदा० कारन कौन निबारन कौं कवि भूषन बेगि न बालम आयौ। —भूषण

निबाल—संज्ञा, पु० [हिं० निबाला] एक प्रकार का पुष्प।

उदा० बकस्यौ फूल निबाल कौ मोहि भई परतीत हाथनि ही ते जानियै उर अन्तर की प्रीति। —मतिराम

निबीत—वि० [निवृत्त] मुक्त, राग रहित।

उदा० गुननि अतीत, परिबीत बीतरागनि मैं, बाहरहू, भीतर निबीत रूप रावरो। —देव

निबुकना—क्रि० अ० [सं० निर्मुक्त] छुटकारा पाना, छूटना, बंधन मुक्त होना।

उदा० पीछे जसोमति आवति है कहि तोष तबै हरि जू डरि ऊठो। ऐसे उपाइ गई निबुकाइ चितै मुसकाइ दिखाइ अँगूठो। —तोष

निबेरना—क्रि० स० [सं० निवृत्त] १. सुलझाना समझना २. छाँटना, चुनना। ३. विचारना [बुं०]।

उदा० १. कहौं कहा तोसौं मैं सजनी अद्‌भुत गुन इन केरे। सिव बिरंचि सनकादिकहू सों नाहिंन जात निबेरे। —बकसीहंसराज

३. ब्रज में यह रीति कुरीति चली, यह न्याउ न कोऊ निबेरत है। —ठाकुर

निबेरा—संज्ञा, पु० [बुं०] निर्णय, फैसला।

उदा० बोधा कबि नीति को निबेरो याही भाँति अहै आप को सराहै ताको आपहू सराहिये। —बोधा

निबेस—संज्ञा, पु० [सं० निवेश] १. घर २. डेरा खेमा।

उदा० १. ब्रजति ब्रजेस के निबेस 'भुवनेस' बेस, चचुकृत चकृत विबकृत भृकुटि बंक। —भुवनेस

कान्ह ही की कृपा धन धरम निबेस है। —दूलह

निबोधना—क्रि० स० [सं० नि + बोधन] अच्छी तरह जानना, विशेष जानकारी होना।

उदा० जीव सौं जीवन, जीवन सों धन, सोधन जीवत नाथ निबोधो। —देव

निबोनैं—संज्ञा, पु० [हिं० नीबू] नीबू।

उदा० राखी रोकि भवन के कोने। एक भामिनी उरज निबोनैं। —सोमनाथ

निभालना—क्रि० स० [सं० निभ = प्रकाश, प्रभा] प्रकाशित करना, उद्‌घाटित करना, खोलना।

उदा० शंभु बसी करिबे को सुरेसहि काम पठायो है काम महा कौ, भाल के नैन निभालत ही, जरि पावक पावन भौ तनु ताकौ। —कुमारमणि

निभीचो—वि० [देश०] निडर, निर्भय।

उदा० आली दरीची की नीची उदीची की बीची निभीची ह्वै ल्याउरी लालहि। —दास

निमानी—वि० [सं० निम्र] नम्र, सुशीला, विनीता।

उदा० सुबरन तनवारी नारिनवारी बिछुरी प्रिया निमानी। —बोधा

निमिखा—संज्ञा, पु० [सं० निमिष] निमि नामक ऋषि जिनका वास पलकों में बताया गया है। २. निमेष, पल, क्षण।

उदा० खंजन मीन मृगीन की छीनी दृगंचल चंचलता निमिखा की। —देव

नियेता—संज्ञा, पु० [सं० नेता] नेता, नायक।

उदा० देव सदा नरलोक के जेता। देवनि के नर नाहि नियेता। —केशव

निरंग—संज्ञा, पु० [सं०] एक प्रकार का बढ़िया लोहा। प्राचीनकाल में दो प्रकार का लोहा शस्त्र बनाने के कार्य में आता था, साँग और-निरंग २. अंग रहित, कामदेव।

उदा० अंग ही अंग अनंग के बान, निरंग ही रंग रची रुचि रोचिनि। —देव

निरंध—वि० [सं० निर् + अंध] १. अत्यधिक अंधकार से युक्त, २. अज्ञानी।

उदा० अंध ज्यौं अंधनि साथ निरंध कुवाँ परिहूँ न हियै पछितानौ। —केशव

निरंभ—वि० [सं० निः + हिंसवा] बिना रोस, बिना किसी प्रकार की आवाज किए, नीरव, शान्त।

उदा० प्रात अरंभ की खंभ लगी निरदंभ निरंभ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सम्हारै न सासुनि । —देव

निरजोस—संज्ञा, पु० [सं० निर्यास] निचोड़, सार २. वृक्षों से आप से आप निकलने वाला रस ।

उदा० कृस्न परम रस को निरजास । कृस्न-कृपा तें यह बिसवास । —घनानन्द
२. बोलत न पिक, सोई मौन ह्वै रही है, आस पास निरजास नैननीर नीर बरसितु —सेनापति

निरजोस—संज्ञा, पु० [सं० निर्यास] निर्णय, २. निचोड़ ।

उदा० बूझि समौ ब्रज लाड़िली सों, हरि बोझ की बात कहो निरजोसे । —देव

निरडंग—वि० [सं० निः + दंभ] दम्भ रहित, स्वाभाविक, शान्त, बिना किसी प्रदर्शन के ।

उदा० प्रात आरंभ की खंभ लगी निरदंभ निरंभ सम्हारै न सासुनि । —देव

निरदकी—वि० [सं० निः + रद] बिना रद का, बिना दाँत का, अबोध ।

उदा० पाप करिबे मैं सक्ति तरुनी ज्यौं राखी अरु, पुन्य करिबे मैं जैसे बालक निरदकी । —सूरतिमिश्र

निरसंचय—वि० [सं० निर् + संचय] सारा संचय, सर्वस्व ।

उदा० निरसंचय दाता सब रस ज्ञाता सदा साधु संगति प्यारी । —दास

निराट—वि० [हिं० निराल] १. निपट, सर्वथा, निरा, बिलकुल २. निराश ।

उदा० १. पुनि निराट कलियुग जब आवै । तब को पीर कौन की पावै । —बोधा
२. मैं कीन्ही तोसों हँसी तू कत करी निराट । —बोधा

निराटक—वि० [सं० निर् + हिं० अंटक] बिना किसी रोक या बाधा के निर्भय, निधड़क ।

उदा० साधति देह सनेह निराटक है मति कोऊ कहूँ अटकी सी । —देव

निरास—संज्ञा, पु० [सं० नीर + अशनभोजन] १. नीर ही जिसका भोजन है अर्थात् पपीहा । २. निराश ।

उदा० फिरि सुधि दै, सुधि ह्वाइ प्यौ, इहिं निरदई निरास । नई नई बहुर्‌यौ दई ! दई उसासि उसास । —बिहारी

निरी—वि० [सं० निराश्रय] बिलकुल, सर्वथा, एकदम ।

उदा० यौबन ज्योति अनूप जगी ब्रज ऊपर रूप की राशि निरी तू । —देव

निरै—संज्ञा, पु० [सं० निरय] नरक ।

उदा० छिति छोड़ि कै राजसिरी बस पाय निरै-पद राज बिराजत जैसे । —केशव
सूचम उदर में उदार निरै नाभी कूप, निकसति ताते ततो पातक अतंक की । —देव

निरैठी—वि० [देश०] मस्त, मुग्ध ।

उदा० रूप-गुन-ऐंठी सुअमैठी उर पैठी बैठी लाड़नि निरैठी, मति बोलति हरै, हरी । —घनानन्द

निलत्तल—संज्ञा, पु० [सं० नीलोत्पल] नील—कमल ।

उदा० लीले दुकूल दवाइ तहीं ललना ललना कहि आज भले थर । मानो निलत्तल के दल को कन लै उड्यो भौंर बधू बिधु के पर । —गंग

निलय—संज्ञा, पु० [सं०] मकान, गृह २. स्थान ।

उदा० गतिनि के हार की बिहार के पहरू रूप किधौं प्रतिहार रतिपति के निलय के । —केशव

निवान—संज्ञा, पु० [राज० निमाण, हिं० निम्मन] तड़ाग, जलाशय ।

उदा० रूप रति आनन तें चातुरी सुजानन तें नीर लै निवानन तें कौतुक निबेरो है । —ठाकुर

निवेद—संज्ञा, स्त्री० [सं० निः + वेदना] वेदना मुक्त, शांति, आराम, चैन ।

उदा० नारि गहो किन कान्हर नैक, कहौ किन औषद, व्याधि बताऊँ । बेदन आइ, निवेद न देव, रहै दिन रैनि सु बैद न पाऊँ । —देव

निशंक अंक—संज्ञा, पु० [सं० निशंक = निर्भय + अंक = हृदय] निर्भय हृदय, अत्यंत निर्भीक ।

उदा० वायु पुत्र बालि पुत्र जामवंत धाइयो लंक में निशंक अंक लंकनाथ पाइयो । —केशव

निषेवी—वि० [सं० निषेवक,] १. अनुसारिणी, २. निवासिनी, रहने वाली ।

उदा० रलि गई रलकि झलक जलकन नीकी अलक अराल छूटी नागिनि निषेवी सी । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निसंत—संज्ञा, पु० [सं० निशांत] गृह, रहने का स्थान।
उदा० बन द्रुम कूलन पै मौर झौर झूलन पै भृंग रस फूलन पै पजन निसंत की।
—पजनेस

निसा संज्ञा, स्त्री० [फा० निशा] इच्छा, २. संतोष, प्रबोध, मुहा०—निसाभर—जीभर तृप्ति।
उदा० १. आजु निसा भरि प्यारे! निसाभरि कीजिए कान्हर केलि खुसी मैं।
—ठाकुर
२. दास निसा लौं निसा करिये दिन—बूड़त ब्यौंत हजार करौंगी। —दास

निसासिनि—वि० [सं० निःश्वास] निर्दय, कठोर।
उदा० किये काम—कमनैत दृढ़ रहत निसानो, मोहि। अहे निसा तौहूँ नहीं निसा निसासिनि तोहि। —दास

निसिमुख—संज्ञा, स्त्री० [सं० निशा + मुख] गोधूलि बेला, सन्ध्या।
उदा० छनरुचि सरि चमकति निसि मुख में।
—दास

निसुके—वि० [सं० निरवक = निजसंपत्ति विहीन] दरिद्र, रंक, निर्धन, संपति विहीन, जिन्हे अच्छे बुरे की चिन्ता न हो।
उदा० हौ कसु कै रिस के करौं, ये निसुके हँसि देत। —बिहारी

निसोती—वि० [सं० निः संयुक्त] विशुद्ध, पवित्र, जिसमें किसी भी प्रकार की मिलावट न हो।
उदा० स्वांस चंड आगे मारतंड की भभूकैं कहा तन-ताप जैसी तैसी अनल निसोती ना।
—नंदराम

निहंग—वि० [निःसंग] १. एकाकी, अकेला, एकमात्र २. अनासक्त ३. नंगा ४. बेशर्म।
उदा० १. स्वांग सो नाग निहंग जटी लपटी, अवली अहि भांगहि खाइकै।
—बेनी प्रवीन
२. अंग बोरि गंग में निहंग ह्वै कै बेगि चलि आगे आउ मैल धोइ बैल गैल लाइ लै। —आलम

निहनना—क्रि० स० [सं० निहनन] मार डालना, मारना।
उदा० करब निषेध सु उक्ति को यहै प्रथम आक्षेप, निहनहु बिधु अथवा अहै इत चंदन को लेप। —पद्माकर

निहायत—संज्ञा, स्त्री० [अ०] १. अवस्था, दशा २. अंत, ३. अत्यन्त, बहुत [वि०]।
उदा० १. याते बिधि की भूल अनैसी। जोपै करत निहायत ऐसी। —बोधा

नीजन—वि० [सं० निर्जन] सूनसान, एकान्त, निर्जन।
उदा० घोर तरुनी जन बिपिन तरुनी जन ह्वै निकसी निसंक निसि आतुर अतंक मैं।
—देव

नीठि—क्रि० वि० [ब्र०] मुश्किल से, कठिनाई के साथ।
उदा० खैंची खयून खरी खरके नहि नीठि खुलै खुभि पीठि धसी क्यों। —देव

नीधन—संज्ञा, पु० [सं० निः + धन्या] १. बिना स्त्री के, योगी, साधु, सन्यासी, २. निर्धन, गरीब।
उदा० १. सेनापति सदा जामैं रूपौ है अधिक गुनौ, जाहि देखि नीधन की छतियाँ हैं तरसी। —सेनापति

नीबी—संज्ञा, स्त्री० [सं० नीवि] स्त्रियों के अधोवस्त्र बंधन, फफुंदी।
उदा० तापर पकरि नीबी जंघन जकरि बड़े ढाढ़सनि करि दास आवति उछंग में।
—दास

नीमा—संज्ञा, पु० [फा०] नीचे पहनने की कुर्ती २. एक पहनावा जो जामा के नीचे पहना जाता है।
उदा० दारिम—कुसुम के बरन झीने नीमा मधि, दीपति दिपति सु ललित लोने अंग की
—घनानन्द

नीरो—अव्य० [हिं० निअर] नजदीक, समीप, निकट।
उदा० जीवन को जीवन-सलिल समसीरो सदा कहूँ नीरो दूरि निरमल धूरि धूसरो।
—देव

नुकरा—वि० [अ०] १. सफेद रंग का २. घोड़ों का सफेद रंग [संज्ञा, पु०] ३. चाँदी।
उदा० हरे नीले नुकरा सुरंग फुलवारी बोज, रंगे रंग, जंग जितवैया बित्त बेस के।
—सोमनाथ

नूत—संज्ञा, पु० [?] आम, आम्र।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. घोर लगै घर बाहिरहू डर नूतन नूत दवागि जरे से। —देव
२. आजु गोपाल जु बर-बधू सँग नूतन नूत निकुंज बसे निसि। —देव
नूत निसान दिसान मनौखर, सान कुसुम्म धरे सर पैना। —बेनी प्रवीन

नूल—वि० [सं० नवल] नवल, नवीन।
उदा० भुवभार उतारन जाँचे विधि ने, तुम जग रच्चा काजैं। तब उदित भये जदुकुल में सूरज नूल तेज को साजैं। —सोमनाथ

नेग—संज्ञा, पु० [सं० नैयमिक] बाँट, हिस्सा।
उदा० मन तौ मनमोहन के सँग गौ, तन—लाज मनोज के नेग परौ। —द्विजदेव

नेज—संज्ञा, स्त्री० [?] लग्गी, बाँस की वह लग्गी जिससे पतंग आदि छुड़ायी जाती है।
उदा० जीवन मूरि सी नेज लिए इनहूँ चितयो उनहूँ चितई री। —रसखानि

नेठ—संज्ञा, पु० [सं० नष्ट, हिं० नाठ] १. नष्ट, ध्वंस, नाश, २. अभाव।
उदा० १. मानत हे प्यास औ न जानत हे भूख भटू आनत हे संका धाम की न काम नेठ की। —रघुनाथ

नेत—वि० [सं० नियत] स्थिर, अचंचल।
उदा० दोष मैं निहारि गुन दोष कामना करत, या विधि अनुज्ञा बरनत मति नेत हैं। —दूलह

नेर—अव्य० [सं० निकट, हिं० निअर] निकट, पास, नजदीक।
उदा० कैसे री सुआनन पै नैन किये डेरे जैसे नँदनंदन निहारे आय नेरे हैं। —पजनेस

नेव—संज्ञा, पु० [फा० नायब] सहायक, नायब।
उदा० जहाँगीर को पंजा लेव। राजा कों मिलवौ करि नेव। —केशव

नेवर—संज्ञा, पु० [सं० नूपुर] पैर में पहने जाने वाला एक भूषण, पैंजनिया।
उदा० सुनि कै नेवर की धुनि सजनी देवर रिस कर धाये। —बकसीहंसराज

नेवाती—संज्ञा, पु० [निवात—कवच] कवच धारी, लड़ाई के लिए प्रस्तुत योद्धा।
उदा० चाहतें सलाह करि नेवाती-नितंब अव, लूट्यो लंक पुर चढ़ि बढ़ि तजि त्रास सी। —दास

नै—संज्ञा, स्त्री [फा०] १. हुक्के की निगाली २. नदी [प्रा० नय] ३. नीति।
उदा० १. हुक्का बाँध्यो फेंट में नै गहि लीन्हो हाथ। चले राह में जात हैं लिए तमाकू साथ। —गिरधर कविराय।
२. किते न औगुन जग करत, नै बै चढ़ती बार। —बिहारी

नैची—अव्य० [हिं० नीचे] नीची, नीचे की ओर।
उदा० त्यों पद्माकर पाट पै पाय दै नीर निहारत, नार कै नैची।

नैठन—संज्ञा, पु० [हिं० नाटना] भगोड़े, कायर, डरपोक।
उदा० राजन की राजरानी डोली फिरैं बनबन नैठन की बैठें बैठे भरें बेटी-बहू जू। —गंग

नैत—संज्ञा, स्त्री० [सं० नेत्र] एक प्रकार का महीन रेशमी वस्त्र।
उदा० दिन होरी खेल की हराहर भर्यों हो सुतौ, भाग जागें सोयौ निधरक नैत ढापि कै। —घनानन्द
ओबरि जूड़ि तहाँ सोवनारा। अगर पोति सुख नेत ओहारा। —जायसी

नैर—संज्ञा, पु० [हिं० नगर] नगर, शहर।
उदा० मेरे कहे मेर करु सिवाजी सों बैरि करि, गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं। —भूषण
भहराय भगै धर लोक महाभय सून भयै अरि नैर सहू। —मानकवि

नैऋत्य—संज्ञा, पु० [सं० नैऋर्त्य] राक्षस।
उदा० जार्‌यो शर पंजर छार कर्‌यो। नैऋत्यन को अति चित्त डर्‌यो। —केशव

नैस—वि० [देश० नैसुक=नैस] थोड़ा, लेशमात्र।
उदा० आलम बिहात छिन जानो जात कोटि दिन, कौन रैन की समाई सुरति न नैस हैं। —आलम

नोदन—संज्ञा' पु० [सं०] चाबुक, बैलों के हाँकने का कोड़ा।
उदा० रतिजय लेखिबे की लेखनी सुलेख किधौं, मीनरथ सारथी के नोदन नकीने हैं। —केशव

नोमु—संज्ञा, स्त्री० [सं० नव] एकतिथि, नवरात्र वाली नवमी,।
उदा० बलिपसु मोद भयो बिलपनि मंत्र ठयो, अवधि की आस गनि लयो दिन नोमु हैं। —दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नौनि—संज्ञा, पु० [सं० नमन] झुकने का भाव, झुकाव ।
उदा० तुव चितौनि लखि ठौनि लखि, भृकुटि नौनि लखि रौनि । —दास
नौनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लोनी० सं० लावण्यवती सलोनी सुन्दरी ।
उदा० गजगौनी नौनी धरै, नौन की ढरैया सीस, नीरज से नैन नारि, निरखी नुनेरा की ।
——देव
न्याति——संज्ञा, स्त्री० [सं० ज्ञाति] ज्ञाति, जाति ।
उदा० नागर न्याति नाम पिपलास । जानसुरति राजा सौ तास । ——जसवंतसिंह
न्यान—अव्य० [सं० निदान] १. निदान, अन्त में २. सुध, चेतना (संज्ञा, पु०) ।
उदा० १. निज मुख चतुराई करै सठता ठहरै न्यान, व्यभिचारी कपटी महा नायक सठ पहचान । ——दास
हियो बज्र भयो न्यान बिरह घाव बिहरत नहीं । —बोधा
२. त्यों न कछू न्यान जीकी ज्यान कौन गनै देव ज्ञान करि ध्यान धरि धीर धरिय तु री । —देव
न्यार——संज्ञा, पु० [हिं० नियार] भूसा, भुस, जौहरी या सुनारों की दूकान का कूड़ा, करकट ।
उदा० गोधन खरिक खेत अरु क्यार । गोरस—दहल नाज अरु न्यार । ——घनानन्द
न्यासी—क्रि० स० [सं० न्यस्त] धरोहर के रूप में रखना, थाती करना, अर्पण करना, रखना ।
उदा० देव जू नैननि बैननि में पिय के हियरे निसि बासर न्यासी ।। ——देव
न्वैनी——संज्ञा, स्त्री० [हिं० नोय] दुहते समय गाय बाँधने की रस्सी, नोय ।
उदा० नैनन के न्वैनी नैन नेह के निके ।
——केशव

प

पंक-जनम—संज्ञा, पु० [सं० पंकज] पंकज, कमल ।
उदा० पंक-जनम की नीद-संग भाजि गई निसि छांह । ——कुमारमणि
पंकरुह आला—संज्ञा, स्त्री० [सं० पंकरुह + आलया] कमलालया, लक्ष्मी ।
उदा० पंकरुह आला याके अंकेसय आवत, सु संके सुर सोभा सुने संकेत सदन की ।
——देव
पंगु—संज्ञा, पु० [सं०] शनैश्चर नामक एक ग्रह ।
उदा० ऐसे सखी मुकतागन मैं तिल तेरे तरौना के तीर बिराजै । आये हैं न्यौते तरैयन के जनु संग पतंग औ पंगु जु राजै ।
—रसखानि
पंचबन——क्रि० सं० [हिं० पचाना] पचाना, हजम करना ।
उदा० गंगा जी तिहारे तीर कौतुक निहारो एक आयो पक्षिराज भूख प्यास बित वन को । ख्याल मैं उताल हाल ब्याल को परो है तट कीन्ही है विचार जहीं कंठ पंचबन को ।
——नंदराम
पंचालिका——संज्ञा, स्त्री० [सं०] पुतली, गुड़िया २. नटो, नर्त्तकी ।
उदा० पल सोनित पंचालिका मल-संकलित बिसेष । जोबन में तासों रमत अमरलता उर लेखि । — केशव
पंस——संज्ञा, पु० [सं० पांशु० हिं पांस] मिट्टी, धूल, सड़ी गली वस्तु, निकृष्ट पदार्थ, कूड़ा-करकट ।
उदा० येरी इन्दुमुखी सुखी तो बिनु न एक छिन, दुखी कलुषी ह्वै क्यों अवध गैल गहि है । गाइ गाइ लोगन कह्यौ तो बंस अवतंस, हाइ हाइ अब कुल पंस मोसो कहि है ।
—बेनीप्रवीन
पँड़ैती——संज्ञा, स्त्री० [सं० पण्डिता] पण्डिता,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदुषी ।
उदा० वै पढ़े पण्डित हैं छल मैं तुम, भौंह चढ़ावन माँह पँड़ैती । —बेनीप्रवीन

पच्ची—संज्ञा, पु० [सं० पच्च] १. हिमायती, सहेली ।
उदा० गली द्वार दहलीज आँगन लौं आगमन पच्ची कैं कहत लस्यो पच्चिन के सोर सो । —रघुनाथ

पखरामनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रच्चालन] पैर प्रच्चालन की क्रिया, पाँव पूजना, पैर धोने का कार्य ।
उदा० यहूँ करी विधि सों लगुन, तब सुरगुन ने फेरि । करौ पांइ पखरामनी, सब कुटंब कों टेरि । —सोमनाथ

पखाल—संज्ञा, स्त्री० [सं० पय + हिं० खाल] मशक, चमड़े की वह बड़ी थैली जिसमें पानी भरा जाता है ।
उदा० जौही लगि पानौ तौ लौं देह सी दिखानी, फेरि पानी गये खारिज पखाल ज्यों पुरानी है । —पद्माकर

पखिया—संज्ञा, स्त्री० [सं० पच्च] पंख, पर ।
उदा० १. रूप गुण सागर अनूप गुण आगर में जाइ मिल्यौ हंस उड़ि प्रेम पखियान ते । —देव
२. बेगहि बूड़ि गई पखियां मधु की मखियां अखियां भई मेरी । —देव

पखियान—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पक्खा, पाख] पक्खा, दीवाल, भित्ति ।
उदा० डोलति न डीठि तें निकाई वह सोमनाथ देखी निसि जागि मैं जु लागि पखियान सों । — सोमनाथ

पगबदलो—संज्ञा, पु० [हिं० पाग + बदलना] पगड़ी बदलने की रीति ।
उदा० सुनो हतो अब लो पगबदलो मनबदलो इन कीन्हो । —बक्सीहंसराज

पचतोरिया—संज्ञा, पु० [सं० पंच + हि० तोला] एक प्रकार का महीन बस्त्र ।
उदा० सेत जरतारी की उज्यारी कंचुकी की कसि अनियारी डीठि प्यारी उठि पैन्हों पचतोरिया । —देव

पचौरी— संज्ञा, स्त्री० [बुं०] धोखेबाजी, चुगली ।
उदा० कब काहू सोंकरी पचौरी कब हम कान्ह बुलाये । तुम्हरी प्रेम फांस के बाँधे आपुन तें ये आये । —बकसी हंसराज

पच्छिपाल—संज्ञा, पु० [सं० पच्ची + हिं० पालतू] पालतू पक्षी, गृह के पले हुए पक्षी ।
उदा० मोरन के सोर पच्छिपाल और आये धाये-लावक चकोर दौरि हंसनि की दारिका । —देव

पछेले—संज्ञा, पु० [हिं० पछेली] हाथ में पहनने का स्त्रियों का कड़ा ।
उदा० लटकन लेरी फिर बाँकी पहुँची न कस बाला बैसवारी जानि मुँदरी पछेले हैं । —बलदेव

पछ्यावरि—संज्ञा, पु० [बुं०] दही से निर्मित एक पेय पदार्थ जो भोजनोपरान्त दिया जाता है ।
२. पीछे से परोसा जाने वाला मीठा, पकवान
उदा० १. मोद सों तारकनंद को मेद पछ्यावरि पान सिरायो हियोई । — केशव
२. जोरी पछिऔरीं सकल, प्रथम कहे नहि पार । —नरोत्तमदास

पजरा—अव्य० [सं० पंजर] पार्श्व, निकट, पास ।
उदा० नाम तिहारो पुकारै पखेरुवौ, पाहरु पंथ परे पजरा के । —देव

पटकना—क्रि० अ० [हिं० पटक] किसी वस्तु का सहसा फट या दरक जाना, निकल पड़ना ।
उदा० पटक्योई परै यह अंकुर आँसलो ऐसी कछू रसरीति-धुरी । —घनानन्द

पटकीली—वि० [हिं० पटपटाना] सन्तप्त, जली हुई, भुँजी हुई, पटपटाई हुई । २. दबाने वाली वशीभूत करने वाली ।
उदा० १. लटकीली लंक तू लुटाइ लूटे लेत लोग, सिर पटकीली भई सौतिन की छति है । —बेनी प्रवीन
२. चटकीली पटकीली गटकीली बतियन, हटकीली हेरी कत पारति विपति है । —बेनी प्रवीन

पटबीजन—संज्ञा, पु० [?] जुगुनू, खद्योत ।
उदा०—मिलि कै कच पुंजनि लाल चुनी चमकै घन मैं पटबीजन सो । —आलम

पटम—संज्ञा, पु० [?] छल-कपट ।
उदा० काहै कौं एतौ पटम रचत हौ मन रूखे-मुंह चिकने बैन । आनँदघन भोर ही उनए-उघरि उघरि दूख दैन । —घनानंद

पटवारो—वि० [सं० पटु = खुशामद + हिं० वार (प्रत्यय)] खुशामदी, चाटुकार, चटुल ।
उदा० चोप-पटवारो-चित्त-चंचल-चकोर मेरौ,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कैसी करैं बावरी परिंद विन पखियां ।
— द्विजदेव

पटवैदूर्य—संज्ञा, पु० [सं० पट = अम्बर + वैदूर्य = मणि] अम्बर मणि, सूर्य ।

उदा० तब लगि रहौ जगंभरा, राहु निबिड़ तम छाइ । जौ लौं पटवैदूर्य नहिं हाथ बगारत आइ । —दास

पटा—संज्ञा, पु० [हिं० पटाव] १. पटाव, सौदा २. पीढ़ा, पटरा [सं० पट्ट]

उदा० १. कहै पद्माकर मनोज मन, मौजन ही, नेम के पटा तें पुनि प्रेम को पटा भयो । —पद्माकर

२. पहिलें एक पटा पै दच्छिन, बैठारी है गौरि विचच्छन । —सोमनाथ

पटी—संज्ञा, पु० [सं० पट] पगड़ी, साफा ।

उदा० पीत पहराय पट बाँधि सिर सों पटी । —केशव

पटीर—संज्ञा, पु० [सं०] एक प्रकार का चंदन ।

उदा० केसरिया चक चौंधत चीरु, ज्यों केसरनीर पटीर पसीज्यो । —देव

पटेला—संज्ञा, पु० [?] एक आभूषण ।

उदा० कंठी कंठमाला भूषधी बरा बाजूबंद ककना पटेला चुरी रतन चौक जारी सी । — बोधा

पटैत—संज्ञा, स्त्री० [देश०] पटा चलाने वाली, पटेबाज ।

उदा० बांकी बनैत पटैत दिवानिन है कमनैत बड़ी सुघरै री । —ठाकुर

पट्टिस—संज्ञा, पु० [सं० पट्ट] एक अस्त्र जो भाले जैसा होता है ।

उदा० सूरज मुसल नील पट्टिस परिघ नल जामवंत असि हनू तोमर प्रहारे हैं । —केशव

पठंगा—संज्ञा, पु० [सं० पाठ] पाठ, रट, जप ।

उदा० ताही के सुढंगा सदा आनंद है संगा अरु, सोई जग चंगा जाकै गंगा को पठंगा है । —सूरति मिश्र

पतारी—वि० [सं० प्रतारणा] प्रतारित, दण्डित दण्ड पाया हुआ ।

उदा० पति की पतारी हुती पातिक कतारी, ताहि तारी तुम राम ! तारी तुम सौ न और है । —ग्वाल

पतिदेवत—वि० [सं० पतिदेवता] पातिव्रत ।

उदा० तैही जनो पतिदेवत के गुन गौरि सबै गुन गौरि पढ़ाई । —मतिराम

पतीठि—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रतिष्ठा] सम्मान, आदर, मान, प्रतिष्ठा ।

उदा० इन बातन की करी पतीठि । आए कुँवरहि छोड़ि बसीठि । —केशव

पतुकी—संज्ञा, स्त्री० [सं० पातिली] हाँड़ी, मटकी, दधि भांड ।

उदा० पतुकी धरी स्याम खिसाइ रहे उत ग्वारि हँसी मुख आँचल दै । —केशव

पतेना—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का पक्षी ।

उदा० कहै नंदराम मैन बकत पतेना रहैं अब लौ कुही है बाज आई ना लखात है ।
—नंदराम

पतैबो—संज्ञा, पु० [हिं० पतियाना] विश्वास, प्रतीति ।

उदा० सुख पावत ज्यौं तुम त्यौं हमहूँ कबहूँक तौ भूलि पतैबो करै । —सोमनाथ

पत्री—संज्ञा, पु० [सं०] बाण ।

उदा० लब के उर में उरझ्यो वह पत्री मुरझाय गिर्‌यौ धरणी महँ छत्री । —केशव

पथारु—संज्ञा, [सं० प्रस्तार] प्रस्तार, छन्दशास्त्र में नौ प्रत्ययों में प्रथम, जिससे छंदों के भेद की संख्याओं और रूपों का बोध होता है ।

उदा० पाछें गुरूहि सो पूरन बर्न कै सर्व लहू लगि यों ही मचै । ऐसें पथारू कै दोइ सों दूनोई दूनौ कै बर्न की संख्या सचै ।
—दास

पदार—संज्ञा, पु० [सं०] पैरों की धूल, मिट्टी, रज ।

उदा० आरद होत पहारद पार सपारद पुण्य-पदारनहू में । —देव

पदारथ—संज्ञा, [सं० पदार्थ] १. रत्न २. पद का अर्थ ।

उदा० उरभौन मैं मौन को घूँघट कै दुरि बैठी बिराजत बात बनी । मृदु मंजु पदारथ भूषन सों सु लसै हुलसै रस-रूप-मनी ।
—घनानंद

पद्मी—संज्ञा, पु० [सं०] हाथी ।

उदा० देखे जासु रसाल चाल पद की, पद्मी रहै ब्रीड़ितै । —दास

पन—संज्ञा, पु० [सं० पण] मोल, कीमत, २. सौदा [सं० पण्य] ३. प्रण ।

उदा० बेटी काहू गोप की बिलोकी प्यारे नन्द लाल ? नाहीं लोल लोचनी बड़वा बड़े पन की । —केशव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पनबट्टा—संज्ञा पु० [हिं० पान + बट्टा] पान रखने का छोटा गोला डिब्बा ।
उदा० साहुल से गोल से सिंधौंरा बटमार ऐसे अति ही कठिन पीन सीन पनबट्टा से ।
—दिवाकर

पनरस—संज्ञा, पु० [बुं०] वह लाल कपड़ा जिससे विवाह में गँठ बंधन होता है ।
उदा० सुन्दर इश्क रंग में रंगिकै पनरस चारु बनाई । —बकसीहंसराज

पनवां—संज्ञा, पु० [सं० पत्र] पत्ता नामक कर्ण में पहनने का एक भूषण ।
२. हमेल नामक भूषण का सुमे० ।
उदा० जाइ मिली पनवां पहिरे अनवा तिय खेत खरी मनवा के । —तोष

पनवारे—संज्ञा, पु० [सं० पूर्ण + हिं० वार प्रत्य०] पत्तल, पतरी ।
उदा० जेंवत छाक कतूहल सौं हरि लेत हँसै-कर को पनवारो । —नागरीदास

पनहा—संज्ञा, पु० [सं० पण + हार] चोरी का पता लगाने वाला ।
उदा० १. लोल छुटी लट सों मुकुतालर अग्र जुटी श्रम के कन संगति । लूटि सुधानिधि राज को राहु चल्यो पनहासु चली उड़ि पंगति
—आलम
२. सीस चढ़े पनहा प्रगट कहैं पुकारे नैन ।
—बिहारी

पनारना—क्रि० अ० [बुं०] पधारना ।
उदा० बन लौं पनारत पनारे से ह्वै रहत हैं, निसि न्यारे नीर नये नारे ज्यों निदान हैं ।
—आलम

पनीत—वि० [सं० प्रणीत] प्रणीत, निर्मित ।
उदा० नयन, नासिका, रसन स्रुति तुच पाँचौ मन मीत, प्रभु मिलि प्रभुता देत है मन-मति प्रकृति पनीत । —देव

पप्पाल—संज्ञा, पु० [?] न मरने वाला गड्ढा ।
उदा० बुरो पेट पप्पाल है, बुरो जुद्ध ते भागनो । गंग कहै अकबर सुनौ, सबतें बुरो है माँगनो । —गंग

पमारी—संज्ञा, पु० [सं० प्रबाल] प्रबाल, मूँगा ।
उदा० न्हात पमारी से प्यारी के ओठते झूठौ-मजीठ निहारि नजीक सो । तीकी रंगी अँखियाँ अनुराग सों, पी की वहै पिक बैनी की पीक सो । —देव

पबई—संज्ञा, स्त्री० [?] मैना जाति की एक चिड़िया ।
उदा० मैं एक पबई पाली तबै । अमृत बचन पढै सो तबै । —जसवंत सिंह

पब्ब—संज्ञा, पु० [सं० पवि प्रा० पब्ब] पवि, वज्र ।
उदा० - पंचगुनी पब्ब तैं पचीस गुनी पावक तैं प्रगट पचास गुनी प्रलय प्रनाली तैं ।
—पद्माकर

पब्बी—वि० [सं० पवि प्रबल] १. प्रबल २. वज्र ।
उदा० कहूँ बज्जँ को घोर पब्बी चिहारैं ।
—बोधा

पयपूर—संज्ञा, पु० [?] समुद्र, सागर ।
उदा० पब्बय परत पयपूर उछरत, भयौ सिंधु के समान आसमान सिद्ध-गन कौं ।
—सेनापति

पयोज—संज्ञा, पु० [सं०] कमल ।
उदा० पेखति प्यारी पयोज के पातनि घातन बातन मैं चित दीने । —देव

पयोदेवता—संज्ञा, स्त्री० [सं० पय=जल + देवता-देवी] जलदेवी ।
उदा० गिरापूर में है पयोदेवता सी । किधौं कंज कीं मंजु सोभा प्रकासी । —केशव

पयोधर—संज्ञा, पु० [सं०] १. जलाशय, तालाब, २. स्तन, कुच ।
उदा० तिन नगरी-तिन नागरी प्रतिपद हंसकहीन जलज हार शोभित न जहँ प्रगट पयोधर पीन । —केशव

पर—संज्ञा, पु० [सं०] १. शत्रु, दुश्मन २. से [बुंदेली में कारण कारक का चिन्ह] ३ प्रति-द्वन्दी, जोड़ ४. दूर, परे ।
उदा० १. सहिहौं तपन ताप, पर को प्रताप रघुबीर को विरह बीर मोपै न सह्यो परै ।
—केशव
पच्छी परछीने ऐसे परे परछीने बीर
—भूषण
२. राधिका कुँवरि पर गोरस बेचाइये ।
—केशव
३. सूछम कटि पर ब्रह्म की अलख लखी नहि जाय । —बिहारी
४. अपने गृह माखन खाइबो जाइबो लाल नहीं कबहूँ पर नेरे । —आलम

परकना—क्रि० अ० [हिं० परचना] परचना,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हिलना, गीधना, चसका लगना ।
उदा० 'द्विजदेव' जु सारद चंद्रिका जानि, चकोर चहूँ परकेई रहैं । —द्विजदेव
परकीति—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रकृति] प्रकृति, स्वभाव, आदत ।
उदा० अतिमतवारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है । —भूषण
परचाना—क्रि० स० [सं० प्रज्वलन] १. जलाना २. क्रि० अ० [परचना] जलना ।
उदा० आधे अन सुलगि, सुलगि रहे आधे, मानौं बिरही दहन काम क्वैला परचाए हैं ।
—सेनापति
२. किंसुक अँगार मुख माँहि परचत है ।
—ग्वाल
परझाना—क्रि० स० [प्रा० परज्झ] परचाना परतंत्र करना, पराधीन करना, वशीभूत करना ।
उदा० द्वार उठि जात घूँमि देहरी पै बैठि-जात नैन अकुलात परझाये परझत नहीं ।
—नन्दराम
परतीत—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] १. कठिन प्रभाव २. प्रतीति [सं०] विश्वास ।
उदा० जानतौ जौ इतनी परतीत तौ प्रीति की रीति कौ नाम न लेतौं । —ठाकुर
परवे—संज्ञा, पु० [फा० परिन्दः] पक्षी २. पर या पंख देना ।
उदा० ईस हमैं परदे परदे सों मिलौं उड़ि ता हरि सों परदेसों । —दास
परन—संज्ञा, पु० [सं० प्रण] टेव, आदत ।
उदा० कहै कबि गंग बन बीथिन परन परे, सूने कै कै छाँड़े दूने जंगली-जनावरनि ।
—गंग
परनि—संज्ञा, स्त्री० [?] बोल, आवाज ।
उदा० १. मन की हरनि तैसी बरनी न आवै-रति मन में उठावै जैसी परनि मृदंग की ।
—तोष
सुखिर घन आछी आछी ठान सों बाँकी परन उठान सों । —घनानन्द
परबन—संज्ञा, पु० [सं० पर्व] १. कथानक । २. ईख में दो गाँठों के बीच का स्थान ।
उदा० तजत न गाँठि जे अनेक परबन भरे, आगे पीछे और और रस सरसात हैं । —सेनापति
परबी—संज्ञा, पु० [सं० पर्व] १. वीणा के पर्दे २. पर्व-त्योहार ।
उदा० लै परबी परवी न गनै कर बीन लिये परबीन बजावै । —देव
परमोधना—क्रि०अ० [स० प्रमोद] प्रसन्न करना, फुसलाना, वश में कर लेना ।
उदा० चहूँ ओर कौंधा चकचौंधा लागै सूनी सेज स्याम सुखदाई दारी दासी परमोध्यो है । —गंग
परमोधु—संज्ञा, पु० [सं० प्रमुग्ध] बेहोश, मूर्च्छित ।
उदा० शत्रु चमू वर्णन समर लक्ष्मण को परमोधु —केशव
परविष—संज्ञा, पु० [सं० पर=श्रेष्ठ+विष] तीव्र विष, उत्कट विष ।
उदा० हाड़ से हाटक परविष से विषयरस केसौदास ऐसैं सब संतोष बखानियैं
—केशव
परा—संज्ञा, पु० [हिं० परिया, सं० पारि] १. प्याला, परई, दोये के आकार का मिट्टी का वर्तन २. पंक्ति, कतार ।
उदा० १. हौं तो सदा गरपरा तेरो परा भरो दधि पाऊँ । —बक्सी हंसराज
२. जोबन की जोति जाकी जीति की जगति कला, और कहा आइ परा बाँधि कौन लरैगो । —गंग
पराइछे—अन्य [सं० पराची] दूसरी ओर ।
उदा० आये सेख मीच के लिए । पुर पराइछे डेरा किये । —केशव
परारध—संज्ञा, पु० [सं० परार्द्ध] १. एक शंख की संख्या २. ब्रह्मा की आयु का आधा काल ।
उदा० एक तें अनेक के, परारध लौं पूरो करि, लेखो करि देखो, एक सांचो और सून है ।
—देव
परावन—संज्ञा, पु० [सं० पर्वन्] पर्व, उत्सव ।
उदा०
भजे अँध्यारी रैनि मैं, भयोमनोरथ काज ।
पूरे पूरब पुन्य तें, पर्‌यो परावन आज ।।
—मतिराम
परि—अव्य [सं० परं] निश्चय, पै ।
उदा० साँझ ही तौ सखिन समेटि करि बैठी कहा, भेट करि पी सों परि पैंठ सी भँजाइ लै ।
—पद्माकर
ठाढ़ी गई ह्वै तहाँ कर ठोढ़ी दै, पौढ़ि गई परि लाल गढ़ी सी । —बेनी प्रवीन
परिगहु—वि० [सं० परिग्रह] कुटुम्बी, परिवार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वाले ।
उदा० जन परिगहु उमराउ सब बेटा भैया बंध ।
— केशव

परिग्रह—संज्ञा, पु० [सं०] परिजन, निकट-वासी ।
उदा० अघ निग्रह संग्रह धर्म कथान, परिग्रह साधुन को गनु है । — केशव

परिपारि—संज्ञा, पु० [सं० परि+पालि] १. किनारा, घेरा २. मर्यादा ।
उदा० किंहिनर, किंहिसर राखियै खरैं बढ़ैं परि-पारि । —बिहारी

परिबीत—वि० [सं० परिवृत्त] वेष्ठित, आवृत्त, घिरा हुआ ।
उदा० गुननि अतीत, परबीत बीत रागनि मैं, बाहिर हू भीतर निबीत रूप रावरो ।
—देव

परिलाल—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लालपरी] लाल-परी, इन्द्र की एक अप्सरा ।
उदा० ठाढ़ी गई ह्वै तहाँ कर ठोढ़ी दै, पौढ़ि गई परिलाल गढ़ी सी । —बेनी प्रवीन

परिषद—संज्ञा, स्त्री० [सं० परिषद्] समूह, भीड़, राशि ।
उदा० पैंजनी जराऊ बजै गोरे गुलफनि कर कोरे मणि कंकण कनक परिषद के । —देव

परुखाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० परुषता] परुषता, कठोरता ।
उदा० मुख की रुखाई सनमुख सरुखाई परुखाई यों न पाई सुरुखाई सुरुखाई सी । —देव

परिहस—संज्ञा, पु० [देश०] दुख, कष्ट ।
उदा० पीर पर बूझत न इहै परिहसु है ।
—आलम

परेखो—संज्ञा, पु० [सं० परीक्षा] १. फल २. पश्चाताप ३. जाँच परीक्षा ४. विश्वास, प्रतीति ।
उदा० १. कहिबे कौं कोउ किन देखौ न परेखौ, वै तौ चाँदनी के चोर मोर पच्छ-अच्छ सब के —घनानंद
२. चूर भयौ चित पूरि परेखनि एहो कठोर अजौं दुख पीसत ।। —घनानंद

परेग—संज्ञा, स्त्री० [अं० पेग] लोहे के छोटे काँटे ।
उदा० कसकैं 'द्विजदेव जू ऐसी बढ़ी, उर अन्तर मानौं परेग परौ । —द्विजदेव

परेवा—संज्ञा, पु० [सं० पारावत] १. संदेश वाहक, संदेश पहुँचाने वाला २. कबूतर नाम का एक पक्षी ।
उदा० आवन बसन्त मन भावन घने जतन पवन परेवा मानो पाती लीने जातु है ।
— आलम
२. सुखी परैवा पुहुमि में एकै तुही बिहंग ।
— बिहारी

परोढ़नि—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रौढ़ा] प्रौढ़ाएँ, प्रौढ़ानायिकाएँ ।
उदा० लाज सकाम सु मध्यम बाम, विषै मति सों, पति सों सतराती । नौल सनेह निहारि नवोढ़, बिहारि परोढ़नि लौं ललचाती ।
— देव

परोना—क्रि० सं० [सं० प्रोत] मानना, स्वीकार करना २. पिरोना, गूंथना ।
उदा० पेम को परोय लीजै बिरह न बोरि दीजै, नेह को निहोर कीजै छीजै बिनु पाँवरी ।
—आलम

परोरना—क्रि० स० [?] मंत्र पढ़ कर फूंकना ।
उदा० खेलायो हमैं कहि तोष तुम्है मनुहारि के मंत्र परोरि परोरि । — तोष

पर्ब—संज्ञा, पु० [सं० पर्व] १. ग्रहण २. त्योहार ३. पूर्णिमा ।
उदा० १. रैन भए दिन तेज छिपै अरु सूर्य छिपै अति-पर्ब के छाये । —गंग

पर्वतप्रभा—संज्ञा, पु० [सं०] राक्षस, दैत्य
उदा० पन्नग प्रचण्डपति प्रभु की पनच पीन पर्व-तारि पर्वतप्रभा न मान पावई ।
—केशव

पल—संज्ञा, पु० [सं०] १. आमिष, मांस २. क्षण ।
उदा० पल सोनित पंचालिका मल-संकलित विशेष । —केशव
चरबी को चंदन पुहुप पल ढकन के अच्छत अखण्ड गोला गोलिनु की चालिका ।
—सूदन

पलक—संज्ञा, पु० [सं० पर्यंक] पर्यंक, पलंग ।
उदा० अबहूँ हलक पर हिलकी हिलोरति, पलक पर प्यारी की पलक पल लागी है । —देव

पलक्का—क्रि० वि० [हिं० परलंका=पलंका] बहुत दूर ।
उदा० कहै पद्माकर सुपुट्ठन पनारी परी, कंमर के कोता पिट्ठ पिट्ठत पलक्का से ।
—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पलकाचार—संज्ञा, स्त्री० [सं० पर्यंक + आचार] बरात की एक रीति जिसमें बरातियों के सुलाने की व्यवस्था की जाती है।

उदा० सब बरात रघुदत्त ने बुलवाई तिहिबार सजि सजि कै मंडफ गये करिबे पलकाचार। —बोधा

पलपंगत—संज्ञा, पु० [सं० पल + पंक्ति] मांस का ढ़ेर, समूह।

उदा० हरबरात हरषात प्रमथ परसत पलपंगत। —पद्माकर

पलल—संज्ञा, पु० [?] कमल, सरोज।

उदा० लसत इंदु तें अधिक मुख परम अमल वह बाल। लखो सुताल लह्यो तरल लजित पलल छबि लाल। —काशिराज

पलास—संज्ञा, पु० [सं० पलाश] १. माँसाहारी २. ढाक, टेसू।

उदा० फूलेना पलास ये पलास कै बसन्त बाज काढ़ि कै करेजा डार डारन पै डारिगो। —नंदराम

पलासी—संज्ञा, पु० [सं० पलाश] राक्षस, प्रेत, २. मांसाहारी।

उदा० खोपरा लों खोपरिन फोरैं गलकत गद् पोरी लों पलासी खाल खैंचि-खैंचि खात हैं। —मुरलीधर

पलीत—संज्ञा, पु० [फा० फलीद] १. भूत, प्रेत २. दुष्ट, नीच ३. गंदा, अपवित्र [वि०]

उदा० चाम के दाम गुनीन के आम यों विस्वा को प्रीति पलीत को मेवा। —बोधा

पवर—वि० [सं० प्रवर] श्रेष्ट, उत्तम।

उदा० नख गाँसी, सर-आँगुरी, कर पग चारु तुनीर।
दसौं दिसनि जिन बरजिते, पवर पंचसर बीर॥ —मतिराम

पवारी—संज्ञा, पु० [सं० प्रबाल] मूँगा।

उदा० रंगपाल भूषण विभूषित अरुण जीते पदुम पवारी बीरनारी के बरण हैं। —रंगपाल

पवि—संज्ञा, पु० [प्रा० पब्बय, सं० पर्वत] १. पर्वत, पहाड़ २. वज्र।

उदा० १. तहाँ जाइ सखियन के सँग पवि सोभा निरखन लागी। चन्द्रक चूर समान-बालुका भानु किरनि सौं जागी। —सोमनाथ

पवित्रा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] रेशमी दानों की माला जो कुछ धार्मिक अवसरों पर पहनी जाती है।

उदा० पचरंग पाट बिचित्र पवित्रा पहिरें मोहन मदन गुपाल। —घनानंद

पशुपति—संज्ञा, पु० [सं०] १. शंकर २. अश्वशाला. गजशाला आदि के स्वामी।

उदा० गणपति सुखदायक, पशुपति लायक, सूर सहायक कौन गनै। —केशव

पषवारे—संज्ञा, पु० [सं० पक्ष + हिं० वाले (प्रत्य०)] पक्षधर, पक्षी, चिड़िया।

उदा०—मज्जे घरवारे ज्यौं पषवारे।
बहुहठ वारे भौ भारे॥ —सूदन

पषा—संज्ञा, पु० [सं० पक्ष] दाढ़ी, श्मश्रु।

उदा० रघुराज सुनत सखा सो पषा पोंछि पाणि, त्रिसरवा त्रिशूल लिये चख अरुणारे हैं। —रघुराज

पसगैयत—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] अनुपस्थिति में, पीठ पीछे।

उदा० श्री वृषभानु राय ब्रज मंडल और बसत सब रैयत। तुमहूँ सुनी होयँगी लालन ये बातें पसगैयत॥ —बकसी हंसराज

पसनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्राशन] प्रथम बार बच्चों को अन्न खिलाये जाने वाला अन्न प्राशन नामक एक संस्कार।

उदा० भै पसनी पुनि छठयँ मासा। बालक बढ़्यो भानु सम भासा। —रघुराज

पसमीनन—संज्ञा, पु० [फा० पश्म] बढ़िया मुलायम ऊन के द्वारा बने वस्त्र, दुशाले।

उदा० फेर पसमीनन के चौहरे गलीचन पै सेज मखमली सोरि सोऊ सरदीसी जाय। —ग्वाल

पसर—संज्ञा, पु० [सं० प्रसर] १. धावा, आक्रमण, प्रसार, फैलाव।

उदा० कैसे ग्वार बाल कैसो ठहरै पसर कीने सावधान भये चाव चलत न चोरी को। —ठाकुर

पसरना—क्रि० अ० [सं० प्रसरण] घेरना, छेंकना, बढ़ना।

उदा० आनन को कंज जानि दिन में भँवर घेरें चंद जानि रैन मैं चकोर पसरत हैं। —ग्वाल

पसे—संला, पु० [हिं० पसर] पसर, आधी अंजली।

उदा० कहि कबि गंग तीन लोक की तिहारी संपै, इनके तौ तंदुलऊ तेऊ तीन पसे हैं। —गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पहाऊँ—संज्ञा, स्त्री० [देश०] सुबह, प्रभात ।
उदा० जा लगि लाँच लुगाइनि दै दिन नाच नचावत सांझ पहाऊँ । —केशव

पहासरे—संज्ञा, पु० [हिं० पह, पौ] पौ, चांदनी
उदा० चन्द के पहासरे में आँगन मैं ठाढ़ी भई, आली तेरी-जोति किधौ चाँदनी बिछाई है । —गंग

पहरावनि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पहनना] सिरोपाव, खिलअत ।
उदा० के सब कंस दिवान पितान बराबर ही पहिरावनि पाई । —केशव

पहीति—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रहित] पकी हुई दाल ।
उदा० १. मूँग माष अरहर की पहिती चनक कनक समदारी जी । —रघुराज
२. षट भाति पहीति बनाय सची । पुनि पांच सो व्यंजन रीति रची । —केशव

पहु—संज्ञा, स्त्री० [सं० पाद, हिं० पौ] ज्योति, प्रकाश । २. [पौ फटना—सुबह होना], प्रातः काल ।
उदा० १. आज सखी हम इम सुन्यो, पहुफाटत पिय गौन । —सभा विलास
२. पहिलैं तो भयो पह को सो उदो कह सुंदर मंदिर के चहुँ ओरनि । —सुंदर

पहुरनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्राहुण] पाहुनी, अतिथि ।
उदा० साँझ ही तें सोई कहा, काहू की पहुरनी है, सोवनी जु कीनी करता सों कहा करिये । —पंग

पहुला—संज्ञा, पु० [सं० प्रफुला] कुमुद पुष्प, कोंई ।
उदा० पहुला हार हिये लसै सनकी बेंदी भाल । —बिहारी

पहेल—संज्ञा, पु० [हिं० पहला] १. किसी काम का आरम्भ, शुरुआत । २. हटाने या दूर करने की क्रिया [सं० प्रखेट] ।
उदा० ग्वाल कवि बाहन की पेल में, पहेल में, कै बातन उचेल में, कै इलम सफेल में । —ग्वाल

पहेलना—क्रि० स० [सं० प्रखेट] भगाना, हटाना दूर करना ।
उदा० केसर सुरंगहू के रंग में रँगौगी आजु और गुरलोगन की लाज को पहेलिबो । —किशोर

पाँइचे सँज्ञा, पु० [फा० पाँयचा] पायजामे की मोहरी ।
उदा० घेरदार पांइचे, इजार कीमखापी तापै, पैन्हि पीत कुरती रती को रूप लीपे हैं । —ग्वाल

पांउरी—संज्ञा, पु० [हिं० पाँव + री] १. जूता २. बैठक, दालान (हिं० पौरि) ।
उदा० सीरक अधिक चारि ओर अवनी रहै न पाँउरीन बिना क्यौंहूँ बनत घनीन कौं । —सेनापति

पांवड़ी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पाँव + री (प्रत्य०) जूता, पदत्राण ।
उदा० लकुट रँगीन पीतपट धोती । पगन पांवड़ी-कानन मोती । —बोधा

पांवर—वि० [सं० पामर] मूढ़, २ दुष्ट ।
उदा० अकुल कुलीन होंत पांवर प्रवीन होत, दीन होत चक्कवै, चलत छत्र छाया के । —देव

पाँवरी—वि० [सं० पामर] तुच्छ, नगण्य, अधम
उदा० पाँवरी पेवरी ता छिन तैं दुतिकंचन की मन रंच न लैहै । —द्विजदेव

पाँह—अव्य० [सं० पार्श्व], पार्श्व बगल ।
उदा० बाँह दै सीस, उँमाह दै नैनन, पाँह दै ओट, पनाह दै नाहै । —द्विजदेव

पाइ—संज्ञा, स्त्री० [सं० पाद] १. किरण २. पैर ।
उदा० कब दिन दूलह के अरुन-बरन पाइ, पाइ हौं सुभग, जिनैं पाइ पीर जाति है । —सेनापति

पाइते—संज्ञा, पु० [सं० पाद + हि० तम] पैर की ओर, गोड़िहाने, पइताने ।
उदा० जो पल मैंपल खोलि कै देखैं तो पाइते बैठ्यो पलोटत पाइन । —सुन्दर

पाइपोस—संज्ञा, पु० [फा० पापोश] जूता, पदत्राण ।
उदा० सेनापति निरधार, पाइपोस-बरदार, हौं तौ राजा रामचन्द जू के दरबार को । —सेनापति

पाइमाल—वि० [फा० पामाल, पा=पैर + माल=कुचलना] पददलित, पैरों से रौंदा हुआ । [पामाली-संज्ञा]
उदा० भूषण जौ होइ पातसाही पाइमाल औ उजीर बेहवाल जैसे बाज त्रास चरजैं । —भूषण
छाती छाजै नखलीक प्रकट कपोल पीक,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पातिसाही पाइमाली आली क्यों झुकति है।
—गंग

पाखक—संज्ञा, पु० [सं० पक्ष+एक] एक पक्ष, पन्द्रह दिन।

उदा० पाखक ते पोखति हौं पांखुरी सी राखी है मै, प्यारे फिरि लागे पल राख आनि देखि हौ। —आलम

पाच—संज्ञा, पु० [सं०] जलना, संतप्त होना।

उदा० पाचि फटैं उचटैं बहुधा मनि रानि रटैं पानी पानी दुखी ह्वै। —केशव

पाछी—संज्ञा, पु० [सं० पक्षी] पक्षी, चिड़िया।

उदा० —रसना तू अनुरागनि पाछी।
गोविंद-गुन गन गरिमा साछी। —घनानंद

पाज—संज्ञा, स्त्री० [सं० पाजस्य] बाँध, सीमा, मर्यादा, २. पाँजर।

उदा० आनँदघन सों उघरि घुरौंगी उसरि पैज की पाजै। —घनानंद
लाज-पाज सब तोरि कै, अब खेलौंगी फाग
—ब्रजनिधि

पाढ़ा—संज्ञा, पु० [दे०] एक प्रकार का हिरण, चित्रमृग।

उदा० पाढ़े पीलखाने औ करंज खाने कीस हैं।
—भूषण

पानस—संज्ञा, पु० [फा० फीनूस] एक प्रकार का कंडील जिसमें बत्तियाँ जलाई जाती हैं।

उदा० धेर्‌यो घट आय, अन्तराय-पटनि-पट पै, तामधि उजारे प्यारे पानस के दीप है।
—घनानन्द

पानिप—संज्ञा, पु० [हिं० पानी+प] १. सरोवर, तड़ाग २. आब, चमक कांति।

उदा० १. पिय आगम सरदागमन, बिमल बाल मुख इंदु। अंग अमल पानिप भयो, फूले दृग-अरबिंदु। —मतिराम

पानु—संज्ञा, पु० [हिं० पाँव] पैर, चरण।

उदा० विधि-विधि कैनि करै टरै नहीं परेहूपानु।
—बिहारी

पाप—संज्ञा, पु० [सं०] कष्ट, दुःख।

उदा० बसिबे को ग्रीषम दिनन पर्‌यो परोसिन पाप। —बिहारी
लूटिबे के नाते पाप पट्टनै तो लूटियत।
—केशव

पामरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रावार] १. दुपट्टा २. रेशमी वस्त्र ३. मखमल।

उदा० १. साँवरी पामरी को दै खुदी बलि साँवरे पै चली साँवरी ह्वै के। —पद्माकर
२. पामरिनु पाँउरे परे हैं पुर पौरि लगि।
—देव
३. पाट, पायरी, जीभ, पद, प्रेम, सुपुन्य बिचार। —केशव

पायज—संज्ञा, पु० [?] मूत्र, पेशाब।

उदा० कर्म अकर्मनि लीन नहीं निज पायज ज्यों जल अंक लगावै। —केशव

पायस—संज्ञा, पु० [सं०] खीर।

उदा० १. सुनि मुनि नारि, उठि धाई मनुहारि-करि, सिता दधि पायस परसि ल्याई थार में। —देव

पायसे—संज्ञा, पु० [सं० पार्श्व] पड़ोस।

उदा० आई आन गाँव तें नवेली पास पायसे।
—घनानन्द
द्योरानी जेठानी सासु ननद सहेली दासी पायसे की बासी तिय तिनके हो गोल में।
—रघुनाथ
आपु बाको देखिबे को पतिवाके पाइसे में बासर में बीस बार ह्वै ह्वै ये आवत है।
— रघुनाथ

पारना—क्र० स० [पड़ना] १. डालना, फेंकना, २. सुलाना लिटाना, ३. बिताना।

उदा० १. काहू की बेटी बहून की धैरू किते घर जाय कमंध से पारैं। —ठाकुर
२. इत पारिगो को मैया मेरी सेज पै कन्हैया को। —पद्माकर
संसारिक जो होत प्रकट पति सात भाँवरैं पारै। —बकसीहंसराज
३. औधि-आस ओसनि सहारैं हाय कसैं करि जिनको दुसह दीसै पारिबो पलन को। —घनानन्द

पारस—अन्य [सं० पार्श्व] १. निकट, समीप, पास २. एक पत्थर जिसके स्पर्श से लोहा—कंचन रूप में परिणत हो जाता है।

उदा० रंध्रनि ह्वै निरखैं सजनी भनि आलम यों उपमा मन आई। रैनि-बरै सरि पारस यों झलकै जल मैं जनु पावक झाँई।
—आलम

पारा—संज्ञा, पु० [सं० पारि=प्याला] दीये के आकार का एक बड़ा मिट्टी का पात्र परई।

उदा० मृगमद-बिंद के लसत प्रतिबिंब किधों दीपक-दृगनि पर काजर के पारे हैं। —केशव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पारि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पार] सीमा, जलाशय का किनारा २. ओर, तरफ ।

उदा० केहि नर केहि सर राखिये खरे बढ़े पर पारि । —बिहारी

बारनि सुखावति उघारे सीस गावति भुलावति सी लोगन फिरत चहुँ पारि मैं । —देव

पाल—संज्ञा, पु० [सं० पाट] पर्दा, ओहारी ।

उदा० 'दास' मनमथ-साहि कंचन सुराही मुख बंसजुत पालकी कि पाल सुभ रंग है ।

—दास

पालक—संज्ञा, पु० [सं०] १. पाला हुआ लड़का, दत्तक पुत्र २. पलंग ३. पालन करने वाला ४. अश्व रक्षक ५. पलना, छोटे बच्चों का झूला ।

उदा० १. त्यों कबि ग्वाल बिरंचि बिचारि कै जोरी जोराइ दई अति खासी । जैसोइ नन्द को पालक कान्ह सो तैसई कूबरी कंस की दासी । —ग्वाल

५. पालक के बालक की पांडे गति पाई जिहि गोरस के भांडे भटकाइ मुख छांड़े हैं । —देव

पाली—संज्ञा, पु० [सं० पालि=पंक्ति] समूह, पंक्ति ।

उदा० भोरन के सोर पछिपाली और आये, धाये लावक चकोर, दौरी हंसन की दारिका ।

—देव

पाहर—संज्ञा, पु० [हिं० पत्थर] पत्थर, पाषाण कंकड़ ।

उदा० इंदुमुखी अरबिन्द से पाइन, कंटक पाहर माह परानी । —गंग

पासनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्राशन] अन्न प्राशन, बच्चों को पहले-पहले अनाज चटाने की एक रीति ।

उदा० गाये ते मँगाये गाये गाये दानियौ जगाये पौरि पूरन पला की है लला की आजु पासनी । — देव

पिंगला—संज्ञा, पु०[सं०] एक प्रकार का उल्लू, उलूक ।

उदा० पारावत, पिंगला, पपीहा, पिक, कूकि होत, केकी औ कपोत, कुंज पुंजनि घिरत है । —देव

पिंड—संज्ञा, पु० [सं०] व्यक्ति, प्राणी ।

उदा० हटपटाय के लगत हैं ओछे पिंडभूत ।

—बोधा

पिक—संज्ञा, पु० [सं० पिकाङ्क,] पपीहा, चातक ।

उदा० कोकिल, चाख, चकोर, पिक, पारावत नख नैन । चंचु चरण कलहंस के पकी कुंदरू ऐन । —केशव

पिक्कना—क्रि० स० [सं० प्रेक्षण] देखना ।

उदा० पिक्कत इक्कन इक्क ठिब्व तजि लिक्कन तक्कत । —पद्माकर

पिच—संज्ञा, पु० [सं० पिच्य] दबाव, किसी वस्तु को दबाना ।

उदा० खिचली भुजा सों लाल पिचली हिये सों लाय निचली रहे न डोले विचली पलंग पर । —ग्वाल

पिछौड़ी—वि० [हिं० पीछे+औंड़ी (प्रत्य०)] पीछे रहने वाली, कम दर्जे वाली ।

उदा० कान्ह सों पिछौड़ी है कि कान्ह की कनौड़ी है कि, मौड़ी है जु उरपी कै छल अति छाई है । —आलम

पिद्दी—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] बया पक्षी की जाति की एक चिड़िया ।

उदा० चकई हरील पिद्दी अपार ।

खुमरी सु परेवा बहु प्रकार ।

— सूदन

पिधान—संज्ञा, पु० [सं०] तकिया, गिलाफ या आवरण, पर्दा ।

उदा० संपति-निधान, रति पति के विधान, देव लाज के पिधान, परिधान में छिपि रहे ।

—देव

पिराका—संज्ञा, स्त्री० [सं० पिष्टक] कली, गोफिया ।

उदा० चंपे की पिराका है कि सोने की सिराका है । —नरोत्तमदास

पिरारे—वि० [हिं० पीड़ा+वारे=वाले] कष्ट दायक, पीड़ा देने वाले ।

उदा० रूप रस रास पास पथिक पिरारे ऐन नैन ये तिहारे ठग ठाकुर मदन के ।

—रघुनाथ

पिलना—क्रि० अ० [हिं० पेलना] घुसना, प्रवेश करना, मिलना ।

उदा० ज्यों की त्यों तुरत उठि धाई वा सुरति हीसौं मुरति न आस प्रेम पास में पिलि गई । —देव

पिसकब्ज—संज्ञा, स्त्री० [फा० पेशकब्ज] कटारी, भुजाली ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० गहि गहि पिसकब्जैं मरमनि गब्जैं तकि-तकि नब्जैं काटत हैं। —पद्माकर

पिसवाज—संज्ञा, पु० [फा० पिशवाज] नृत्य में पहना जाने वाला लहँगा।

उदा० प्यार सो पहिर पिसवाज पौन पुरवाई ओढ़नी सुरंग सुर चाप चमकाई है।
—ग्वाल

पिसानी—संज्ञा, पु० [फा० पेशानी] माथा, मस्तक।

उदा० भूषन कहत सब हिन्दुन को भाग फिरै, चढ़े ते कुमति चकताहू की पिसानी मैं।
—भूषण

पिसेमान—वि० [फा० पशेमान] लज्जित, शरमाए हुए।

उदा० घिर्‌यौ आसमान, पिसे जात पिसेमान सुर, लीजै नैंक दया, मने कीजै बानरन कौं।
—सेनापति

पीकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पीका] वृक्ष में निकले हुए नव पल्लव, कोमल।

उदा० कोमल पंकज कै पद-पंकज प्रान पियारे कि मूरति पीकी। —केशव

पीख—अव्य [सं० पीठ=स्थान] युक्त, सहित।

उदा० चढ़ी बेगमैं साह सुल्तान साथैं, सबै बैस थोरी बड़े रूप पीखे। —चन्द्रशेखर

पीठी—संज्ञा, स्त्री० [सं० पिष्टक] भिगोई हुई पीसी दाल।

उदा० काँच से कचरि जात सेष के असेष फन कमठ की पीठी पै पीठी सी बाटियतु है।
— भूषण

पीतमुख—संज्ञा, पु० [सं०] पीले मुख वाला, भौंरा।

उदा० प्रगट भयो लखि बिषमहय, विष्नु धाम सानन्दि। सहसपान निद्रा तज्यो खुलो पीतमुख बंदि। —दास

पोम—वि० [सं० प्रिय] प्रिय, प्यारा।

उदा० करि हारा भोगहि कनां पोमहि मागो संभू को अंसी। —दास

पीरना—क्रि० स० [हिं० पीड़ा] पीड़ित करना, कष्ट देना।

उदा० लांबी गुदी लमकाइ कै, काइ लियो हरि लीलि, गरो गहि पीर्‌यो। —देव

पुछपौरि—संज्ञा, पु० [हिं० पीछे+पौरि] पीछे का दरवाजा, पिछला फाटक।

उदा० दौरि दिन लाग्यो नारि मेरु भरि सूर आगे गोला छूटि लाग्यौ तातें पुछपौरि फूटि है।

पुटकाकरना—क्रि० स० [हिं० पटपटाना] भांड़ में दाना भूँजना, दाने का भाड़ में फूट जाना।

उदा० भरभूजिन कन भूजहि बैठि दुकान, पुटका करति विहँसि कै बिरही प्रान।
—सभा विलास से

पुठेठो—वि० [सं० पुष्ट] पोषित, पुष्ट, पोषण किया गया।

उदा० चहूँ ओर ज्वालनि के प्रगटे समूह, जामैं लुवैं छुवैं जरै यह अगिनि पुठेठो है।
—सूरति मिश्र

पुनेठा—वि० [बुं०] प्रवीण, चतुर।

उदा० मोहिं कछू लागत यह लरिका बातन अधिक पुनेठो। —बकसी हंसराज

पुर्निंदु—संज्ञा, पु० [सं० पूर्ण+इंदु] पूर्णिमा का चन्द्र।

उदा० कातिक पून्यो कि रात ससी दिसि पूरब अंबर मैं जिय जान्यो। चित्त भ्रम्यौ पुम-निन्दु मनिन्दु फनिन्दु उठ्यो भ्रम ही सों भुलान्यो। —देव

पुरकना—क्रि० अ० [सं० पुलक] पुलकना, प्रसन्न होना।

उदा० मरकत रंजन मरक मेरे दृग-मृग, पुरकत खंजन गरब गूँदि गूँदि कै। —देव

पुरट—संज्ञा, पु० [सं०] स्वर्ण, सोना।

उदा० ता घरी ते का भयो बिसूरति है तेरी यह मूरति निहारि भई मूरति पुरट की।
—नंदराम

पुरना—क्रि० अ० [हिं० पूरना] मिल जाना, एक हो जाना, पूरा होना।

उदा० मुरकी रुकी बंक बिलोकत लाल गुलाल में बेंदा सबै पुरिगो। —पजनेस

पुरनारि संज्ञा, स्त्री० [सं०] वैश्या, बार-बनिता।

उदा० पीतमु चले विदेस कौं यों बोली पुरनारि। जपिहौं तुहि तेरे विरह माला देहु उतारि।
—सुंदर

पुरन्दरी संज्ञा, स्त्री० [सं० पुरन्दर=इन्द्र] इन्द्राणी, इन्द्र की पत्नी, शची।

उदा० कंचन लै बिमल बिरंचि ने बनाई किधौं रुचिर अनूप देखि लाजत पुरन्दरी।
—रघुनाथ

पुरवार—संज्ञा, पु० [सं० पुर+पाल] नगर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रचक, राजा ।
उदा० काम चोर ईठ हाथ मूठी के न ढीठ, देव ठाढ़े एक ठौर ए कठोर पुरवार से । —देव

पुरिया—वि० [सं० परिपूर्ण] परिपूरित, सनी हुई ।
उदा० सीरी लगै मुकतावलि तेऊ कपूर की धूरिन सों पुरिया है । —दास

पुलिन – संज्ञा, पु० [सं०] १. बालू, रेती २. नदी का किनारा ।
उदा० १. पुलिन कलिन्दी कूल की, तहँ बैठीं ब्रज बाल । भई ध्यान में मगन सब, आगम चहत गुपाल । —सोमनाथ

पुलोमजा – संज्ञा, स्त्री० [सं०] शची, इन्द्राणी ।
उदा० पावस प्रदोष मेघ मिल्यो ज्यों सरद ससि, श्री ब्रज पुलोमजा न आजु अरसाने की । —देव

पुष – वि० [सं० पुष्ट] पुष्ट, दृढ़, बली ।
उदा० पुष सेष-सायक ललाट लग्यो छत पर्‌यौ, छिति मुरछित दरसाइ दन्त पीसनै । — समाधान

पुष्कर—संज्ञा, पु० [सं०] १. दिग्गज, हाथी २. कमल ३. जलाशय ।
उदा० कदन अनेकन बिघन को, एकरदन गन-राउ । बंदन जुत बंदन करौं, पुष्कर पुष्कर पुष्कर पाउ । —दास

पुहना – क्रि० स० [सं० प्रोत] १. गूँथना, पिरोना २. छेदना ।
उदा० वेदनहू गने गुनगने अनगने भेद भेद बिनु जाको गुन निरगुनहू पुहै । — देव

पुही – वि० [हि० पोहना] गुंथी हुई, संग्रथित, जड़ी हुई, पिरोई हुई, संयुक्त ।
उदा० घहराती कछूक घटा घन कीं, थहराती पुहपन बेलि पुही । —बेनीप्रवीन

पूखो – वि० [सं० पोषित] पोषित, पाला गया ।
उदा० तेरो तनु धनिक बनिक रूप रासि पूखो, मेरो मनु भूखो दूखो बाँभन सो मचलै । —बेनी प्रवीन

पूठि —संज्ञा, स्त्री० [हिं० पीठ] पृष्ठ, पीठ ।
उदा० ऊँचे पाँजर जठर उदार । मोटी बर्तुल पूठि अपार । —केशव

पूति—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. दुर्गंध, बदबू २. पवित्रता, शुद्धता ।
उदा० १. जनम जनम तें अपावन असाधु महा, अपरस पूति सों न छाँड़ै अजौ छूति कौं । —घनानन्द

पूर – संज्ञा, पु० [देश०] बाढ़ २. प्रवाह ।
उदा० १. देव घनस्याम-रस बरस्यौ अखंडधार, पूरन अपार प्रेम पूर नहिं सहि पर्‌यो —देव
२. आंसुन के जल पूर में पैरति सांसन सों सनि लाज लुरी है । —देव
पूर अँसुवान को रह्‌यो जो पूरि आंखिन मैं, चाहत बह्‌यो पै बढ़ि बाहिरै बहै नहीं । —पद्माकर
गोरे गरे मुकतालर, पूर ज्यों सारद ऊपर देवधुनी को । —देव
नैनहि ह्वै जल पूर बढ़्‌यौ मृगलोचनी दुक्ख समुद्र समानी । —चिन्तामणि

पूष—संज्ञा, पु० [सं० पुष्प] १. सार, तत्व २. पुष्टि, पोषण ।
उदा० १. कैधों रसखानि रस कोस दृग प्यास जानि, आनि कै पियूष पूष कीनो विधि चंद घर । —रसखानि

पेंचा—संज्ञा, पु० [फा० पेंच] सिरपेंच, पगड़ी पर लगाये जाने वाला एक आभूषण ।
उदा० केस कसि पगरी मैं बबरी बनाय बाल, मुगल बचे लौं एक पेंचा सजे जात है । —बेनी प्रवीन

पेंधना—क्रि० स० [हिं० पहनना] पहनना, धारण करना ।
उदा० मोहन लाल के मोहन को यह, पेंधति मोहन माल अकेली । — देव

पे—संज्ञा, [हिं० पै०] दोष, ऐब, अवगुण ।
उदा० दाम परैं गोहर को पे व गुन खुलैं जैसें तैसें काम परैं नर जौहर खुलत है । —ग्वाल

पेचक – संज्ञा, पु० [सं०] १. बादल २. उल्लू पक्षी ।
उदा० पेचक भो दिस दिस पेचक मुदित मन मेचक मेचक भरपूर निसि परी सी । —गंग

पेल—संज्ञा, स्त्री० [हिं० पेलना] १. भीड़-भाड़ २. अधिकता भरमार ।
उदा० १. ग्वाल कवि बाहन की पेल में, पहेल में, कै बातन उचेल में, कै इलम सफेल में । —ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. लोचन बदाम हैं सुदाम जाके हरित रतन बँदी पिसता की पेल हे । —ग्वाल

पेलना—क्रि० स० [सं० पीड़न] १. दबाना, जबरदस्ती करना २. आगे बढ़ाना ।

उदा० तो मिलिबे के विचारनि मैं अरु, मैं मन बार हजारन पेल्यौ । —सोमनाथ

पेलनि—संज्ञा, पु० [हिं० पेलना] झगड़ा, झमेला २. कसूर, दोष ।

उदा० जिय गल डारि जेलनि । अजहुँ समुझि तजि पेलनि । —दास

पेवरी—संज्ञा, पु० [हिं० पेवड़ी, पिवरैया] पीला रंग, एक प्रकार का रंग जो गोमूत्र से निर्मित होता है ।

उदा० पाँवरी पेवरी ता छिन तैं, दुति कंचन की मन रंच न लैहै । —द्विजदेव

पेसकस—संज्ञा, स्त्री० [फा० पेशकश] १. पुरस्कार, भेंट, नजर २, जुरमाना ।

उदा० १. पेसकसैं भेजत इरान फिरंगान पति उनहू कें उर याकी धाक धरकतु है ।
—भूषण

२. ठट्ट मरहट्ठा के निघट्टि डारे बाननि सौं, पेसकसि लेत हैं प्रचंड तिलगाने की ।
—सोमनाथ

पै—संज्ञा, पु० [फा०] १. पट्ठे के रेशे जो धनुष आदि पर चपकाये जाते हैं २. करण कारक का चिन्ह, से, द्वारा ।

उदा० १. पै बिन पनिच बिन कर की कसीस बिन चलत इसारे यह जनको प्रमान है ।
—दास

२. रघुबीर को बिरह बीर मोपै न कह्यौ परै । —केशव

बैठी सजि सुंदरि सहेलिनि समाज बीच बदन पै चारुता चिराक की बितै रही ।
—प्रताप साहि

पैक—संज्ञा, पु० [फा० पैकानी] पद्मराग, लाल ।

उदा० लाल में, गुलाल में, गहर गुललालन में, लालो गुन पैक सो न तूल है सुछंद के ।
—ग्वाल

पैंच—संज्ञा, पु० [हिं० पेच] १. पगड़ी की लपेट २. घुमाव ३. चालाकी ४. पगड़ी का भूषण, सिरपेंच ।

उदा० १. आनँद लाज लपेटी तहाँ लखि पैंच में जावक-दाग छिपावैं । —कुमारमणि

पैंजिवारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रतिज्ञा + हिं० वारी] व्रतधारिणी, प्रतिज्ञा करने वाली ।

उदा० जरो उह आँखि जिन देख्यो भावै और पुनि कीजै क्यों नजीकी जिय जग पैंजिवारी है । —सुन्दर

पैंड़ा—संज्ञा, पु० [हिं० पैंड] रास्ता, मार्ग । मुहा० पैंड़े परना = पीछे पड़ना, बार-बार परेशान करना ।

उदा० पेड़े परे पापी ये कलापी । —घनानन्द

पैंधना – क्रि० स० [हिं० पहनना] पहनना ।

उदा० पैंधे मैल बसन असन बिन रही मानौ भूषन विरल तिय कीन्हैं चित चैन को ।
—बेनी प्रवीन

पैरकारी—संज्ञा, स्त्री० [?] सीढ़ी, सोपान ।

उदा० सौतिसुख उतरै को पियप्रेम चढ़िबे को, कुंदन की प्यारी पैरकारी सीं सँवारी है ।
—'हजारा' से

पैरिनगत – वि० [देश०] प्राचीन, पीढ़ियों का ।

उदा० कहा नाउँ केहि गाँउँ बसत हौ कौन ठांउ घर तेरो ।
कहौ तुम्हारो कौन कहावत पैरिनगत को खेरो । —बकसीहंसराज

पैसना – क्रि० अ० [सं० प्रवेश] प्रवेश करना, घुसना ।

उदा० और कह्यौ चाह्यौ त्यौं न कछू कहौ ।
रघुनाथ इतनी कहति याते जिय में जो पैसे हौ ।
—रघुनाथ

पोइस—संज्ञा, स्त्री० [फा० पोयः] दौड़, सरपट दौड़ ५. हटो, बचो [अव्य०] ।

उदा० जाचक लाभ लह्यो यहै क्रूर कटक में जाइ । पोइस धक्का धूलि तें आयो प्रान बचाइ । —पद्माकर

पोच—वि० [फा० पूच] १. अशक्त, क्षीण, हीन २. निकृष्ट, क्षुद्र, तुच्छ ।

उदा० १. बढ़ि कै सकोच त्योंही मदनै दबाये देत परत मदन के सहाय सब पोच हैं ।
—बेनी प्रवीन

पोटना—क्रि० अ० [हिं० पुटियाना] फुसलाना, बहकाना, बातों में फँसाना २. समेटना, बटोरना [क्रि० स०] ।

उदा० ललिता के लोचन मिचाइ चन्द्र भागा सों ।
दुराइबे कों ल्याई वै तहाँई दास पोटि पोटि । —दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(ख) पोटि भट्ट तट ओट बटो केलपेटि पटी सों कटी पटु छोरत । —देव

पोत—संज्ञा, पु० [सं० प्रवृत्ति] ढंग, ढब, रीति २. दाँव, बारी ।

उदा० १. नीचे हिये हुलसो रहै गहें गेंद को पोल । —बिहारी
२. धनुष कौं पाइ खग तीर सौं चलत, मानौ ह्वै रही रजनि दिन पावत न पोत है । —सेनापति

पोति—संज्ञा, स्त्री० [सं० प्रोता] माला या गुरिया का छोटा दाना २. कांच की गुरिया ।

उदा० गात में गुभौर परि अँगिया उमंग उरताय तनि पोही पीत पोति है तिफेरी की । —देव

पोया—संज्ञा, पु० [सं० पोत] १. नया पौधा २. सांप का बच्चा ३. बच्चा, लड़का ।

उदा० १. देव दुकूल नये पहिरे, हिय फूलि उठे प्रिय प्रेम के पोया । —देव

पौनछक—संज्ञा, पु० [बुं०] बरात लगने पर सबसे प्रथम जलपान के लिए दी जाने वाली वस्तु ।

उदा० आदर अरु सनमान प्रीति सों प्रेम पौनछक आनी । —बकसीहंसराज

पौनी—संज्ञा०, स्त्री० [देश०] पुत्र जन्म और विवाह आदि में पुरस्कार लेने वाली धोबी; नाई आदि की स्त्रियाँ ।

उदा० रति लागै बौनी जाकी रंभा रुचि पौनी, लोचननि ललचौनी मुख जोति अवदात की । —देव

प्रच्छ—वि० [सं०] विवाद करने वाला, विवादी ।

उदा० कल्प कलहंस को, कि छीर निधि छबि प्रच्छ, हिम गिरि-प्रभा-प्रभु प्रगट पुनीत है । —केशव

प्रतिभट—संज्ञा, पु० [सं०] शत्रु, दुश्मन ।

उदा० प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि कालिका सी किलकि कलेऊ देत काल को । —भूषण
दीन को दयाल प्रतिभटन को शाल करे । —केशव

प्रबाल—संज्ञा, पु० [सं० प्रबाल] १. नवीन पत्ते, कोंपल २. मूँगा ।

उदा० तरुन तमाल तरु, मंजुल प्रबाल मीजि मंजरी रसाल बाल मंजी साल मंजी सी । —देव

प्रलोक—संज्ञा, पु० [सं० पर्+लोक] दूसरा लोक, स्वर्ग ।

उदा० लोक की लाज को सोच प्रलोक को वारिये प्रीति के ऊपर दोई । —बोधा

प्रवीन—वि० [सं० प्रवीण] १. चतुरा २. श्रेष्ठ वीणा ।

उदा० शिवसिंह सोहै सर्वदा, शिवा कि राय प्रवीन । —केशव

प्रान—संज्ञा, पु० [सं० प्राण] वायु, हवा ।

उदा० गुपित गुफान जोगी, भोगी लौ मखत प्रान, फँसे नहिं फंद, जम फासी सी फनिंदी के । —देव

प्रौढ़ि—संज्ञा, स्त्री० [सं०] ढिठाई, धृष्टता, निर्लज्जता ।

उदा० और गूढ़ कहा कहौं मूढ़ हौ जू, जानि जाहु, प्रौढ़ि रूढ़ केसौदास नीके करि जाने हौ । —केशव

प्रेयस्वत्—संज्ञा, पु० [सं०] एक प्रकार का अलंकार जिसमें एक भाव किसी दूसरे भाव या स्थायी भाव का अंग होता ।

उदा० जहाँ भाव में होय अंग और को और तहँ प्रेयस्वत कहि सोय गुनीभूत की व्यंग्य जह
—'व्यंग्यार्थ कौमुदी'

प्यौसाल—संज्ञा, पु० [सं० पितृ शाल] मायका, पीहर, नैहर ।

उदा० पिय बिछुरन को दुसह दुख हरष जात प्यौसाल । —बिहारी

फ

फँदवार—संज्ञा, पु० [हि० फंदा+वार=वाला] फंदा लगाने वाला. बहेलिया ।

उदा० देवजू दौरि मिले ढिग ज्यौं मृग जे न फँदे फँदवार के फंदनि । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फदैती—संज्ञा, पु० [हि० फंदा = जाल + ऐती (प्रस०)] फंदा डालने वाला, जाल में फँसाने वाला, ब्याध, शिकारी।
उदा० मनमोहन ऐसो मिलावत हैं जो फँदे तो कुरंग फँदैती करें। —बोधा

फटक—संज्ञा, पु० [सं० स्फटिक] १. स्फटिक, बिलौर २. तत्क्षण, झट (क्रि० वि०)।
उदा० १. रैनि पाई चांदनी फटक सी चटक रूख सुख पाये पीतम प्रबेनी बेनी धनि है। —बेनी प्रवीन

फटकना—क्रि० अ० [अनु०] उड़ना, उड्डयन क्रिया।
उदा० भटकि भटकि उठै मोहन में मनआली, निहचै मिलैंगे काक फटकि फटकि उठै। —काशिराज

फटकार—संज्ञा, पु० [हि० फटकन] अन्न की भूसी, अनाज का छिलका।
उदा० माल में लिखत भुलाने मेरी बेर कहूँ माखन के बीच फटकार चहियतु है। —बोधा

फटकारना—क्रि० स० [अनु०] शस्त्र आदि मारना, चलाना।
उदा० एक एक चत्री रण धीरा। योजन भर फटकारत तीरा। —बोधा

फटकि—संज्ञा, पु० [सं० स्फटिक] स्फटिक, बिल्लौर पत्थर।
उदा० चूना की चटक चंद्रभानु के चरन लागे, चहूचोर चमकत चौहटे चटक के। राज बाट पाटित सुपट पाट हाट हाट हाटक जटित लागे फाटक फटिक के। —देव

फटा—संज्ञा, पु० [सं० फण] साँप का फण।
उदा० चंद की छटान जुत पन्नग फटान जुत मुकुट बिराजै जटाजूटन के जूरे को। —पद्माकर

फटिका—संज्ञा, पु० [देश०] गुलेल की डोरी के बीचो बीच रस्सी से बुन कर बनाया हुआ वह चौकोर हिस्सा जिसमें मिट्टी की गोली रख कर चलाई जाती है।
उदा० लहुरी लहरि दूजी तांति सी लसति, जाके बीच परे मौरे फटिका से सुधरत हैं। —सेनापति

फतूह—संज्ञा, स्त्री [अ० फतेह का बहुवचन] विजय, फतेह।
उदा० तेते तुंग तीतुर तयार नृप कूरम के लै लै फरं फरं कै फतूहन फबै रहैं। —पद्माकर

फते—संज्ञा, पु० [फा० फतहबाज] १. फतह बाज, एक प्रकार का बड़ा बाज २. विजय [फा० फतह]।
उदा० २. बाहुबली जयसाहिजू फते तिहारैं हाथ —बिहारी

फनाह—संज्ञा, पु० [फा० फना] नाश, मरण।
उदा० भयो थो दिली को पति देखत फनाह आज दाह मिटि गयो थो हमीर नरनाह को। —चन्द्रशेखर

फफकि—क्रि० वि० [अनु०] फर्राटे से, वेग से, तेजी।
उदा० तुरत तुरंग करि तातो ताहि ताजन दै, फफकि फँदाय दियो बाहिर कनात के। —चन्द्रशेखर

फर—संज्ञा, पु० [हि० फड़] युद्ध, लड़ाई २. जुए का दांव ३. बिछौना, बिछावन।
उदा० १. हुंकरत हींसत फबत फुंकरत, फरमंडल मँझार दल दीरघ दलत हैं। चन्द्रशेखर
साजि चतुरंग चमू जंग जीतिबे के लिए, हिम्मत बहादुर चढ़ो जो फर फैल पै। —पद्माकर
३. सूल से फूलन के फर पै तिय फूलछरी सी परी मुरझानी। —पद्माकर

फरकाना—क्रि० स० [हि० फरकना] फड़फड़ाना, बार-बार हिलाना।
उदा० आगम भो तरुनापन को बिसराम भई कछु चंचल आंखै। खंजन के युग सावक ज्यों उड़ि आवत ना फरकावत पाखैं। —बिसराम

फरजी—संज्ञा, पु० [फा० फर्जी] शतरंज का खेल, शतरंज का एक मोहरा जिसे वजीर कहा जाता है।
उदा० पहले हम जाइ दियो कर मैं तिय खेलति ती घर में फरजी। —तोष

फरद—वि० [अ० फर्द] १. बेजोड़, अनुपम २. रजाई का ऊपरी पल्ला।
उदा० १. मोरन के सोरन की नैकों न मरोर रही घोरहू रही न, घन घने या फरद की। —ग्वाल

फरमार—वि० [फा० फर्मांबरदार] आज्ञाकारी, आज्ञापालक, ताबेदार।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० घोर धुनि बौलैं, डोलैं दिगति-दिगंतान लौं,
ओज-भरे अमित मनोज फरमार ए ।
—द्विजदेव

फरस—संज्ञा, पु० [अ फर्श] बिछौना, बैठने के लिए बिछाने का वस्त्र ।

उदा० फहर फुहारन की फरस फबी है फाब ।
—पद्माकर

फरस गलीचन के बीच मसनंद तापै
मखमली गोल गोल गुलगुली गाला में ।
—ग्वाल

फरसबंद—संज्ञा, पु० [अ० फर्श + फा० बंद] बिछौना बैठने के लिए बिछानेका वस्त्र ।

उदा० (क) दूध कैसो फेन फैल्यौ आँगन परसबंद ।
—देव

(ख) कहै पद्माकर फरागत फरसबंद,
फहर फुहारन की फरस फबी है फाब ।
—पद्माकर

फरस्सों—संज्ञा, पु० [हि० फर] प्रतिद्वंदिता, मुकाबला, सामना ।

उदा० फरस्सों फिरै फूल फंदै फरक्कैं । लगे हाथ ही के इसारे मुरक्कैं । —पद्माकर

फरागत—वि० [फा० फराख] विस्तृत, लम्बा चौड़ा ।

उदा० कहै पद्माकर फरागत फरसबंद, फहर फुहारन की फरस फबी है फाब ।
—पद्माकर

फरास—संज्ञा, पु० [अ० फर्राश] दीपक आदि जलाने वाला नौकर, सेवक, खिदमतगार ।

उदा० व्याज करि चांदनी को मैन मजलिस काज
चन्द ह्वै फरास चारु चाँदनी बिछाई है ।
—शिवकवि

फरिका–संज्ञा, पु० [हिं० फाटक] फाटक, दरवाजा ।

उदा० खोलि खोलि खरिकन के फरिकन गायें
आनि उबेरी । —बकसीहंसराज

फरिया– संज्ञा, स्त्री [ब्र०] प्रकार का लंहगा, साड़ी, धोती ।

उदा० सिर ओढ़े उढ़ोनी कसे छतिया फरिया
पहिरे फहराती फिरै । —टाकुर

फरी—संज्ञा, स्त्री [सं० फल] चमड़े की छोटी गोल ढाल ।

उदा० बाँधे बखतरी काँधे परी समसेरी फरी,
लखि न परी है काहू सखिन सकात है ।
—बेनी प्रवीन

फूले फरकत लै फरी पल कटाच्छ करबार ।
– बिहारी

फलंका—संज्ञा, पु० [फा० फलक] आकाश, नभ ।

उदा० कहै पद्माकर त्यों हुंकरत फुंकरत, फैलत फलात फाल बाँधत फलंका में ।
—पद्माकर

फलंगना —क्रि० अ० [हिं० फलाँगना] कूदना, फाँदना, एक जगह से उछल कर दूसरी जगह जाना ।

उदा० पैठि परयो पल माँहि फलांग गो, कौन कहो पकरै परछाहीं । — बेनी प्रवीन

फलक—संज्ञा, पु० [सं०] पट्टी, पटल, स्थान २ आकाश [अ० फलक] ।

उदा० मन मिलैं मिले नैन केसोदास सविलास,
छवि-आस भूलि रहे कपोल-फलक में ।
—केशव

फलकना—क्रि० अ० [हिं० फड़कना] फड़कना, उमड़ना २ विकासोन्मुख होना ।

उदा० १. नैन छलकौंहै बर बैन बलकौंहै औ कपोल फलकौं है झलकौ हैं मए अंग है ।
—दास

फलके—संज्ञा, पु० [सं० स्फोटक हिं० झलका] फफोला, झलका, छाला ।

उदा० पाइन में फलके परि परि झलके दौरत थल के बिथित भई । —पद्माकर

फलातना—क्रि० आ० [हिं० फलाँग + न (प्रत्य०)] कूदना, फाँदना, उछलना ।

उदा० कहै पद्माकर त्यों हुंकरत फुंकरत, फैलत फलात फाल बाँधत फलंका से ।
—पद्माकर

फसूकर—संज्ञा, पु० [?] फेन के कण ।

उदा० ऐसा फैलि परत फसूकर मही में मानो तारन को बृंद फूतकारन गिरत है ।
—पद्माकर

फस्त—संज्ञा, स्त्री० [अ० फस्द] नस को छेद कर शरीर का गंदा खून निकालना ।

मु० फस्द खुलवाना—शरीर का दूषित रक्त निकलवाना ।

उदा० मूड़ घुटाय औ मूछ मुड़ाय त्यों फस्त खुलाय तुला पर बैठ्यो । —माधव कवि

फाब—संज्ञा, स्त्री० [हिं० फबन] शोभा, छटा

उदा० फहर फुहारन की फरस फबी है फाब ।
—पद्माकर

औरे औरे फूलन पै दुगुन फबी है फाब ।
— द्विजदेव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फिटकना—क्रि० स० [अनु० फट] फेंकना, डालना, चलाना, मारना ।
उदा० फिटकत लाल गुलाल लखि लली अली डरपाइ । बरज्यो ललचौंहैं चखनि रसना दसन दबाइ । —दास

फिट्टु—अव्य [अनु०] धिक, छी ।
उदा० तिनको सँग छूटत ही फिट्टु रे फटि कोटिक टूक भयो न हिए ।
—केशव

फितूर—संज्ञा, पु० [अ० फुतूर] १. विकार खराबी २. गड़ा, बखेड़ा ।
उदा० १. नैन मुदे पै न फेर फितूर को टंच न टोम कछू छियना है ।
—पद्माकर

फिरक—संज्ञा, स्त्री० [?] एकप्रकार की घुमावदार छोटी गाड़ी ।
उदा० सुखद सुखासन बहु पालकी । फिरक बाहिनी सुखचाल की । —केशव

फिकाना—क्रि० अ० [हिं० फिचकुर] फिचकुर आना, मूर्च्छा आने पर मुँह से फेन निकलना ।
उदा० सौति संतापिनि सांपिनि ज्यों, मुख है—विष फूँकन ही सों फिकान्यो ।
—देव

फिलत्ता—संज्ञा, पु० [?] संतरी, रक्षक ।
उदा० भूषन भनत तहाँ फिलत्ते कों मारि करि-अमीरन पर मरहट्ठ आवने लने ।
—भूषण

फीहा—संज्ञा, पु० [?] टुकड़ा, किसी वस्तु का छोटा अंश ।
उदा० पाऊँ जो पकरि काहू जाल सों जकरि तन फीहा करौं या पपीहा दई मारे को ।
— निधान कवि

फुटका—संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार की मिठाई ।
उदा० फुटका अरु फेनी जलेबी दई बरफीन को स्वादऊ जानत ना । —बोधा

फुरना—क्रि० अ० [सं० स्फुरण] १ स्फुरित होना, निकलना २. निकालना [स० क्रि०] ।
उदा० १. हाइभाइ नैन चाइ जान्यो ज्यो लियो जिवाइ मिलिबे के दाइ घात भाँति-भाँति के फुरैं । —सुन्दर
२. फारौं जु घूँघट ओट अटै सोई दीठि फुरौं अध कों जु धँसाई । —केशव

फुरमाना—क्रि० स० [फा० फरमाना] आज्ञा देना, कहना ।
उदा० आइ सखिन सों फुरमाइ एड़ी उजराइबे को । —सुन्दर

फुरहरी—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] कम्पन, कँपकँपी
उदा० परसि फुरहरी लै फिरति बिहँसति—धँसति न नीर । —बिहारी

फुलिंग—संज्ञा, स्त्री० [सं० स्फुलिंग] स्फुलिङ्ग चिनगारी ।
उदा० 'आलम' अंग अनंग की ज्वाल तें आंगनु भौन फुलिंग से चालैं ।
—आलम

फुवाग—संज्ञा, स्त्री [हिं० फुहार] फुहार, झड़ी, पानी का महीन छींटा ।
उदा० चोवा चंदन और अरगजा रंग की परत फुवाग । —घनानंद

फूली साँझ—संज्ञा, स्त्री० [हिं० फूली + सं० सांध्य] सन्ध्या समय, मु० साँझ सी फूलना-लाल हो जाना ।
उदा० फूली साँझ कै सिंगार सूही सारी जूहीहार सोनो सों लपेटे गोरी गौने की सी आई है ।
—आलम
सूर उदै आये रही दृगन साँझ सी फूलि ।
—बिहारी

फेकरना—क्रि० अ० [हिं० फेंकें] चिल्लाना, चिल्ला चिल्ला कर रोना ।
उदा० फेकरि फेकरि फेरू फारि फारि पेट, खात, काक कंक बालक कोलाहल करत हैं ।
— 'हजारा से'

फेकारना क्रि० स० [देश०] सिर खोलना, नग्न होना ।
उदा० इतने क्षण में बिप्र इक बय किशोर बुधिमान शिरफेकार असनान करि चढ़्यो चिता पर आन । —बोधा

फेर—संज्ञा, पु० [देश०] टोना, जादू ।
उदा० फेरू कछुक करि पौरि तें फिरि चितई-मुसकाय । —बिहारी

फेरू—संज्ञा, पु० [हिं० फेख] १. स्यार, शृंगाल २. बहाना, मिस ।
उदा० १. फेकरि फेकरि फेरु फारि-फारि पेट खात काक कङ्क बालक कोलाहल करत है । —अज्ञात
हूकत डलूक बन कूकत फिरत फेरू भूकत जु भैरो भूत गावें अलिगुंज लौं ।
—देव
२. फेरु कछुक करि पौंरि तें फिरि चितई

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुसुक्याय आई जामन लेन तिय नेहै गई जमाय । —बिहारी

फैल—संज्ञा, पु० [फा० फेल] कार्य, काम ।

उदा० सैल तजि बैल तजि फैल तजि गैलन में, हेरत उमा कों यों उमापति हितै रहें ।
— पद्माकर

नग थरहरान । लाइयौ निदान ।
मनु नचत शैल । लखि ईसफैल ।
—सोमनाथ

फेंक—संज्ञा, पु० [सं० पुंख] तीर के पीछे की नोक, जिसके पास पंख लगाये जाते हैं । तीर का दूसरा किनारा ।

उदा० बिरहा हनी फोक फबी उत ह्वै प्रगटी इत ह्वै मानो बान अनी । —आलम

रोदे फोंक जमाय, चाप संजित करि सोई ।
— चन्द्रशेखर

फौंकनी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] छोटी लाठी, लकुटी ।

उदा० बाँस की फौंकनी हाथ में धारे जू, रूप के गारे, कहावैं कन्हइया ।
—नागरीदास

फौरी—क्रि० वि० [फा० फौरन] शीघ्र, फौरन ।

उदा० दुज फौरी लैं अँगुछा फेरत ।
कृष्ण कृष्ण प्रेमातुर टेरत ।।
—नागरीदास

ब

बंगे—वि० [सं० वक्र] वक्र, टेढ़ा

उदा० रन करत अड़ंगे सुभट उमंगे बैरिन बंगे करि झपटैं । —पद्माकर

बंज—संज्ञा, पु० [सं० वणिज्] व्यापार, वाणिज्य ।

उदा० रूप बजार में प्रीति को बंज न कीजियौ कोऊ कियें अकुलैहौ । —पद्माकर

बंछना—क्रि० अ० [सं० वंचन] वंचित करना, ठगना, धोखा देना ।

उदा० बनितादिक मुद्दित उद्दित रूप तें बंछति आनन्द चन्द सुधा को ।
—आलम

बंटन—संज्ञा, पु० [सं० बटक] १. गेंद २. गोला ।

उदा० डीठि डीठि को बरत बाँधि कै दृग बंटन को झेलैं । इनको मन उनको मन बीचहि दोऊ नट से खेलैं । —बकसी हंसराज

बंदनी—संज्ञा, स्त्री [हि० बंदी] बंदी, एक आभूषण जिसे स्त्रियाँ सिर पर पहनती हैं ।

उदा० मोतिन के छरे परे कानन में सानदार हीरन के हार बेना बंदनी सुरुच की ।
—ग्वाल

बंध—संज्ञा, पु० [?] बराबरी, समता ।

उदा० गहि कोमलता सरसता, सोनो होइ सुगंध तबहूँ कबहूँ होइ सीख तेरे तनु को बंध ।
—मतिराम

बन्धु—संज्ञा, पु० [हि० बंधुआ] कैदी, दास गुलाम ।

उदा० बंधु किए मधुप मदंध किए बंधु जन बँध्यो मन गंधी की सुगंध झरपन सों
— देव

बंधुर—वि० [सं०] सुन्दर, रुचिर ।

उदा० भूषित गजगाहन उठत उमाहन बंधुर बाहन लसत भले । —पद्माकर

बंबी—संज्ञा, स्त्री, [अ० मंबा] सोता, स्रोत ।

उदा० आगै चलि नृप बंबी देखी । परबत गुफा तहाँ इक पेखी । — जसवंत सिंह

बंसकार—संज्ञा, पु० [सं० वंश + कार] डोम, बंशफोर ।

उदा० औरो एक कथा कहौं, विकल भूप की राम । वहौ अयोध्या वसत है बंसकार के धाम । — केशव

बँदरी—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] गाय विशेष ।

उदा० बँदरी को है बछरा दुबरो चोखन आछे दीजो । —बकसी हंसराज

बई—वि० [हि० बाय] पृथक्, अलग-अलग ।

उदा० १ चौंकि चौंकि चकि चकि, उचकि उचकि देव जकि जकि, बकि बकि परत बई बई ।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बका—संज्ञा स्त्री० [अ० बक़ा] नित्यता, अनश्वरता।
उदा० खेलौ तौ खेलौ खुसी सों लली जो न खेलौ तो छोडौ ये रीति बका की।
—बोधा

बकी—वि० [सं० बक] बकुले के रंग के समान उज्ज्वलवर्ण वाला २. पूतना नामक राक्षसी।
उदा० १. अधर निरंग बकी बसन बदल्यो हेत प्रतीत
—दास

बकुचना—क्रि० अ० [सं० विकुंचन] संकुचित होना, सिमटना।
उदा० १. आलीरी अनूप रूप रावरो रचत रूप रचना विरंचि की सु बकुचन लागी री।
—पद्माकर
२. लाज के भार लची तरुनी बकुची बरुनी सकुची सतरानी —देव

बकुट—संज्ञा, पु० [हि०बकोट] चंगुल, मूठी, पंजा।
उदा० छीर मुख लपटाए छार बकुटनि भरें छौया ? नेकु छवि देखो छगन मँगन की
—आलम

बखिया—संज्ञा, स्त्री०, [सं० वक्ष] छाती, वक्षस्थल
उदा० (क) सोमनाथ बानिक बिलोकि छबि छाकी छकी दीन्ही ऐंचि गांसी पंचबान बखियान में। —सोमनाथ
(ख) चढ़ी जाति दीरघ उसासन सौं बखियां।
(ग) रीझि रही लखि हो रघुनाथ न भूलति केहूँ खुभी बखियान में। —रघुनाथ

बखील—वि० [अ० बखील] कंजूस, कृपण।
उदा० पति प्रेम नेम जैसे गहत बखील हेम, गुरुजन सेवा सो प्रवीन बेनी मेवा कंदु।
—बेनी प्रबीन

बखोड़ना—क्रि० स० [हि० बखोरना] छेड़ना, तंग करना।
उदा० जिन पै सयानी वारी लाज गृह काज त्रास सास को न मान्यो और कोऊ का बखोड़िहैं। —बोधा।

बखोरना—क्रि० स० [देश०] छेड़ना, तंग करना।
उदा० सांकरी खोरि बखोरि हमैं किन खोरि लगाय खिसैबों करो कोई। —देव

बगछुट्ट—क्रि० वि० [हि० बाग + छुटना]—बड़े वेग से, बेतहाशा, सरपट।
उदा० कूरम नृप मातंग जंग जगन जुटि जुट्टहिं छकि छुटटहिं बगछुट्ट कुट्ट दिग्गजन उलट्टहिं। —पद्माकर

बगना—क्रि० अ० [सं० वक] घूमना, फिरना।
उदा० चंपे के कोमल दल एक ही सों दबि रहे—काम की यों छीन तनु त्रिबली बगतु है।
—केशव

बगमेल—संज्ञा, पु० [हिं० बाग + मेल] बराबर बराबर चलना, मुठभेड़।
उदा० चले सूल सर सेल दल पेल बगमेल परे गोलन पै गोल बोल बचन प्रमान।
—चन्द्रशेखर

बगराना—क्रि० स० [हिं० बगरना, सं० विकिरण] फैलाना, बिखेरना, छिटकाना।
उदा० डीठी की डसैया, दैया दुनी में अनोखी यह, दौरे बिना, दूर ही तें विष बगरावती।
—ग्वाल

बगार—संज्ञा, स्त्री० [फा० बलगार] १. घाटी २. गायों के बाँधे जाने का स्थान।
उदा० १. बैयर बगारनि की अरिके अगारनि की नाँघती पगरानि नगारन की धमकैं।
—भूषण

बगाहना क्रि० स०[सं० अवगाहन] खोज करना छानबीन करना, २. प्रवेश करना।
उदा० पूतना को पय पान करो मनु पूत-नाते बिसबास बगाहत। —देव

बघरू—वि० [हिं० बाघ + फा० रू = मुँह] बाघ के समान मुँह वाले, बाघ के समान वीर।
उदा० बघरू बघेले करचुली जिनकी न बात कहूँ डुली। —पद्माकर

बचरा—संज्ञा, पु० [हिं० बच्चा] बच्चा।
उदा० झझकी हुँकि हूँकनि लेत परे, कच ऊपर ब्यालिनि को बचरा। —बेनी प्रवीन

बच्छी—संज्ञा, पु० [सं० वत्स] घोड़ा का बच्चा, बछेड़ा।
उदा० कच्छे से फिरैं कछ्छ के दछ्छे बछ्छी। बिना पछ्छ जीतैं सु पछ्छी बिपछ्छी।
—पद्माकर

बजनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बजना] नूपुर।
उदा० सिख-नख फूलनि के भूषन बिभूषित कै, बाँधि लीनी बलया बिगत कीनी बजनी।
—दास

बजोर—क्रि० वि० [फा०ब + जोर] जोर सहित, तेजी से।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० मनौ घुमड़ि घुमड़ि नभ घेरत उमड़ि घन, गाजत दराज तोप बाजत बजोर।
—चन्द्र शेखर

बभरी—वि० [सं० बन्ध्या] बन्ध्या, सन्तान हीन।

उदा० अरी जाको लगी तन सो सुभवै कहा जानै प्रसूत बिथा बभरी। —तोष निधि

बटक—संज्ञा, पु० [स० वट] बरा, बड़ा नाम का एक भोज्य पदार्थ।

उदा० अनगन बटक दही में बोरैं, रासि तैं अधिक गोल अरु गोरे। —सोमनाथ

बटना—क्रि० अ० [हिं० बूटना] हटना, बहकना।

उदा० करौ सु ज्यौं चित चरन जटै। हित-मकरंद पान करि कबहूँ कहूँ न काहू भाँति बटै। —घनानन्द

बटा—संज्ञा, पु० [सं० वटक] गोल।

उदा० कंदुक कलस बटे संपुट सरस मुकुलित, तामरस हैं उरोज तेरे भामिनी।
—दास

बटावनी—संज्ञा, पु० [हिं० बटाऊ] रास्ता चलने वाली, राहचलतू, अपरिचिता।

उदा० काटो जीभि जेहि जीभि ऐसे कहि आवत हैं, कान्ह हैं बटाऊ अरु हम हैं बटावनी।
—गंगा

बटुआ—संज्ञा, पु० [सं० बटक] ढेला, रोड़ा।

उदा० ताकी सुराधि सुनै कहि तोष लगै पिक को स्वरबा बटुआ से। —तोष

बटुरारा—वि० [सं० वर्त्तुल] गोलाकार, गोला।

उदा० लाँबी लटैं बटुरारी बदन्न, घनी बरुनी अरु आँखि अन्यारी। —गंग
सुन्दर सलोम सुकुमार जोनि सजै तासु, जैसैं फूल बटुरारो जामैं भर्‌यौ पानी है।
—सुन्दर कवि

बदन करिन्द संज्ञा, पु० [सं० करीन्द्र + बदन] गजानन, गणेश।

उदा० सोमनाथ बरणैं विरंचि अति चाइन सौं आकै बरबानी बुद्धि बदन करिन्द की।
—सोमनाथ

बदना—क्रि० अ० [सं० वद्] निश्चित करना, निर्दिष्ट करना।

उदा० आपनी ठौर सहेट बदौ तहँ हौ ही भले—नित भेट कै ऐहौं। —दास

बदफैलें—संज्ञा, पु० [फा० बद + फेल] बुरे-कार्य।

उदा०— तृप्ति न लहैं ध्यान में लै लै, मन तैं धोइ विषय बद फैलैं। —सोमनाथ

बदराह—संज्ञा, पु० [फा०] डाकू, बदमाश २. कुमार्गगामी।

उदा० बदाबदी ज्यौ लेत हैं ए बदरा बदराह।
—बिहारी

बन—संज्ञा, पु० [हिं० बिनौला] १. कपास का पौधा २. पानी।

उदा० सन सूख्यो बीत्यो बनौ ऊखौ लई उखारि हरी हरी अरहर अजौं धरि धरिहरि—जियनारि। —बिहारी

बनक—संज्ञा, पु० [हिं० बनना] १. साटन नाम का कपड़ा २. वेश ३. शोभा।

उदा० १. उतै तौ सघन घन घिरि कै गगन, इतै बन उपबन बन बनक बनाये हैं।
— देव

बनपाल—संज्ञा, पु० [सं०] माली, बन का रक्षक।

उदा० भूषण जे जल मध्यहि रहे। ते बनपाल बधूटिन लहे। —केशव

बनात—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बाना] एक प्रकार का बढ़िया ऊनी कपड़ा।

उदा० ऐसी तौ न गरमी गलीचन के फरसों में, है न बेस कीमती बनात के दुमाला में।
— ग्वाल

बनासपाती—संज्ञा, स्त्री० [सं० वनस्पति] वनस्पति, घास-पात।

उदा ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खाती ते बनासपाती खाती हैं।
—भूषण

बनिजना—क्रि० स० [सं० वाणिज्य] व्यापार करना।

उदा० गात नही दिखराइ बटोहिन बातन ही बनिजै बनिजारी। —देव

बनितासुत—[सं० विनतासुत] विनता के पुत्र गरुड़।

उदा० पाइ पयादे चले भले धाइ तहाँ बनिता सुतऊ तजि दीन्हौं। —बेनी प्रवीन

बनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बनना] १. दुलहिन, बधू २. स्त्री०, नायिका ३. बाटिका।

उदा० ईठ सों पीठि दै नीठि कहूँ भरि दीठि निहारतहू न बनी है। —देव

बनीन—वि० [हिं० बनना] सुशोभित।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० मोती को हार हवेल बनीन पै सारी सोहावनी कंचुकी नीली। —दास

बनौटी—वि० [हिं० बन=कपास] कपासी, कपास जैसा रंग।

उदा० दुति-लपटनु पट सेत हूँ करति बनौटी रंग —बिहारी

बबरी—वि० [हिं० बाबर] बाबर बादशाह की भाँति, बाबर कालीन।

उदा० केस कसि पगरी मैं बबरी बनाय बाल मुगुल बचे लौं एक पेंचा सजे जात है। —बेनीप्रवीन

बिछुरी पिया तें, सोछुरी सी बबरी सी हिय, भमरी सी एरी बिरहागिन में बरी सी। —ग्वाल

बया—संज्ञा, स्त्री० [?] घोड़े की एक चाल।

उदा० चहैं गाम चल्लैं चहैं तौ दुगामा चहैं ये बिया चाल चल्लैं मिरामा। —पद्माकर

बयान—संज्ञा, पु० [अ० बै+फा० आना (प्रत्यय)] पेशगी, अग्रिमधन, किसी वस्तु के खरीदने के पूर्व दी जाने वाली रकम।

उदा० त्यों पद्माकर बीर बयान में दै मन-मानिक फेरि न पैहो। —पद्माकर

बरँगा—संज्ञा, पु० [बुं०] धरन पर की कड़ी।

उदा० बरँगा अति लाल सुचन्दन के। उपजे बन-सुन्दर नन्दन के। —केशव

बर—संज्ञा, पु० [सं० वट] १. वट वृक्ष, बरगद का पेड़ २. वर, पति।

उदा० यह कौन खरौ इतरात गहें बल की बहियाँ छहियां बर की। —रसखानि

बरकत—संज्ञा, स्त्री० [अ०] प्रचुरता, अधिकता।

उदा० बरकत धूरि गई असमान। परै लखि नाहि दुर्‌यो कतमान। —बोधा

बरकति—संज्ञा, स्त्री० [अ० बरकत] बढ़ती, अधिकता, वृद्धि, लाभ।

उदा० भूषन भनै यौं कुलभूषन भ्वैसिला सिवराज तोहि दीनी सिवराज बरकति है। —भूषण

बरकनदाज—संज्ञा, पु० [फा० बर्कंदाज] १. सिपाही, बंदूकची, तोपची।

उदा० दिशिचार को मुहरा लग्यो घने बर्कंदाज। पुनिचार पंगत अश्व को सजि बीच में महराज। —बोधा

बरकना—क्रि० अ० [हिं० बरकाना] बचना, हटना, दूर रहना।

उदा० गैल गहु बैल यहि बारी तैं बरिक आयो, बारी को रखैया जो रह्यो रे रिस भरि रे। —दूलह

बरकस वि०, [हिं० कस+बल] शक्ति शाली, बली, दुर्धर्ष २. धृष्ट, ढीठ, बदमाश।

उदा० कौन सों करार कौन कौन करि आयो फेर, आय के भुलायो छक्यौ काम बरकसते। —ग्वाल

बरकसी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बरकस] ढिठाई, बदमाशी।

उदा० बातैं सरकसी रसहू में कवि भूषन तौ बालम सो बौरी बरकसी कीजियतु है। —भूषण

बरकाना—क्रि० अ० [सं० वारण] फुसलाना, बहलाना।

उदा० खेलत खुशी भए रघुबंशिन कोशल पति सुख छाये। दै नवीन भूषन पट सुंदर जस तस कै बरकाये। —रघुराज

बरखिखय—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बरछी] बरछी, एक हथियार।

उदा० कर मैं बरखिखय तिख्ख है। चमकै तडित्त सरिख्ख है। —सोमनाथ

बरगी—संज्ञा, पु० [फा० बारगी—घोड़ा] बारगीर, अश्वपाल साईस २. वे सिपाही जो सरकारी घोड़े पर राजकार्य करते थे।

उदा० १. देस दहपट्टि आयो आगरे दिली के मेंडे बरगी बहरि मानौ दल जिमि देवा को। —भूषण

२. सत्रसाल नंद के प्रताप की लपट सब, गरबी गनीम बरगीन कौं दहति है। —मतिराम

बरछैत—संज्ञा, पु० [हिं० बरछा+ऐत] बरछा चलाने वाले।

उदा० सहस दोय बरछैंत जे न कबहूँ मुख मोरत। —सूदन

बरत—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बर] वह रस्सी जिस पर चढ़कर नट क्रीड़ा करता है।

उदा० दुहूँ कर लीन्हे दोऊ बैस बिसबास बांस, डीठि की बरत चढ़ी नाचै भौंह नटिनी। —देव

बरदार—वि० [फा० बलदार] १. बटी हुई, २. ऐंठन वाली ३. वाहक, ढोने वाला।

उदा० १. पूरी गज गति बरदार है सरस अति उपमा सुमति सेनापति बनि आई है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

—सेनापति

३. सेनापति निरधार, पाइपोस बरदार, हौं तो राजा राम चंद जू के दरबार को।
—सेनापति

बरना क्रि० स० [हिं० बटना] बटना, रस्सी बनाना।

उदा० त्यों इत आइ हरे दुरि कै दरसायो भुवंगम बारन को बरि। —चन्द्रशेखर

बरबट—क्रि० वि० [सं० बल + वश] बलपूर्वक, बरबस, हठात् जबरदस्ती।

उदा० नैन मीन ए नागरनि, बरबट बाँधत आइ। —मतिराम

बरष—संज्ञा, पु० [फा० बर्ख] अंश, भाग, टुकड़ा, हिस्सा।

उदा० कैधौं विधि विधिकर पूरन ससी को, चीर करि द्वे बरष राखे अनुप अतोल है।
—ग्वाल

बरहा—संज्ञा, पु० [हिं० बहा] १. खेतों में सिंचाई के लिए बनाई गई नाली। २. मयूर [सं० वर्हि]।

उदा० १. तैं मत ऐसी धरै चित मै जग तोहि विवेकी गनै बरहा सर। —बोधा
बरहे सघन सदा सुखदायक। हरे सजल हरि गोधन लायक। —घनानंद

बरही—क्रि० वि० [सं० बलात्[बलपूर्वक, जबरदस्ती।२. मोर [सं० वर्हि]।

उदा० बर बीर यज्ञ बराह बरही लई छीनि सनेह सों। —केशव

बराक—वि० [सं० वराक] विचारा, दीन, बापुरा।

उदा० बारि के बिहार बरै बारिज बराक बोलै बात बात आवै न कपोती सुक पिक सों।
—देव

बराटि—संज्ञा, पु० [हिं० बरट] भिड़, बरै।

उदा० गंग कहै कटि केहरि कौन बराटिहु सों कटि खीन खरी सी। —गंग

बरार—वि० [सं० बल + आलय] बली, बरियार।

उदा० बानर बरार बाघ बैहर बिलार बिग, बगरे बराह जानवरन के जोम हैं।
—भूषण

बरारसो—संज्ञा, स्त्री० [अ० बउंस्साअः] १. वह दवा जो एक क्षण के अन्दर रोग से मुक्त कर दे। २. वाराणसी, काशी।

उदा० चोर को सनेही को है राड़ को सँघाती कहूँ निर्गुणी को दायक सरोगी को बरारसी। —बोधा

बरिन्दी—संज्ञा, पु० [सं० इन्दीबर] इन्दीबर, कमल।

उदा० गई कूल कलिन्दी बरिन्दी विलोचन, बैठी बिथोरि बड़ी अलकैं। —बेनी प्रवीन

बरियानी—वि० [सं० बल, हिं० बरियार] बलवती, शक्तिशालिनी।

उदा० धरा डारैं खूंदे प्रेम फास कैसी फूँदैं आजु, लेती द्वार मूंदे ऐसी बूंदैं बरियानी है। —ठाकुर

बरुठी—संज्ञा, पु० [हिं० बार + कोठा] बरोठा, बैठक २. ड्योढ़ी, द्वार।

उदा० बालम मेरो न माने कहयो, करैं मंत्र औ जंत्र घने बरुठी मैं। —ग्वाल

बरैती—संज्ञा, स्त्री० [सं० बलात्] ज्यादती, अतिचार।

उदा० कहि दास बरैती न एती भली समुझौ वृषभानु लली वह है। —दास

बरैतें—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बढ़ैतिन, बढ़ैता] ज्येष्ठ स्त्रियाँ, बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ।

उदा० मोहि न देखौ अकेलियैं दासजू, घाटहू बाटहू लोग भरैसो। बोलि उठैगी बरैतें लै नाउ तौ लागिहै अपनी दाउ अनैसो।
—दास

बरोठा—संज्ञा, पु० [हिं० बार + कोठा] ड्योढ़ी, द्वार, पौरी।

उदा० देव दिखैयन दाग बने रहे, बाग बने ते बरोठेई लूटे। —देव

बरोह—संज्ञा, स्त्री० [सं० वट + रोह] बरगद की जटा।

उदा० रेसम श्याम समूह किधौं किधौं काम बटे के बरोह अपार हैं। —रघुराज

बर्याइ—क्रि० वि० [सं० बलात्] बड़ी कठिनाई से, मुश्किल से, जैसे तैसे।

उदा० ओर तें याने चराई पैहैं अब ब्यानी बरयाइ मो मागिन आसौं। —पद्माकर
हे रघुनाथ भये रघुनाथ के आनन्द में इतनो धन दीन्हे। आजु सभा बिच श्री दसरत्थ के भिच्छुक भूप बर्याइ कै चीन्है।
—रघुनाथ

बबँत—वि० [सं० बलवन्त] बलवन्त, शक्ति-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शाली ।
उदा० सायक एक सहाय कर जीवनपति पर्यंत। तुम नृपाल १. पालत छमा जीति दुअन बवंत । —कुमारमणि

बलंद—वि० [फा०] उच्च, ऊँचा ।
उदा० छूटे बादबानन बलन्द जे जहाज मानो आवत ढिलत नित नेह नदवारे से । —पजनेस

बलदार वि० [फा०] शिकनदार, टेढ़े, घुँघराले
उदा० ग्वाल कवि विमल बिछात पै बिसुधि सोई बिछुरे सुबार, बलदार चित्त चोरे से । —ग्वाल

बलया—संज्ञा, स्त्री० [सं० त्रिबली] त्रिबली, पेट में पड़ने वाले तीन बल ।
उदा० ये पै मेरो कर तेरी बलया बिची में धसि पूजि कुच शंभु आस पुजई घनेरी है । —ग्वाल

बलि—संज्ञा, स्त्री० [सं० बला] १. सखी २. पितृ श्राद्ध के समय कौवे को दिया जाने वाला भोजन, ३. श्राद्ध पक्ष ।
उदा० १. देवजू बालम बाल को बादु बिलोकि भई बलि, हौं बलिहारी । —देव
ये अलि या बलि के अधरान में आनि चढ़ी कछु माधुरई सी । —पद्माकर
३. आदरु दै दे बोलियत बा'इसु बलि की बेर । —बिहारी

बली—संज्ञा, पु० [सं०बलराम] १. कृष्ण के बड़े भाई बलराम २. बलि निछावर (संज्ञा, स्त्री०) ।
उदा० १. कान्ह बली तन श्रोन की छंछु लसैं, अति जग्योपवीत सों मेलि ज्यों ।
— आलम
२. गगन की गैल लै चढ़ाई शैल नन्दिनि सुछैल दुलहा के बूढ़े बैल की बली गई ।
—देव

बल्लकैं - क्रि० वि० [हिं० बलक] उमंगों के साथ, बलक के साथ ।
उदा० खुले खेत की बल्लकैं खूब कूँदै । मनो खंजरीटान के गब्ब गूंदैं । —पद्माकर

बल्लवी—संज्ञा, स्त्री० [सं० बल्लव] गोपी, अहीरिनी, ग्वालिन ।
उदा० लगी रहै हरि हिय इहै, करि ईरखा बिसाल, परिरंभन में बल्लवी, भलीदली बनमाल । —मतिराम

बलूला—संज्ञा, पु० [हिं० बबूला] पानी का बुल्ला, बबूला, बुदबुदा ।
उदा० कारे काल ब्याल, महाबली बलभद्र ऐसे, बाली ऐसे, बलि से, बबूला से बिलायंगे । —देव

बलै—संज्ञा, पु० [सं० वलय] १. मण्डल २. कंकड़, ३. चूड़ी ।
उदा० १. गोल कपोल लसै मुख ऊपर, रूप अनूप, बलै बसुधा के । —देव

बलो—संज्ञा, पु० [सं० वलय] चूड़ी, हाथ का कंकड़ २. मंडल ।
उदा० आपु तौ आये हौ रुसि लला उनके तौ छला को बलो भयो सोहै । —रघुनाथ
२. बधिर धयो भुव वलय, प्रलय जलधर जनु गर्जत । —'रसकुसुमाकर' से

बलत्र—संज्ञा, पु० [सं० वरत्रा] रस्सी ।
उदा० जनु अकास बन बलित बलत्र । तरलित तुंग ताल के पत्र । —केशव

बल्लभ—संज्ञा, पु० [सं० बलभी] १. अटारी, छत २. बरामदा ।
उदा० प्रगटित होति बल्लभनि प्रभा । मोहति देखि देव बल्लभा । —केशव
ताके पर बलभी बिचित्र अति ऊँची जासौं निपटै नजीक सुरपति को अगार है ।
—दास

बसन रदन—संज्ञा, पु [सं० रद पट] रदपट, ओष्ठ ।
उदा० कनक बरण कोकनद के बरण और झलकत झांई तामैं बसनरदन की । —बलभद्र

बसात—संज्ञा, पु० [सं० वश] बश, अधिकार ।
उदा० लियौ घेरि औचक अकेलो कै विचारो जीव, कछु न बसाति यौ उपाय बल-हारे की । —घनानन्द

बसाना क्रि० स० [सं० वास] सुगंधित करना, सुवासित करना ।
उदा० देव मैं सीस बसायौ सनेह कै, भाल मृगंमद विन्दु के भाख्यो । —देव

बसीठी—संज्ञा, स्त्री० [सं० अवसृष्ट, हिं० बसीठ] दूत कर्म, दूतत्व, संदेश देने का काम ।
उदा० चूक कहौ किमि चूकत सो जिन्हैं लागी रहै उपदेश बसीठी । —दास

बसीति—संज्ञा, पु० [सं० वस्] वास, रहना ।
उदा० कथा मैं न, कंथा मैं न. तीरथ के पंथा मैं, न, पोथी मैं, न पाथ मैं, न साथ की बसीति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैं । —देव
युद्ध जुरे दुरजोधन सों कहि को न करे यमलोक बसीत्यो । —केशव

बसीले—वि० [सं वास] १. वासित, सुगंधित, २. बासी, जो ताजा न हो ।

उदा० १. जागे ते आलस पागे लसैं किये बाम की बास सों बागे बसीले । —रघुनाथ
२. ढीले से पेच वसीले से वास रसीले से नैन है आवत मीचे ।
—'रसिक रसाल' से

बसु—संज्ञा, पु० [सं० वसु] १. कुबेर २. रत्न ।

उदा० १. देखैं बारिदीन, दारिदी न होत सपने हू, पावै राज बसु, ताके बस बसुधा रहै ।
—सेनापति

बसुधा—संज्ञा, पु० [सं० वसु = रत्न + धा = धारण करने वाला] रत्न धारण करने वाला, रत्नों से निर्मित महल ।

उदा०—द्वार खरौ द्विज दुर्बल एक रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा । —नरोत्तमदास

बसेंड़ा—संज्ञा, पु० [हिं० बांस] बाँस का डंडा, मोटी लाटी ।

उदा० हौ तुम अति समरथ साकुंडल कीजौ मार बसेंड़ा । —बक्सी हंसराज

बहतोल—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बहता + ल] बरहा. जल बहाने की नाली ।

उदा० ग्रीषम निदाघ समै बैठे अनुराग भरे बाग मैं बहत बहतौल है रहट की ।
—'रसकुसुमाकर' से

बहना—क्रि० अ० [सं० वहन] १. भटकना, इधर-उधर घूमना २. नष्ट होना । ३. देखना, प्रतीक्षा करना ।

उदा० १. तू तिनके हित क्यों नंदराम बहै दिन रैनि सहै धन धाम है । —नन्दराम
३. 'आलम' कहै हो कुलकानि गई जाति हई, बिरह बिकल भई कौलों बाट बहियो । —आलम

बहनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० वहन] गति, चाल, गमन, सवारी ।

उदा० मानों घनआनँद सिंगार-रस सों सँवारी, चिक मैं बिलोकति बहनि रजनीस की ।
—घनानंद

बहबहे—संज्ञा, पु० [?] १. शरारत, नटखट पन २. लड़ाई के हाथ ।

उदा० १. इन भाँतिनि किये बहबहे कै घर ढंग सीखि गाढ़े गहे । —घनानन्द
२. निज प्रान छूटे पर समर में लरे वैसे बहबहे । —पदमाकर

बहरना—क्रि० अ० [हिं० बाहर] बाहर होना, बहना, निकलना, फूट पड़ना २. मनोरंजन होना, चित्त प्रसन्न होना ।

उदा० बहरैं रसखानि नदी रस की घहरैं बनिता कुलहू महरैं । —रसखानि

बहराना—क्रि० स० [हिं० बहलाना] १. बिताना, काटना, गुजारना २. भुलावा देना, ३. मनोरंजन किया जाना ।

उदा० नागरि नवेली अलवेली चलु नागर पै कैसे कै अकेली तोसें राति बहराति है ।
—नंदराम

बहरि—संज्ञा, पु० [फा० बह्र] समुद्र, सागर २. समूह ।

उदा० देस देह पहि आयो आगरे दिली के मेंडे, बरगी बहरि मानो दाल जिमि देवा को । — भूषण

बहल—संज्ञा, पु० [सं० वहन; स्त्रीलिंग बहली] छावनीदार बैलगाड़ी ।

उदा० साजे सब साजबाज बाजि गज राजत हैं, विविध रुचिर रथ पालकी बहल हैं ।
—नरोत्तमदास
छूटत फुहारे खगे सुमन सुगंधवारे,
बीजन बहल राखी ललित बना के है ।
—ठाकुर

बहल्ला—संज्ञा, पु० [फा० बहाल] १. आनन्द, प्रमोद २. उद्दण्ड, अनुशासनहीन ।

उदा० चलाचला छायो ख ह्वै गयौ बहल्ला हमै लल्ला देत ईस आज अवधभुवार को ।
—रघुराज

बहाली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बहाना] १. बहाना, मिस २. प्रसन्नता, खुशी ।

उदा० १. ग्वाल कवि कहै तू विचारै बर्ष बढ़ै मेरे, एरे घटैं छिन छिन आयु की बहाली है । —ग्वाल
२. छलकी परैं हैं नील छवि की तरंगैं अंग रंगदार ऊधम धमारि की बहाली पै ।
—लछिराम

बहिको—वि० [हिं० बहकना] भटका हुआ, पागल, उन्मत्त ।

उदा० कै बहिको कुकरा बहु कूर कि वाकी तिया कहुँ काहु हती है । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बहिक्रम—संज्ञा,. पु० [सं० वयः संधि] वयः संधि बाल्यावस्था और युवावस्था का मिलन :
उदा० बाल बहिक्रम ख्याल हुतो, नँदलान प्रसंग न जानियै तौ । गंग

बहीर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भीड़] १. भीड़, जन-समूह २. सेना की सामग्री ३. फौज का लवाज
मु० बहीर का शशा होना—भटकना, परेशान होना ।
उदा० १. मोतीराम सँवारों सनेही सो संभारों ना तो मन मेरो माई री बहीर को शशा भयो । —मोतीराम
२. कब आयहौ औसर जानि सुजान बहीर लौं बैस तो जाति लदी । —घनानन्द
३. ऐसे रघुबीर छीर नीर के विवेक कवि भीर की बहीर को समय के निकारि हौं ।
—हनुमान

बह्नि-जंत्र—संज्ञा, पु० [सं०वह्नि ह्न यंत्र] आतश-बाजी, पटाका ।
उदा० मनो मोहनी के मंत्र छूटैं बहु वह्नि जंत्र, देखि री दिखाऊँ तोहि दूलह किसोरी को ।
—ब्रजनिधि

बहुधा—संज्ञा, स्त्री० [सं० बहुधा] १. वसुधा, पृथ्वी २. अनेक प्रकार से [सं० बहु + धा = प्रकार] ।
उदा० १. देव यही मन आवत है सविलास वधू बिधि है बहुधा की । —देव
२. आनँद भो गहिरो समुदै कुमुदावलि तारन को बहुधा को । —भूषण

बहुत पच्छि—संज्ञा, पु० [सं० बहुल पच्च] अँधेरा पाख ।
उदा० तप सिद्धि मास अरु बहुत पच्छि ।
ऋतु शिशिर द्वादशी तिथि सुरच्छि ।।
—जोधराज

बहेवा वि० [देश०] बदमाश, चपल, उद्दण्ड ।
उदा० १. कूँजरी ऊजरी बाल बहेवा सों मेवा के मोल बढ़ावति झूठे । —देव
२. बारे के बहेवा कान्ह कारे अतिरंग के कारी-कारी बातैं सुनि होत है अजूब री ।
—गोपीनाथ

बहोटिन—संज्ञा, स्त्री० [सं० वधूटी] बीरबधूटी, लालरंग का एक कीड़ा जो बरसात में दिखाई पड़ता है ।
उदा०—तैसेई उलहि आये अंकुर हरित पीत देव कहै विविध बहोटिन सुहाये हैं । —देव

बांक—संज्ञा, स्त्री० [सं० बंक] १. हाथों में पहनने का एक आभूषण २. पैरों का एक आभूषण जो चाँदी का बना होता है । ३. हाथ की चौड़ी चूड़ी ।
उदा० १. सेज गिरी जेहरी अँगूठी देहरी के द्वार मारग में बाजूबंद बाँक फुलवारी में ।
—नंदराम

बांधनी पौरि—संज्ञा, स्त्री० [ब्र०] वह स्थान जहाँ गाएँ बाँधी जाती हैं ।
उदा० कवि ग्वाल चराइ लै आवनी ह्यां, फिर बाँधनी पौरि सुहावनी है, —ग्वाल कवि

बांधनू—संज्ञा, पु० [हिं० बाँधना] कपड़े की रँगाई में डोरों का वह बँधन जिसे रँगरेज चुनरी आदि वस्त्रों के रँगने में बीच बीच में बाँधते हैं ।
उदा० आतुर हूजिये ना बलि जाउँ, तिहारे लिये हरि बाँधनू बाँधै । —बेनी प्रवीन
कहै पद्माकर त्यों बांधनू बसनवारी
वा व्रज बसनवारी ह्यौ हरनहारो है ।
—पद्माकर

बांहक—संज्ञा, पु० [प्रा० बाअ] ? पुत्र, लड़का
उदा० नाउँ न गाँउ सुन्यौ कबहूँ वह को है कहां को है कौन को बांहक । —तोष

बाइगी—संज्ञा, पु० [?] गारुड़ी, विष को उतारने वाला ।
उदा० कहै कवि गंग बोर बिरही न बचै कोऊ, ब्याधि ब्यथा बैद हरै बिस हरै बाइगी ।
– गंग

बाइल संज्ञा, पु० [सं० वातुल] वह व्यक्ति जिसे बाई चढ़ी हो, पागल, मतवाला ।
उदा० बार बार बाइल सी घूमति घरिकते ।
—आलम

बाग—संज्ञा, पु० [अ] १. कागज की फुलवारी २. उद्यान बगीचा, ३. लगाम ४. वस्त्र ।
उदा० १. देव दिखैयन दाग बने रहे, बाग बने ते बरोठेई लूटे । —देव

बागना—क्रि० अ० [सं० बक] घूमना फिरना ।
उदा० आलम विकल बागी मैन की ठगोरी लागी नैननि की ढौरी लागी ताते तन छीनो है ।
आलम

बागर—संज्ञा, पु० [देश०] जाल ।
उदा० एकै बार उमग्यो सुहाग अनुराग राग, भाग व्रज वासिन को जैसे मृग बागरे ।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाछेइ—वि० [सं० वांछित] चाहा हुआ, अभीष्ट ।
उदा० कहै पद्माकर विमोह बस बिप्र तर्‌यो, लोभ बस लुब्धक तर्‌यो सो बान बाछेई ।
—पद्माकर
बाजी—संज्ञा, स्त्री [फा० दगाबाजी] दगाबाजी, धोखा ।
उदा० चाहत हे तुमसों हम बाजी कियो उचितै जो दियो हमै बाजी । —रघुनाथ
बाजीनदार—वि० [फा० बाजिदः] धूर्त, चालाक, वंचक ।
उदा० मन बाजीनदार अनहद धुनि बाजे उलटि बजावैं । —बकसी हंसराज
बाझु—अव्य० [सं० वर्जन] बिना, बगैर ।
उदा० आलम ए अलि नैन अली मुख बारिज बाझु रहै नहिं तैसें । —आलम
बाटना—क्रि० सं० [हिं० बाट या बट्टा] सिल आदि पर किसी चीज को पीसना ।
उदा० काँच से कचरि जात सेष के असेष फन कमठ की पीठी पै पीठी सी बाटियतु है ।
—भूषण
बाटन वारे को लगै ज्यों मेंहदी को रंग ।
—रहीम
बाट पारना क्रि० स० [सं० बाट + हिं० पारना] लूट लेना, मार्ग में डाका डालना ।
उदा० घाट पर ठाढ़ी बाट पारति बटोहिन की, चेटकी सी डीठि मन काको न हरति है ।
—देव
बाठी—संज्ञा, पु० [बुं०] १. शरारती २. पथिक
उदा० १. अति बलबन्त गुनीले गरुवे गायें गेरत बाठी । —बकसी हंसराज
२. कह गिरधर कविराय सुनहु हो दूर के बाठी । —गिरधर कविराय
बाडि—संज्ञा, स्त्री० [सं० वाट, हिं० बाढ़ि] शाण, तलवार आदि की धार ।
उदा० हरि बिन फेरत आइ ब्रज गरजि गरजि ललकार । ये असाढ़ घन तड़ित की बाडि धरी तलवार । —रसलीन
बाड़क—वि० [हिं० बार=किनारा, छोर] किनारेदार ।
उदा० घूम घुमारिय घांघरिया सजि बाड़क ओढ़नि ओढ़ चलै लजि । —बोधा
बाढ़—संज्ञा, स्त्री० [सं० वाट] शाण, तलवार आदि शस्त्रों की धार ।
मुहा० बाढ़ धराना—शाण पर तलवार आदि के धार को तेज करना ।
उदा० ठाढ़े उरोजनि बाढ़ई की दृग, काम कुठारिन बाढ़ धराये । —देव
बाथ—संज्ञा, पु० [राजस्था०] अंकमाल, गोद, अंक ।
उदा दृग मींचत मृगलोचनी धर्‌यो उलटि भुज बाथ । —बिहारी
बादला—संज्ञा, पु० [?] सोने चाँदी का तार, कामदानीतार ।
उदा० सेत सेत तोसक चँदोवा चहुँ ओर तने, सेत बादला ते सुखमा सी चारु च्वे रही ।
—ग्वाल
बादवान—संज्ञा, पु० [फा०] पाल ।
उदा० छूटे बादबानन बलंद जे जहाज मानो आवत ढिलत नित नेह नदवारे से ।
—पजनेस
बान—संज्ञा, पु० [सं० वर्ण] वर्ण, रंग ।
उदा० केलि को कलपतरू सोभा ही को रतिपति, काम को पियूष ऐन काम ही के बान है ।
—आलम
बानक—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बनाना] रूप, शोभा, छटा २. वेश ।
उदा० १. कैसो मनोहर बानक मोहन सोहन सुन्दर काम ते आली । —रसखानि
२. यहि बानिक मों मन बसौ सदा बिहारी लाल । —बिहारी
बाना—संज्ञा, पु० [सं० बाण] भाले के आकार का हथियार, जिसमें झंडा भी बाँध देते हैं ।
उदा० बाने फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । —भूषण
बाना बाँधना—क्रि० स० [बु० मुहावरा] जिम्मेदारी लेना, किसी काम का बीड़ा लेना ।
उदा० ठाकुर कहत याकी बड़ी है कठिन बात याको नही भूलि कहूँ बाँधियत बानो है ।
—ठाकुर
बानो—संज्ञा, स्त्री० [सं० वर्ण] १. चमक, आभा २. वाणी, सरस्वती ३. वणिक ।
उदा० १. सेनापति बानी सौं न जाति है बखानी, देह कुंदन तैं अधिकानी बानी सरसति है ।
—सेनापति
बाब संज्ञा, पु० [फा०] १. सम्बन्ध २. योग्यलायक ३. द्वार, दरवाजा ४. परिच्छेद ।
उदा० १. तासों मिलबे को एहो कबि रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आजु भावतो करत सौज ऐसो काम बाबकी। —रघुनाथ

बाबस—क्रि० वि० [सं० बल + वश, प्रा० बाबस] बलात्, बलपूर्वक, जबरदस्ती।

उदा० दै गए चित्त मैं सोच-विचार, सु लै गये—नींद छुधा बल बाबस। —देव

बार—संज्ञा, पु० [सं० द्वार] १. द्वार, दरवाजा २. कंघी।

उदा० १. बोर्‌यो बंस बिरद मैं, बौरी भइ बरजत मेरे बार बार बार बीर कोई पैठो जानि। —देव

२. बारन बार सँवारि सिंगारत, मोतिन हार धरैं तन गोरैं। —मतिराम

बारकसी—संज्ञा, स्त्री० [फा० बारकसी] घोड़े का एक साज, २. भारवाहन; बोझ ढोना।

उदा० सबही पर माहिर जटित जवाहिर होती जाहिर बारकसी। —पद्माकर

बारगाह—संज्ञा, स्त्री० [फा०] डेरा, खेमा, तंबू, २. ड्योढ़ी।

उदा० किंकिनी की धुनि तैसी नूपुर निनाद सुनि सौतिन के बाढ़त बिषाद बार गाह की। —उदयनाथ

बारना—क्रि० स० [सं० बारण] १. मना करना, २ छुड़ाना, मुक्त करना, रोकना।

उदा० १. वहै सुनि पैहै ऐहै दैहै गारि चारि नैकु नूपुरनि बारि नारि नंद के बगर मैं। —आलम

२. बार न कीन्ही पलौ भरि की हरि, ग्राह ते बारन बारन कीन्हौं। —बेनी प्रवीन

बारबधूटी—संज्ञा, स्त्री० [सं० बारवधू] बाराङ्गना, वैश्या।

उदा० त्यों न करै करतार उबारक ज्यों चितई वह बारबधूटी। —केशव

बारलाक—वि० [अ० बर्राक] उज्ज्वल, शुभ्र धवल, चमकीला, जगमगाता हुआ।

उदा० ताग सो तपासो बारलाक सो लुकंजन सो छिद्र कैसो छन्द कहिबे को छलियतु है। —बलभद्रमिश्र

बाल—संज्ञा, पु० [सं० बालक] पोच वर्ष का हाथी का बच्चा।

उदा० उरझि उरझि गिरि झाँख रहे झाखरनि, बेलिन में बाँधे सृग बाल बिड़ बावरनि। —गंग

बालक—संज्ञा, पु० [सं०] हाथी का बच्चा २. मोथा वा जल पौधे।

उदा० बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारे सब काल कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुख को। —केशव

२. लौंग फूल दल सेवट लेखौ। एल फूल दल बालक देखौ। —केशव

बाला—वि० [फा०] १. जो ऊपर की ओर हो, ऊँचा २. एक वर्णवृत्त ३. भार्या, पत्नी ४. हाथ में पहनने का कड़ा ५ देवी ६. स्त्री।

उदा० १. संग सखी परबीन अति प्रेम सों लीन मनि आभरन जोति छबि होति बालाहि। —दास

४. कोटिक पाप कटे बिकट, सटके दुख अकुलाइ। आजु सुफल मानो जनमु लखि बाला के पाइ। —सोमनाथ

बासबगोप—संज्ञा, [स०] इन्द्रबधूटी नामक एक बरसाती कीड़ा।

उदा० गोपसुता बन बासव गोप ज्यों, कारी घटानि फिरैं भटभेरै। —देव

बाह—संज्ञा, पु० [सं०] अश्व, घोड़ा।

उदा० कहूँ देत बाह के प्रवाह ऊदावत राम, कहूँ देत कुंजर धजानि धूरि धूसरे। —गंग

बाहकी—संज्ञा, स्त्री० [सं० वाहक + ई (प्रत्य०)] कहारिन, पालकी ले जाने वाली स्त्री।

उदा० सजो बाहकी सखी सुहाई। लीन्ही शिवि-का कंध उठाई। —रघुनाज

बीसबिसे—क्रि० वि० [देश०] बीसोबिस्वा, पूर्णतया, २. निश्चयपूर्वक।

उदा० खेलिबोई हँसिबोई कहा सुख सों बसिबो बिसेबीस बिसारो। —देव

बासा—संज्ञा, पु० [?] एक पक्षी।

उदा० बासा को गनैं न कछु जंग जुरैं जुर्रन सों, बाजो-बाजी बेर बाजी बाजहू सौं लै रहै। —पद्माकर

बाहना—क्रि० स० [सं० वहन] फेंकना, चलाना, डालना छोड़ना, ढोना, लादना।

उदा० बान सी बुंदन के चदरा बदरा बिरहीन पै बाहत आवैं। —पद्माकर

बाहनि—संज्ञा, पु० [सं० प्रवाह + हिं० न प्रत्य०] प्रवाह, धारा।

उदा० तकि मोरनि त्यों चख ढोर रहे, ढरि गौ हिय ढोरनि बाहनि की। —घनानन्द

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाहिबो—क्रि० स० [सं० वहन] चलाना ।
उदा० 'ग्वाल कवि' कठिन बिसाहिवौ दुसह दुःख कोऊ कहै बाहिबौ कठिन असि-मेह कौ ।
—ग्वाल

बिउर—संज्ञा, पु० [सं० विवर] छिद्र, बिल कुंड, कन्दरा ।
उदा० उर सम शिला उदर कटि केहरि नाभि बिउर सम गाई । —बोधा

बिगचना—क्रि० अ० [?] पछाड़ खाना ।
उदा० मोहन लखि यह सबनि ते है उदास दिन रात उमहत हँसति बकति डरति बिगचति बिलखि रिसाति । —रसलीन

बिगूँचना—क्रि० स० [सं० विकुंचन] दबोच लेना, धर दबाना ।
उदा० लै परनालो सिवा सरजा करनाटक लौं सब देस बिगूँचे । —भूषण

बिगोना—क्रि०स [सं० विगोपन] भ्रम में डालना, नष्ट करना, छिपाना ।
उदा० ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि भूषन अल्लिफ तैं यों पछार्‌यो । —भूषण

बिचरना—क्रि० अ० [सं० विचरण]—आना, उत्पन्न होना ।
उदा० ग्वाल कवि कहैं इक और है अनोखों दुख ताहि कैसैं भोगौं न विचार-विचारत हैं ! —ग्वाल

बिचौली—संज्ञा, स्त्री० [देश०] गले का एक आभूषण ।
उदा० तिनके बीच बिचौली चमकै अरु छूटा छबि छाई । हरे पोत की गरे मटुकली चटक न बरनी जाई । —बकसीहंसराज

बिजना—संज्ञा, पु० [सं० व्यजन] पंखा ।
उदा० बीजनौं ढुरावती सखीजन त्यौं सीतहूँ मैं । —देव
हितकरि तुम पठयो लगे वा बिजना की बाय । —बिहारी

बिजा—वि० [सं० द्वि० हिं० बिज] दूसरा, दो ।
उदा० एक कों छोड़ि बिजा कौं भजै रसना सु कटौ उस लब्बर की । —गंग

बिझाना—क्रि० स० [हिं० बेझना] बेधना, निशाना लगाना ।
उदा० श्याम सरोरुह सुन्दर गात बिलोकनि बान निसंग बिझावै । —चन्द्रशेखर

बिझुकना—क्रि० अ० [हिं० झाँका] भयभीत होना, भड़काना, डरना ।
उदा० विष सों बिझूकि झूकि आय प्रान भूकि मूकि, व्याल मुख थूकि, कढ़े बाल कूकि-कूकि कै । —देव

बिझुकी—नि० [हिं० बिचकना] तनी हुई, वक्र, टेढ़ी ।
उदा० नेह उरझे से नैन देखिबे को बिरुझे से बिझुकी सी भौंहें उझके से उरजात हैं ।
—केशव

बिठाना—वि० [सं० वेष्टित]—वेष्टित, युक्त ।
उदा० तला तोयमाना भए सुख माना । कलंगी बिठाना तिलंगी नठाना । —केशव

बिड़—संज्ञा, पु० [सं० विट] चूहा मूस ।
उदा० उरझि-उरझि गिरि झाँख रहे झाखरनि, बेलिन में बाँधे मृग बाल बिड़ बावरनि ।
—गंग

बितानना—क्रि० स० [सं० वितान] फैलाना, विस्तार करना ।
उदा० हियराहि में दुराइ गृह काजनि बितानती ।
—दास

बिताना—क्रि० स० [सं० व्यतीत] समाप्त करना, नष्ट करना २. घटना, पड़ना ।
उदा० १. दै जा दिखाई री कै जा निहाल बितै जा बियोग चितैजा चितैजा । —ठाकुर
बैठी सजि सुंदरि सहेलिनि समाज
बीच बदन पै चारुता चिराक की बितै रही । —प्रतापसाहि
धनि धनि कहत दिगंतन के ईस नेक,
जाकी बकसीस दुख दारिद बितौत है ।
—ठाकुर

बितार—संज्ञा, पु० [सं० विस्तार] प्रसार, फैलाव, विस्तार ।
उदा० तारन कौ अवतारन लेत बितारन सेतुनि जाने हौ जू मैं । —देव

बितौना—क्रि० स० [सं० वितान] फैलाना, बढ़ाना, विस्तार करना ।
उदा० तिरछे चितौने सो बिनोदनि बितौने लगी, होने लगी तन की चटक चारु सोने सी । —दास

बिदरैया—वि० [सं० विदीर्ण + हि० अइया (प्रत्य०)] विदीर्ण करने वाली, नष्ट करने वाली, विदारक ।
उदा० दुरित दरैया बिदरैया बदराहन की जुलुम जरैया टेक जम की टरैया तू । —ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बिदुआ—वि० [सं० विद्] चतुर, विद्वान ।
उदा० बिदुआ प्रवीन विद्या प्रकास ।
सो रहहिं सदा अवनीस पास ।
—बोधा

बिदेह—संज्ञा, पु० [सं० बिदेह] कामदेव, मन्मथ ।
उदा० देवजू बिदेह दाह देह दहकति आवै,
आँचल-पटनि ओट आँच लपटन की ।
—देव

बिधाना—क्रि० स० [सं० वेधन] फँसाना, विंधाना ।
उदा० बाहन बिधाये बांह जघन जघन मांह,
कहै छांड़ो नाह नाहिं गयो चाहे मुचिकै ।
—देव

बिधूप—संज्ञा, पु० [सं० बधूक] बंधूक कुसुम, गुलदुपहरिया का पुष्प जो अत्यंत लाल होता है।
उदा० सब गोपिन लाइक जो अधूप ।
है अधरामृत निदरन बिधूप ।।
—सोमनाथ

बिनठाना—क्रि० स० [सं० विनष्ट] विनष्ट करना, दूर करना ।
उदा० नागरि नारिनु की मनुहारि निहारिबो ग्वारिनु को बिनठायो । —देव

बिनाना—क्रि० अ० [सं० विज्ञान] गर्व से भर जाना, अनजान होना ।
उदा० साथी महाहय, हाथी, भुजंग, बछा, वृष, मातुल मारि बिनाने । —देव

बिपच्छ—संज्ञा, पु० [सं० विपक्ष] शत्रु, दुश्मन ।
उदा० कच्छी कछवाह के विपच्छन के बच्छ पर पच्छिन छलत उच्च उच्छलत अच्छे हैं ।
—पद्माकर

बिपट—वि० [हिं० बे + सं० पट] बिना वस्त्र के, लज्जाहीन, मर्यादा रहित ।
उदा० पटकत मटुकी झटकि झटकत पट,
बिपट छटकि छूटो लट सु लटकि कै ।
—आलम

बिपल—वि० [सं० अपल-अपलक] निर्निमेष, एकटक ।
उदा० पल पल पूंछत बिपल दृग मृगनैनी आये न कमल नैन आई धौं अलपरी ।
—देव

बिपोहना—क्रि० अ० [?] नष्ट करना, छेद डालना ।
उदा० ज्योति जगै यमुना सी लगै जग लोचन लालित पाप बिपोहै। —केशव

बिफरना—क्रि० अ० [सं० विप्लवन] विद्रोह करना, उपद्रव करना २. नाराज होना, बिगड़ जाना ।
उदा० सम्हरि उठत घनआँनद मनोज-ओज, बिफरत बावरें न लाजनि घिरत हैं ।
—घनानन्द

बिबगति—संज्ञा, स्त्री० [देश०] दशा, हाल ।
उदा० तौ लगि एक सखी उठि बोली सुनु री कुँवरि किसोरी । कहत न बनत सुनत काहू सों अपगति बिबगति मोरी ।
—बकसीहंसराज

बिबसन—वि० [सं० वि + वस्त्र] बिवस्त्र, बिना वस्त्र के, नग्न ।
उदा० बिबसन बृज बनितान की लखि मोहन मृदु काय । चीर चोरि सु कदंब पै कछुक रहे मुसक्याय । —पद्माकर

बिबि—वि० [सं० द्वि०] दो, द्वि
उदा० सुफल मनोरथ ह्वै सुफल सुत रथु हाँक मथुरा के पथ साथ बिबि वीर लै । —देव

बिबूचन संज्ञा, पु० [सं० विवेचन ? हिं० बिगूचन] संकट, कठिनाई, दिक्कत ।
उदा० ना बित्तहि तूँ तृनवर गनै । बहुत बिबूचे तोंसे घने । —केशव

बिभात संज्ञा, पु० [सं० विभात] प्रभात, सुबह ।
उदा० जानै न बिभात भयों केसव सुनै को बात, देखौ आनि गात जात भयो किधौं असु है ।
—केशव

बिभ्रम—संज्ञा, पु० [सं० बिभ्रम] जल का आवर्त्त, चक्कर २. भ्रांति, धोखा ।
उदा० केसवदास जिहाज मनोरथ; संभ्रम बिभ्रम भूरि भरे भय । —केशव

बिमनैन—वि० [सं० विमनस्क] उदासीन, व्यथित ।
उदा० हौ मनमोहन मोहे कहूँ न बिथा बिमनैन की मानौ कहा तुम । —घनानन्द

बिमुद वि० [सं० वि + मुद] मोदरहित, आनन्द रहित ।
उदा० बिमुद कुमुद लौं ह्वै रही चंद मंद दुति देखि । —पद्माकर

बियो—वि० [सं० द्वि०] दूसरा ।
उदा० भारद्वाज बसैं जहाँ जिनते न पावन है बियो । —केशव

बिरकत—वि० [सं० विरक्त] विरक्त, उदासीन ।
उदा० अनहित तें बिरकत रहत कछू दोस के

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बास । बिहित करत सु न हित समुझि सिसुवत जे हरिदास । —पद्माकर

बिरचौहैं—वि० [सं० विरचन] १. विशेष प्रेममय, अनुरागमय २. उदास, खिन्न ।

उदा० १. बारिज बदनि बिरचौहैं बैन बानी वाकी, बिपनु बचन सुनि बिरचि रहति है । —आलम

२. घोर घनै गरजैं घन ये ससिनाथ हियैं बिरचावन लागे । —सोमनाथ

बिरज—वि० [सं० वि + रज] धूलरहित, स्वच्छ साफ ।

उदा० कंस महाराज को रजकु, राजमारग मैं अम्बर बिरज लीने रंग रंग गहिरे । —देव

बिरतंतना—क्रि० अ० [हिं० बिरमना] १. बिरमना, ठहरना, रुकना २. वृत्तांत [संज्ञा, पु०] ।

उदा० घर कंत नहीं बिरतंत भट्ट अबकै धौं बसन्त कहा करिहै । —बोधा

बिरत्थ—वि० [सं० व्यर्थ] व्यर्थ, बेकार ।

उदा० पै ए दोऊ बात निहचै पाहि बिरत्थ हैं । नव जोबन गुन गात, प्रतिपल मनमथ बाढ़ई । —सोमनाथ

बिरम—संज्ञा, पु० [सं० विलंब] विलंब, देर ।

उदा० हा हा हा फिर हा हा सुखनिधि बिरम न जात सह्यौ । —घनानन्द

बिराव—संज्ञा, पु० [सं० बिराव] शब्द, बोली, कलरव ।

उदा० कान परी कोकिला की काकलिनु कलित, कलापिन की कूकें कल कोमल बिराव की । —देव

मोर करैं सोर, गान कोकिल बिराब के । —सेनापति

बिराह—वि० [फा० बे + राह = कायदा] बेकायदा, बेढंगी, अंडबंड ।

उदा० तेगबरदार स्याह पंखाबरदार स्याह निखिल नकीब स्याह बोलत बिराह को । —भूषण

बिरोचन—संज्ञा, पु० [सं० विरोचन] १. सूर्य, २. अग्नि, ३. प्रकाश ।

उदा० लोचन बिलोल यौं बिरोचन उए हैं कौल अठिलात बोलि अंकमालिका लगावहीं । —भूषण

बिरोधना—क्रि० सं० [सं० वि + रोधन] विशेष रूप से अटकाना, फँसाना, रोकना ।

उदा० वा मनमोहन को वह मोहन सोहन सुन्दर रूप बिरोधो । —देव

बिरोषि क्रि० वि० [सं० वि + रोष] विशेष रोष पूर्वक ।

उदा० आलम देह सदेह वियोग बिरोषि दलै सुख सम्पति लूटै । —आलम

बिर्यौ—सर्व० [सं० विरला] विरला, कोई ।

उदा० सुपूत के होत सुपूत बिर्यौ इमि होइ सुपूत सपूत के ऐसौ । —केशव

बिलेस—पति—संज्ञा, पु० [सं० बिल + ईश = सर्प + पति = शेषनाग] शेषनाग ।

उदा० सूरज बिलानो, बिलबिलानो बिलेस पति कूरम किलबिलानो कूरम के गौन ते । —गंग

बिलोक—संज्ञा, पु० [सं० द्विलोक] दूसरा लोक, सुरलोक ।

उदा० कौन गनै यहि लोक तरीन बिलोक-बिलोकि जहाजन बोरै । —केशव

ब्रह्मरंध्र फोरि जीव यों मिल्यो बिलोक । —केशव

बिसंकुर—संज्ञा, पु० [?] खंजन पक्षी ।

उदा० बिसद बिसंक ह्वै बिसंकुर चरत । —देव

बिषधर—संज्ञा०, पु० [सं०।विषधर] १. शंकर २. सर्प ।

उदा० १. विषधर बंधु हैं, अनाथिनि को प्रतिबंधु विष को विशेष बंधु हिये हहरत हैं । —केशव

बिसनी—संज्ञा, स्त्री० [?] कमलिनी ।

उदा० क्यों जियै कैसी करौं बहुर्‌यौ विष सी बिसनी बिसवासिनी फूली । —केशव

बिसबल्लरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० विसवल्सरी] कमल की लता ।

उदा० कर कंजनि पल्लवनि भुज बिसबल्लरी सुपास । रत्न तारका कुसुम सर नख रुचि केसवदास । —केशव

बिसबीस—वि० [हिं० बीसोबिस्वा] बीसोबिस्वा, सम्पूर्ण ।

उदा० 'दास' लला की निछावरि बोलि जु माँगे सु पाइ रहे बिसबीसनि । —दास

बिसरु—संज्ञा, पु० [सं० बिशर] बध, कत्ल ।

उदा० करि बहु बिसरु सत्रु कै जाय । जुद्ध काल भागे भहराय । —केशव

बिसाति—संज्ञा, स्त्री० [अ० बिसात] १. पूँजी, धन, वित्त २. आधार, वह वस्त्र जिस पर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शतरंज खेला जाता है।

उदा० १. लीनी जब अंक में निसंक परजंक पर, अकलंक पाई जानि सुख की बिसाति है। —सोमनाथ

साँझ कैसो चंद भोर को सो अरविंद स्वाति बिंदु कैसो बादर बिसाति बसुधा हो की। — देव

२. सोभा की बिसाति चीरै धरत बहुत भाँति चतुर है मुख गनि गनि डग धारी है। —सेनापति

बिसाना—क्रि० अ० [सं० विष+हिं० ना (प्रत्य०)] १. बिष का प्रभाव करना, विषाक्त करना। २. मुहा० बिसाना=सिर पर आ पड़ना, फट पड़ना।

उदा० १. धौंसही पढ़ाई परचो सो सुधि आई कछु और न बिसानों प्रगटे ते कोप टटके। — रघुनाथ

२. गंसी गाँसी नेह की बिसानी झर मेह की रही न सुधि तेह की न देह की न गेह की। —दास

बिसासी—वि० [सं० अविश्वासी] कपटी, छली, विश्वासघाती, जिस पर विश्वास न किया जाय।

उदा० (क) कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन में अँसुवानहि लै बरसो। — घनानन्द

(ख) देव दुखहासी निशि काशी करवट सेज बासर बिसासी परवत पेलियत है। —देव

बिसूरना—क्रि० अ० [सं० विसूरण] चिंता करना दुखमानना, फिक्रकरना, सोचना।

उदा० झुरसि गई धौ कहूँ काहू की बियोग झार बार-बार बिकल बिसूरति जही तही। —द्विजदेव

बिसोक—संज्ञा, पु० [?] बाण।

उदा० बायु बहैगी सुगंध मुबारक लागिहै नैन बिसोक सो आय के। —मुबारक

बिसोहैं—वि० [सं० विषाक्त] जहरीले, विष के प्रभाव वाले, विषाक्त।

उदा० आज बादर बिसोहैं बरसोहैं सों बिसोहैं ये। —पजनेस

बिहराना—क्रि० अ० [सं० विघटन] फटना, विदीर्ण होना।

उदा० दल के दरारन तें कमठ करारे फूटे, केरा के से पात बिहराने फन सेस के। —भूषण

बिहायस—संज्ञा, पु० [सं० विहायस्] आकाश, नभ।

उदा० मनत दिवाकर कमल से अमल अति देखि दुति बिधुने बिहायस मैं मूरी है। —दिवाकर

बीच पारना—क्रि० सं० [हिं० बीच=अन्तर+पारना=डालना] मुहा० विभेदकरना, अन्तर डालना, परिवर्तन करना।

उदा० जाके बड़े नयन में समाने मेरे नैन तासों बीच पार दीन्हों कैसे धीर गहियतु हैं। —बोधा

बीछना—क्रि० स० [सं० विचयन] १. चुनना, पसन्द करके छाँठना।

उदा० होरी के दिवस कहूँ गोरी राधिका को देखि कान्ह जिय मांझ यों विचारयो बुद्धि बीछेतै। —चिरजीवी

बीजु—संज्ञा, स्त्री० [सं० विद्युत] बिजली।

उदा० बीजु, बिंब, लीने सब ही को मन बंधु है —आलम

बींदना—क्रि० सं० [सं० विद्] जानना, अनुमान करना।

उदा० झुकि झुकि झपकौंहें पलनि फिरि फिरि जुरि जमुहाय। बींदि पियागम नींद मिस दीं सब सखी उठाय। —बिहारी

बीधना—क्रि० अ० [बु०] उलझना, फँसना।

उदा० बीधे मों सों आन कै, गीधे गीधहि तारि। — बिहारी

ससकत सांसै भरैं बीधें बहु फाँसै भरैं। — पद्माकर

बीधि—संज्ञा, स्त्री० [सं० विधि] अवसर, मौका, २. रीति, विधि।

उदा० ब्याह की बीधि बुलाये गये सब, लोगनु लागि गये दिन दूने। —देव

बीधी—वि० [सं० विद्ध] फँसी हुई, बद्ध।

उदा० बीधी बात बातन, समीधी गात गातन, उबीधी परजंक में निसंक अंक हितई। —देव

बीर—संज्ञा, स्त्री० [ब्र०] १. कान का एक भूषण, ढार २. सखी, सहेली।

उदा० १. आँजे नैन खाये पान हीरा जरी बीरैं कान। —आलम

२. एरी मेरी बीर जैसे तैसे इन आंखिन सों कढ़ि गो अबीर पै अहीर को कढ़ै नहीं। —पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बौरनारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० बारबधूटी] एक प्रकार का बरसाती लाल कीड़ा, बीरबधूटी।
उदा० रङ्ग पाल भूषण विभूषित अरुण जीते पदुम-पवारी बौरनारी के बरण हैं।
—रंगपाल

बुंदी—संज्ञा, स्त्री० [सं० बुंद] एक प्रकार का मिष्ठान, बुँदिया।
उदा० बतराते बुँदी बतासा हँसते बरफी रंचु रुखाई की। —बोधा

बुटंती—वि० [हिं० बूटना] दौड़वाली।
उदा० भली माँति के अस्व एकै भुटंती।
फबै फाल में चाल चल्नै बुटंती।
—पद्माकर

बुदरिया—संज्ञा, स्त्री० [बुं] पतली छड़ी।
उदा० अपने हाथ न लिये बुदरिया अति सुन्दर सटकारी। —बकसी हंसराज

बूक—संज्ञा, स्त्री० [देश०] मूठी, मुठ्ठीभर पिसी हुई वस्तु।
उदा० दादुर को हूकैं घाय करत अचूकै उर, कोकिला की कूकैं तापै बूकैं देती लोन की।
—'हजारा' से

बूकना—क्रि स० [देश०]१. प्रलाप करना, बताना २. विस्मृत [वि०, प्रा० बुक्क]।
उदा० १. कौतुक विलोकन सरोवर सरवीन संग जात बिन बूके परमात परखति है।
—प्रताप साहि

बूटना—क्रि० अ० [देश०] चले जाना, प्रस्थान करना।
उदा० माया के बाजने बाजि गए, परभात ही मातखवा उठि बूटे। —देव

बूटा—संज्ञा, पु० [सं० विटप] छोटा वृक्ष २. चने का हरा पौधा ३. चने का हरा दाना।
उदा० १. पै कहि पी हैं कहा सठ तैंही, बई उर मेरे बिसास को बूटैं। —द्विजदेव

बूढ़—संज्ञा, स्त्री० [देश०] बीरबहूटी, एक प्रकार का बरसाती लाल कीड़ा।
उदा० रसके से रुख ससिसुखी, हँसि हँसि बोलति बैन। गूढ़ मान मन क्यों रहै, भये बूढ़ रँग नैन। —बिहारी

बृंदा—संज्ञा, स्त्री० [सं० वृन्दा] १. राधिका का एक नाम २. तुलसी।
उदा० चंद्र मल्ली-पुंज की नव कुंज बिहरत आय, जहाँ बृन्दा अति भली बिधि रची बनक बनाय। —घनानन्द

बेझा—संज्ञा, पु० [सं० वेध्य] लक्ष्य शिकार निशाना।
उदा० आलम, सुकबि आई बातनि रिझाय मनु, मुरझानो मोहन मुरी है बेझा मारि सी।
—आलम

बेट—वि० [देश०] व्यर्थ, बेकार।
उदा० पेट के बेट बेगारहि में जब लौं जियना तब लौं सियना है। —पद्माकर

बेड़िनी—संज्ञा, स्त्री० [?] नट जाति की स्त्रियां जो नाचने गाने का काम करती हैं।
उदा० कहूँ लोलिनी बेड़िनी गीत गावैं।
—केशव

बेबहा—वि० [बुं०] अत्यधिक, प्रचुर।
उदा० भूमि हरी भई गैलैं गई मिटि नीर प्रवाह बहा बेबहा। —ठाकुर

बेर—संज्ञा, स्त्री० [देश०] वापी, छोटा जलाशय, बावली।
उदा० बन, गिरि, बेरनि करेरे दुख कैसे करि कोवरे कुमार सुकुमार मेरे सहि हैं।
—आलम

बेह—संज्ञा, पु० [सं० वेध] छेद, छिद्र।
उदा० हौं तो बलि बेसरि के बेह बेधिमारी हौं।
—आलम

बेहड़—संज्ञा, पु० [सं० विकट,] जंगल, अरण्य विकट ऊबड़, खाबड़।
उदा० बेहड़ काटत चल्यौ सुमाउ। रह्यौ, आनि खम्हरौली गाँउ। —केशव

बेला—संज्ञा, पु० [सं०] कटोरा।
उदा० बेला बेली लुटैं तमहड़ी लुटिया झारी।
—सूदन

बेलि—संज्ञा, स्त्री० [सं० बेला] इत्र आदि रखने का पात्र, बेला, चमड़े की एक प्रकार की छोटी कुल्हिया जिससे तेल दूसरे पात्र में भरा जाता है। २. कटोरी।
उदा० आछी-तिलौनी लसे अँगिया गसि चोवा की बेलि बिराजति लोइन। —घनानन्द
२. बेला बेली लुटैं तमहड़ी लुटिया झारी।
—सूदन

बै—संज्ञा, पु० [हिं० बया] बया पची।
उदा० सामाँ सेन, सयान की सबै साहि कैं साथ।
बाहुबली जयसाहिजू, फते तिहारैं हाथ॥
—बिहारी

बैकुंठ—संज्ञा, पु० [सं० वैकुंठ] विष्णु, रामचन्द्र।
उदा० अब सकल दान दै पूजि बिप्र।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुनि करहु बिजै बैकुंठ चित्र ।।
—केशव

बैट—संज्ञा, स्त्री० [?] पंक्ति, कतार, समूह ।
उदा० कोटि फोरि, फौज फोरि, सलिता समूह फोरि हाथिन की बैट फोरि, कटक बिकट बर । ——केशव

बैठक—संज्ञा, स्त्री० [?] जागीर, राज्य की ओर से प्राप्त भूमि या प्रदेश ।
उदा० बीर सिंघ कौं बृत्ति कै बैठक दई बड़ौन ।
——केशव
बड़ौन —बैठकै लई जलाल साहि की मही ।
——केशव

बैठैं—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बैठक] बैठक, गोष्ठी मण्डली, समाज ।
उदा० राजन की राज रानी डोली फिरैं बन बन, नैठन की बैठैं बैठे भरें बेटी-बहू जू ।
—— गंग

बेंड़ा—वि० [हिं० बेड़ा] कठिन टेढ़ा, तिरछा ।
उदा० पैंड़ों सम सूधो बैंड़ो कठिन किंबार द्वार, द्वारपाल नहीं तहाँ सबल मगति है ।
—आलम

बैन—संज्ञा, पु० [सं० बदन, प्रा० बयन] मुख, बदन २. वाणी ।
उदा० १. जद्यपि बिहारी और मंदिरतें आए भोर उरज की छाप उर और छवि पावहीं । तद्यपि सुचैन वाहि प्रीतम को बैन चाहि सुधा सों लपेटे बैन आवत सुभावही बेनु बैन तज्यो उनि, बैन तें बोलौ न । —भूषण बोल बिलोकत बुद्धि भगी है । ——केशव

बैन सिकासी संज्ञा, पु० [फा० शिकस्तः जबां, हिं० बैन=वाणी+फा० शिकस्त=खंडित, भग्न] ।
१. खंडित वाणी ।
२. टूटी फूटी वाणी बोलने वाला, तुतला, अटक-अटक कर बोलने वाला ।
उदा० नैन मिलै मन को मिलवै पै मिलै न कबौं करि बैन सिकासी । —तोष

बैयर—संज्ञा, स्त्री० [सं० बधूवर, प्रा० बहुअर] १. स्त्री, बधू २. सखी ।
उदा० १. बैयर बगारन की अरि के अगारनि की लाँघती पगारनि नगारन की घमकैं ।
२. सब्द सत्य न लियो कबिन्ह न प्रयुक्त सो ठाउ । करै न बैयर हरिहि भी, कँदरप के सर घाउ । —दास

बैरख—संज्ञा, स्त्री० [?] १. यश, कीर्ति २. ध्वजा [तु० बैरक] ।
उदा० १. काल गहें कर डोलत मोहिं कछू इक बैरख सी कर पाऊँ । —गंग

बैरागर—संज्ञा, स्त्री० [?] खानि, राशि ।
उदा० गुणमणि बैरागर, धीरज को सागर ।
—केशव

बैलती—संज्ञा, स्त्री० [हिं० ओलती] ओरी, ओलती ।
उदा० आनँदघन कितहूँ किनि बरसौ ये बरुनी बैलतियाँ । —घनानन्द

बैसंदर—संज्ञा, स्त्री० [सं० वैश्वानर] वैश्वानर, आग, अग्नि ।
उदा० वादिन बैसंदर चहूँ, बन में लगी अचान । जीवत क्यों बृज बाचतो जौ ना पीवत कान । —दास

बोइन—संज्ञा, स्त्री० [फा० बू] सुगन्ध-प्रवाह ।
उदा० भीतर भारे भंडार निजे भरि, भीज सुगंध की बोइन ह्वै मैं । —देव

बोक—संज्ञा, पु० [हिं० बकरा] बकरा, अज ।
उदा० देवी के बोक लौं लोक लडात, पै डारि हरा सिर नारि कटैगी । —देव

बोजागर—संज्ञा, पु० [फा० बोजः=शराब+गर—प्रत्य०] चावल से बनी हुई शराब बेचने वाला ।
उदा० बोजागरनि बजार में, खेलत बाजी प्रेम देखत वाको रस रसन, तजत नैन व्रत नेम । —रहीम

बोडर—संज्ञा, स्त्री० [सं० वोण्ट] टहनी, पेड़ की डाल ।
उदा० फूलो फली भली आली काहु सुरबाटिका की मानो बाल बोडर में बेलि परि रही है । —बेनी प्रवीन

बोह—संज्ञा पु० [हिं० बोझ] १. बोझ, भार २. डुबकी, गोत [हिं० बोर] ३. जागृत, उद्बुद्ध [सं० बोध]
उदा० १ हार छूट्यो पेन्हिबो अहार छोड़्यो पान चित्रसारी को बिहार छोड़्यो बिरह के बोहते । —रघुनाथ

बोहनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० बोधन-जगाना]—जगाने वाली, उद्बुद्ध करने वाली ।
उदा० बाग में बिलोकी अनुराग की सी बोहनी, सु सोहनी, सुधर, मन मोहनी मलिनियां ।
—देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्वाल कबि याते मुख मुख मांहि मुख है जू, सो मुख सों सोई अति आनँद की बोहिनी । —ग्वाल

बौंडी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बौंड़] पौधों या लताओं के कच्चे फल, टेंड़ी, ढोंड़ २. अंगूर का रस ।

उदा० २. अंजन सौं रँगी ते निरंजनहि जाने कहा, फीको लागै फूल रस चाखत ही बौंड़ी को । —देव

बौनी — संज्ञा, स्त्री० [सं० वपन] १. बोने वाली २. बावन अंगुल की स्त्री, छोटे कद वाली ।

उदा० इंदिर अगौनी इंदु इंदीबर बौनी, महा-सुंदरि सलौनी गज गौनी गुजरात की । —देव

ब्यंजन—संज्ञा, स्त्री० [सं०] तरकारी, सब्जी ।

उदा० षट भांति पहीत बनाय सँची, पुनि पांच सो ब्यंजन रीति रची । —केशव

ब्याज—संज्ञा, पु० [सं० व्याज] १. छल, कपट २. सूद ३. बिलंब ।

उदा० १. सुनु महाजन चोरी होति चारि चरन की तातैं सेनापति कहे तजि करि ब्याज कौं । —सेनापति

ब्योरना—क्रि० स० [सं० बिवरण] निर्णय करना, निपटारा करना, फैसला देना, सुलझाना ।

उदा० बिन बिबेक गुन-दोष, मूढ़ कवि ब्यौरि न बोलै । —घनानन्द

ब्यौंत—संज्ञा, स्त्री० [सं० व्यवस्था] १. घात, दाँव २ ढब, उपाय, तरीका, व्यवस्था ।

उदा० १. माँगन को मोती भूमि रहयो दसनन पर, अधर मधुर रस ब्यौंत ज्यों गहत है । —गंग

प्यो मुख सामुहँ राखिबे को सखियां, अँखियान को ब्यौंत बिताने । —दास

२. दास निसा लौं निसा करिये दिन बूड़त ब्यौंत हजार करौंगी । —दास

ब्वै — वि० [हिं० बिय, सं० द्वि०] दो ।

उदा० सोने की एक लता तुलसी बन क्यौ बरणों सुन बुद्धि सकै छ्वै । केसवदास मनोज मनहर ताहि फ़ले फल श्री फल से ब्वै ।

—केशव

भ

भँजाना—क्रि० स० [सं० भंजन] १. आदान-प्रदान करना, विनिमय करना, खरीदना, लब्ध करना, प्राप्त करना, ग्रहण करना २. बड़ा सिक्का देकर उतने ही मूल्य का छोटा-छोटा सिक्का प्राप्त करना, भुनाना ।

उदा० १. साँझ ही तौ सखिन समेटि करि बैठी कहा, भेट करि पी सों परि पैठ सी भँजाइ लै । — पद्माकर

भगर — संज्ञा, पु०[देश०] १. कबड्डी का खेल ।

उदा० भगर के खेल क्यों सुभट पद पावहीं । — केशव

भगल—संज्ञा पु० [हिं० भगवा] भगवा, वस्त्र ।

उदा० छाँड़यो सुख भोग, मान खांड़्यो गुरु लोगेनि को, माड़्यो हम जोग, या वियोग के भगल मैं । — देव

भटभेरा संज्ञा, पु० [हिं० भट + भिड़ना] १. आमने-सामने का मिलन, संयोग २. भिड़ंत ।

उदा० १. गली अँधेरी साँकरी भो भटभेरो आनि —बिहारी

भटा—संज्ञा, पु० [हिं० भंटा] बेंगन, भाँटा ।

उदा० मालती फूलन को मधुपान कै, होंइगे मत्त मलिंद भटा पर । —बेनीप्रवीन

भटियारी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भटियारा] भटियारपन, भटियारों की तरह गाली गलौज करना और लड़ना ।

उदा० त्यों भटियारी करै हटियारी, बोलावै बटोही रहैमन रूठे । —देव

भटू संज्ञा, स्त्री० [सं० वधू] सखी, स्त्रियों के सम्बोधन के लिए एक सम्मान सूचक शब्द ।

उदा० भेटती मोहि भटू किहि कारन कौन की धौं छबि सों छकती हौ । —देव

भभरना— क्रि० अ० [हिं० भय] भयभीत होना, घबरा जाना, व्याकुल होना ।

उदा० धरकि धरकि हिय होल सो भभरि जात । — ग्वाल

भभूक — संज्ञा, पु० [हिं० भभक] ज्वाला, भभूका,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आग की लपट ।
उदा० मानो सनचत्र शिशुमार चन्द्र कुंडली में संकरषन अनल भभूक महराति है ।
—पजनेश

भमुना—वि० [सं० भ्रम+न] भ्रमरहित निस्संदेह ।
उदा० ग्वाल कवि सुखद प्रतीति भरी रीति भरी परमपुनीत भरी मीतभरी भमुना ।
—ग्वाल

भरका—संज्ञा, पु० [देश०] भरका मिट्टी जिसमें अधिक दरारें पड़ जाती हैं ।
उदा० लजि चली सितावैं छिन न बितावैं जनु महितावैं ललित लसैं । छपि छपि अरकन में खपि खरकन में भ्रमि भरकन में जाइ धँसे । —पद्माकर

भरक्यो—वि० [हिं० भड़कीला] भड़कीला, जो देखने में अच्छा हो, चमकदार ।
उदा० पौन कौ ना गौन होय, भरक्यौ सु भौन होय । —ग्वाल

भरना—क्रि० स० [देश०] बिताना, व्यतीत करना, काटना, गुजारा करना ।
उदा० हौं ही भरौं इकली, कहौं कौन सों, जा विधि होत है साँझ सबारो ।
—घनानन्द
नैहर जनम भरब बरु जाई । —तुलसी

भरभ्रमर—संज्ञा, स्त्री० [?] अत्यधिक मारकाट
उदा० अध अधर चब्बत नहीं दब्बत फूलि फब्बत समर में । काँचनि उमैठत हरषि पैठत लोह की भरभ्रमर में । —पद्माकर

भरसना—क्रि० स० [अनु० भररराना] छोड़ना, गिराना ।
उदा० तोपै औनि अंबर को कठिन कराल मानौ, रुद्र नैन ज्वालनि के जाल भरसत हैं ।
—चन्द्रशेखर

भराई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भाड़] भाड़पन, भड़ौती, भड़ंग ।
उदा० रैहे भराई न राई भरी कोई भौंह चढ़ाय चितैहै सरोसे । —देव

भरुआना—क्रि० अ० [हिं० भार] भारी होना, वजनदार होना ।
उदा० भावकु उभरौंहौं भयौ, कछुक पर्‌यौ भरुआइ । —बिहारी

भरभेरा—संज्ञा, पु० [हिं० भर+भेंटना] मुठभेड़, मुकाबला, सामना ।
उदा० होत भरभेरौ तौ लुगाइन की कूकैं भली, पिचकी अचूकें चलें ढूकैं लूम लूम कैं ।
—ग्वाल

भलुकिया—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भाला] भाला, छोटी बरछी ।
उदा० अनियारी अँखियन की भारी घालि भलुकिया मारी । —बकसी हंसराज

भलेजे—संज्ञा, पु० [हिं० भाला] भाले की मार, चोट ।
उदा० आये जमदूत मिले पारषद बीचोबीच खींचै खीच होत, जुद्ध जमिगे भलेजें होत ।
—ग्वाल

भल्लर—वि० [देश०] भद्दा, खराब ।
उदा० क्या झल्लै टुक गल्ल सुनि, भल्लर भल्लर भाइ । —दास

भवीली—वि० [हिं० भाव+ईली (प्रत्य०)] भावपूर्ण, २. बांकी-तिरछी ।
उदा० आपुस में मिल बैठी सौंतैं रघुनाथ जहाँ तहाँ आनि रची बाजी चौपरि भवीली की ।
—रघुनाथ

भसमी—संज्ञा, पु० [स०, भस्मक] भस्मक नाम का एक रोग जिसमें रोगी को कभी भोजन की तृप्ति नहीं होती ।
उदा० भसमी बिथा में नित लंघन करति है ।
—घनानन्द

भाँई—वि० [?] सुडौल, खराद पर से उतारी हुई ।
उदा० भाँई ऐसी ग्रीव-भुज, पान सो उदर अरु, पंकज से पाइ गति हंस की सी जासु ।
—केशव

भाँति—संज्ञा, स्त्री० [सं० भेद] १. रीति, ढंग, २. ऐश्वर्य, सम्पदा ।
उदा० सेनापति प्रभु प्यारी तू तो है अनूप नारी तेरी उपमा को भाँति जात न बिचारी है ।
—सेनापति
२. करि सिंगार पिय पै गई, पान खाति मुसकाति । कहौ कथा सब आदि तें किमि दीन्हीं यह भाँति ।
—नरोत्तमदास

भाइक—क्रि० वि० [हिं० भावक] थोड़ा, किंचित जरा सा ।
उदा० छूटत है मनि-मानिक से गुन, टूटत भाइक भौंह अमैठे । —देव

भाकसी—संज्ञा, स्त्री० [सं० भस्त्रा] भट्टी, भड़-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सांय, भाड़ जिसमें दाना आदि भूना जाता है।
उदा० सूल से फूल सुबास कुबास सी, भाकसी से भये मौन समागे। —केशव

भाग—संज्ञा, पु० [सं० भाग्य] मस्तक, माथा।
उदा० १. कछु न सुहात अनखाति अति पान खाति आरसी न देखति न देति बेंदी भाग में। —रघुनाथ

भाजी—संज्ञा, पु० [देश०] विवाह आदि उत्सव में जो मिष्ठान बांटा जाता है, उसे भाजी कहा जाता है।
उदा० गेह चिनाय करूँ गहना कछु, ब्याही सुता सुत बाँटिये भाजी। —भूधर दास

भाडेत्यौं—संज्ञा, पु० [हिं० भाड़ा] भाड़ा या किराये पर लेने वाले।
उदा० येक दिनां तब ऐसो भयौ भाडेत्यौं भाडे मौ लयौ। —जसवंतसिंह

भानना—क्रि० स० [सं० भंजन] बेधना, चुभाना २. भंजन करना, नष्ट करना।
उदा० प्यारी को, अनंग अंग बानन सों भानो है। —दूलह

भानमती—संज्ञा, स्त्री० [सं० भानुमती] जादूगरनी।
उदा० कामरु कामिनि काम कला जग-मोहनि भामिनि भानमती है। —देव

भानवी—संज्ञा, स्त्री० [सं० भानु] भानु से उत्पन्न, दिव्यनारी।
उदा० देवी कोउ मानवी न दानवी न होइ ऐसी, मानवी न हाव-भाव भारती पढ़ाई है। —केशव

भाना—संज्ञा, पु० [सं० भानु] भानु, सूर्य।
उदा० कंचन से तन कंचनी, स्याम कंचुकी अंग भाना भामै भोरही, रहै घटा के संग। —रहीम

भानु सुत—संज्ञा, पु० [सं०] शनि नामक ग्रह जिसका रंग श्याम माना गया है।
उदा० बंदन डिठौना दै दुरायोमुख घूँघुट मैं, झीनी स्याम सारी त्यौं किनारी चहुं फेर मैं। भूमिसुत भानुसुत जुत सोभमान मानौ, झलकै मयंक घन दामिनि के घेर मैं। —बेनीप्रवीन

भानु—सोम-रत=संज्ञा, पु० [सं० भानु-शोभा रत] सूर्य की शोभा में तल्लीन, कमल।
उदा० जीते गजराज गति राजत न राजहंस, पायनि राजीव नैन भानु सोम-रत है। —गंग

भामा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] क्रोधवती स्त्री।
उदा० बामा भामा, कामिनी कहि बोलौ, प्रानेस। प्यारी कहत खिसात नहिं पावस चलत विदेस। —बिहारी

भामै—वि० [सं० भा=प्रकाश+मै=मय] प्रकाश युक्त, आभा सहित।
उदा० कंचन से तन कंचनी, स्याम कंचुकी अंग भाना भामै भोरही, रहै घटा के संग। —रहीम

भारगव—संज्ञा, पु० [सं० भार्गव] शुक्र, शुक्रतारा।
उदा० कालीजू के कज्जल की, ललित, लुनाई, सोतो सारे नभ संडल में भारगव चन्द्रमा। —पद्माकर

भारत—संज्ञा, पु० [सं०] वृत्तांत, लम्बी कथा।
उदा० गोकुल के कुल के गली के गोप गाउन के जौ लगि कछू को कछू भारत भनैं नहीं। —पद्माकर

भारथ—संज्ञा, पु० [हिं० भरत] १. भरत पक्षी, २. लड़ाई।
उदा० १. भारथ अकर करतूतिन निहारि लही, यातें घनस्याम लाल तोते बाज आए री। —दास

भाल—संज्ञा, पु० [सं० भल्ल] १. बाण का फल, २. माथा।
उदा० १. घन से सघन स्याम केस बेस भामिनी के, ब्यालिनी सी बेनी भाल ऐसो एक भाल ही। —दास

भावक—क्रि० वि० [सं० भाव] थोड़ा, किंचित २. भावपूर्ण।
उदा० भावक उभरौहौं भयो कछुक परयो भरु आय। सीपहरा के मिस हियो निसि दिन देखत जाय। —बिहारी

भाववदी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भावती] १. प्रिया, नायिका २. अच्छी लगने वाली।
उदा० १. शुक सों कह्यो बिप्र अकुलाई। मोंहि-भाववदी की सुधि आई। —बोधा
२. बल्लभा बाल प्रिया बनिता मनभाववदी बाम हितू गजगौनी। —बोधा

भावन—संज्ञा, पु० [हिं० भावना] नायक, पति, प्रियतम।
उदा० मोहन की मनि में अपनों प्रतिबिंब निहारत

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रोस में दागी । जानि कै और तिया हिय मैं झुकि भावन कों समुझावन लागी ।
—सोमनाथ

भावरि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० भावना=पसंद होना] पसन्दगी का भाव ।
उदा० भावरि-अनभावरि-भरे करौ कोरि बकवादु । —बिहारी

भावलिया—संज्ञा, पु० [बुं० भावली] भावली, बहाली, धोखा ।
उदा० श्रवनन सुनत बात यह नीकी सब को दै भावलिया । अति ही चटक मटक सों चितवत आयो चलि स्यामलिया ।
—बकसीहंसराज

भास—संज्ञा, स्त्री० [सं० भाव्] ध्वनि, आवाज़ ।
उदा० गीतनि भास भिदै घनआनन्द रीझत भीजत भावते भायनि । —घनानन्द

भिंदिपाल—संज्ञा, पु० [?] छोटा डंडा जो फेंक कर मारने के काम में लाया जाता था ।
उदा० परसा सुखेन कुंत केसरी गवय सूल विभीषन गदा गज सिंदिपाल तारे हैं ।
—केशव

भी—संज्ञा, पु० [सं०] भय, डर ।
उदा० पौन को पकरि करि गौन कौं अकास, भौन भीतिन पै दौरि, काहू भांतिन भई न भी । —देव

भीरी—वि० [हिं० भिड़ना] १. एकत्रित, इकट्ठी २. पास, निकट [क्रि० वि०] ।
उदा० १. कहै पद्माकर अगार अनखीलिन की भीरी भोर भारन को भाँज दै री भाँज दै । —पद्माकर

भुकना—क्रि० अ० [?] गिर पड़ना, गिरना ।
उदा० मारत ही भट हय तें भुकैं । भट-नट मनौ कुल्हाटैं चुकैं । —केशव

भुजग भोजन—संज्ञा, पु० [सं०] सर्प ही जिसका भोजन है अर्थात् गरुड़ ।
उदा० अजित अजान भुज भुजग भोजन जान, दुभुज सम्हारो, जदु-भूभुज भु लिख्या हौं ।
—देव

भुजपात—संज्ञा, पु० [सं० भूर्जपत्र] भोजपत्र, जिस पर पुरा काल में—प्रशस्तियाँ आदि लिखी जाती थीं ।
उदा० बराति चंदन मलय ही, हिमगिरि ही भुजपात । —केशव

भुजमूल—संज्ञा, पु० [सं०] पखौरा, खए ।
उदा० बढ़ति निकसि कुचकोर रुचि कढ़त गौर भुजमूल । —बिहारी

भुमिया—संज्ञा, पु० [सं० भूमि+हिं० इया (प्रत्य)] जमींदार, भूस्वामी ।
उदा० ऐसो राज रसा महँ करै । भुमिया के नाके भुव धरै । —केशव

भुरते—वि० [सं० भूरि+हिं० ते=से] भूरि, अत्यधिक, बहुत ज्यादा ।
उदा० रति बिपरीति रची जोति रति रति-पति सुकुमार परम सो मरी श्रम भुरते ।
—रघुनाथ

भुरसना—क्रि० स० [हिं० भुलसना] गरम राख में झुलसना ।
उदा० जो कछु ऊभरि और कहै, यह जीभहि भूभरि सौं भुरसौं जू । —देव

भुर्यापन—संज्ञा, पु० [हिं०भोलापन] भोलापन, मूढ़ता, अज्ञानता ।
उदा० अपनो न कोऊ बंधु-बहिन भतीजे-सुत, मानजे न भामिनि, भुर्यापन कौ सपने ।
—ग्वाल

भुवभंग—संज्ञा, पु० [सं० भ्रूभंग] भ्रूभंग, त्योरी चढ़ना ।
उदा० संग के रंग रंगे उमँगे सब अंग कहा भुवभंग सों लेखो । —देव

भुवा—संज्ञा, पु०, [हिं० घूआ] रूई, घूआ
मुहा० लुवा भुवा होना—खिल्ली उड़ाने में लग जाना, बदनामी करना ।
उदा० ठाकुर यामैं अमारग कौन है तौन कहौ हम सों समझाई । चारहू ओर तें काहेऽब रे तुम मोहि लुवा भुवा लै भई माई ।
कवि बोधा भुवान, फँसो फल मैं पछिताई विदा यहि माँगि अबै । —बोधा

भूड़—संज्ञा, स्त्री [हिं० भुरभुरा] मिट्टी, धूल बालू ।
उदा० लुके भूड़ माना गई आसमाना ।
—केशव

भूभरि—संज्ञा, स्त्री [सं० भू+भुर्ज] गर्म राख या धूल, गर्म रेत ।
उदा० जो कुछ ऊभरि और कहै, यह जीभहि भूभरि सौं भुरसौं जू । —देव

भूभुज—संज्ञा, पु० [सं० भू०+भुज] राजा, नृप ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० भेटत देखि बिसेखि हिये व्रजभूभुज देव दुहूँ भुज सों भरि । —देव

भूमिसुत—संज्ञा, पु० [सं०] मंगल नामक ग्रह जिसका रंग लाल माना गया है ।

उदा० वंदन डिठौना दै दुरायो मुख घूँघुट में झीनी स्याम सारी त्यौं किनारी चहूँ फेर मैं । भूमिसुत भानुसुत जुत सोभमान मानौ झलकै मयंक घन दामिनि के घेर मैं । —बेनी प्रवीन

भूसर—वि० [सं० भास्वर] चमकते हुए, चमकने वाले के जैसे ।

उदा० कहैं कबि गंग इक्क अक्कबर अक्क उदै, नभ कि नखत से रहैं है भूप भूसरे । —गंग

भृगुदास—संज्ञा पु० [सं०] १. काना, एकाक्ष २. शुक्राचार्य ।

उदा० १. एक सूरदास दासी एक जगन्नाथ दासी एक भृगुदास दासी ताकी एक आई है । —देवकीनन्दन

भेदीसार—संज्ञा, पु० [सं०] बरमा, बढ़ई का एक औजार जिससे वह लकड़ी में छेद करता है ।

उदा० भेदि दुसार कियो हियो तन दुति भेदीसार —बिहारी

भेल—संज्ञा, पु०]हि० भेली=डली] गुच्छा, समूह ।

उदा० अधर छुवारे रसवारे बैन विधि विधि किसमिस भूमके अंगूर भूर भेल हैं । —ग्वाल

भेव—संज्ञा, पु० [सं० भेद] १. बारी, पारी २. भेद, रहस्य ३. तैयारी ।

उदा० चौकी दै जनु अपने भेव । बहुरे देवलोक को देव । —केशव

३. मिलि मित्र सहोदर बंधु शुभोदर कीन्हें भोजन भेव । —केशव

भैचंया—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का पुष्प ।

उदा० भैचंया के फूल करि मानुत छांड़ि निरंत । हूँ पचिहारी बहुत करि अपनै नाहिन कंत । —मतिराम

भैरो—संज्ञा, पु० [सं० भैरव] १. श्वान, कुत्ता, २. एक देवता जिनका वाहन कुत्ता माना गया है ।

उदा० १. हूकत उलूकबन, कूकत फिरत फेरु, भूंकत जु भैरो भूत गावै अलि गुंज लौं । —देव

भोगलाना—क्रि० अ० [हिं० भोग] वश में होना

उदा० ज्ञान हूँ तें आगें जाकी पदवी परम ऊँची रस उपजावै तामैं भोगी भोगलात ग्वै —घनानन्द

भौंड़र—संज्ञा, पु० [देश०] १. अबरक, अभ्रक २. बुक्का ।

उदा० कबि पजनेस कैधौं भोंडर के संपुट में चकई के बाल कैधो पिय चित टोना के —पजनेश

भौंड़र के किनका ये लाल के बदन पर निरखि जोन्हाई बीच ऐसे लसैं जगि-जगि —रघुनाथ

भोथर—वि० [देश०] कुंठित, जिसकी तीक्ष्णता समाप्त हो गई हो ।

उदा०—देह भयो दूबरो कि नेह तज्यो दीनन सों चक्र भयो भोथरो कि बाहन खुटानो है । —गंग

भोना—क्रि० अ [हिं० भीनना] भीनना, डूबना संचारित होना २. लीन होना ।

उदा० बात पिये जपिये गुर मंत्रनु ज्यौं उससे रिस कै विष भोई । —देव

भौंडू—संज्ञा, पु० [देश० किनारा ।

उदा० बजावै सांवरो बंसी जमुनातीर ठाढ़ौ पनघट भौंडूं कैसे जैयै । —घनानन्द

भ्वैना—क्रि० स० [हिं० भरना] भर जाना, फैल जाना, समा जाना ।

उदा० दाह जागी देह में कराह रसना के बीच रघुनाथ सखिन के आह नभ भ्वै गयो । —रघुनाथ

भ्वैहरा—संज्ञा, पु० [हिं० भूधरा], भूधरा जमीन के नीचे खोद कर बनाया गया गड्ढ़ा जिसमे गर्मी में ठंडक रहती है ।

उदा० बाहर भीतर भ्वैहरऊ न रह्यो परै देव सु पूछन आई । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

म

मंग—संज्ञा, स्त्री० [हिं० मांग] जटा, सिर।
उदा० भोग कै कै ललचाइ पुरन्दर, जोग कै गंग लई धरि मंगहि। —रसखानि
मंगली—संज्ञा, स्त्री० [सं०] हलदी, हरिद्रा।
उदा० मंगल ही जु करी रजनी विधि, याही ते मंगली नाम धर्‌यो है। —केशव
मंजि—संज्ञा, पु० [सं०] कमल कोश।
उदा० कंज की मंजि मैं खंजन मानौ उड़े चुनि चंचुनि चंचु चुभै कै। —देव
कंज की मंजि मैं, कुंदन की दुति, तूखनि इंदु पियूषनि पोसी। —देव
मंजुखा—संज्ञा, स्त्री० [सं० मंजूषा] पिटारी, छोटा पिटारा, डिब्बा।
उदा० नंदराम अमित अभूषण के जालन की लालन के माल की सो मंजुखा उघारी सी। —नंदराम
मंजुघोषा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. इन्द्र की एक अप्सरा २. मृदुभाषिणी (वि०)।
उदा० जीतत कपोल कौ तिलोत्तमैं अनूप रूप बात बात ही मैं मंजु घोषैं बरसति है। —सेनापति
मंजै—क्रि० स० [सं० मज्जन] डुबकी लगाना, स्नान करना।
उदा० कहै पद्माकर सु दोऊ बिपरीत माँझ, महमही मंजै मजा मंजुल मनोज की। —पद्माकर
मंझा—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का मजबूत डोरा, जिससे बच्चे पतंग उड़ाते हैं।
उदा० झंझा पौनबारे देत मंझाते तरुन फारे, संझाते उलूक कूर पारे विकरारे मैं। —बेनी प्रवीन
मंदगति—संज्ञा, पु० [सं०] शनिग्रह।
उदा० अतिमंद चाल सोइ मंदगति, महामनोहर जुबति यह। सबही फलदायक देखियतु, जाकौ सेवत नवौ ग्रह। —ब्रजनिधि
मंदरा—संज्ञा, पु० [सं० मंडल] एक तरह का बाजा, वाद्य विशेष।
उदा० आनक पटह बर नेवर बजन लागे, तार सुर मंदरन तानन मुरत है। —देव
मंदूदरि—वि० [सं० मंद=कृश+उदरि=कृशोदरि] कृशोदरी, पतले कमरवाली, क्षीण कटि वाली (नायिका)।
उदा० बंदन भाल, हिये हरि चंदन, लाये मिले मृदुमेद मंदूदरि। —देव
मंद्र—संज्ञा, पु० [सं०] संगीत के स्वरों के तीन भेदों में से एक।
उदा० संभु के अधर माहि काहे की सुरेख राजै, गाई जाति रागिनी सु कौन सुर मंद्र मा। —पद्माकर
मकबूल—वि० [अ० मक़बूल] रुचिकर, सर्व प्रिय।
उदा० दोऊ मकबूल मखतूल झूला झूलि झूलि देत सुखमूल कहि तोष भरि बरसात। —तोष
मखतूल—संज्ञा, पु० [फा०] काला रेशम।
उदा० १. लै मखतूल गुहे गहने रस मूरतिवंत सिंगार कै चाख्यौ। —देव
२. मखतूल के झूल झुलावत केशव भानु मनो ससि अंक लिये। —केशव
मगचारी—संज्ञा, पु० [सं० मार्ग+हिं० चारी] पथिक, राहगी।
उदा० टारि धरौ दुख दूर अली, सुभली विधि आवहिंगे मगचारी। —गंग
मगर—संज्ञा, पु० [सं० मार्ग] मार्ग, रास्ता।
उदा० घिरि सो अकास भूमि, भिरि सो गरूडहू सों, गिरि सो पर्‌यो है गिरि काहू, जा मगर में। —देव
मगरना—क्रि० अ० [हिं० मंगलना] जलना, मंगलना मुहा० होली मंगलना=होली जलना।
उदा० तिहारे निहारे बिन प्राननि करति होरा बिरह अँगारनि मगरि हिय होरी सी। —घनानन्द
मगी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मार्ग+हिं० ई(प्रत्य०)=] मार्गी, पथिक या राहगीर की स्त्री।
उदा० डोलैं डगमगी मग, मगी सी मनोरथ कै,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उमगी बिरह, डगरनि में डगरि कै ।
—देव

मघवामनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० मघवन मणि] इन्द्रमणि, इन्द्रनीलमणि ।

उदा० जो मघवामनि को सतु सोधियै तोऽब कहा परसै पय की मति । —घनानन्द

मचकना—क्रि० अ० [हिं० मचक] झटके से हिलना २. पेंग मारना ।

उदा० यों मिचकी मचकौ न हहा लचकै करिहौं मचकैं मिचकी के । —पद्माकर

मचना—क्रि० अ० [अनु०] बढ़ जाना, २. छा जाना, फैल जाना ।

उदा० १. दास सुबास सिंगार सिंगारत बोझनि ऊपर बोझ उठै मचि । —दास
२. दामिनि द्यो सम है दसहूँ दिसि, दादुर दुंद मचावन लागे । - दास

मचला—वि० [हिं० मचलना] अनजान बनने वाला, जो मौके पर चुप्पी साध ले ।

उदा० ऐसो मन मचला अचल अंग अंग पर, लालच के काज लोक लाजहि ते हटि गयो । —देव

मची—संज्ञा, स्त्री० [हिं० मचिया] छोटी चारपाई, छोटी पलंग ।

उदा० छाइ बिछाइ पुरैन के पात न लेटती चंदन कीच मची मैं । —पद्माकर

मजकूर—संज्ञा, पु० [अ० मज्कूर] गणना, गिनती, चर्चा ।

उदा० तेरो रूप जीत्यो रति, रंभा, मेनका को, और नारिन बिचारिन को मजकूर कहा है ।
—दूलह
इसी मजकूर है उनमाद । जो कीजै सही न सम्वाद । —बौधा

मजलन—संज्ञा, स्त्री० [अ० मंजिल + हिं० न] मंजिल, पड़ाव, यात्रा करते समय ठहरने का स्थान ।

उदा० हारे बटमारे जे बिचारे मजलन मारे, दुखित महा रे, तिनहूँ को सुख ना दियौ ।
—दयानिधि

मजीठ—संज्ञा, पु० [सं० मंजिष्ठा] औषधि विशेष, २. एक प्रकार की लता ।

उदा० १. प्यालो लै चिनी को छकी जोबन तरंग मानो रंग हेंतु पीबति मजीठ मुगलानी है । —कवीन्द्र

मजेज—संज्ञा, पु० [फा० मिजाज] गर्व, अभिमान २. मध्य भाग ।

उदा० १. लाड़िली कुँवरि राधारानी के सदन तजी मदन मजेज रति सेजहि सजति है ।
—देव
२. नील मनि जटित सुबेंदा उच्च कुच पैं पर्‌यो है टूटि ललित लिलाट के मजेजे तें ।
—पद्माकर

मजेजमनी—वि० [फा० मिज़ाज + सं० मणि] गर्वशिरोमणि, अत्यंत गर्वीला, अतिशय घमण्डी ।

उदा० सेज पै सौति करे जनि साल, मनोज के ओज मजेजमनी की । —देव

मठा—वि० [सं० मिष्ट] मिष्ट, मधुर, सुन्दर ।

उदा० धोखें आजु सीख सखियान की मठा सी मानि, गई दधि बेचन अकेली मधुबन मैं ।
—सोमनाथ

मट्ठे—वि० [प्रा० मट्ठ] मंद ।

उदा० सबै बीर पट्ठे सजे बाँधि गठ्ठे । सु ह्वै कै इकट्ठे परैं जे न मट्ठे । —पद्माकर

मडराना—क्रि० स० [सं० मंडप] किसी वस्तु के चारों तरफ चक्कर लगाना ।

उदा० मीडत हाथ परै उमड़ो सो मड़ो उहि बीच फिरै मडरान्यो । —देव
मंडप ही में फिरै मँडरात न जात कहूँ तजि नेह को ओनो । —पद्माकर

मड़ई—संज्ञा, स्त्री० [सं० मण्डप] कुटी, मंडप घास-फूंस से निर्मित छोटा गृह, पर्णशाला ।

उदा० प्रेम उमंडि रहे रस मंडित अंतर की मड़ई मिलि दोऊ । —दास

मड़हा—संज्ञा, पु० [सं० मण्डप] घर, मकान ।

उदा० मड़हो मलीन कुंज खांखरो खरोई खीन ।
—आलम

मड़ना—क्रि० अ० [हिं० मट्ठर] अड़कर बैठना ।

उदा० मीड़त हाथ परै उमड़ो सो, मड़ोउहि बीच फिरै मडरान्यो । —देव

मढ्ढना—क्रि० अ० [हिं० मढ़ना] अड़कर बैठना ।

उदा० नवल बकुल के फूल बीनिबे के मिस मढ्ढिय । मंद मंद मो निकट आनि कै मई सु ठढ्ढिय । —सोमनाथ

मत—संज्ञा, पु० [सं० मति] ज्ञान, चेतना, होश ।

उदा० बन-बाटनु पिक बटपरा लखि बिरहिनु

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मत मैं न । कुहौ कुहौ कहि कहि उठैं, करि करि राते नैन । —बिहारी

मति—संज्ञा, स्त्री० [समता] बराबरी, तुलना, समता ।

उदा० जौ मघवा-मनि को सतु सोधियै तोऽब कहा परसै पय की मति ।

—घनानन्द

मतीरा—संज्ञा, पु० [राज०] तरबूजा ।

उदा० विषम बृषादित की तृषा जियो मतीरनि सोधि । —बिहारी

मथाह—संज्ञा, पु० [सं० मस्तक] १. झगड़ा, मु० मथाह करना=झंझट करना, झगड़ा करना, रायसा करना ।

उदा० मानि ले मेरी कही तू लली अहे नाह के नेह मथाह न कीजै । —बोधा

मदन—संज्ञा, पु० [सं०] १. बकुल नामक वृक्ष, २. हाथी ३. कामदेव ।

उदा० १. बैस की निकाई सोई रितु सुखदाई तामैं तरुनाई उलहत मदन मैमंत है ।

— घनानन्द

मदनबान—संज्ञा, पु० [सं० मदन+बाण], १. एक प्रकार का बेला पुष्प २. कामदेव का बाण ।

उदा० सेवता हैं बजे जिन मारे हैं मदन बान परे इश्कपेचन मैं रीति और ही गहीं ।—ग्वाल

मदनालय—संज्ञा, पु० [सं०] स्त्रियों की गुप्तेन्द्रिय योनि ।

उदा० देव मृदु निनद विनोद मदनालय रवरटत समोद, चारु चेटुआ चटक के ।

— देव

मदमोदिनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मदयंतिका] मल्लिका नामक पुष्प ।

उदा० जाही जुही मल्लिका चमेली मदमोदिनी की कोमल कमोदिनी की सुषमा खराब की । —पद्माकर

मदी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मद] शराब, आसव ।

उदा० हियरा अति औटि उदेग की आँचनि-च्वावत आंसुनि मैन-मदी । —घनानन्द

मदै—क्रि० अ० [सं० मद] उन्मत्त होना, मस्त होना, आनंदित होना ।

उदा० मदै उनमाद गदै गदनाद, बदै रसबाद ददै मुख अंचल । —देव

मधियाती—वि० [सं० मध्यवर्ती] मध्यवर्ती, बीच का, बिचुआ ।

उदा० जेते मधियाती सब तिन सौं मिलाप छूट्यौ, कहिबौ सँदेस हूँ कौं छूट्यौ सकुचन तैं । —सेनापति

मधु—संज्ञा, पु० [सं०] १. पानी २. अमृत ।

उदा० जाकौं मन अनुराग बस ह्वै कै रह्योमधु बड़े-बड़े लोचननि चंचल चहति है ।

—सेनापति

मधुकर—संज्ञा, पु० [सं०] मीठा नीबू ।

उदा० देव मधुकर ढूक ढूकत मधूक धोखे, माधवी मधुर मधु लालच लरे परत ।

—देव

मधुगंजन—संज्ञा, पु० [सं०] मधु नामक राक्षस को मारने वाले श्रीकृष्ण, मधुरिपु ।

उदा० गुन रूप निधान बिचित्र बधूहित प्यारी पिया मधुगंजन की । —आलम

मधुपाली—संज्ञा, स्त्री० [सं० मधुप+अवलि] भ्रमरावली, भौरों का समूह ।

उदा० बिथुरी कपोलन पै जुलफैं मरोरदार सरमानी समता मजेज़ मधुपाली की ।

—रंगपाल

मधुब्रत—संज्ञा, पु० [सं० मधुब्रत] भ्रमर, भौंरा ।

उदा० माधवी के मधुराधरै को मधु लै मधुमास मधुब्रत मातो । —देव

मध्य—संज्ञा, स्त्री० [सं०] कटि, कमर ।

उदा० सोहति बहुत भाँति चीर सौं लपेटी सदा जाकी मध्य दसा सो तौ मैंन को अधार है । —सेनापति

भूपर कमल युग ऊपर कनक खम्भ ब्रह्म की सी गति मध्य सूक्षम अनिंदीबर ।

—देव

मनक—संज्ञा, स्त्री० [देश०] आवाज, शब्द ।

उदा० आलम कहै हो जात मनक न सुनीकान ।

—आलम

मनकना—क्रि० अ० [अनु०] हिलना-डुलना ।

उदा० जापता करनहारे नेकहू न मनके ।—भूषण

मनभौत—वि० [हिं० मन भाया] इच्छित, मनभाया ।

उदा० अलि कान्ह लता-बनिता मधि मै मधु पान कियो मनभौत समैं । —आलम

मनवा—संज्ञा, पु० (देश०) कपास ।

उदा० जाइ मिली पनवां पाँहरे अनवा तिय खेत खरी मनवा के । —तोष

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनसना—क्रि० सं० [हिं० मानस] संकल्प करना। २. इच्छा करना, इरादा करना।
उदा० १. देखिबे कौं फिरैं एक देवता सी दौरि-दौरि, देवता मनाइ दिन दान मनसति हैं। —केशव

मनसाकर—संज्ञा, पु० [सं०] १. कल्पवृक्ष, २. कामधेनु ३. मनवांछित फल देने वाला।
उदा० बहु शुभ मनसाकर, करुणामय अरु सुर त-रंगिनी शोभ सनी। —केशव

मनसूबी—संज्ञा, स्त्री० [अ० मंसूबः] १. इरादा, इच्छा, ख्वाहिश २. साजिश।
उदा० डूबी बन वीथिन चकोर चतुराई मनसूबी तुरगन की तमाम करियतु है। —देव

मनित—संज्ञा, स्त्री० [सं० मणि] मणि एक कीमती पत्थर।
उदा० कंकन झनित अगनित रव किंकिनी के, नूपुर रनित मिले मनित सुहात है। —देव

मनेस—संज्ञा, पु० [सं० मन+ईश] मन का स्वामी, कामदेव।
उदा०—दासजू बादि जनेस मनेस धनेस फनेस गनेस कहैबों। —दास

मनोजतरु—संज्ञा, पु० [सं०] कल्पवृक्ष, स्वर्ग का एक वृक्ष जो अभीष्ट कामना की पूर्ति करता है।
उदा० सोधो सुधा बिन्दु मकरंद सी मुकुत माल, लपिटी मनोज तरु मंजरी सरीर है।

मन्या—वि० [सं० मान्या] सम्मनानीय, आदरणीय, सम्मान्य।
उदा० कहूँ जोगी वेष कै जगावत अलेख कहूँ सन्यासी कहाये मठ मन्यासी ठयो फिरै। —देव

ममाते—वि० [हिं० मैमंत] मस्त, मैमंत।
उदा० कहै रघुनाथ मनमानिक सों मागे लेत मानै न ममातै गज कानन हृदन के। —रघुनाथ

ममारखी—संज्ञा, स्त्री० [फा० मुबारक] बधाई।
उदा० देत ममारखी बारहिबार करैं सिगरी सब ओर सलामैं। —चन्द्रशेखर

ममोल—संज्ञा, पु० [हिं० ममोला] ममोला, खंजन नामक पक्षी।
उदा० येहो ममोलदृगी दुहुँ हाथनि गोरे उरोजनि को धरने दे। —तोष

ममोला—संज्ञा, पु० [?] खंजन पक्षी।
उदा० मीन से ममोला से मयंक मृग छौना ऐसे नैन पुतरीन अलि सावक बिसेखे हैं। —गंग

मयंकज—संज्ञा, पु० [सं०] चन्द्रसुत, बुध।
उदा० अंक मयंकज के दल पंकज, पंकज में मनो पंकज फूले। —देव

मयंकबधू—संज्ञा, स्त्री [सं०] चन्द्र बधू, बीर बहूटी नामक लाल बरसाती कीड़ा।
उदा० ब्रजबाल नदी उमही रसखानि मयंकबधू दुति लाजत है। —रसखानि

मय—संज्ञा, पु० [सं०] मय नाम का शिल्पी दैत्य।
उदा० हंस गति नाइक कि गूढ़ गुनगाइक कि श्रवन सुहाइक कि माइक हैं मय के। —केशव

मयमंत—वि० [सं० मदवन्त] मदयुक्त मदोन्मत।
उदा० केकी कुल कोकिल अलापैं कलकंठ धुनि कोलाहाल होत सुकपोत मयमंत को। —देव

मयारि—संज्ञा, स्त्री० [देश०] वह डन्डा जिस पर हिंडोले की रस्सी लटकती रहती है।
उदा० फूलन की मयारि और मरुवे यों फूलन के फूले मोर तोता अलि झूमक मरोरे मैं। —ग्वाल

मयूखहिम—संज्ञा, पु० [सं० मयूषहिम] चन्द्रमा, हिमकर, शशि,
उदा० मूरख मयूखहिम हुमकि हुमकि हनै। —आलम

मयूषमनि मानिक—संज्ञा, पु० [सं० मयूषमणि = सूर्य+मनि=मणि-सूर्यकान्त मणि]।
१. सूर्यकान्तमणि।
उदा० ऊषम निदान ही मयूषमनि मानिकनि, अगनित चामीकर अगिनि तचाई सी। —देव

मरक—संज्ञा, स्त्री० [देश०] उत्तेजना, बढ़ावा. जोश
उदा० अर तें टरत न बर परे दई मरुक मनु मैन। —बिहारी

मरकना—क्रि० अ० [अनु०] टूटना, दबाव में में पड़ कर फटना।
उदा० ग्वाल कवि तरकि परे री कंचुकी के बंद अधिक उमंगन तै अंगहू मरकि परे। —ग्वाल

मरगजा—वि० [हि० मलवा] शिकन पड़ा हुआ। मला हुआ, गींजा हुआ २. मलिन।
उदा० मरगजे बागे रस पागे नैना लागे आवैं, आगे रही पाग धँसि जागे लाल जामिनी —आलम

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. कहै पद्माकर मजानि मरगजी मंजु,
मसकी सु आँगी है उरोजन के अंक पर।
——पद्माकर

मरजी—संज्ञा [अ० मरजी] १. मन का भाव २. प्रसन्नता, खुशी, ३. इच्छा, कामना।

उदा० वा बिधि साँवरे रावरे की न मिलै मरजी न मजा मजाखै। —पद्माकर

मरमै—संज्ञा, पु० [सं० मर्म] १. आघात, चोट, घाव २. मर्मस्थल, हृदय।

उदा० सर मैनहु को मुरली स्वर जीति कियो उर मै मरमै चरमै। — तोष
२. हियो कर मैन, लियो सर मैन, दियो मरमै न सम्हारि कै संचल। —देव

मरवट -संज्ञा, स्त्री० [हिं० मलपट] रेखाएँ, जो रामलीला के अवसर पर पात्रों के गालों पर चंदन तथा रंग आदि से बनाई जाती हैं।

उदा० अंजन आंजि मांडि मुख मरवट फिरि मुख हेरौ री। —घनानन्द

मरातिब—संज्ञा, पु० [अ०] झंडा, पताका।

उदा० सकल मरातिब ठाढ़े किये। हर सिंघ देव छरी कर लिए। —केशव

मरिन्द—संज्ञा, स्त्री०[सं० मणिन्द्र] मणीन्द्र, चन्द्र कान्त मणि २. मलिंद, भ्रमर।

उदा० १. का कुरबिन्द मरिन्द सु इन्दु-प्रभा मुख ओठ समान दुनी ना। —बेनी प्रवीन

मरुवा—संज्ञा, पु० [सं० मरुव] वह लकड़ी जिसके आधार पर हिंडोला लटकाया जाता है।

उदा० फूलन को मयारि और मरुवे यों फूलन के फूले मोर तोता अलि झूमक मरोरे मैं।
——ग्वाल

मरू—क्रि० वि० [बुं०] कठिनाई से, मुश्किल से मरू कै बची हौं, सास ! धरम तिहारेते।
— ग्वालकवि

मरोर—संज्ञा, पु० [हिं० मलोल अ० मलूक] १. अरमान, अभिलाषा, २. मानसिक व्यथा ३. उमंग।

उदा० कछुवै कहौगे कै अबोले ही रहोगे लाल, मन के मरोरे कौलों मन ही में मारिये।
——आलम

मलंग—संज्ञा, पु० [फा०] फकीर, योगी।

उदा० कौड़ा आंसू बूंद, करि सांकर बरुनी सजल कीन्हे बदन निमूंद, दृग मलंग डारे रहत।
——बिहारी

मल—संज्ञा, पु० [हिं० मरंद] मकरन्द, पुष्प-रस।

उदा० आइ गईं झूकैं मंद मारुत की देव, नव मल्लिका मिलित मल पदुम के दाव की।
——देव

मलय कुमार—संज्ञा, पु० [सं० मलय+कुमार] सुगंधित हवा, मलय पवन।

उदा० मालती को मिलि जब मलय कुमार आये, रेवा रस रोमनि जगाय नींद नासी है।
——आलम

मलूक—वि० [देश०] मनोहर, सुन्दर।

उदा० घाँघरे की घुमड़ उमड़ चारु चूनरी की पायन मलूक मखमल बरजोरे की।
——श्रीपति

मलोला—संज्ञा, पु० [अ० मलूक] मानसिक कष्ट, व्यथा, दुःख, रंज।

उदा० ओला से फफोला परे पाँइन मैं तोला-तोला, मारत ममोला हाय मन की मनै रही। —ग्वाल

मल्हकनि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० मटकना]—मटकने की क्रिया।

उदा० समद मतंग चालि की मल्हकनि चलन लगीं छटकाएँ अलकनि। —सोमनाथ

मवास—संज्ञा०, पु० [सं०] १. आश्रय स्थान, रक्षा स्थल, २. किला, गढ़।

उदा० कुच उतंग गिरिवर गह्यौ मीना मैन मवास। —बिहारी

मवासी—संज्ञा, पु० [हिं० मवास] दृढ़ गढ़ में रहने वाला, गढ़ रक्षक।

उदा० कंस सौं कहौंगी जाइ माँगि हौं लुमैं धराइ रहौगे कहाँ छिपाइ जौ बड़े मवासी हौ।
——रसखानि

मसक—संज्ञा, पु० [अ० मशरूअ] एक प्रकार का धारीदार वस्त्र।

उदा० सिर मसक पग्गहि काढ़ि खग्गिहिं-उच्चर्‌यो ललकारि कैं। —सोमनाथ

मसना—क्रि० स० [हिं० मसलना] रगड़ना, मलना, व्याकुल होना।

उदा० सकियै नहि नेकु निहारि गुपाल सु देखि मसोसनि ही मसियै। —गंग
आजु पर्‌यो जानि जब आपने मैं सुने कान, वाको संबोधन मोसो कह्यौ ही मसतु है।
——रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मसमुंद—वि० [मस + मूंदना] धक्कमधक्का, ठेलमठेला।
उदा०—तबही सूरज के सुभट निकट मचाओ दुंद। निकसि सकै नहिं एकहू कस्यो कटक मसमुंद। —सूदन

मसरना—क्रि० स० [हिं० मसलना] मसलना, रगड़ना।
उदा० कुँवर कान्ह जमुना मैं न्हात। मसरत सुभग साँवरे गात। —घनानन्द

मसि भीजना—क्रि० सं० [सं० मसि + हिं० भीजना] मूछों की कालिमा का उभरना, युवावस्था में मूछों के बाल का थोड़ा-थोड़ा झलकना।
उदा० ह्याँ इनके रस भीजत से दृग, ह्याँ उनके मसि भीजत आवै। —पद्माकर

मसीसी—वि० [हिं० मसलना, अ० मिसात] मींजी हुई, मसली हुई।
उदा० भानुनंदिनी की तकि तकि कै तरंगे तेज, सोवै सेज सौरभ मजेज की मसीसी सी। —ग्वाल

महताब—संज्ञा, स्त्री० [फा०] १. मसाल, महताबी २. चाँदनी ३. चन्द्रमा।
उदा० १. महताब चमकंत रुचि रंजक उड़ंत चपला सी तड़पंत घहरंत करि तोर। —चन्द्रशेखर

महबूबी—संज्ञा, स्त्री० [अ० महबूब] माशूकपन प्रियता, वत्सलता।
उदा० ऊबी सी रहति अरविन्दन की आभा-महबूबी मृगछौनन को छाम करियतु है। —देव

महर—संज्ञा स्त्री० [फा० मेहर] कृपा, दया।
उदा० ग्वाल कवि लाल तौसों जोर कर पूछत हौं, साँच कहि दीजौ जोपै मो पर महर है। —ग्वाल

महराना—क्रि० स० [हिं० मह] सुगंधित करना सुगंध उत्पन्न करना।
उदा० झहराती समीर झकोर महा महराती समूह सुगन्ध उही। —बेनीप्रवीन

महाबथ्य—संज्ञा, पु० [हिं० महावत] महावत, हाथीवान।
उदा० चढ़े हैं जिन्हीं पै महाबथ्य भारे। लसैं यों किलाएँ मनौ अत्तिवारे। —पद्माकर

महूख—संज्ञा, पु० [सं० मधूक] शहद, मधु।
उदा० केसव ऊख महूखहु दूखत आई हौं तो पहँ छाँड़ि जिठाई। —केशव
छिनक छबीले लाल वह जौ लगि नहि बतराइ, ऊख महूख पियूख की तौ लगि भूख न जाइ। —बिहारी

महेरो—संज्ञा, पु० [बुं०] मट्ठा में पकाया हुआ भात।
उदा० ताकों तू लै जाय भियारे सामर दूध महेरो। —बकसी हंसराज

मसना—क्रि० स० [हिं० मसलना] मसलना, मलना, हाथ से रगड़ना।
उदा० रुकियै नहिं नेकु निहारि गुपाल सु देखि मसोसनि हो मसियै। —गंग

मसवत—वि० [सं० मशक + वत् (प्रत्य०)] मशक की भाँति, मच्छड़ की तरह।
उदा० इन्द्र को गरब गरे सब ब्रज राख्यो तरे, धन्य रे कन्हैया हँसै गिरिधरे मसवत।
—दूलह

महना—क्रि० स० [हिं० मथना] मथना।
उदा० कवि गंग कहै सुनि साह अकब्बर छाछ मिली यह दूध महा। —गंग

महमही—वि० [हिं० महक] सुगंधित।
उदा० महमही मंद मंद मारुत मिलन तैसी गहगही खिलनि गुलाब की कलीन की।
—रसखानि

महरिम—संज्ञा, पु० [अ० महरम] मित्र, दोस्त, परिचित।
उदा० मेघपिमघ धूम हौं बिरहिन तालिबइल्म। महरिम बेमालूम बिरह किताब पढ़ावसी।
—बोधा

महरेटी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० महरेटा] राधा।
उदा० बीते फागु औसर के बिदा कीन्ही बार वधू काल्हि महरेटी करि ही में महादुख को।
—रघुनाथ

महाअली—संज्ञा, पु० [सं० महाअलि] बहुत बड़ा आवर्त्त, भँवर।
उदा० भौहनि भवर मध्य तरि निकसत यातैं, महाअली घूँघट ते टरतिन टारी है।
—गंग

महाकवि—संज्ञा, पु० [सं०] बड़े वैद्य, चतुर चिकित्सक।
उदा० चूरन पाँच महाकवि बिधि बनवाइ रखाये।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मीठे चूरन और चिरपरे और कषाये ।
—सोमनाथ

महापी—संज्ञा, पु० [सं० महा + हिं० पी = पीने वाला] बहुत बड़ा पियक्कड़, शराब पीने वाला।
उदा० व्यापी अघ ओघ कौ, महापी मदिरा को मंजु, कीन्हो परदेस को पयान, रोजरारी में ।
—ग्वाल

महिमेवा—वि० [सं० महिमावान्] महिमावान, गौरवशाली, प्रतापी ।
उदा० साधु जन जीते या कठिन कलिकाल कलि-काल महावीर महाराज महिमेवा ने ।
—भूषण

महीदनवारो—संज्ञा, पु० [हिं० मही = मट्ठा + दनवारो = देने वाला] मट्ठा देने वाला, अहीर, श्रीकृष्ण ।
उदा० साथ लगाइ गयो मन लै वह गोकुलघां को महीदनवारो । —रघुनाथ

महीरूह—संज्ञा, पु० [सं०] वृक्ष ।
उदा० झूलनि रंग घने मतिराम महीरूह फूल प्रभा निकसे हैं । —मतिराम

महूम—संज्ञा, पु० [अ० मुहीब] मित्र, प्रिय ।
उदा० मल्लिकन मंजुल मलिदं मतवारे मिले मंद मंद मारुत महूम मनसा की है ।
—पद्माकर

महूष—संज्ञा, स्त्री० [सं० मधुच्छिष्ट] मधु, शहद
उदा० केशव ऊख महूखहु दूषत आई हौं तो पहँ छांड़ि जिठाई । —केशव

मांइ—संज्ञा, पु० [हिं० मांह] वैवाहिक अवसर पर सम्पन्न होने वाली एक पूजा, जिसे मांह पूजा' कहा जाता है ।
उदा० सुनि यह बैन दुवौं अतुराये । पूजन मांइ गये छबि छाये । —सोमनाथ

मांदी—वि० [फा० मांदः] १. थकी हुई २. रोगी
उदा० १. ऐसे जी विचार कर, नँनद सों रार कर, मांदी हौं अपार कर, सासु सों उचार कर । —ग्वाल

मांदनी—वि० [सं० मन्द] मन्द, क्षीण ।
उदा० सुनि स्याम प्यारी ताकौं उपमा न कोऊ और, सबै समता को श्रम कर परी मांदनी।
—सूरतिमिश्र

माइक—संज्ञा, पु० [सं० मायावी] मायावी गण, माया करने वाले ।
उदा० हंसगतिनाइक कि गूढ़ गुनगाइक कि श्रवन-सुहाइक कि माइक हैं मय के । —केशव

माई—संज्ञा, स्त्री० [देश०] सखी, सहेली ।
उदा० बाहर भीतर भ्वहेरऊ, न रहो परै देव सुपूछन आई हौं, ही भुलानी, की भूले सबै, कहैं ग्रीषम मैं सरदागम माई । —देव

माची—संज्ञा, स्त्री० [सं० मंच] मंच, मकान की कुर्सी ।
उदा० बारि पताल सी माची मही अमरावति की छवि ऊपर छाजै । —भूषण

माड़ना—क्रि० स० [सं० मंडन] मंडित करना, सँवारना २. युद्ध करना ।
उदा० छाँड़्यो सुख-भोग मान खांड़्यो गुरु लोगनि को माड़्यो हम योग या वियोग के भगल मैं । —देव

मानद—संज्ञा, पु० [सं० मान + द] सम्मान देने वाला, नायक, प्रियतम ।
उदा० मान मनावतहूँ करै, मानद को अपमान ।
—केशव

माना—क्रि० अ० [हिं० अमाना] अँटना, समाना ।
उदा० माई, कहाँ यह माइगी दीपति जौ दिन द्वै इहि भाँति बढ़ैगी । —केशव

माफक—वि० [अ० मुआफिक] योग्य, लायक २. मेल, संघटन [संज्ञा, स्त्री० अ० माफ़कत] ।
उदा० देखिबे ही माफक है माफक सरीर की ।
—पद्माकर

मामी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मा] इनकार, अस्वीकृति ।
मुहावरा—मामी पीना = इनकार करना, मुकर जाना ।
उदा० मामी पियै इनकी मेरी माइ को हैं हरि आठहुं गाँठ अठाए । —केशव

मायल—वि० [फा०] प्रवृत्त, २. मिला हुआ ।
उदा० प्रानन प्यारे, भरे अति पानिप, मायल घायल चोप चटावत । —घनानन्द

मार—संज्ञा, स्त्री० [सं० माल] माला, माल २. कामदेव ।
उदा० सो सिंगार रस कैसी धार । नील नलिन कैसी महिमार । —केशव

मारकंड—संज्ञा, पु० [सं० मार + कंड = बाण] कामबाण, कामदेव का बाण ।
उदा० मनु मारकंड बिहीन हौ मुनि मारकंड बखानियै । —केशव

मारनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मारण] मारण-कला एक कल्पित तांत्रिक प्रयोग जो मनुष्य के मारने के लिए किया जाता है ।
उदा० नारी न हाथ रही उहि नारी के मारनी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मोहि मनोज महा की । —दास

माह—संज्ञा, पु० [सं० माघ] बारह महीनों में एक माह जो जाड़े में पड़ता है, माघ ।

उदा० (क) दास आस-पास पुर नगर के बासी उत, माहहू को जानति निदाहै रह्यो लागिकै —दास

(ख) जिय की जीवन माह जो जेठ न छांह सुहाय —बिहारी

(ग) सुनत पथिक मुँह माह निसि लुवैं चलति उहि गाँव । —बिहारी

माही—संज्ञा, स्त्री० [फा०] मछली ।

उदा० माही जल मृग के सु तृन, सज्जन हित कर जीव । लुब्धक धीवर दुष्ट नर, बिन कारन दुख कोन । —ब्रजनिधि

माहौठि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० माह=माघ+वट =महावट] पूस और माघ की झड़ी, वर्षा ।

उदा० भए नैक माहौठि, कठिन लागै सुठि हिम-कर । —सेनापति

मिचकी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० मचकना] पेंग ।

उदा० यों मिचकी मचकौ न हहा लचकै करिहाँ मचकैं मिचकी के । —पद्माकर

ज्यों ज्यों मचकीन को मचाय बाल झूलति है त्यों त्यों खरी झूमें लाल लपिलपि जात है । —हनुमान

मिजयानी—संज्ञा, स्त्री० [फा० मेजवान] आतिथ्य, मेहमानी ।

उदा० मिजयानी सबही ने पाई । तौ तक निवत-हारी तहँ आई । —बोधा

मिथुन—संज्ञा, पु० [सं०] १. एक राशि २. स्त्री० पुरुष का जोड़ा ।

उदा० १. सिंह कटि मेखला स्यों कुंभ कुच मिथुन त्यों मुखबास अलि गुंजै भौंहेंधनु सीक है । —दास

मिसहा—वि० [सं० मिस+हिं० हा प्रत्य] बहाना करने वाला, छली ।

उदा० मैं मिसहा सोयौ समुझि, मुंह चूम्यौ ढिग जाइ । —बिहारी

मीखना—क्रि० स० [सं० मिष] मींजना, नष्ट करना, बंदकरना, ।

उदा० सीखति सिंगार मति तीखति प्रवीनबेनी, सौतिन की मीखति गई है सुखसारे की ।

—बेनी प्रवीन

मीतल—संज्ञा, पु०[सं०मित्र] मित्र, प्रिय, प्रियतम ।

उदा० सीतल नीर समीर भयो अब, धीर धरौं कस कै मम मीतल । —गंग

मीनरथ—संज्ञा, पु० [सं०] कामदेव, मन्मथ ।

उदा० मीनरथ सारथी के नादन नबीने हैं ।

—केशव

मीना—संज्ञा, पु० [राजस्था० मीणा] १. राज पूताने की एक जंगली और लुटेरी जात, २. डाकू ।

उदा० कुच उतंग गिरिवर गह्यौ मीना मैन मवास । —बिहारी

मुँहकी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मौखिकी] जुबानी बातें, ऊपर की बातें ।

उदा० आये मुरारि उठी कहि नारि, क्यों मोसों मिलावत हो मुँहकी । —सुंदर

मुकना संज्ञा, पु० [सं० मनाक-हाथी] वह नर हाथी जिसके दांत बहुत छोटे हों अथवा न हो ।

उदा० मंदर ते भारे मुकना न्यारे दिपत दतारे उमड़ि चलैं । —पद्माकर

मुकब्बा—संज्ञा, पु० [अ० मुकाबा] शृंगारिक संदूक, वस्त्रों और अलंकारों आदि की मंजूषा ।

उदा० मानहु मुसब्बर मनोज को मुकब्बा मंजु-फैलि परयों ताकी तसबीरैं उड़ी जात हैं ।

—ग्वाल

मुकाते—संज्ञा, पु०, [अ० मुकाते] ठीका लेने वाला, काटने वाला ।

उदा० खानि मुकातै लीजै गाउँ । धन पावै मठपती सुभाउँ । —केशव

मुकी—वि० [सं० मुख्य] १. मुख्य श्रेष्ठ, २. अत्यधिक, यथेष्ट ।

उदा० रीझि गई तुमहूँ सुनि रीझि न बोलती बेनी प्रवीन मुकी है । —बेनी प्रवीन

मुकुलाना—क्रि० स० [सं० मुकुलित] बन्द करना झपाना, कुछ खुला और कुछ बन्द रखना ।

उदा० रूखे बचननि दुख दूखे मुख सूखे दुति देखिबे की भूखे दृग राखे मुकुलाइ कै ।

—देव

मुकेस—संज्ञा, पु० [फां० मुक्कैश] चाँदी-सोने के चौड़े तार, २. सोने-चाँदी के तारों का बना कपड़ा, बादला ।

उदा० १. पीत सित मिश्रित मुकेसन समस्त सारी जाहिर । जलूस जाको जगत जगी परै

—पजनेस

२. सजि मुकेस के बेस तिय, मनहुँ मैनको फौज । —नागरीदास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुंचित—वि० [सं० मुंच] मुक्त, बिखरे हुए खुले हुए ।
उदा० चीकने मेचक रुचिर मुंचित सुकुंचित केस । —घनानन्द

मुचंड—वि० [हिं० मुच्चा + अंड] १. मद्दी, २. मोटी ।
उदा० मोटी मुचंड महामतवारिन मूड़ पै मीच फिरै मड़रानी । —पद्माकर

मुचताना—क्रि० स० [सं० मोचन] छोड़ना, त्यागना ।
उदा० मान मुचितेयै उचितैयै पिय संग रंग रति के रितैये बल काम कमनैत को —देव
बाहन बिधाये बांह, जघन जघन माँह कहे छांड़ो नाह नाहि गयो चाहे मुचिकै ।—देव

मुचे—क्रि० वि० [हिं० मुचामुच्च] पूर्णतया, अच्छी तरह ।
उदा० माधव जू मधुमास मधुब्बन राधिका सों करिं केलि मुचेते । —आलम

मुचेत—वि० [सं० मुंचित] छूटे हुए, मुक्त ।
उदा० हय-गय सभय ह्वै चिक्करत नहिं टरत बीर मुचेतहू । —पद्माकर

मुतिसरी—संज्ञा, स्त्री, [सं० मुक्ता + सृक] मुक्ता लड़ी, मोती की लड़ी ।
उदा० लूटि सी करति कलहंस युग देव कहै टूटि मुतिसरी छिति छूटि ठुरहरी लेति ।—देव

मुदाम—अव्य [फा०] सदैव, हमेशा ।
उदा० सो अन्योन्य आयुस मैं दोऊ जहाँ उपकरैं, कहै कबि दूलह यों रचना मुदाम की । --
दूलह बूड़ति अथाहैं, कुल धरम निवाहै कौन बाबरी ? बिलोकि यह उकति मुदाम की ।
—द्विजदेव

मुदिर—संज्ञा, पु० [सं०] बादल, मेघ ।
उदा० कहैं मतिराम दीने दीरघ दुरद बृन्द, मुदिर से मेदुर मुदित मतवारे हैं । —मतिराम
मारुत मंडल मध्य में, मेदुर मुदिर मिलाहिं
—रघुराज

मुद्दति—संज्ञा, स्त्री, [अ० मुद्दत] अवधि, बहुत दिन, अरसा ।
उदा० कहै कवि गंग यह देखिबे को आज काल, काबली की मुद्दति गिरीस गिरवान की ।
—गंग

मुद्ध—वि० [सं० मुग्ध] मूर्ख, मूढ़ ।
उदा० गत बल खान दलेल हुव, खानबहादुर मुद्ध
—भूषण

मुद्रित—वि० [सं०] १. आवृत्त, घिरा हुआ, चिह्नित २. छाप लगाना, सिक्का चलाना ।
उदा० १. मुद्रित समुद्र सात मुद्रा निज मुद्रित कै, आई दिसि दिसि जोति सेना रघुनाथ की
— केशव

मुधाकांति संज्ञा, स्त्री [सं०] असत्यकांति मृगतृष्णा ।
उदा० कौल सनाल कि बाल के हाथ छिपी कटि कांति की भाँति मुधाकी । - देव

मुफित क्रि० वि० [अ० मुफ़्रित] अत्यधिक, बहुत ज्यादा ।
उदा० नन्दराम कामिनी अतरतर कीन्हे बास केस पास गुंफित मुफित झोप झलकी ।
—नन्दराम

मुरमुरे—वि० [अनु०] चुरमुर ।
उदा० फेंबी गूझा गजक मुरमुरे सेव सुहारे ।
— सोमनाथ

मुरवा—संज्ञा, पु० [देश०] एंडी के ऊपर के चारों तरफ का घेरा ।
उदा०—पिय बियोग ते तरुनि की पियरानी मुख जोति । मृदु मुरवा की घूंघुरी कटि में किंकिन होति । —सोमनाथ

मुरस्सैकारी—वि० [अ० मुरस्सः—जड़ाव] जड़ावदार जडाऊ ।
उदा० बैठी है हिंडोरैं बीच तखत मुरस्सैकारी जेब सरदारी की मजेज न भुलावहीं ।
—नागरीदास

मुरार—संज्ञा, पु० [सं० मृणाल] कमलनाल की जड़, कमलनाल ।
उदा०—बार सी मुरार तार सी लौं सु तजी मैं अब जीवित ही ह्वै है वह प्रानायाम साधी सी । —दास

मुरासा—संज्ञा, पु० [अ० मुरस्सा] कर्ण का एक भूषण ।
उदा० लसैं मुरासा तिय स्रवन यौं मुकतनु दुति पाइ । —बिहारी

मुलकना—क्रि० अ० [देश०] पुलकित होना, नेत्रों में प्रसन्नता प्रकट करना, २. झाँकना ।
उदा० १. सकुचि सरकि पिय निकट तैं, मुलकि कछुक, तन तोरि । —बिहारी
२. प्रेमभरो पुलकै मुलकै उर ब्याकुल कै कुल लोक लजावै । —देव

मुलाना—क्रि० स० [प्रा० मुर] १. उत्पीड़ित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करना, दुख देना २. विलास करना ।
उदा० छोमन ही छीजी रस लोभन पसीजी अंसुवनि उर भीजी, भीजी मदन मुलाइकै ।
—देव

मुसजर—संज्ञा, पु० [अ० मुशज्जर] एक प्रकार का छपा हुआ कपड़ा ।
उदा० ताफता कलन्दर बाफत बन्दर मुसजर सुन्दर झिलमिल है । —रुदन

मुसद्दी संज्ञा, पु० [अ० मुतसद्दी] स्वामी, राजा २. मुंशी लेखक ३. शासनाधिकारी, प्रबन्धकर्ता
उदा० कहा भयो दिना चार गद्दी के मुसद्दी भए बद्दी के करैया सब रद्दी होइ जायँगे ।
—गंग

३. आय खुदी तू करत री, भई मुसद्दी मैन, गुद्दी पर क्यों चढ़त है, मुद्दी ह्वै करिबैन । —नागरीदास

मुसब्बर—संज्ञा, पु० [अ० मुसब्बिर] चित्रकार तस्वीर बनाने वाला ।
उदा० मानहु मुसब्बर मनोज को मुकब्बा मंजु फैलि परयो, ताकी तसबीरैं उड़ी जात हैं ।
—ग्वाल

मुसुरू—संज्ञा, पु० [अ० मशरूअ] एक तरह का धारीदार कपड़ा ।
उदा० घांघरो सिरिफ मुसुरू को सो हरित रंग अँगिया उरोज डारे हीरन के हार को ।
—तोष

मुहरे—संज्ञा, पु० [?] तनी चोली का बन्द २. शतरंज के मुहरे, गोट ।
उदा० गंग कहै खरे नीके खए खगी, बैठि गए मुहरे अंगिया के । —गंग

मुहार—संज्ञा, स्त्री० [?] ऊँट की नकेल ।
उदा० जाहि ताहि को चित्त हरै, बाँधै पैम कटार चित्त आवत गहि खैंचई भरिकै गहै मुहार ।
—रहीम

मुहीम—संज्ञा, स्त्री० [प्रभु] चढ़ाई, लड़ाई, युद्ध ।
उदा० बाढ़ी सीत संका, काँपै उर ह्वै अतंका लघुसंका के लगेते होत लङ्का की मुहीम ।
—गंग

मुहुप—संज्ञा, पु० [सं० मुख] मुख, २. आनन्द ।
उदा० चाहति चल्यौ तू चितै चैत रुचि राधे चित मेरे अति चिंता चीति बिम्ब ज्यों मुहुप की । —देव

मूठ—संज्ञा, पु० [सं० मुष्टि] जादू, टोना, मुहा० मूठ चलाना-जादू करना ।
उदा० बाल अनूठियै ऊठ गुलाल की मूठि मैं लालहि मूठि चलावै ।
—घनानन्द

मूठि—संज्ञा, स्त्री [सं० मुष्ठिक] मुट्ठी, मारण ।
उदा० भरि गुलाल की मूठि सों गई मूठि सी मारि । —बिहारी

मूलन—संज्ञा, पु० [सं० उन्मूलन] [वि० उन्मूलित] समूलनष्ट होना, जड़ से उखड़ना ।
उदा० फूले न बाग समूले न मूले ऊमूले खरेउर फूले फिरैया । —देव

मूलस्थली संज्ञा, स्त्री० [सं०] थाला, आलबाल
उदा० कहूँ बृच्छ मूलस्थली तोय पीबै । महामत्त मातंग सीमा न छीबै । —केशव

मृगंछी—वि० [सं० मृगाक्षी] मृग के समान नेत्र वाली, मृगनेत्री ।
उदा० फेरि फेरि हेरि मग बात हित बंछी पूछै पच्छीहू मृगंछी जैसे पच्छी पिंजरा पर्‌यौ ।
—देव

मृग-लंछन—संज्ञा, पु० [सं० मृगाङ्क] मृगाङ्क, शशि, चन्द्रमा ।
उदा० मुख मृग-लंछन सौं कटि मृगराज की सी मृग के से दृग, भाल बैंदी मृगमद की ।
—सेनापति

मृगलच्छन—संज्ञा, पु० [सं० मृगाङ्क] मृगाङ्क, चन्द्रमा ।
उदा० मृगपति जित्यो सुलंक सों मृगलच्छन मृदु-हास, मृग मद जित्यो सुनैन सों, मृगमद जित्यो सुबास । —मतिराम

मृडानी—संज्ञा, स्त्री० [सं०] पार्वती का एक विशेषण, पार्वती ।
उदा० कौन मृडानी को जनक हैं, परबत सरदार । —दास

मेंड़ा—संज्ञा, स्त्री० [हिं० मटकी, मेटा] महेंड़ा, दधिपात्र, दहेंड़ी ।
उदा० नापत मही ठगत मेंड़ा में डारि अँगुरियाँ चारी । —बकसी हंसराज

मेंज—संज्ञा, पु० [फा० मेज] भोज-सामग्री, भोज्य-पदार्थ ।
उदा० सखिन सुधारी सेज, मेज मंजु मौजकारी, लखत लगारी होत ओट में किबारी की ।
—ग्वाल

साँटन के सुरख बिछौना बिछे सेज पर, रंगामेज मेज मनमौज की निसा करैं । —ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेदुर—वि० [सं०] १. सघन, २. कोमल।
उदा० १. मारुत मंडल मध्य में, मेदुर मुदिर मिलाहि। रघुराज
कहै 'मतिराम' दीने दीरघ दुरद बृंद, मुदिर से मेदुर मुदित मतवारे हैं। —मतिराम
मेर— सज्ञा, पु० [सं० सुमेरु] पुराणों में उल्लिखित एक पहाड़ जो सोने का माना गया है।
उदा० उन्नत उरोज कसी कंचुकी कुसुम्भी लसी भुजबन्द मोती माल कंठसिरी मेर मैं। बेनी प्रवीन
मेलना—क्रि० अ० [हिं० मेल+ना (प्रत्य०)] १. एकत्रित होना, इकट्ठा होना, २. मिलना, ३. फेंकना, रखना, पहनाना डालना (क्रि० स०)।
उदा० १. केशव बासर बारहें रघुपति के सब बीर, लवणासुर के यमहि जनु मेले यमुना तीर। —केशव
३. डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच, लोगनि कवित्त कीबो खेलि करि जानो है। —ठाकुर
मैगल गवन—वि० [सं० मदकल+गमन] गज-गामनी, मदगलित हाथी की भाँति गमन करने वाली।
उदा० स्रम कुम्हिलानी बिललानी बन बन डोलैं मैगलगवन मुगलानी मुगलन की। —भूषण
मैजलि—संज्ञा, स्त्री० [अ० मंजिल] १. पड़ाव मंजिल २. यात्रा, सफर।
उदा० आस उर धरे परे पायन पसारि घरै, मैजलि समाइ सोइ गये कैसे मन के। —बेनी प्रवीन
मैंन—संज्ञा, पु० [हिं० मायन], मायन, विवाह में होने वाला मातृ एवं पितृ पूजन।
उदा० नीकी अगवानी होत सुख जनबासौ सब सजी तेल ताई चैन मैंन मयमंत है। —सेनापति
मैन—संज्ञा, पु० [सं०] . मोम २. कामदेव।
उदा० १. सेज मैन सारी सी है सारी हूँ बिसारी सी है। आलम
मैनसारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० मदन+सारि=गोट] मोम की बनी हुई गोट या पासा।
उदा० सेज मैन सारी सी है सारी हूँ बिसारी सी है। विरह बिलाति जाति तारे की सी लीक है। —आलम
मैरु—संज्ञा, स्त्री० [सं० मृदर प्रा० मिग्गर] सर्प के विष की लहर।
उदा० घेरु घर बाहर ते मेरु सो परत आवै हेरि टेरि हारी हितू गारुह हरिसी। —देव
देखे ताहि मैरु सो आवत मनहु भजुंगिनि कारी। —बकसी हंसराज
मैलना—क्रि० स० [देश०] १. दीपक बुझाना, २. रखना, डालना।
मुहा० दिया मैल डारना=दीपक बुझाना।
उदा० १. दिया मैल डारो उघारो न देहं। छुवो ना पिया मो हिया पाइ ऐहं। —बोधा
मोई—वि० [हिं० मोयन] भीगी हुई, आर्द्र, पगी हुई, डूबी हुई।
उदा० आनि परी चित बीच अचानक जोबन रूप महारस मोई। —देव
मोकर—संज्ञा, स्त्री० [सं० मुक्ति] स्वतंत्रता आजादी।
उदा० प्रेम पढ़ाइ, बढ़ाइ कै बंधनु दोनों चढ़ाइ, कढ़ाइ कै मोकर। —देव
मोकल—वि० [सं० मदगलित] मदोन्मत्त, मद युक्त।
उदा० कद के बिलंद मद मोकल जे मथिबे को मंदर उदधि दावादारनि के दल के।—गंग
मोकुल—वि० [सं० मदगलित] मदोन्मत्त, मद युक्त।
उदा० गोकुल मैं कोकुल न मोकुल सुनि गावैं, कोकिल कलानि अलाप पिक बैनी के। —देव
मोच—संज्ञा, पु० [सं० मोचन] मुक्ति, छुटकारा, मोचन, समाप्ति।
उदा० मोचु पंच बान को अरोच अभिमान को ये सोच पतिप्राण को सकोच सखियन को। —देव
मोजरि—संज्ञा, पु० [राज०] जूता, पदत्राण।
उदा० जरीस जोंति जा मयं, दिपंत कंठ दामयं, प्रसंसि पाइ मोजरी, जराउ हेम संजुरी। —मान कवि
मोजी—संज्ञा, स्त्री० [राज० मोजरि] जूती, पदत्राण।
उदा० मोजी सिये जरदोजी बुटीन उरोज उठे अठिलात सकोचनि। —देव
मोत—संज्ञा, स्त्री० [सं० मूत] मोटरी, गठरी।
उदा० जज्ञ कर्म बिनु कर्म जो जगबंधन ते होत।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तिन काजैं कर्मन करौ मेटि फलन को मोत ।। —जसवन्त सिंह

मोदधि—संज्ञा, पु० [सं० महोदधि] महोदधि, महासागर ।

उदा० गंग कहै ऐसे गज बकसत घरी-घरी, जैसे गज मोदधि मथेई पाइयत हैं । —गंग

मोना—क्रि० स० [हिं० मोयन] १. तल्लीन करना, पागना, डुबाना, मोहित करना, २. भिगोना ।

उदा० कुटिल कुराही कूर कलही कलंकी कलि-काल की कथान मे रहे जे मति मोइ कै ।
—पद्माकर

मोसन—सं० पु० [फा० मुसिन] चतुर, अनुभवी ता पीछैं असवार सूर केसव सब मोसन ।
—केसवदास

मौकना—क्रि० सं० [सं० मुक्त] त्यागना, छोड़ना ।

उदा० बीर रघुनन्दन कौ मौको न हुकुम नाँतौ, सीतै लंक सहित पयोधि पार लै धरौं ।
—सोमनाथ

मौज—संज्ञा, स्त्री० [अ०] पुरस्कार, बकशीश, इनाम, २. तरंग, लहर, ३. आनन्द ।

उदा० १ रहति न रन जैसाह मुख लखि लाखन की फौज । जाँचि निराखर हू चलैं लै लाखन की मौज । —बिहारी

भूषन भिच्छुक भीरन कौं अति भोजहु तें बढ़ि मौजनि साजै । —भूषण

मौड़ी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] लड़की ।

उदा० कान्ह सों पिछौड़ी है कि कान्ह की कनौडी है कि, मौड़ी है जु डरपी कै छल अति छाई है । —आलम

मौरना—क्रि० सं० [हि० मौर+न (प्रत्य०)] फूलना, बौरना ।

उदा० एड़ी अनार सी मौरि रही, बहियाँ दोउ चंपे की डार नवाऊँ । —रसखानि

मौरसिरी—संज्ञा, स्त्री० [स० मौलकी] १. मौलश्री नामक एक पुष्प, २ शिरोमणि [वि० सिरमौर] ।

उदा० मौरसिरी ही को पैन्हि कै हार भई सब के शिर मौरसिरी तू । —देव

य

यचा—संज्ञा, स्त्री० [फा० जच्चः] प्रसूता स्त्री, वह स्त्री जिसे हाल में बच्चा पैदा हुआ हो ।

उदा० बंचति न काहू लचि रंच तिरछाइ डीठि संचति सुजसु यचा संचति के सोहरे ।
—देव

यरक्की—संज्ञा, पु० [फा० एराक़ी] अरब देश का घोड़ा, ताजी ।

उदा० घूंघट यरक्की तरुनाइयो थिरक्की पाइ रूप की तरक्की सब सौतिन करक्की है ।
तोष

यानो—वि० [सं० ज्ञान] ज्ञानवान, ज्ञानी ।

उदा० बाहर मूढ़ सु अंतस यानो ।
ताकहँ जीवन मुक्त बखानो । —केशव

याल—संज्ञा, पु० [फा० अयाल] घोड़े, सिंह आदि के गरदन पर के बाल ।

उदा० यालनि जटित मंजु मुकता हैं ।
—चन्द्रशेखर

येपै—अव्य० [सं० एषा+अपि] इस पर, तथापि, फिर भी ।

उदा० येपै कर मेरो तेरी बलया बिची में धँसि पूजि कुच शंभु आस पुजई घनेरी है ।
—ग्वाला

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

र

रंक—संज्ञा, पु० [रंकु] सफेद चित्ती वाला मृग, २. दरिद्र, गरीब ।
उदा० लखि जु रंक सकलंक भो पंकज रंक मयंक । —दास
रंग—संज्ञा, पु० [सं०] १. युवावस्था, जवानी २. युद्धस्थल, रणस्थल ।
उदा० २. करन छुवत बीच ह्वै कै जात कुंडल के, रंग मैं करैं कलोल काम के सुभट से । सेनापति
रंगरखिया—संज्ञा, पु० [हिं० रंग = शोभा, आनन्द + सं० रचक = शोभाशाली, विनोदशील] सुन्दर. विनोदी ।
उदा० रीझैं रिझबारि इन्दुबदनी उदार सुरूख की सी डार डोलै रंग रखियन मैं । — देव
रंगराई—संज्ञा, पु० [हि० रंग + सं० राज], आनंद के स्वामी, श्री कृष्ण ।
उदा० कोटि उपाइ न पाइये फेरि, समाई गई रंगराइ के रूप मैं । — देव
रँगराती—वि० [हिं० रंग + सं० रत] प्रेम में रत, अनुरक्त ।
उदा० रँगराती-हरी हहराती लता झुकि जाति समीर की झूंकनि सों । —देव
झूलनिहारी अनोखी नई उनई रहतीं इत ही रँगराती । — देव
रंगरेजना—क्रि० स० [फा० रंगरेज] रंग भरना, किसी रंग में रंगना, रसमय करना ।
उदा० उरज उतंग अभिलाषी सेत कंचुकी है, राखी ना कछूक चित चोप रंगरेजे मैं । — बेनीप्रवीन
रंगरैनी—संज्ञा, स्त्री [?] १. एक प्रकार की लाल रंग की चूनर २. श्याम रंग की चूनरी ।
उदा० १. घोरि डारी केसरि सु बेसरि बिलोरि डारी, बोरि डारी चूनरि चुचात रंगरैनी ज्यों । —पदमाकर
दूलह दान चढ़े रन कौं रिपु भूमि रक्त भई रँगरैनी । —गंग
२. भाव बढ़ै चित चाव चढ़ै रँगरैनि किधौं रसराज की रेनी । — घनानन्द
रँगहेरा—संज्ञा, पु० [हिं० रंग + हार] कपड़ा रँगनेवाला, रंगरेज ।
उदा० पीरे अचरान स्वेत लुगुरा लहरि लेत लुगी लँहगा की लाल रँगी रँगहेरा की । —देव
रंगामेज—वि० [हिं० रंग + फा० आमेज़] रंग मिलाने वाला, आमोद-प्रमोद उत्पन्न करने वाला, आनन्दवर्धक ।
उदा० साँटन के सुरख बिछौना बिछे सेज पर रंगामेज मेज मनमौज की निसा करैं । —ग्वाल
रंधना—क्रि० अ० [सं० रंधन] उबलना, गरम होना ।
उदा० तरल नदी नालन के नीर ते रँधन लागे । —ग्वाल
रंपना—क्रि० अ० [सं० रंभन] रोना, विलाप करना ।
उदा० जा दन तें जदुनाथ चले तजि गोकुल कों मथुरा गिरिधारी । ता दिन तें वृजनायिका सुदरि, रंपति झंपति कंपति प्यारी । —गंग
रंभोरु—संज्ञा, स्त्री० [रंभा = केला + उरु = जाँघ] समान सुंदर जाँघ वाली नायिका ।
उदा० रंभोरु अदंभ रंभा को सो परिरंभन दै गंभीर मनोज ओज आरंभि सिरा उती । —देव
रक्कसा—संज्ञा, पु० [सं० राक्षस] राक्षस ।
उदा० विष जल व्याल कपाल रक्कसा, पावक ते तुम रचे । — सोमनाथ
रगमगे—वि० [हिं० रंग + सं० मग्न] प्रेम से युक्त प्रेममय ।
उदा० रगमगे मखमल जगमगे जमीदोज और सब जे वे देस सूप सकलात है । —गंग
रगींच—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] रेखा, लकीर, सीमा
उदा० जाय सकैं न इतै न उतै सो घिरै नर नारि सनेह रगींच में । — ठाकुर
रच्छ—संज्ञा, पु० [सं० राक्षस] राक्षस ।
उदा० देव मुनि रच्छक, औ रच्छ कुल भच्छक, सुपच्छिराज गच्छक, ततच्छन निहारो है । —देव
रछ—संज्ञा, पु० [सं० राक्षस] राक्षस, दैत्य ।
उदा० देव देव जोग रति पाल्यो, रछ उर साल्यो,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ल्यायो वरनारि, मारि, छपाचर छली कौ।
—देव

रजनी—संज्ञा, स्त्री० [सं०] हल्दी।

उदा० है रजनी-रज मैं रुचि केती कहा रुचि रोचन रंक रसाल मैं। —द्विजदेव

रजी—वि० [सं० रंजन] रंजित, रंगी हुई, युक्त।

उदा० प्रेम भरी पुर भूप सुता गुण रूप रजी रज पूतिनि राजै। —देव

रठु—वि० [?] शुष्क, रूखा, नीरस।

उदा० मेरी कही मानि लीजै आज मान माँगे दीजै, चित हित कीजै तपती जै रोस रठु है॥ —रघुनाथ

रडु—वि० [प्रा०] १. पतित, नीच, पामर २. एक छन्द।

उदा० १. काल पहूँच्यो सीस पर नाहिन कोऊ अडु। तजि सब माया मोद मद रामचरन भजु रडु। —दास

रढ़ना—क्रि० स० [हिं० रटना] रटना, किसी चीज को बार-बार उच्चारण करना।

उदा० हसिहै सखि गोकुल गाँव सबै रसखानि तबै यह लोक रढ़ैगौ। —रसखानि

रताई—संज्ञा, स्त्री० [सं० रक्तता] रक्तता, लालिमा।

उदा० केसर निकाई किसलय की रताई लिये झाही नाहीं जिनकी धरत अलकत है। —हरिलाल

रतोली—वि० [सं० रक्त, प्रा० रत्त + हिं० ईली प्रत्य०] लालरंग वाली।

उदा० सारी सितासित पीरी रतीलिहु में बगराबै वहै छबि प्यारी। — दास

रत्त—वि० [सं० रक्त] रक्त, लाल।

उदा० सित आसू अंजन बिना यकटक कोये रत्त तातपर्ज प्रगटै तहाँ, दरसन बिना बिरत्त। —देव

रथंग—संज्ञा, पु० [सं० रथाङ्ग] चक्रवाक पक्षी।

उदा० अंग अंग अनंग तरंगित रंग, उरोज रथंग बिहंगम जोती। —देव

रद—वि० [अ० रद्द] १. खराब, बेकार, अनाकर्षक २. दांत [सं०]।

उदा० नासा लखे सुकतुंड नामी पै सुरसकुंड रद है दुरद-सुंड देखत दुजान के। —दास

रदासे—संज्ञा, पु० [फा० रद्दा] रद्दा, ईंटों की एक पंक्ति जो दीवाल पर जोड़ी जाती है। समूह, राशि।

उदा० गरदा से परे मुरदानि के रदासे तहाँ लीन्है अंक बैठ्यौ सिरदार रैफ प्रेतु है।
—कुमारमणि

रन—संज्ञा, पु० [सं० अरण्य] १. अरण्य, वन २. समुद्र का छोटा खण्ड।

उदा० सेइ तू गुरु चरन जीति काम हू कौ बल, बेदहू कौं पूँछि तोसौं यहै तत्त कहिहै।
—सेनापति

२. देखैं सुरसिंधुरन चढ़ैं सुरसिंधुरन, कूल पानिहू पियैं त्रिसूल पानि हूजियै।
—सेनापति

रफ—संज्ञा, स्त्री० [फा०] १. गति, प्रभाव २. ढंग।

उदा० साँझ समै न रहै रफ मानु की, ता समै-याको सुखाइबो साँधै। — बेनी प्रवीन

२. पिय के अनुराग सुहाग भरी रति हेरे न पावति रूप रफै। —घनानन्द

रबि—संज्ञा, पु० [अ० रब] ईश्वर, भगवान, परमात्मा।

उदा० ग्वालकवि भाष्यो रबिजाने जो लयो मैं माल हाल भयो औरें इमि कहत तितें तितें।
—ग्वाल

रमक—संज्ञा, पु० [?] झूले की पेंग, २. झोंका तरंग।

उदा० राखत नाहि निहोरैहु तैं, सुबढ़ी रमकैं तरुनाई के चाँयनि। —नागरीदास

दमकनि दामिनि की भामिनि की रमकनि झमकनि नेह की करोर रतिहन की।
—नाथ

झमक जरी की तामैं रमक हिंडौर की।
—ग्वाल

रमड़ना—क्रि० अ० [सं० रमण] व्याप्त होना फैलना, ठहरना।

उदा० कुंदन के रंग मृदु अंग तिहि सुंदरि की नैननि के अन्दर निकाई रमड़ी रहै।
—सोमनाथ

रमतूला—संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार का बाजा

उदा० जल तरंग मुहँचंग गिड़गिड़ी तुरही अरु रमतूला। —बकसी हंसराज

रमन—वि० [सं० रमणीय] रमणीय, सुन्दर।

उदा० कंजारन ताल सुखदायक। रमनबाग तिहि तट नरनायक। —बोधा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रमल—संज्ञा, पु० [अ०] एक प्रकार का फलित ज्योतिष, जिससे पासे फेंककर भविष्य की बातें जानी जाती हैं।

उदा० राति को तमासो सुनौ सोई गुरुजन जब कीन्हो अभिसार तब साधिकै रमल सो।
—रघुनाथ

रयना—क्रि० अ० [हि० रटना] १. रटना, उच्चारित करना २. अनुरक्त होना [सं० रंजन]

उदा० १. आकास बिमान अमान छए। हा हा सबही यह शब्द रए। —केशव
२. सेमर फूल तूल के रये। उरद गात मख-मल मढ़ि लये। —केशव

ररकना—क्रि० अ० [अनु०] कसकना, पीड़ा देना, सालना।

उदा० सपनो कि सौति कहौ सोवति की जागत री, जानो न परत, रोम रोम ररकत री।
—देव

वारौं कोटि काम राम केसौ अभिराम पर, पैठे राजधाम राजरंजित रराकि दै। —देव

ररना—क्रि० अ० [सं० रटन] रटना, चिल्लाना।

उदा० मनसा हू ररै एक देखिबे को रहै द्वै।
—घनानन्द

रलक—संज्ञा, पु० [सं० रल्लक] बरौनी।

उदा० रलि गई रलक झलक जलकननि की, अलक अराल छुटी नागिन निखेवी की।
—देव

रलकना—क्रि० अ० [हि० रकना] खसकना, हटना।

उदा० ज्यौं लरिकापन मैं चलि आई हौ त्यौं अँचरा अजहूँ मतिडारो। घूघरी की धरि डोरी कसौ रलके लँहगाउ को बूँट सुधारो।
—सुन्दर

रलना—क्रि० अ० [सं० ललन] मिलना, एक में मिलना, सम्मिलित होना २. प्रवाहित होना, बहना।

उदा० सागर सरित सर जहँ लौं जलासै जग, सब में जो कहूँ किल कज्जल रलावही।
—दास

२. भूषन मनत नाद बिहद नगारन के, नदी नद मद गैबरन के रलत है।
—भूषण

रली—संज्ञा, स्त्री० [सं० लालन=क्रीड़ा] क्रीड़ा केलि, २. आनन्द, प्रसन्नता।

उदा० रचत रली हौ भली भाँतिन विचारि चित कनक-कली पै अली जात न लजात हौ।
—प्रतापसिंह

रवन—संज्ञा, पु० [सं० रव+हि० न] शब्द, आवाज।

उदा० झाँइ झाँइ झिकरत झिल्ली धारि जील अरु, को गनैं अनंत बन जीव के रवन कौं।
—सोमनाथ

रवनगेह—संज्ञा, पु० [सं० रमण+गृह] मद-नालय, स्त्रियों की गुप्तेन्द्रिय, योनि।

उदा० नाभि तौ गंभीर, न गंभीर हो रवन गेह, कहै गंग कामिनी कहूँक ऐसी पाइये।
—गंग

रवला—संज्ञा, पु० [हि० रोल] ध्वनि, शब्द।

उदा० बेनी प्रवीन कहैं ज्यों चलै कटि, किंकिनी त्योंही रचै रवला वह।
—बेनीप्रवीन

रवानी—वि० [सं० रमण] १. सुन्दर २. आनन्द भाव में मग्न होना, रमना।

उदा० जित तित छकिहारी जुरि चलीं, लगति खाँनी ब्रज की गली।
—घनानन्द

२. गोकुल प्रकास्यौ ब्रजचंद के उदोत आली, आज देखौं भांति भांति रावल रवानी है।
—घनानन्द

रवा—संज्ञा, पु० [फा०] १. सम्बन्धी, सम्बन्ध, रखने वाले २. रत्न का छोटा टुकड़ा, कण।

उदा० १. रन रोस के रवा हैं कै लवा हैं श्री सवाई के।
—पद्माकर

२. क्यों छुवैं अंग पै देखत हैं जु जराऊ तरौना मैं रूप रवा को।
—देव

रवाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० रमण] रमणीयता, सुन्दरता।

उदा० रूप की रवाई जातरूप की निकाई मैन पाई रुचिराई कोटि वार बदले गये।
—नंदराम

रसधि—संज्ञा, स्त्री० [फा० रसद] सेना की खाद्य सामग्री।

उदा० आगे दीनी रसधि चलाइ। पीछे आपन चले बजाइ।
—केशव

रसफैली—संज्ञा, स्त्री० [सं० रस+फा० फैल] काम क्रीड़ा, काम कलोल, रसरंग।

उदा० सोवति अकेली है नवेली केलि मंदिर जगाइ कै सहेली रसफैली लखै टरिकै।
—दास

रसभरा—संज्ञा, पु० [देश०] ईख के खेत में उगने वाला एक पौधा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० बीच उखारी रसभरा, रसकाहे ना होय।
—रहीम

रसमि—संज्ञा, स्त्री० [सं० रश्मि] १. चमक, आभा, प्रकाश २. किरण।
उदा०।बसन सफेद स्वच्छ पेन्हे आभूषण सब हीरन को मोतिन को रसमि अछेव को।
—रघुनाथ

रसहाल— वि० [सं० रस+फा० हाल] खुशहाल सुखी, प्रसन्न।
उदा० नैकु चितौति नहीं चितु दै, रसहाल किये हूँ हियेहू न खोले। —देव

रसही—क्रि० वि० [हिं० रसना] धीरे-धीरे, शनैः शनैः।
उदा० करबीरी देत करकर उठी रसही।
—आलम

रसाना—क्रि० अ० [सं० रसना] पृथक् होना, अलग होना, उदासीन होना।
उदा० कहै कबि गंग और औरऊ जु आक बाक कहत कहत क्योंहू क्योंहूँ न रसाति है।
—गंग

रसौ—संज्ञा, स्त्री० [सं० रसा] रसा, पृथ्वी।
उदा० दांब दरेर तरेर अरे, रसौ घेरति आवति घोर घटाई। —देव

रहचट—संज्ञा, स्त्री० [हिं० रस+चाट] रस की चाट, लालच, प्रबल अभिलाषा।
उदा० १. झमकि झमकि टहलैं करैं लगी रहचटैं बाल। —बिहारी
२. रूप रहचटें लगि लग्यो माँगन सब जग आनि। —बिहारी

रहचर— संज्ञा, पु० [देश०] राह चलने वाले, पथिक।
उदा० कूदत न मृगज चनक मूँदै साखामृग आस दृग बूँद बरसत रोझ रहचर।
—देव

रहठानि संज्ञा, पु० [हिं० रह=रहना+ठानि+ठाँव, स्थान] बसेरा, रहने का स्थान, वास स्थान।
उदा० कुंजनि में रहठानि करी है नई हरि सौं पहिचानि करी है। —सोमनाथ
मिस ठानि चलै रसिया रहठानि त्यों आनि भटू अँखियान अरैं। —घनानंद

रहल—संज्ञा, स्त्री० [अ०] पुस्तक रखने की काष्ठ की छोटी चौकी।
उदा० रघुनाथ भावते को पानदान भरी धरी-धरी पोथी आय ल्याय कोक की रहल मैं।
—रघुनाथ

रहसि—संज्ञा, पु० [सं० रहस्] हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता, २. एकान्त स्थान [सं०]।
उदा० १. कामिनी कमलनैनी करैं न रहसि केलि, कमला बिसारिनी बिसेष बामैं दयो है। —गंग

रहावन—संज्ञा, पु० [बुं०] गायों के एकत्र करने का स्थान।
उदा० कान्ह कुँवर सब सखन संग मिलि ठाढ़े जुरे रहावन। —बकसी हंसराज

राँज—संज्ञा पु० [सं० रंजन] रंजन, कज्जल आदि लगाने का कार्य।
उदा० काछ नयौ इकतौ बर जेउर दीठि जसोमति राँज कर्‌यौ री। —रसखानि

राइमुनी संज्ञा, पु० [हिं० रइमुनिया] एक छोटा पक्षी, रइमुनिया।
उदा० राधिकै राइमुनीहि सी कान्ह अचानक आनि सचान सो लैगो। —तोष

राई संज्ञा, स्त्री० [सं० राज्य] राज्य, राजत्व।
उदा०—मेरुसुमेरु लगै सरसो सम, राई समान सुरेस की राई। —देव

राघवनिसि—संज्ञा, स्त्री० [सं० राघव=राम+निसि=रात्रि] राघव की रात्रि, रामनवमी
उदा० पुन्य बिलास पहारन से पल ज्यों अघ राघव की निसि जागे। —केशव

राछ—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] बरात, जुलूस।
उदा० चित चौंडेल चढ़ाय लड़िलरी तानपुर राछ फिराई। —बकसी सिंह राज
फिरी राछ लीलावति की जबही। माँवर सुघरी आई तबहीं। —बोधा

राजराज संज्ञा, पु० [सं०] १. कुबेर २. बड़े राजा, श्रेष्ठ क्षत्रिय।
उदा० १. कविकुल विद्याधर सकल कलाधर राजराज बरवेष बने। —केशव

राती परी—संज्ञा, स्त्री० [सं० रक्त=लाल+फा० परी=अप्सरा, बधू] बीरबधूटी, बरसाती लाल कीड़ा।
उदा० राती परी बरषे ठिगारी उड़ै धुवांधार ऐसी भांति भादौं आली मोरही तें ओढ्यौ है। —गंग

रान—संज्ञा, स्त्री० [फा०] जाँघ, जंघा।
उदा० गोला से गयंदन के गोल खोलिबे में झिले,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रान के इसारे लेत बान के उचट्टा से ।
—पद्माकर

राबरे—संज्ञा, पु० [हिं० रबड़ी] बसौंधी, दूध को गाढ़ाकरके लच्छेदार बनाना ।

उदा माखन मलाई खांड़ खीरि सिखिरिनि बही मही दूध दही मिले राबरे बरे फिरैं ।—देव

रामचंगी—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार की तोप

उदा० चलैं रामचंगी धरा में धमंकै सुने तें । अवाजें बली बैरि संकैं । —पद्माकर

रामा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. लक्ष्मी २. राधा, ३. रुक्मिणि, ४. स्त्री ।

उदा० १. कांपत सुरेस सुरलोक हहलत अति, खल मल अधिक परी है उर रामा के ।
—नरोत्तमदास

रारे लुग्ग संज्ञा, पु० [हिं० रार = लड़ाई + लोग] युद्ध करने वाले, युद्धार्थी, सेना ।

उदा० रारे लुग्ग राखि रखवारे दुग्गवारे रिपु लरजे अपारे सुने गरज नगारे की ।
—सोमनाथ

राहबर—संज्ञा, पु० [हिं० राह + सं० वारण] रास्ता रोकने वाला, लुटेरा ।

उदा० छूटे बार टूटे हार विषमेषु राहबर फैलि फूलि लूटे सुख बूझे तें झुकति हैं । —गंग

रावल—संज्ञा, पु [सं०] रनिवास, राजमहल, २. राजा ।

उदा० रावल राधे बिना न रह्यो परै रूप की रीझन ज्यौ जरिहै गो । —गंग

राहदारी—संज्ञा, स्त्री० [फा०] चौकोदारी, २. सड़क का कर ३. चुंगी, महसूल ।

उदा० ग्वालन तें, गोपन तें, गहकि गहकि मिले, गली में चली है भली बात राहदारी की ।
—ग्वाल

राह पड़ना—क्रि० सं० [फा० राह + हिं० पड़ना] हि० मुहावरा = डाका पड़ना, लूट पड़ना ।

उदा० कहै पदमाकर त्यौं रोगन की राह परी, दाह परी दुस्खन में गाह अति गाज की ।
—पद्माकर

रिंदगी—संज्ञा, स्त्री० [फा० रिंद] उद्दण्डता, निरंकुशता, चपलता ।

उदा० तब माधवा उर शंकि कै भरि अंक लीन्ही बाल । शरमिंदगी उर आन कीन्हीं रिंदगी ततकाल । —बोधा

रिख्यो—संज्ञा, स्त्री० [हिं० रेखा] रेखाङ्कन, रेखा ।

उदा० चित्र भई हौं विचित्र चरित्रन चित्त चुभ्यो अवरेख रिख्यो से । —देव

रिरकना—क्रि० अ० [?] खसकना, सरकना २. गिड़गिड़ाना ।

उदा० प्यौ लखि सुंदरि सुंदरि सेजतें यों रिरकी थिरकी थहरानी । —पद्माकर

रिलना—क्रि० अ० [हिं० रेलना] मिल जाना, तन्मय हो जाना, घुस जाना ।

उदा० उज्वल जुन्हाई में कन्हाई जमुना पुलिन बाँसुरी बजाई रीझि रसही रिलिगई ।
—देव

रिस—संज्ञा, स्त्री० [पंजा०] युद्ध, बरावरी ।

उदा० लछमण शुभ लक्षण बुद्धि बिचक्षण रावण सों रिस छोड़ि दई । —केशव

रीरी—संज्ञा, स्त्री० [?] पीतल ।

उदा० पीरी होत रीरी पै न रीस करै कंचन को, कहाँ काग-बानी कहाँ कोयल की ढेर है ।
—भूधरदास

रीस—संज्ञा, स्त्री० [पं० सं० ईर्ष्या] बराबरी, स्पर्द्धा २. डाह ।

उदा० पीरी होत रीरी पै न रीस करै कंचन को, कहाँ काग-बानी कहाँ कोयल की ढेर है ।
—भूधरदास

रुंज—संज्ञा, पु० [देश०] एक तरह का बाजा ।

उदा० घटा घहराति बीजु-छटा छहराति, अधि राति हहराति. कोटि-कीट-रुति रुंजलौं ।
—देव

रुंजक—संज्ञा, पु० [देश०] एक प्रकार का वाद्य ।

उदा० गुंजत ढोलक रुंजक पुंज कुलाहल काहल नादति तामे । —देव

रुंधती—संज्ञा, स्त्री० [सं० अरुंधती] एक छोटा तारा जो सप्तर्षि मंडलस्थ वशिष्ठ के पास पड़ता है, २. मुनि वशिष्ठ की स्त्री का नाम ।

उदा० १. रुंधती के नखत लौ लखत न जौ लों तौलों झखत नगीच मीच बैठी मैनसर पै ।
—पजनेस

रुकुम—संज्ञा, पु० [सं० रुक्म] स्वर्ण, सेना ।

उदा० दीनो मै तुकुम मंत्र दुकुमनि ठेलति है रुकुम की बेली सी नबेली चारु चेली जू ।
—तोष

रुख—अव्य [फा०] ओर, तरफ, २. कपोल, मुख [संज्ञा, पु०] ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० सूनो इतै रँगभौन चितै चित मौन रही चकि चौंकि चहूँ रुख। —देव

रुखाये—वि० [फा० रुख] रुख किये हुए, लगाए हुए।

उदा० देवान्तक नारान्तक अंतक त्यों मुसकात विभीषण बैन तन कानन रुखाये जू। —केशव

रुच्छ—वि० [सं० रुक्ष] रुष्ट, क्रुद्ध।

उदा० पटकत पुच्छ कच्छ कच्छ पर सेस जब, रुच्छ कर मुच्छ पर हाथ लाइयतु है। —पद्माकर

रुजिगार—संज्ञा, पु० [फा० रोजगार] धंधा, पेशा, व्यापार।

उदा० रावरी रीति पै रीझि कै हौं रुजिगार रच्यो शरणागत धावन। —रघुराज

रुजुक—संज्ञा, पु० [अ० रुजूअ-आकर्षण, प्रवृत्त] चाह करने वाला, आकृष्ट होने वाला।

उदा० उठि गयौ आलम सो रुजुक सिपाहिन को उठि गौ सिंगार सबै राजा राव राने को। भूषण

रुझना—क्रि० अ० [सं० रुद्ध] पूरा होना, सुलझना।

उदा० कवि ग्वाल अगस्त की शक्ति छई यह ईसुरही पै रुझै तो रुझै। —ग्वाल

रुतनि—संज्ञा, स्त्री० [?] कांति, चमक।

उदा० सुतनु अनूप रूप रुतनु निहारि तनु, अतनु तुला में तनु तोलति त्रसति है। —देव

रुति—संज्ञा, पु० [सं० रुत] ध्वनि, शब्द २. पक्षियों का कलरव।

उदा० घटा घहराति, बीजु छटा छहराति, अधि-राति हहराति, कोटि कीट-रुति रुंज लौं। —देव

रुधना—क्रि० अ० [सं० रोधन] रुकना, रुकावट होना।

उदा० सोहै चहूँ दिसि में अवली अवलोकित मालनि मैं जु रही रुधि। —बेनी प्रवीन

रुपना—क्रि० अ० [हिं० रोपना,] १. डटना, अड़ना २. रोपाजाना, जमीन में लगाया जाना।

उदा० पर्‌यो जोर विपरीत रति रुपी सुरतिरन धीर। करत कोलाहल किंकिनी गह्यौ मौन मंजीर। —बिहारी

रुरकना—क्रि० अ० [हिं० लोल] हिलना।

उदा० लाल लसैं पगिया नवलाल कैं, पोत झगा तन घूमे घुमारो। माल मनोहर मोतिन की, रुरकैं उर कै मधि, आनंद भारो। —नागरीदास

रुरना क्रि० अ० [हिं० रूरा] १. शोभित होना, अच्छा लगना २. हिलना, डोलना [सं० लुलन]।

उदा० १. सहज हसौंही छबि फबति रंगीले मुख दसननि जोति-जाल मोती माल सी रुरै। —घनानन्द

२. सुरँग तन चीर धीर उर रुरत हारावली बिबिध भूषन सजे भाँति भाँतिन भेली। —ब्रजनिधि

रुँगना—क्रि० सं० [बुं] थोड़ा-थोड़ा माँगना'

उदा० सेवा सावधान देव चरितन चित राखौ, कहा भयो कान्ह जु कलेऊ रुँगे खात हैं। —आलम

रुँदना—क्रि० सं० [हिं० रौंदना] कुचलना, किसी चीज को पैरों से दबाना।

उदा० ग्वाल कवि बूँदें दूँदे रुदें बिरहीन हीन नेह की नमूँदे ये न मूँदे हैं गमाके सो। —ग्वाल

रुझना—क्रि० अ० [हिं० उलझना] फँसना उलझना।

उदा० रीझ की रहनि में अबूझ कहा रुझै जू। —आलम

रूढ़ि—वि० [सं०] दृढ़, पक्की।

उदा० प्रौढ़ि रूढ़ि को समूढ़ गूढ़ गेह में गयो। शुक्र मंत्र शोधि-शोधि होम को जहीं भयो। —केशव

और गूढ़ कहा कहौं मूढ़ ह्वै जू? जानि जाहु प्रौढ़ रूढ़ि केसौदास नीके करि जाने हौ। —केशव

रूप—संज्ञा, पु० [सं० रूप्य] १. चाँदी २. सौन्दर्य।

उदा० १. रूप की रवाई जातरूप की निकाई मैन पाई रुचिराई कोटिवार बदले मये। —नंदराम

२. लोभ लगे हरि रूप के करी साँट जुरि जाय। —बिहारी

रूरा—वि० [सं० रूढ़=प्रशस्त] १. बहुत बड़ा २. श्रेष्ठ, उत्तम ३. सुंदर।

उदा० १. छोड़ैं तौ राधिका सी ठकुराइनि राखैं तौ कूबरी प्रेम के रूरे। —रघुनाथ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रूरो—वि० [हिं० रूर] संतप्त, गर्म ।
उदा० पौन तौ न लाग्यौ सखी, जोन्ह लाग्यौ दुख देन, भौन लाग्यौ रूरो होन, गूंजे भौंर भोर लौं । —गंग

रूसे—संज्ञा, पु० [सं० ऊटरूष] एक प्रकार का पौधा जिसके फूल और पत्ते श्वास आदि की औषध है, अड़ूसा ।
उदा० तेरी मुख छबि लखि लखै, होत चन्द ता तूल । कंद खाइ कै चूसियै, ज्यों रूसे को फूल । —मतिराम

रेइ—वि० [सं० रंजन] रंजित अनुरक्त, डूबी हुई, पगी हुई ।
उदा० महा कमनीय रमनीय रमनीयहू रमावै नर मन ह्वै के रूप रज रेइ कै । —देव

रेखना—क्रि स० [हिं० अवरेखना] देखना, अवलोकन करना ।
उदा० धाय घरा सबही के कहे हौं बिकाय गई इनकी रुचि रेख्यौ । —देव

रेखिये वि० [हिं० रेखा] अंकित, २, शोभित, प्रकाशित ।
उदा० भाल पर रेखा बाल दोषाकर रेखिये ।

रेज— संज्ञा, स्त्री० [?] व्यवस्था, प्रबन्ध ।
उदा० पौढ़ौ बलि सेज, करौं औषद की रेज बेगि, मैं तुम जियत पुरबिले पुन्य पाए हौ ।
—सेनापति

रेजा संज्ञा, पु० [फा० रेज़ा] कपड़े का टुकड़ा, कपड़े का थान ।
उदा० बादर न होंय बहु भांतिन के रेजा ये, असाढ़ रंगरेजा रंग सूखिबे को डारे हैं ।
—ठाकुर

रेफ— वि० [?] अधम, पापी ।
उदा० रेफ समौरध जाहिर वास सवारहि जा धरमौ सफरे । — दास

रेवा संज्ञा, स्त्री० [सं०] कामदेव की पत्नी, रति, प्रेम ।
उदा० मालती को मिलि जब मलय कुमार आये. रेवा रस रोमनि जगाय नींद नासी है ।
—आलम

रेह—संज्ञा, स्त्री० [सं० रेखा] रेखा ।
उदा० नील नलिन दल सेज मैं, परी सुतनु तनु देह । लसै कसौटी मैं मनो तनक कनक की रेह । मतिराम

रैंधौं—संज्ञा, पु० [देश०] झगड़ा, अन्तर, फर्क ।
उदा० नौल किसोर लला मनमोहन, बीच की दूती बढ़ावती रैंधौं । —बेनी प्रवीन

रैनका—संज्ञा, स्त्री० [सं रेणुका] १. रेणुका, बालू २. मिट्टी ।
उदा० १. बोधा कवि कपट की प्रीति भीति रैनका की बेंद हत जैसे सूमन की सेवा है।
—बोधा

रैनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० रजनी] १. खूंटी, सोने चाँदी के तार को खीच कर बढ़ाने वाला गुल्ली २. रजनी ३. तराबोर करने वाला, अनुरक्त करने वाला [क्रि० स०]
उदा० १. भाव बढ़ै चित चाव चढ़ै रँग-रैनि किधौंरसराज की रैनी । —घनानन्द
२. दारिद दरैनी, सुभ संपति भरैनी भूरि,
३. पूरन सरैनी, जस, भक्त-रंग-रैनी है ।
—ग्वाल

रैल—संज्ञा, स्त्री० [हिं रेल] अधिकता, भर-मार, समूह २. बहाव ।
उदा० सक्र जिमि सैल पर अर्क तम फैल पर बिघन को रैल पर लम्बोदर लेखिये ।
—भूषण

रोगराज—संज्ञा, पु० [हिं० राज रोग] राज रोग, राजयक्ष्मा, एक असाध्य रोग ।
उदा० हाहा दीन जानि याकी बिनती लीजिए मानि, दीजै आनि औषदि बियोग रोगराज की । — घनानंद

रोचन—संज्ञा, पु० [सं० रोचना] गोरोचन, एक सुगंधित पीले रंग का पदार्थ जो गौ के पित्त में से निकलता है ।
उदा० रोचन को रुचि केतकि चंपक फूल में अंग सुवास भर्‌यो है । —केशव

रोचना—क्रि स० [सं० रुचि] रुचि दिखलाना, प्रेम प्रदर्शित करना ।
उदा० लोचत फिरत रंग रोचत रुचा पै रुच सोच नहीं होत हैं बिधाता बिसरे कौ यो ।
—ठाकुर

रोज— संज्ञा, पु० [फा०] बिषाद, आपत्ति, कठिनाई ।
उदा० रोज सरोजन कें परे हंसी ससी की होय ।
—बिहारी
नारि उरोजवतीनि कुं रोजनि कान्ह उचाट मरे जिउ रोजनि । —दास

रोझ—संज्ञा, स्त्री० [देश] नील गाय ।
उदा० कूदत न मृगज चनक मूँदे साखामृग आस दृग बूंद बरसत रोझ रहचर । —देव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रोपना—क्रि० स० [सं० रोपण] रखना, करना।
उदा० जो पीय ब्याहि लायौ, तासो रोपी है छिपन, सब लोक लाज लोपी, दुरनीति करी है। —ग्वाल
रोर—संज्ञा, पु० [देश०] दरिद्र, दुष्ट, उपद्रवी।
उदा० राकस, अगर, लंगूर मुख, राहु, छाँह, मद, रोर। —केशव
रोरना—क्रि० अ० [सं० खण] १. लड़ना, २. उपद्रव करना ३. शोर करना।
उदा० १. लंकगढ़ तोरिबे तें रावन सों रोरिबे तें माहि भवबंधन तैं छोरिबो कठिन है। —पद्माकर
रोरी—संज्ञा, पु० [सं० रोल] १. कलह, झगड़ा, २. कोलाहल
उदा० १. मेरो री कान्हर मन मोहो बात प्रेम रस रोरी। —बकसी हंसराज
रोहना—क्रि० अ० [सं० रोहण] १. आकर्षित करना, खीचना, मोहित करना। २. पहनना, चढ़ाना, डाल लेना [क्रि० स०]
उदा० १. ह्वै नबोढ कहुँ मुग्ध-तिया, मोहन मन रोहैं। हरि-मुख सुनि कहुँ बैनु, सबै-विधि राधा माहैं। —द्विजदेव
२. एक हंसिनी सी विषहार हिये रोहियो, —केशव
रौन—संज्ञा, पु० [सं० रमण] पति. रमण। नायक।
उदा० केलि के भौन में सोवत रौन बिलोंकि जगाइवे कों भुज काढ़ी। —दास
रौना—संज्ञा, पु० [सं० आगमन] १. गौने के बाद प्रथम बार पति गृह जाने की रीति २. रोना, रुदन।
उदा० १. सौंह अनेकनि आवहु अंक, करौ रति को प्रति रैन की रौने। —केशव
रौनी—वि० [सं० रमणीय] सुन्दर, रमणीय।
उदा० केसव कैसे हुँ पीठि में दीठि परी कुच कुंकुम की रुचि रौनी। —केशव
तुव चितौनि ठिकु ठौनि भ्रुव नौनि, निरखि मन रौनि। —दास
रौस—संज्ञा, स्त्री० [फा० रविश] १. बाग की क्यारियों के मध्य का मार्ग २. चाल, व्यबहार रंग-ढंग।
उदा० १. हौंसन बँधाय रौस रौसन की रोसै जहाँ सकल सिचाय सीरे नीरहू सँवारी मैं। —प्रतापसिंह
२. रीति को रौसन आपनी हौंसनि पानी परासन को भरती है। ठाकुर
रौहाल—संज्ञा, पु० [फा० रहवार] घोड़ा, अश्व।
उदा० जदपि तेज रौहाल बल पलको लगी न बार, तउ ग्वैंड़ो घर को भयो पैंड़ो कोस हजार। —बिहारी
सु रोहाल की चाल उत्ताल ऐसे, चलैं चारु चौगान में चित्त जैसे। —पद्माकर

ल

लंक—संज्ञा, स्त्री० [सं०] कटि, कमर।
उदा० लागत समीर लंक लहकै समूल अंग फूल से दुकूलन सुगंध बिथुरो परै। —देव
लंगर—संज्ञा, पु० [फा०] १. लँगोट, २. वह भोजन जो सदा गरीबों को बांटा जाता है, सदावर्त, ३. ढीठ, बदमाश।
उदा० २. लंगर का दाता अरु भूखन कनक देत, एक साधु मनैं बीस बिस्वा राखि लेत हैं। —सेनापति
लंगर सु अनगिनित बटत सार।—जोधराज
लंघन—संज्ञा, पु० [सं०] उपवास, व्रत निराहार।
उदा० मसमी बिधा पै नित लंघन करति है। — घनानन्द
लकी—संज्ञा, स्त्री० [अ० लक्का कबूतर] कबूतरी,
उदा० थकी थहरानी छबि छकी छहरानी धकधकी धहरानी जिमि लकी लहरानी है। —दास
लखान—वि० [सं० लक्ष] १. लाख, २. अगणित, बहुत ज्यादा।
उदा० कह्यौ चाहौ सो तौं तुम मोहीं सौं बुलाय कहौ आन-कान परे तें लखान कान परिहै। —केशव केशवराय

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लखिया—संज्ञा, स्त्री० [सं० लक्ष्मी] लक्ष्मी ।
उदा० साँवरी सलोनी गुणमंती गज गौनी महा सुन्दरी, सुघर लाख-लाख लखियन में । देव

लग—संज्ञा, स्त्री [हिं० लग्गी] लग्गी, कंपा, जिससे चिड़िया फँसाई जाती है ।
उदा० लहलहाति तन तरुनई लचि लग लौं लफि जाइ । लगैं लोक लोइन भरी लोइनु लेति लगाइ । —बिहारी

लगबगरो—वि० [हिं० लगबगाना=लचकना] लचलची, नरमीली ।
उदा० लंक लगबगरी कलंक लग बगरी सखीन सँग बगरी सखीन संग सगरी । —देव

लगलगी वि० [अ० लक़लक़] सुकुमार, कोमल, लचकीली [हिं० लचलची] २. दुर्बल अंग वाला ।
उदा० अखियाँ अधर चूमि, हाहा छाँड़ो कहे घूमि, छतियाँ सो लागी, लगलगी सी लहकि कै । —देव
उरज उचौहैं भुज भाई ज्यों नचौहैं,
भौंह जघन सघन लंकलीक सी लगलगी ।
—देव

लगाना—क्रि० स० [हिं० लगना] जलाना, प्रज्वलित करना ।
उदा० दरस, परस, कृपा-रस सींचि अंग-लता, जो तुम लगाई सोई मदन लगाई है ।
—सेनापति

लगालगी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लाग] १. लाग चोरों का उपद्रव, २. देखा देखी ।
उदा० क्यौं बसियै क्यौं निबहियै, नीति नेह पुर नाहिं । लगालगी लोइन करैं, नाहक मन बँधि जाँहि । —बिहारी

लगि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लाग] प्रेम की लगन ।
उदा० पुतरी अतुरीन कहूँ मिलि कै लगि लागि गयो कहुँ काहु करैटो । —रहीम

लगुन - संज्ञा, पु० [सं० लग्न] १. शुभ मुहूर्त, २. विवाह, शादी ।
उदा० यह मन भयनो लगुन को नारियल सब नेगन के माहीं । —बकसी हंसराज

लछना—क्रि० स० [हि० लछना=सजाना] सजाना, अलंकृत करना ।
उदा० काम बस सूपन खा नाम गनिका सी तरी, क्रोध बस रावन तर्‌यो जो लंक लाछेई ।
—पद्माकर

लछारना—क्रि० अ० [?] धूपना, सुवासित करना ।
उदा० कैसे यह राजत सुगन्ध के लछारे कहिये जैसे यह कोमल ललित सुकुमारे हैं ।
—पजनेस
चीकने सघन अँधियारे तें अधिक कारे लसत लछारे सटकारे तेरे केस हैं ।
—मनोज मंजरी
चतुर्थ कलिका से

लटकना—क्रि० स० [हिं० लटक] मस्ती से झूमना, बलखाना, २. बन्द होना, समाप्त होना ।
उदा० १. चटकीलो भेष करे, मटकीली भाँति सोंही, मुरली अधर धरे लटकत आय हौं ।
—घनानन्द
२. जानै जौन काज को अरंभ कर दीन्हौं ताको, तौन काज कहा बिन भये लटकत हैं । —ठाकुर

लटकीली—वि० [हिं० लचक] लचीली, जल्दी झुक जाने वाली ।
उदा० लटकीली लंक तू लुटाइ लूटे लेत लोग, सिर पटकीली भई सौतिन की छति है ।
—बेनी प्रवीन

लटपटी—वि० [हिं० लटपटाना] १. थकित २. शिथिल, ढीलाढाला ।
उदा० लपटी न लौटि, नील पटा ह्वै, सलौट लटी लाज लटपटी, लटपटी भुजमूल पर ।
—देव

लटी—वि० [सं० लट्ट] १. बुरी, खराब २. तुच्छ, हीन ।
उदा० कहिबे सुनिबे की कछू नहियाँ लटी औ भली को दुःख पावनै हैं । —ठाकुर
तुम ऐसहीं मोंहि लटी करतो मन मेरी कही नहीं मानतु है । —बोधा

लड़क—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लटक] अदा, १. अंगों, की विशेष मुद्रा, मस्ती, २. लचक ।
उदा० पिय सों लड़कि प्रेम पगी बतरानि मैं ।
—घनानन्द

लड़वाना—क्रि० स० [हिं० लाड—प्यार] दुलार करवाना, लाड़-प्यार करवाना ।
उदा० आली या महल औरे टहल उठाय राखी, आठहू पहर लड़वाइयति लाड़िली ।
—देव

लद्धना—क्रि० सं० [सं० लब्ध] प्राप्त करना,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उपलब्ध करना ।
उदा० आनन्द लद्धि, चपि भुजनि मद्धि ।
फन कौ हलाइ, नच्चे सुमाइ ।।
—सोमनाथ
जक्यो जीव जंगलिय चैन लद्धे न अद्ध छन । —गंग

लदाइ—संज्ञा, पु० [हिं० लदाव] वह पक्की जुड़ाई जो छत अथवा द्वार के कड़े में कालबूत के सहारे की जाती है ।
उदा० कालबूत दूती बिना जुरै न और उपाइ ।
फिरि ताकैं टारैं बनै पाकैं प्रेम लदाइ ।
—बिहारी

लदाई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लादना] ब्यथित, करने का भाव, पीड़ित करना, मु० लदाई करना = दबाना, पीड़ित करना ।
उदा० बिन काजहि बोधा लदाई करै पहिचानै न बावरे अन्ध भये । —बोधा

लपटी—वि० [हिं० लपट=छोटा] छोटी ।
उदा० पीत पटी कटि में दुपटी लपटी लकुटी हठी मो मन भाई । —हठी

लपना—क्रि० अ० [सं० जल्प] जल्पना, कहना ।
उदा० लपने कहौं लौं बालपने की बिमल बातैं ?
—देव

लपटोही—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लपट+सं० हृदय] हृदय की लपट, मन की पीड़ा, ज्वाला ।
उदा० कहियो बटोही तिय निरखै बटोही, पिय जाइ लपटोही मिटि जाइ लपटोही है ।
—तोष

लपेटा संज्ञा, पु० [हिं० लपेट] पगड़ी, पाग ।
उदा० केसरी लपेटा छैल विधि सों लपेटे मुख बीरा कंठ हीरा जोति उपमा लजायबी ।
— घनानन्द

लबाना—क्रि० अ० [हिं० ले आना] साथ में रखना, बुलाना, ले आना ।
उदा० पापी है तो नीर पैठि नागन लबाय ले ।
—आलम

लबिद—संज्ञा, पु० [सं० लप्] बकवादी ।
उदा० सुनि लोभ लबिद लबार जग, हौं दाता तू माँगनो । —केशव

लमकना—क्रि० अ०, [हिं० लपकना] १. उमंगित होना २. लपकना ३. उत्कंठित होना ।
उदा० सजि ब्रजबाल नंदलाल सों मिलै के लिये, लगनि लगालगि में लमकि लमकि उठै ।
—पद्माकर

लमकाना—क्रि० स० [हिं० लमाना] १. लम्बा करना २. दूर तक आगे बढ़ाना ।
उदा० १. लांबी गुदी लमकाइ कै काइ लियो हरि लीलि, गरो गहि पीर्‌यो । —देव

लये—सम्प्रदान, कार० [बुं० लाने] लिए, वास्ते
उदा० लावै ना सुगँधहार मगावै न पेन्हिबो को दूरिही रखावै मेवा आवै खैबे के लये ।
—रघुनाथ

लरकना—क्रि० अ० [हिं० लटकना] लटकना टँगे रहने ।
उदा० मुसुकानि बिलोकत वा तिय की मुकुता लर मैं लरकेई रहैं । —द्विजदेव
अंगन उघारौ जनि लंगर लगेई मांग मोती लर टूटत लरकि आई लरकी । —देव

लरजना—क्रि० अ० [पु०] कांपना, हिलना १. धीरे से किवाड़ आदि बंद करना [क्रि०स०]
उदा० कहै पद्माकर लवंगनि की लोनी लता—
लरजि गई ती फेरि लरज न लागी री
—पद्माकर
लाजनि हौ लरजौं गहिरी,
बरजौं गहिरी कहिरी केहि दायन । —देव
२. आवति चली है यह विषम वियारि देखि ।
दबे-दबे पाइन किंगारनि लरजि दै ।
—द्विजदेव

लरबरी—वि० [हिं० लड़खड़ाना] लड़खड़ाने वाली, लटपटाने वाली ।
उदा० जानि जानि धरीतिय बानी लखरी सब, आली तिहि धरी हँसि-हँसि परी लौटि लौटि । —दास

लवढ़ना—क्रि० अ० [हिं० लिपटना] लिपटना
उदा० ज्यौं मैं खोले किवार त्यौं ही आनि लवढ़ि गौ गरै । —घनानन्द

लवना—क्रि० अ० [सं० लौ] चमकना, दमकना
उदा० चटक चोप चपला हिय लवै । सबही दिस रस प्यासनि तवै । —घनानन्द

लबनि—संज्ञा, स्त्री [हिं० लप] लपटें, आग की लौ, आँच, ज्वाला ।
उदा० चंद से बदन भानु भई वृषभानु जाई उवनि लुनाई की लवनि की सी लहरी । —देव
नूतन महल, नूत पल्लवनि छ्वै छ्वै, सेद लवनि सुखावत पवन उपवन सार । —देव

लवला—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लपट, सं० लोका] लपट, ज्योति, सौन्दर्य ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० चंपकमाल सी हेमलता सी कि होई जवाहिर की लवला सी। —दास

लवली—संज्ञा, स्त्री० [सं०] हरफारयोरी नामक वृक्ष।

उदा० जो कोउ केसव नाग लवंगलता लवली अवलीनि चरावै। —केशव

लसना—क्रि० स० [सं० लसन] १. चमकना, दीप्त होना २. शोभित होना।

उदा० घन बरसैं दामिनि लसै दस दिसि नीर तरंग। —जसवंतसिंह

लसीली—वि० [हिं० लहना] सुन्दर, शोभित।

उदा० ऐसेनि को अपराध न कीजिये लीजिये भावते सीख लसीली। —रघुनाथ

लहकना—क्रि० अ० [अनु०] झोंके खाना, लहराना, हवा में बहना, उड़ना २. दहकना

उदा० पात अैसी पातरी विचारी चंग लहकत पाहन पवन लहकाए लहकत नाहिं।
—देव

दीरघ उसास लै लै ससिमुखी सिसकति सुलफ सलौनों लंक लहकै लहकि-लहकि
——देव

लहकि लहकि आवै ज्यौं-ज्यौं पुरवाई पौंन दहकि दहकि त्यौं-त्यौं तन तांवरे तचै।
—घनानन्द

लहकाना—क्रि० स० [देश०] पहनना, धारण करना।

उदा० ललित पाट अंबर कौ लहँगा कटि तट में लहकायौ। —सोमनाथ

लहकारे—वि० [हिं० लहकना] लहराते हुए हिलते हुए. झोंके खाते हुए।

उदा०—कारे लहकारे काम छरी से छरारे छरहरी छबि छोर छहराति पीडुरीनने।

लहकै—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लहकना] लपट, ज्वाला, वेदना, पीड़ा।

उदा० याही ते काहू जनैये नहीं लहकै दिल की ना रहौ फिरि आवत। —बोधा

लहकौर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लहना+कौर] विवाह की एक रीति जिसमें दूल्हा और दुलहिन एक दूसरे के मुंह में कौर डालते हैं।

उदा० ललक सखी लहकौर चली लै गावत गीत रसीले। —बकसी हंसराज

लहने—संज्ञा, पु० [सं० लभन] १. सौभाग्य, अच्छा भाग्य २. लाभ, प्राप्ति ३. प्राप्तव्य, संपत्ति।

उदा० धनि वे धन है तिनके लहने पहिरे गहने निति अंगन में। —प्रताप साहि

३. निमिष निमिष दास रीझत निहाल होत लूटे लेत मानों लाख कोटिन के लहने।
——दास

लहरिया—सं० स्त्री० [हिं० लहर] साड़ी, धोती २. एक प्रकार का कपड़ा जिसमें रंग बिरंगी टेढ़ी मेढ़ी रेखाएँ बनी होती हैं।

उदा०लहर लहर होत प्यारी की लहरिया।—देव

लहरैं—संज्ञा, पु० [हिं० लहरिया] वस्त्र विशेष, लहरिया।

उदा० कहरै बिरही जन आपत सों लहरैं लली लाल लिए पहरैं। —रसखानि

लहाछेह—संज्ञा, स्त्री० [सं० लघ्वाक्षेप ?] नृत्य की एक गति, नृत्य की शीघ्रता।

उदा० गोपिनु सँग निसि सरद की रमत रसिक रसरास लहाछेह अति गतिन की सबनि लखे सब पास। —बिहारी

लहुबैस—संज्ञा, स्त्री० [सं० लघु+वयस] छोटी उम्र, नव यौवन।

उदा० लाज मुख, लाँबी लटैं, लाग्यो लचकौंही लाँक सील सांची लहुबैस काची कोरी डारसी। —गंग

लाउन—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लाव] मोटा रस्सा जो हाथी आदि के बाँधने में प्रयुक्त होता है।

उदा० सङ्क की शृंखल लाज की लाउन मानति ग्यान के अंकुस मारे। —तोष

लांच—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] रिश्वत, घूस।

उदा० जा लगि लाँच लुगाइनि दै दिन नाच नचावत साँझ पहाऊँ। —केशव

लांचौं—संज्ञा, पु० [सं० लांछन] दोष, कलंक

उदा० कृपा गुनहि गहि क्यों न ज्यौं न लागै भ्रम लाँचौ रे। —घनानन्द

लाँझ—संज्ञा, स्त्री [हिं० लन्झा] झन्झट, बाधा, परेशानी, झमेला।

उदा० दिन देखन कौं दांव दूरि ते बनत बनवारी सों अब ताहू मैं परी है लाँझ —घनानन्द

लाइ—संज्ञा, स्त्री० [सं० अलात] अग्नि, पावक २. लपट ज्वाला।

उदा० दसहूँ दिसि पलास छवि छाई। मनहुं सकल बन लाइ लगाई। —बोधा

माई कि सौ हौं न जान्यौ हौं गई हँसाइ हाइ लाइ लागों जाइ ऐसी कुसुम चुनाई मैं। —तोष

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लाखे संज्ञा, स्त्री, [सं० अभिलाष] अभिलाषा, कामना, इच्छा ।
उदा० धीर धरि आयो हौं करीर कुंज ताई तापै कर ततवीर परिहर लाख लाखे पुन ।
—ग्वाल

लाग - संज्ञा, स्त्री० [हिं० लगना] १. जादू, टोना, मन्त्र २. शत्रु, दुश्मन ।
उदा० १. वेई वन कुंजनि मैं गुंजत भंवर पुंज काननि रही है कोकिला की धुनि लाग सी
—देव

लागू—क्रि० वि० [हिं० लग=पास] निकट, पास, समीप ।
उदा० आँखिन के आगे तुम लागेई रहत नित, पाछें जिन लागो कोऊ लोग लागू होय गो ।
—आलम

लाज—संज्ञा, पु० [सं० लावक] लवा, पक्षी ।
उदा० लाज इतै, इत जी को इलाज, सु लाज भई अब लाज कुही सी । —देव

लाजक—संज्ञा, पु० [सं० लाजा] धान का लावा, लाजा ।
उदा० बाल के बिलापन बियोगानल तापन को, लाज भई मुकुत मुकुत भई लाज को ।
—दास

लाठ—वि० [हिं० लट्ठ] जड़, उजड्ड, मूर्ख, लंठ ।
उदा० तब सों रहै इच्छा मोहिं जियबे की बीच ही तू चाहत है मार्‌यो तेरी मति महा लाठ है । —रघुनाथ

लाने—अव्य० [बुं०] लिए, वास्ते ।
उदा० देव अदेव बली बलहीन चले गये मोह की हौंसहिं लाने । —देव

लायक—संज्ञा, पु० [हिं० लाजक] लाजा, धान का लावा ।
उदा० बरषा फल फूलन लायक की । जनु हैं तरुनी रतिनायक की । —केशव

लारि—क्रि० वि० [राज०] साथ ।
उदा० हाथ धोय पीछे परी, लगी रहत नित लारि । अरी मुरलिया माफ करि, बिना मौत मति जार । —ब्रजनिधि

लालि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लाली] १. आदर, सम्मान, २. लालसा ।
उदा० कालिके तो नन्दलाल मोसों घालि लालि करैं, कालि ही न आई ग्वारि जौ पै तूं हुती भली । —केशव

लाव—संज्ञा, स्त्री० [देश०] रस्सी, नाव बाँधने की लहासी ।
उदा० फिरि फिरि चित उतही रहत टुटी लाज की लाव । —बिहारी

लावक—संज्ञा, पु० [हिं० लवा] लवा नामक एक पक्षी ।
उदा० मोरन के सोर पच्छिपाल और धाये, आये लावक चकोर दौरि हंसनि की दारिका ।
—देव

लावन—संज्ञा, पु० [सं० लावण्य] १. सौन्दर्य, सुन्दरता, लावण्य । २. लँहगा का घेर [देश०] ।
उदा० १. लावन बनायौ, तौ सनेह न बनावनौ हौ, सनेह जो बनायौ, तौ निवाहिबो बनायौ क्यौं न ? —ग्वाल
२. सिर लँहगा लावन उलटि, ठनगन ठनक अलोल । —नागरी दास

लावना—क्रि० सं० [हिं० लगाना] लगाना, फेंकना, डालना, छोड़ना ।
उदा० कर कुंकुम लैकरि कंजमुखी प्रिय के दृग लावन कौं झमकैं । —रसखानि

लाह—संज्ञा, पु० [देश०] १. आनन्द, हर्ष, मंगल २. लाख नामक वृक्ष, ३. कांति, चमक ।
उदा० स्याम के संग सदा हम डोलैं जहाँ पिक बोलैं, अलीगन गुंजैं, लाहनि माह उछाहनि सों छहरैं जँह पीरी पराग को पुंजैं ।
—देव
कैंधों दिग-भूल भूले, घुमरी न पायो घर, कैंधौं कहूँ ठुमरी सुनत रहै लाहे सों ।
—ग्वाल
उदा० ३. लाह सौं लसति नग सोहत सिंगार हार, छाया सोन जरद जुही की अति प्यारो है ।
—सेनापति

लाहर—संज्ञा, पु० [हिं० लाह] चमक, कांति, लपट ।
उदा० भूम धौरहर सो बादर की छांहहिं सो, ग्रीषम को लाहर सो मृग पास आसा सो ।
—तोष

लिब—संज्ञा, पु० [?] दोष, त्रुटि, कमी ।
उदा० प्रस्तुत के वाक्यार्थ के वर्णन को प्रतिबिंब । जहाँ बरणिये ललित तहँ लखि लीजो बिनु लिब । —रघुनाथ

लिखनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० लेखनी] कलम, कूँची, तूलिका ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० लिखनी दल मंजुल कंज की मैन लै, चंचु सँवारत खंजन को। —आलम

लिखाना—क्रि० सं० [सं० लिखन] पोताना, रँगाना।

उदा० दरि दरि चंदन कपूर चूर छरि छरि भरि भरि हिम मही महल लिखाइयत। —देव

लिगारना—क्रि० सं० [हिं० लिकारना = लीक बाँधना] १. धब्बा, या कलंक लेना. २. मर्यादा बाँधना, लीक बाँधना।

उदा० देवजू कौन गनै परलोक में लोक में आपु अलोक लिगारिये। —देव

लिटिना—क्रि० अ० [हिं० लेटना] लेटना, सोना, पौढ़ना।

उदा० राव भयो रंक ते न रंकता हिये की गई पौढ़्यो परजंक, जोई पंक मैं लिटि रह्यो। —देव

लिलोही—वि० [हिं० लीलना, सं० लोलुप] अत्यन्त लोभी, लालची।

उदा० बूझिबे की जक लागी है कान्हहि केसब कै रुचि रूप लिलोही। —केशव

लिसना—क्रि० सं० [सं० लसन] मिलना, सटना, चिपकना।

उदा० ता मधि माथे में हीरा गुह्यो सुगयो गड़ि केसन की छबि सों लिसि। —देव

लील—संज्ञा, पु० [हिं० नील] कलंक, धब्बा।

उदा० कोऊ कहूँ लखि लेय जो याहि तो होय लला मोहि लील को टीको। —ठाकुर

लीलहीं—संज्ञा, पु० [हिं० नील] नील, नीलकंठ।

उदा० इनको तौ हाँसी वाके अंग में अगिनि बासो, लीलहीं जु सारो सुख-सिंधु बिसराये री। —दास

लुंबराई—संज्ञा, पु० [?] यौवन, जवानी।

उदा० लाँबी लटैं लुंबराई को लौन मुखै बन्यो पानिप नैननि पानी। —गंग

लुगी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लूगा] लँहगे का गोटा।

उदा० पीरे अचरान स्वेत लुगुरा लहरि लेत लुगी लँहगा की लाल रंगी रंग हेरा की। —देव

लुठना—क्रि० अ० [सं० लुंठन] लोट जाना, ऐंठ जाना।

उदा० बैरी की नारि बिलख्खति गंग यों सूखि गयो मुख, जीभ लुठानी। —गंग

लुनना—क्रि० सं० [सं० लवन] १. खेत की तैयार फसल काटना, २. नष्ट करना।

उदा० आलम बिहारी बिन मोहन अचेत भये, हाय दई हेत खेत ऐसे लुनियत है। —आलम

लुप—वि० [सं० लुप्त] लुप्त, गायब।

उदा० बाचक अरु उपमेय लुप चपल चंचला देखु। —पद्माकर

लुपरी—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] प्याज की पोटली जिसे गर्म करके चोट आदि में सेंकते हैं।

उदा० बिरह अगिन में प्रीति प्याजु लै लुपरी लगन सेंकाये। —बकसी हंसराज

लुबै—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लू] लू, गर्म हवा, ग्रीष्म की तप्त हवा।

उदा० हे रघुनाथ मिले बिनु वाके लुबे सी लगै मलयानिल देही। —रघुनाथ

लुर—संज्ञा, पु० [सं० लोलक] लोलक, लटकन जो बालियों में पहना जाता है।

उदा० चमकत चुनी बीच मुतियन के लटकत लुर दुर केरी। —बकसी हंसराज

लुरना—क्रि० अ० [सं० लुलन] प्रवृत्त होना, आकर्षित होना, लगे रहना।

उदा० संग ही संग बसो उनके अंग अंग वे देव तिहारे लुरीयै। —देव

लुरी—संज्ञा, स्त्री० [देश०] थोड़े दिन की ब्याई हुई गाय।

उदा० लाड़िली लीली कलोरी लुरी कहँ लाल लुके कहँ अंग लगाइकै। —केशव

लुरैया—संज्ञा, पु० [बुं०] तुरन्त का पैदा हुआ बछड़ा।

उदा० पुचकारत पोंछत पुनि आछे कांधे धरे लुरैया। —बकसी हंसराज

लुलाना—क्रि० सं० [हिं० ललाना = ललचाना] ललाना, ललचाना।

उदा० जैसो गुरु तैसो सिष्य, सिच्छा की अनिच्छा भई, इच्छा भई पूरन, पै भिच्छा को लुलात है। —देव

लुहना—क्रि० अ० [सं० लुब्ध] लुभाना, मोहित होना।

उदा० अरि कै वह आजु अकेले गई, खरि कै हरि के गुन रूप लुही। —देव

लूकना—क्रि० स० [हिं० लौकना, सं० अवलोकन] दिखाई पड़ना, लक्षित होना।

उदा० छिति अंधकार छायो सघन, दृग पसारि लूकै न कर। —चन्द्रशेखर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लूघर—संज्ञा, पु० [हिं० लूहर] लुआठ, जलता अंगारा २. धोती, ३. कपड़ा [हिं० लुगरा]
उदा० परस्यो भात न आगे खाहीं। लूघर लूघर सब चिचयाहीं। —बोधा

लूटि संज्ञा, स्त्री० [हिं० लूट] लूट से प्राप्त माल या धन।
उदा० देख्यो दास देव दुरलभ गति दै कै महा, पापिन को पापन की लूटि ऐसी पावती। —दास

लूत—संज्ञा, स्त्री० [सं० लूता] मकड़ी, लूता।
उदा० लगे लूत के जाल ये लखो लसत इहि भौन। जानि कुहू रजनी मनो कियो नखतगन गौन। —मतिराम

लूमना—क्रि० अ० [सं० लंबन] लटकना।
उदा० घूम आये झूम आये लूम आये भूमि आये चूमि चूमि आये घन चंचलै चमाके सों। —ग्वाल

लूहर—संज्ञा, पु० [सं० लुक, हिं० लुआठ] जलता अंगारा, लुआठ, लूक।
उदा० ऊँचे ते गर्व गिरावत, क्रोधहु जीवहि लूहर लावत मारे। —केशव
सांवरेहू मानसनि गोरे नीके लागत कि गोरे ही के लोइन में लूहरु लगत है। —गंग

लेखी—संज्ञा, स्त्री० [सं० लेखा = देवता स्त्री० लेखी] देवी, देवाङ्गना।
उदा० लेखी मैं अलेखी मैं नहीं है छवि ऐसी औ, असमसरी समसरी दीबे को परैं लियै। —दास

लेव—संज्ञा, पु० [सं० लेप्य] लेप।
उदा० सोरह सहसरानी आठौ पटरानी संग महल बन्यो है जो न घनसार लेव को। —रघुनाथ

लेस—संज्ञा, पु० [सं० लेश] १. चिह्न, निशान २. अणु, ३. सम्बन्ध, ४. थोड़ा [वि०]।
उदा० निरखि नबोढ़ानारि तन छुटत लरिकई लेस। —बिहारी

लै—अव्य० [हिं० लगना] तक, पर्यंत।
उदा० फूले अनारनि चंपक डारनि लै कचनारनि नेच तची है। —देव

लोइ—संज्ञा, पु० [हिं० लोग] लोग, जन।
उदा० तासों मुग्धा नवबधू, कहत सयाने लोइ। —केशव

लोइन—संज्ञा, पु० [सं० लावण्य] १. लावण्य, २. लासा, जिससे चिड़िया फँसायी जाती है। ३. नेत्र, [सं० लोचन] ४. लवापक्षी।
उदा० १. लहलहाति तन तरुनाई लचि लग लौं लफ जाइ लगैं लाँक लोइन भरी लोइनु लेति लगाइ। —बिहारी

लोच—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लचक] अभिलाषा
उदा० चरन कमल ही की लोचनि में लोच धरी रोचन ह्वै राज्यो सोच मिटो धाम धन को। —आलम

लोचना क्रि० स० [हिं० लोचन] अभिलाषा करना, रुचि उत्पन्न करना।
२. कामना करना, ललचना, शोभित होना ३. तर्क वितर्क करना।
उदा० लोचत फिरत रंग रोचत रुचा पै रुच सोच नहीं होत हैं विधाता बिसरे कौ यो। —ठाकुर
२. लोचै वही मूरति अरबरानि आवरे।
३. भौन विलोकिबे को मन लोचत सोचत ही सब गाँव मँझायौ। —नरोतम दास

लोचनश्रवा—संज्ञा, पु०, [सं० चक्षुश्रवा] सर्प, साँप।
उदा० अंग मैं शिवा हैं, मात लोचन श्रवा हैं, पन और निरबाहैं, का हैं कहौ तकि तूल रे। —सूरति मिश्र

लोट—संज्ञा, स्त्री० [देश०] त्रिबली, पेटी।
उदा० कर उठाय घूँघट करत उसरत पट गुझरोट। सुख मोटैं लूटीं ललन लखि ललना की लोट। —बिहारी

लोटन—संज्ञा, पु० [हिं० लोटना] एक प्रकार का कबूतर।
उदा०—लोटन लोटत गुलीबंद तीरा रेखता की नख तंग घाघरा न सुतरी बनाई है। —बेनी प्रवीन
परे वे अचेत हरे वै सकल चिरु चेत अलक-भुजंगी डसे लोटन-लोटाए री। —दास

लोढ़े—संज्ञा, पु० [सं० लोष्ठ] पाषाण का टुकड़ा, पत्थर कण।
उदा० घूमि चहूँ दिसि भूमि रहे घन बूंदन ते चिति डारत लोढ़े। —रघुनाथ

लोय—संज्ञा, स्त्री० [हिं० लाव] १. शिखा, लौ, लपट २. लोग।
उदा० १. मोहन गोहन मैं ललचे, ललना लहकाति ज्यौं लोय दिया की। —नागरीदास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लोयन—संज्ञा, पु० [सं० लावण्य] सुन्दरता, २. नेत्र [सं० लोचन, प्रा० लोयन]।
उदा० लट मैं लटकि, कटि लोयन उलटि करि, त्रिबली पलटि कटि तटिन में कटि गयो।
—देव
२. लोयन लोयन सिंधुतन पैरि न पावत पार। —बिहारी

लोरना—क्रि० अ० [सं० लोल] १. चंचल होना ललकना, ललचना २. लोटना, पैरों पर गिरना [हिं० लौटना]।
उदा० १. दास कटीले ह्वै गात कँपै बिहँसौंही हँसौंही लसै दृग लोरति। —दास
२. देव कर जोरि जोरि बंदत सुरन, गुरु लोगनि को लोरि लोरि पायन परति है।
—देव

लौंज संज्ञा, पु० [अ० लौज़] बादाम, एक प्रसिद्ध मेवा।
उदा० तेबन की लौज में, न हौज में हिमामहूके, मृगमद मौज में, न जाफरान जाला में।
—ग्वाल

लौंद—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] छड़ी।
उदा० लौंद सी लंक लचै कुचभार संभारत चूनरी चारु सुकैंची। —पद्माकर

लौंनी—संज्ञा, स्त्री [हिं० लवर] आग की लपट, ज्वाला।
उदा० तृष्णाहू तिनूका जग जाल-जाल पूर्‌यो जहाँ, लगी लोभ लौंनी कौन भाँति सुख पायहैं। —सूरति मिश्र

व

वंच्छना—क्रि० सं० [हिं० वांछा] वांछा करना, कामना करना।
उदा० गौन अलच्छित गच्छती तच्छन वंच्छती पच्छ, विपच्छ मृगच्छी। —कुमार मणि

वग्ग—संज्ञा, पु० [सं० वर्ग] वर्ग समूह।
उदा० अरि वग्ग यों दुग्ग दरीन दुरे भ्रम-भीत से भीतर तें न कढ़ै। कुमार मणि

वफा—संज्ञा, स्त्री० [अ० वफा] मुरौवत, सुशीलता संकोच।
उदा० जौ लग प्रान पुँजी में वफा बड़ी तौ लौं नफा न मिलाप की पैहौ। —पद्माकर

वरटा—संज्ञा, पु० [सं०] हंस नामक पक्षी।
उदा० हैं अबहीं चिकुला जंनमे वरटा तनमें छिनु धारत धीरन। हौं प्रतिपालक हौं तिनको नहिं आजु अहार मिल्यो अरु नीरन।
—गुमान मिश्र

वसुमती संज्ञा, स्त्री० [सं०] पृथ्वी।
उदा० ऐसी रूपवती वसुमती में न ओर जाकी बिरह बिथा में इतनी कुसल छेम है।—रघुनाथ

वारी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बारी] खिड़की, झरोखा, गवाक्ष।
उदा० वारियाँ महल की न हलकी मुदी ही जहाँ रासि परिमल की अँगीठियाँ अनल की।
—ग्वाल

वासरेश संज्ञा, पु० [सं०] सूर्य, दिनेश।
उदा० इन्द्र यम बरुण कुबेर शेष वासरेश वारिये सुमेरु कैलास की चमक पुनि। —देव

वासिलात—संज्ञा, पु० [अ०] कुल आय का जोड़, आमदनी का मीजान।
उदा० राख्यौ है किसोर पन जोबन बहाल करि, मदन महीप वासिलात बूझि लेन को।
—बेनी प्रवीन

वासुकि—संज्ञा, पु० [वासुकि] १. बासुकी नाग २. सुगंधित पुष्पहार।
उदा० वृषभवाहिनी अंग उर, वासुकि लसत प्रवीन शिव सँगे सौहै सर्वदा, शिवा कि राय प्रवीन। —केशव

विखसीली वि० [सं० विष] विषाक्त, विषैली।
उदा० आवत वै बनक बनीले बनबीथिन ते कीले मैन मंत्रन गुमान विखसीली को।
—चन्द्रशेखर

विचित—वि० [सं० विचित्र] विस्मित, चकित, उदासीन।
उदा० चितै चितै जित तित, ह्वै रही चकित चित, विचित विचारी, धरी चारि लौं विचारि कै। —देव

वितंड—संज्ञा, पु० [सं०] १. ताला २. हाथी।
उदा० १. गंग कहै धनपति नृपति बिकल मति.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लंकहू को अधिपति बिपति वितंड में ।
—गंग

वितन—संज्ञा, पु० [सं०] विनातन का, विदेह, कामदेव ।

उदा० ग्रीषम मैं गति सिसिर बन, निबिड़ घोस अँधियार । मुख उजियारैं करत तहाँ दंपति वितन विहार । —नागरी दास

विदेह—संज्ञा, पु० [सं०] १. कामदेव २. जनक जी ।

उदा० १. देव नयो हिय नेह लगाय, विदेह कि आंचन देह दह्यो करै । —देव

विद्याधर—संज्ञा, पु० [सं०] १. देवताओं की एक जाति २. विद्वान ।

उदा० कवि कुल विद्याधर, सकल कलाधर, राज राज वर वेश बने । —केशव

विद्वोत—वि० [सं० विदित] विदित, ज्ञात, मालूम ।

उदा० मरदन सिंह महीप सुत, बैस बंस विद्वोत करौ सिंह उद्दोत को, राधा हरि उद्वोत ।
—देव

विधिवधू—संज्ञा, स्त्री० [सं०] ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती ।

उदा० देव यही मन आवत है सविलास वधू विधि है बहुधा की । —देव

विपंची—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की वीणा २. क्रीड़ा, खेल ।

उदा० १. नवल बसंत धुनि सुनिये विपंची नाद पंचम सुरनि ठानि, ओठनि अमेठिये ।—देव

विमन—वि० [सं० वि + मन] खिन्न, उदासीन ।

उदा० ब्रज की अवनि ताकि वनिता विमानन की, विमन विमान ह्वै विमुख मुख सुन्दरी ।
—देव

विमान—वि० [सं० वि + मन] मान रहित, गर्व रहित ।

उदा० ब्रज की अवनि ताकि वनिता विमानन की, विमन विमान ह्वै विमुख मुख सुन्दरी ।
—देव

विरंग—वि० [सं०] बदरंग, बुरारंग, फीका ।

उदा० ग्वाल कवि कहै तेरे विरही विरंग ऐसे गिरही तिहारे तें बरगने रिस जोरे हैं ।
—ग्वाल

विरंदन—संज्ञा, पु [सं वृन्द] वृन्दों, समूहों ।

उदा० कवि 'सूरति' जे सरनागत पाल हैं, दायक सुक्ख विरंदन के । —सूरतिमिश्र

विरचावना—क्रि० सं० [सं० वि + रंजन] उचाटना, उदासीन करना, विरक्त करना ।

उदा० घोर घने गरजैं घन ए ससिनाथ हियौ विरचावन लागे । —सोमनाथ

विरज—वि० [सं० वि + रज] विकार रहित, स्वच्छ, निर्मल ।

उदा० रावरी चरन रज सेवत सुरेस अज जोगी जे विरज, सबै सैल लता द्रुम ही ।
—देव

कंस महाराज को रजकु राजमारग मैं अंबर विरज लीने रंग रंग गहिरें ।
—देव

विष—संज्ञा, पु० [सं०] १. जल २. जहर ।

उदा० १. विषमय यह गोदावरी अमृतन को फल देत । —केशव

विषमहय—संज्ञा, पु० [सं०] विषम अश्व वाला, सप्तहय, सूर्य ।

उदा० प्रगट भयो लखि विषमहय, विष्नुधाम सानंदि । सहसपान निद्रा तज्यो, खुलो पीतमुख बंदि । —दास

विषमेषु—संज्ञा, पु० [सं० विषम + इषु] कामदेव मन्मथ ।

उदा० डासी वा बिसासी विषमेषु विषधर, उठै आठहूँ पहर विषै विष की लहरि सी ।
—देव

विषै—अधि० [सं०] में, अधिकरण कारक की विभक्ति ।

उदा० दमु ना मिलत जमदूतन के देह विषैं,
—ग्वाल

डासी वा बिसासी विषमेषु, विषधर उठै आठहू पहर विषै विष की लहरि सी ।—देव

वीछन—संज्ञा, पु० [सं० वीक्षण] दृष्टि, चितवन, देखना ।

उदा० तीछन वीछन बाननि तानति, भौंह कमान तनी मुख चंद पै । —देव

वृख—दण्ड = संज्ञा पु० [सं० वृक्ष दण्ड] लकड़ी का डंडा ।

उदा० ब्याधि को बैद, तुरंग को चाबुक, चौपग को वृख दण्ड दियो है । —गंग

वृषेस—संज्ञा, पु० [सं० वृषेश] नाँदिया, शंकर का वाहन ।

उदा० सेस भूले देस श्री महेस के वृषेस भूले भ्रमत भवानी को भुलानो वृषकेत है ।
—चन्द्रशेखर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बुराना—क्रि० स० [सं० वर=हिं० ओराना] धीरे धीरे समाप्त होना ।
उदा० देखत बुरै कपूर ज्यौं उपै जाय जिन, लाल छिन छिन जाति परी खरी छीन छबीली बाल । ——बिहारी
बैरोचन—संज्ञा, पु० [सं० विरोचन] सूर्य २. अग्नि ३. प्रकाश ।
उदा० १. हरी बेली बाग की हवेली में नवेली भौर, भोर ही ते गुंजै ह्वाँ न भानु भौन परसै । ऐसे थलु रोचन बैरोचन को जैसो बास, तीसरो त्रिलोचन को लोचन सो दरसै । —बेनी प्रवीन
बैसवारी—संज्ञा, स्त्री० [सं० वयस+हिं० वारी प्रत्य०] नववयस्का, नवयुवती, नायिका ।
उदा० आँख झपकारी, चढ़ी नींद की खुमारी, भारी तऊ बैसवारी, बाट जोवै बनवारी की । —ग्वाल
ब्याउर—संज्ञा, स्त्री० [हिं० बिआना=जन्म देना बच्चा जनने वाली, बच्चा पैदा करने वाली ।
उदा० ब्याउर के उर की पर पीर को बाँझ समाज में जानत को है । ——बोधा
ब्वै—वि० [स० उदित, प्रा० उअ] उदित, निकला हुआ, प्रकट ।
उदा० सुबरन सूरज प्रकास मानौ ब्वै रह्यो । ——नरोत्तमदास

स

संकरषन—संज्ञा, पु० [सं० संकर्षण] १. शेषनाग २. बलराम ३. खींचने वाला ।
उदा० १. मानो सनचत्र शिशुमार चक्र कुंडली में सङ्करषन अनल भभूक महराति है । २. काम को प्रहरषन कामना को बरषन । —पजनेश
कान्ह सँकरषन सब जगको जानिये । ——केशव
संकासक—वि० [सं संकाश=सदृश] सादृश वाली ।
उदा० किधौ राज हंसनि की संकासक केसोदास किधौ कलहंसनि की लाज सी लगति है । ——केशव
संकु—संज्ञा, स्त्री० [सं० शंकु] बर्छी २. नुकीली वस्तु, खूँटा ।
उदा० कपट बचन अपराध तें निपट अधिक दुख दानि । जरे अंग में संकु ज्यों होता विथा की खानि । ——मतिराम
संकुल—संज्ञा, पु० [सं०] भीड़, समूह ।
उदा० सारद सिंदूर सिर सौरभ सराहैं सब, सेन साजि संकुल प्रभा सी सारियत है । ——गंग
संकुलना—क्रि० अ० [सं० शंक] भयभीत होना घबरा जाना ।
उदा० ककुभ कुंभि संकुलहि, गहरि हिमगिरि हिय फट्यो । ——गंग
संख—वि० [सं० शंख] अत्यन्त साफ, उज्जवल, २. दस खर्व की संख्या ।
उदा० नील के बसन क्यों बिगारत हौ बेही काज बिगरै तौ हम पै बदल संख लीजिये । ——दास
संज्ञा—संज्ञा, स्त्री० [सं०] संकेत, इशारा ।
उदा० न्यारे के सदन तें उड़ाई गुड़ी प्रान प्यारे संज्ञा जानि प्यारी मन उठी अकुलाइ कै । ——दास
संजति—वि० [सं० संयुक्त] संयुक्त, सहित, युक्त मिला हुआ ।
उदा० नूपुर संजति मंजु मनोहर, जावक रंजित कंज से पाइनि । ——देव
संपद—संज्ञा, स्त्री० [सं० संपद] ऐश्वर्य, वैभव
उदा० कर पद पदम पदमनैनी पद्मिनी पदम सदन सोभा संपद सी आवती । ——देव
संपै—संज्ञा, स्त्री० [सं० सम्पत्ति] धन, सम्पत्ति ।
उदा० बारि के बलूलनिकि बनिज बजार बैठे सपने की संपै गनि, सौपै बड़े थरपै ।——देव
संभ्रम—संज्ञा, पु० [सं०] आतुरता, घबराहट, व्याकुलता २. आदर, गौरव ।
उदा० १. केशवदास जिहाज मनोरथ, संभ्रम विभ्रम भूरि भरे भय । ——केशव
देखि चतुराई मन सोच भयो प्रीतम को

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जानि पर नारि मन संभ्रम भुलायो है ।
—कालिदास

संसी—वि० [सं० संशय] शंकालु, संशय करने वाला ।

उदा० बंशन के वंशन सराहै शशि बंशीवर बंशी-धर संसी हंस बन्शन हिलति है । —देव

संसेर—संज्ञा, स्त्री० [फा० शमशेर] तलवार ।

उदा० गहे बान कम्मान संसेर नेजे ।
—चन्द्रशेखर

सँजोना—क्रि० स० [सं० सज्जा] जलाना, दीपक प्रकाशित करना, उजाला करना ।

उदा० कोमल अमल पदपंकजन हंस कैधौं, मदन महोत्सव संजोइ राखी आरती ।
—बलभद्र मिश्र

नेह सों भोय सँजोय धरी हिय दीप दसा जु भरी अति आरति । —घनानन्द

सँरसी—संज्ञा, स्त्री [हिं० सँड़सी] बनसी में लगी हुई लोहे की कँटिया ।

उदा० बंक हियेन प्रभा सँरसी सी । कर्दम काम कछू परसी सी । —केशव

सांखाहूली—संज्ञा, स्त्री० [सं० शंखपुष्पी] शंख पुष्पी नामक पुष्प, कौड़ियाला।

उदा० सांखाहूली फूल की महिमा महा अकत्थ सीस धरैं पिय सीय के जिनतोरे दसमत्थ ।
—मतिराम

सांसी—वि० [हिं० सांची] साँची, सत्य ।

उदा० गाँसी जाहि सूल ताहि हांसी न हँसाये आवै वासी परै पेम सुनि सांसी कहियत है । —आलम

सई—वि० [हिं० सही] १. सत्य, सच, यथार्थ ।

उदा० जब आसकी तेरी सईकी करैं तब काहे न संभु के सीस चढ़ै । —बोधा

सकता—संज्ञा, पु० [अ० सक्तः] मूर्छा रोग, बेहोशी की बीमारी ।

उदा० रे रे स्वातिक क्रूर अवध बाल जानत जगत । भावन हमरो दूर सूने मत सकता करै । —बोधा

सकबंध—वि० [?] वीर, शक्तिशाली २. मुगलों की एक उपाधि ।

उदा० राजन के राजा महाराज श्री प्रतापसिंह तुम सकबंध हम छंदबंध छाए हैं ।
—पद्माकर

सकर—संज्ञा, पु०, [हिं० सकरना] फिसलने का भाव या क्रिया, फिसलन ।

उदा० जकरि जकरि जाँघैं सकरि सकरि परै, पकरि पकरि पानि पाटी परजंक की ।
—कवीन्द्र

सकसना—क्रि० अ० [?] फैलना, बिखरना ।

उदा० आगैं आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद मन्द मन्द मोद सकसैं ।
—भूषण

सकसै—संज्ञा, पु० [सं० संकष्ट] संकट, उलझन २. [अनु० सकसाना] भय, डर ।

उदा० चहुँ ओर बबा की सौं सोर सुने मन मेरेऊ आवति री सकसै । —रसखानि

सका—संज्ञा, पु० [फा० सक्का] भिश्ती, पानी भरने वाला ।

उदा० सका मेघमाला सिखी पाककारी ।
—केशव

सकाना—क्रि० अ० [सं० शंका] संदेह करना, २. हिचकना ।

उदा० सकियै नहिं नेकु निहारि गुपाल सु देखि मसोसनि ही मरियै । —गंग

सकिलात—संज्ञा, पु०[तु० सकिरलात, फा०] ऊनी बानात सिग्लात बढ़िया ऊनी वस्त्र ।

उदा० हरी हरी दूब छोटी तापर बिराजैं बूँद उपमा बनी है मिश्र निरख सिहात है । सावन सनेही मनभावन रिझावन को मोतिन गुथाये हैं दुलीचा सकलात के ।
—'शृंगार संग्रह' से

रगमगे मखमल जगमगे जमींदोज, और सब जे वे देस सूप सकलात हैं । —गंग

सकुली—वि० [सं० संकुल] संकीर्ण, संकुचित ।

उदा० कमल कुलीनन के सकुली करन हार, कानन लौं कोयन के लोयन रँगीन के ।
—कवीन्द्र

सकेलि—संज्ञा, स्त्री० [?] कच्चा और पक्का मिला हुआ लोहा ।

उदा० पाउँ पेलि पोलाद सकेलि रसकेलि किधौं नागबेलि रसकेलि बस गजबेलि सी ।
—देव

सक्कस—वि० [फा० सरकश] कठिन, २. उद्दंड, विरोधी, विद्रोही ।

उदा० जानि पन सक्कस तरक्कि उठ्यो तक्कस करक्कि उठ्यो कोदंड फरिक्कि उठ्यो, भुजदण्ड । —दासो

सखि—संज्ञा, स्त्री० [सं०[साक्षिन्] १. गवाही, साखी, २. गवाह [संज्ञा, पु०] ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० सेखर भई है मोहि बिरह बिहाली देखु रजनी घरी है सेष आली सब सखि कै।
—चन्द्रशेखर

सगबग—वि० [अनु०] १. द्रवित, अधीर, २. सराबोर, लथपथ।

उदा० १. हे निपट सगबगे हिये प्रेम सों, जाहर सजो रुखाई। —सोमनाथ
२. पूछैं क्यौं रूखी परति, सगिबगि गई सनेह। —बिहारी

सचतना—क्रि० सं० [सं० स+चेतन] सचेत होना।

उदा० सुनत अनूप रूप नूतन निहारि तनु, अतनु तुला में तनु तोलति सचति है। —देव

सचना—क्रि० स० [सं० संचय] संचित करना, इकट्ठा करना।

उदा० देव कहै सोवत निसंक अंक भरी परजंक मैं मयकं मुखी सुषमा सचति है। —देव

सचाना—क्रि० सं० [सं० संचयन] १. पूरा करना, बदला लेना २. सचेत करना।

उदा० सासहि नचाइ मोरी नदहि नचाइ खोरी, बैरनि सचाइ गोरी मोहि सकुचाइ गौ।
—रसखानि

सज—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सजावट] शोभा, सौन्दर्य।

उदा० इंदिरा के डर की धुरकी, अरु साधुन के मुख की सुख की सज। —देव

सजीउ—वि० [सं० सजीव] जिंदा, ज्यादा, अधिक।

उदा० बाट मैं मिलाइ तारे तौल्यौं बहु बिधि प्यारे, दीनौ है सजीउ आप तापर मरत है। —सेनापति

सटक—संज्ञा, स्त्री० [अनु० सट से] १. पतली, लचकीली छड़ी २. चुपके से भागना,।

उदा० १. गोने की बघूटी गुन टोने सों कछूक करि, सोने सो लपेटो लिये सोने की सटक सी।
—बेनी प्रवीन
२. हहर हबेली सुनि सटक समरकंदी, धीर न धरत धुनि सुनत निसाना की।
—गंग

सटपट—संज्ञा, पु० [अनु०] १. भय, डर २. चकपकाहट।

उदा० सेनानी के सटपट, चन्द्र चित चटपट, अति अति अटपट अंतक के ओक के।
—केशव
२. सोचि सटुपटु भो औ धरु भो न घटु चैन चित को उचटु भो सुकत बंसी रटु भो। —बेनी प्रवीन

सटा—संज्ञा, स्त्री० [?] १. सिंह की गर्दन के बाल, अयाल २. विस्तार-फैलाव।

उदा० १. इन्द्र की अटा लौं नरसिंह की सटा लौं, मारतंड की छटा लौं छटा छहरै प्रताप की। —पद्माकर
२. बैन सुधा से सुधा सी हँसी बसुधा में सुधा की सटा करती हो। —पद्माकर

सतंक्रत—संज्ञा, पु० [सं० शतक्रतु] सौ यज्ञ करने वाला, इन्द्र।

उदा० काम महीप को दीपति ऊपर एक सहस्र सतंक्रत वारे। —बोधा

सतपत्त—संज्ञा, पु० [सं० शतपत्त] शतदल कमल।

उदा० कबि आलम ये छबि ते न लहे जिन पुंज लये कलबत्तन के। तन स्याम के ऊपर यो सोभित लगि फूल रहेसतपत्तन के
—आलम

सतमष—संज्ञा, पु० [सं० शतमख] सौ यज्ञ करने वाला इन्द्र।

उदा० तेज पायो रवि तैं भजेज सतमष पास, अवनी को भोगिबो अधिक नाथ नीति की।
—सूदन

सतर—वि० [सं० सतर्जन] वक्र, टेढ़ी, तिरछी।

उदा० चितई करि लोचन सतर सलज सरोष सहास। —बिहारी

सतराना—क्रि० अ० [सं० सतर्जन] अप्रसन्न होना नाराज होना।

उदा० मोहति मुरति सतराति इतराति साहचरज सराहि आहचरज मरति क्यों। —देव

सतीत—वि० [सं० स+प्रा० तित=गीला] सार्द्र, गीला।

उदा० वा बरसै जलधारन सों रसधारन याहु सतीत करी है। —ठाकुर

सतेसा—संज्ञा, पु० [?] जहाज, नाव।

उदा० मानसर सुभ थान तिहि ढिग नव तमालनि पाँति। चढ़ि सतेसनि बढ़ि महा रुचि करत सुख बहुँ भाँति। —घनानन्द
प्रेम सतेसा बैठि के रूप-सिंधु लखि हेरि। जुगल माधुरी लहरि कौ, पावैगो नहिं फेरि।
—ब्रजनिधि
मृगमद आड़ लिलार तिय, कीनी है छबि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐन । बदन-रूप-सरबीच मैं, मनू सतेसा मैंन ।
—नागरीदास

सत्तु—संज्ञा, पु० [सं० सत्य] सत्य, यथार्थ ।
उदा० कुचसंघ सकीन न सत्तु कहैं । —बोधा

सद—वि० [सं० सद्य] १. ताजा, नवीन २. कुटेव कुवान [संज्ञा, स्त्री०] ।
उदा० १. दार्‌यो से दसन मंद हंसनि विसद भरी, सद भरी सोभा मद भरी अंखियांन मैं । —देव
२ सदन सदन के फिरन की सद न छुटै, हरिराय रुचै जितै बिहरत फिरौ, कत बिहरत उरु आय । —बिहारी

सदागति—संज्ञा, पु० [सं०] पवन, हवा ।
उदा० चंडकर कलित, बलित बर सदागति, कंदमूल फलफूल दलनि को नासु है ।
—केशव

सदी—वि० [सं० सद्यः] १. ताजा टटका २. तुरन्त शीघ्र ३. इसी समय, आज ही [अव्य] ।
उदा० होत प्रभात ही बेनी प्रवीन जू, आये महा उर भाल सदी है । —बेनी प्रवीन

सद्धना—क्रि० स० [सं० साधन] साधना, किसी कार्य की सिद्धि करना, संधान करना ।
उदा० हुम अति उदारता हृदय मद्धि । जग सुखित करौ सब साँच सद्धि । —सोमनाथ

सद्धर—वि० [हिं० स+अद्धर] १. साधार, शक्तिशाली २. उपयुक्त, ठीक, असली ।
उदा० बिजली करै कलेवा दवनी सों राखै दवा राहु को खवावै मेवा सो सद्धर भाट है ।
—गंग

सधाना—क्रि० स० [देश०] सिखाना ।
उदा० धाये फिरो ब्रज में, बधाए नित नंद जू के, गोपिन सधाये नचो गोपन की भीर में ।
—देव

सधीनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० संधिनी ?] १. कामना पूर्ति का गुण ।
उदा० सुन्दरता अति मैन दियो अरु दीन्ही मनो सुरधेनु सधीनी । —तोष

सनाका—संज्ञा, पु० [?] संगीत आदि का समां, शब्द की तुमुल ध्वनि मुहा०, सनाका बंधना-समांबंधना [संगीत आदि का] ।
उदा० कहै पद्माकर त्यों बाँसुरी की धुनि मिलि रह्यो बँधि सरस सनाको एक ताल को ।
—पद्माकर

सनाह—संज्ञा, पु० [स० सन्नाह] कवच, बखतर ।
उदा० बाँधे सनाह तुरंगन पै चढ़े वेष भयानक भाव तनोत हैं । —रघुनाथ

सपरना—क्रि० सं० [बुं०] स्नान करना ।
उदा० देखे दुति ना परत पाप रेते पा परत सापरे ते सुरसरि सांप रेंग तन में । —आलम
२. पट पाखे भखु कांकरे सपर परेई संग । —बिहारी

सपेट—संज्ञा, पु० [हिं० सपाटा] झपट, लपेट ।
उदा० निज आयु सिंह-सपेट तें सु बचाइ घर को ल्यावही । —पद्माकर

सफजंगी—वि० [अ० सफ+जंग] पंक्तिबद्ध लड़ने वाली (सेना) ।
उदा० मान-मंद-भंगी सफजंगी सैन संगी लिये, रंगी रितु पावस फिरंगी स्वांग लायो है ।
—पद्माकर

सफर—संज्ञा, स्त्री० [सं० शफरी] बड़ी मछली, सौरी मछली ।
उदा० परे मुरझाइ ग्राह-सफर फरफराइ, सुर कहैं हाइ को बचावै नद-नाइकै । —सेनापति

सबज—वि० [फा० सब्ज] हरे रंग वाली, हरी ।
उदा० रंग रस भीनी भीनी कुंचकी सबज छोरि निकसि लसी हैं अनी जुगल उरोज की ।
—पद्माकर

सबल—वि० [सं०] १, सौन्दर्य युक्त, सुन्दरता सहित २. चित्र-विचित्र (सं० शबल)
उदा० १. कुंतल ललित नील भ्रुकुटी धनुष नैन कुमुद कटाच्छ बाण सबल सदाई है ।
—केशव
२. बहुत भाव मिलि कै जहाँ, प्रगट करै इकरंग ।
सबल भाव तासों कहैं जिनकी बुद्धि उतंग ।। —दास

सबील—संज्ञा, स्त्री० [अ०] उपाय, प्रयत्न, तरकीब ।
उदा० बचै न बड़ी सबीलहूँ चील्ह घोंसवा मांस ।
—बिहारी

सबीह—संज्ञा, स्त्री० [फा० शबीह] चित्र, तस्वीर ।
उदा० हित गाढ़ी अहो इत ठाढ़ी कहा लिख काढ़ी सबीह सी सोहती हौ । —चन्द्रशेखर

सबूर—संज्ञा, पु० [फा० सबू] शराब का घड़ा, शराब ।
उदा० 'ग्वाल कवि' अंबर-अतर में अगर में न उमदा सबूर हू मैं, है न दीपमाला मैं ।
—ग्वाल

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समदना—क्रि० स० [बुं०] दायज, या भेंट में किसी वस्तु को देना ।
उदा० तोहि सखी समदै संग वाके ग्रु क्यों यह बात सबै बनि आवै । —केशव दास
समर—संज्ञा, पु० [सं० स्मर] कामदेव, मनोज २. युद्ध, लड़ाई ।
उदा० १. धँस्यो समर हियगढ़ मनहु ड्योढ़ी लसत निसान । —बिहारी
दसरथ के राम, औ स्याम के समर जैसे, ईस के गनेस औ कमल पत्र आना के ।
—गंग
समीरिधि—संज्ञा, स्त्री० [सं० समृद्ध] सम्पन्नता, अमीरी ।
उदा० मध्या रूठ जोवना प्रगट काम ढीठ बैनी सुरत विचित्रा लाज काम समरिधि है ।
—देव
समल—वि० [सं०] मलीन, गंदा, मैला ।
उदा० पाइन में फलके परि परि झलके दौरत थल के बिथित भईं। आदरस अमल सी दृगन कमल सी धरैं समल सी गिरिन छईं । —पद्माकर
समलनि—बि० [सं० समल] मैला, गंदा, मलीन
उदा० सहज सुगंध सौं मदंध मधुकर कहो को गनै सुगंध और सोधे समलनि को ।
—देव
समादान—संज्ञा, पु० [अ० फ० शम्अदान] जिसमें मोमबत्ती रख कर जलाते हैं ।
उदा० कारचोबी कीमत के परदा बनाती चारु, चमक चहूँधा समादान जोत जाला में ।
—ग्वाल
समिधि—संज्ञा, पु० [सं० समिध] अग्नि, आग ।
उदा० लागत किरणि जाकी करत बिकल अंग-देखे ताप आखिन में बसी है समिधि सों ।
—रघुनाथ
घूँघट खुलत मुख जोति को पसार होत ह्वै गयो छपाव सब बैगुन समिधि को ।
—रघुनाथ
समीड़ना—क्रि० स० [सं० स + हिं० मींड़ना] अच्छी तरह से मीजना, मलना, मर्दन करना ।
उदा० अंब-कुल बकुल समीड़ि पीड़ि पाड़रनि मल्लिकानि मीड़ि घन घूमत फिरत हैं ।
—देव
समीति—संज्ञा, स्त्री० [सं० समिति] मेल २. समूह, ३. समेत, सहित ।
उदा० १. इन्द्रजीत सों हती समीति । कछू दिनन तें ऐसी रीति । —केशव
अब भोर भये उठि आये दुरे दुरें बातनि ही सों समीति करी । —सोमनाथ
२. बदलि परी है प्रीति-रीति परतीति-नीति, निपट अचंभे की समीति लेखियत है । —घनानन्द
३. अंग समीत अनंग की जोति में, प्रीति पतंग ह्वै दौरि परी जू ।
—देव
समीधी—वि० [सं० संविद्ध ?] बँधा हुआ, फँसा हुआ, सम्मिलित, मिला हुआ ।
उदा० बीधी बात बातन समीधी गात गातन उबीधी परजंक में निसंक अंक हितई ।
—देव
समीलना—क्रि० अ० [सं० सम्मिलन] सम्मिलित होना, शामिल होना, भाग लेना ।
उदा० नित जेठी उमेठी सी भोहैं करै, दुख देन को दासी समीलतु है । —बेनी प्रवीन
समुच्च—संज्ञा, पु० [सं० समुच्चय] समूह, राशि ।
उदा० लाल कर पल्लव बनक भुज बल्लरीन, कनक समुच्च उच्च कुच गिरि संगिनी ।
—देव
समुना—संज्ञा, पु० [सं० शयन] हिंसा, हत्या या मारने की वृत्ति ।
उदा० तेज भरी मंजुल मजेज भरी रीझ भरी खीझ भरी दूतन की दाहै दौरि समुना ।
—ग्वाल
समूढ़—संज्ञा, पु० [सं०] समूह, राशि ।
उदा० प्रौढ़ि रूढ़ को समूढ़ गूढ़ गेह में गयो । शुक्र मंत्र शोधि-शोधि होम को जहीं भयो ।
—केशव
समूधो—वि० [देश०] सब, सम्पूर्ण ।
उदा० रुँधो रुकै कौन को समूधो करि काज बीर सूधो चलो पौन को सपूत रामदल को ।
—समाधान
समूर—संज्ञा, पु० [सं० समूल] १. आदिकारण, प्रभाव, २ हर्ष, समुल्लास, ३. शंबर नामक हिरन ।
उदा० १. तेरो कल बोल कल भाषिनि ज्यों स्वाति बुंद, जहाँ जाइ परे, तहाँ तैसोई समूर है ।
समोवन—संज्ञा, पु० [हिं० समाना] मग्न, तन्मय
उदा० गाय दुहावन हौं गई, लखै खरिक हरि सांझ । सखी समोवन ह्वै गई आँखैं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आँखिनि माँझ । —बिहारी

समौरध—संज्ञा, पु० [सं० सम् + ऊर्द्ध] ऊपर, स्वर्ग ।

उदा० रेफ समौरध जाहिर बास सवारहि जा धरमौ सफरे । —दास

सयान—संज्ञा, पु० [सं० सज्ञान] १. सयानपन, कौशल २. संचान, या बहरी नामक बाज ।

उदा० सामाँ सेन, सयान की सबै साहि कै साथ । बाहुबली जयसाहिजू, फते तिहारैं हाथ । —बिहारी

सर—संज्ञा, पु० [हि० सरकंडा] १. सरकंडा, सरपत जैसा एक पौधा जिसकी कलम बनाई जाती है । २. सरा चिता ।

उदा० १. रंग बनावत अंग लगे सर ल्यावत लेखनी काज नये । —तोष

कागज गरे मेघ, मसि खूटी सर दब लागि जरे । सूर

२. कैतो सुख सेज कै संजोगी सरसेज पग जावक कि पावक सजौगी सीव लोक की । —देव

सरक—संज्ञा, स्त्री० [सं०] नशा की लत, शराब आदि पीने की आदत ।

उदा० प्रेम सरक सबके उर सलै । ब्रजमोहन बन कों जब चलै । —घनानन्द

सरकसी—वि० [?] कठोर, नीरस, शुष्क ।

उदा० बातैं सरकसी रसहू में कवि भूषन तौ बालम सों बोरी बरकसी कीजियतु है । भूषण

सरकोस—संज्ञा, पु०[शरकोश] तरकश, तूणीर ।

उदा० सरकोस कसैं करिहां जु घरें धनु बानु मनोजहुँ के अवतार । —केशव

सरदन—वि० [फा० सर्द + हिं० न] मंद, सुस्त

उदा० थिगरी न लागै ऊधो चित्त के चँदोवा फटे, बिगरी न सुधरै सनेह सरदन को ।—ठाकुर

सरता—संज्ञा, स्त्री० [सं० शर] तीरंदाजी, बाण चलाना ।

उदा० छोड़ि दई सरता सब काम मनोरथ के रथ की गति खूटी । —केशव

सरना—क्रि० अ० [प्रा० सरण] १. गमन करना, व्याप्त होना २. समाप्त होना, बीतना ३. होना ।

उदा० १. बाहर हू भीतर अकास एकै आस पास पवन ज्यों गृह बन भुवन तिहू सरो । —देव

२. पूरन इंदु मनोज सरो चितते बिसरो उसरो उन दोऊ । —देव

३. कंस रिपु अंस अवतारी जदुबंस, कोई, कान्ह सो परम हंस कहै तौ कहा सरो । —देव

सरफ—वि० [?] लज्जित, संकुचित ।

उदा० देखे मुख चंद द्युति मंद सी लगत अति लोचन बिलोके मृग शावक सरफ है । —'शृंगार संग्रह' से

सरबटना—क्रि० अ० [हिं० सरबंस] १. छिन्न-भिन्न करना, तहस-नहस करना ।

उदा० क्रुद्ध दसानन बीस कृपाननि लै कपि रीछ अनी सरबट्टत । —दास

सरबत—वि० [सं० शर + वत् (प्रत्य०)] १. बाण की भाँति २. शरबत, पेय पदार्थ ।

उदा० १. ये बीरी बगारि, बरे ये बीरी समीर बैरी, सीरो सरबत री उसीरो सरबत री । —देव

सरल—संज्ञा, पु० [सं०] देवदार का वृक्ष ।

उदा० ताल ह्यों तमाल साल सरल रसाल जाल फालसे फरेंदे ते फराक फूलनार हैं । —नंदराम

सरवा—संज्ञा, पु० [सं० शरावक] १. प्याला, कसोरा, संपुट २. दिया ।

उदा० १. करवा की कहाँ गंग तरवा न तीते होहिं, सरवा न बूड़ै परवाह नदी नारि के । — गंग

सरवानी—संज्ञा, स्त्री० [?] ऊँट चलानेवाली

उदा० सरवानी विपरीत रस किय चाहै न डराइ दुरै न विरहा को दुर्‌यो, ऊँट न छाग समाइ । —रहीम

सरस—वि० [सं०] १. बढ़कर, अधिक, ज्यादा २. रसयुक्त ३. गीला ४. सुंदर ५. मधुर ।

उदा० १. दरसकिए तें अति हरस सरस होत, परम पुनीत होत पदवी सुरेस की । —ग्वाल

तैसेइ समीर सुभ सोभै कवि द्विजदेव सरस असमसर बेधत बियोगी गात । —द्विजदेव

सरसई—संज्ञा, स्त्री० [सं० सरस] गीलापन, आर्द्रता ।

उदा० तिय निय हिय जु लगी चलत पिय नख-रेख खरोंट, सूखन देति न सरसई, खोंटि खोंटि खत खोट । —बिहारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सरसना—क्रि स० [सं० सरस + न] बढ़ना, संवर्धित होना ।
उदा० मन मांझ नेम सौं मनोज सरस्यौ करौ ।
—सोमनाथ

सरसार—वि० [फा० सरशार] निमग्न, निमज्जित ।
उदा० कहै पद्माकर सुगंध सरसार बेस बिथुरि बिराजैं बार हीरन के हार पर ।
—पद्माकर

सरसाल—वि० [फा० सरशार] १. उन्मत्त, मस्त नशे में चूर २. छलकता, हुआ, परिपूर्ण
उदा० १. जानतु मेरो कठोर हियौ जु कियौ सरसाल मनोज नैं झाँकी । नैननि मैं, घट मैं अटकी खटकैं वह बाकी बिलोकनि बाँकी । —सोमनाथ

सराँग—संज्ञा, स्त्री० [सं० शलाका] खंभा, लोहे की छड़ ।
उदा० चीकनी सुहाग नेह हेम की सराँग पर प्रेम पाउ परत न राह रपटन की । —देव

सरासेत—वि० [फा० सरासर + हिं० सेत-श्वेत] पूर्णतया, प्रकाशमय ।
उदा० साँस लेत सरसे समूहन सुगंध लेत सारी की सिरी सों सरासेत मग ह्वै रहै ।—पद्माकर

सरीकिनि—संज्ञा, स्त्री० [अ० शरीक] साथ देने वाली, सहेली, सखी ।
उदा० देखन दे हरि को भरि नैन घरी किन एक सरीकिनि मेरी । —देव

सरीसृप—संज्ञा, पु० [सं०] सर्प, साँप, २. रेंगने वाला जंतु ।
उदा० छुद्र मति छीछी को, समुद्र रुद्र रोर घोर बीछी बिग केसरी करी सरीसृपन को । —देव

सरुखाई—वि० [फा० सर=पराजित] पराजित, दमित, वशीभूत ।
उदा० मुख की रुखाई सनमुख सरुखाई, परुखाई यों न पाई सुरुखाई सुरुखाई सी । —देव

सरूक—संज्ञा, पु० [?] अनुमान, अंदाज २. सलूक, आचरण, व्यवहार [अ०] ।
उदा० जानत है कि न जानत हैं कोई यों न जरै नर नारि सरूकन । —ठाकुर

सरोकदार—वि० [फा० सुर्ख + दार] लालरंग वाले, सुर्खदार, रक्तिम ।
उदा० चंचल चलाक चारु चौंपन चटक भरे, चोंकत चमंकें चलें सजल सरोकदार ।
—ग्वाल

सरोट—संज्ञा, पु० [हिं० सिलवट] कपड़ो में पड़ी हुई शिकन ।
उदा० चुप करिए, चारी करत सारी परी सरोट ।
बिहारी

सरौटी—संज्ञा, स्त्री० [सं० शिल + हिं० औटी प्रत्य०] सिलौटी, पाषाण खंड जिस पर मसाला आदि पीसा जाता है ।
उदा० पीढ़ा, पलिङ्ग मचान दुमेजा तखत सरौटी । —सूदन

सर्भ—संज्ञा, पु० [सं० शरभ] १. हाथी का बच्चा २. राम की सेना का एक बंदर ३. टिड्डी ४. शेर ।
उदा० १. इक कर्भ पै इक सर्भ पै खर अर्भ पै सतुरंग पै । —समाधान

सल—संज्ञा, स्त्री० [सं० शल्य] शूल, पीड़ा २. माला ।
उदा० आठ सदा पटरानी लगै हिये, तापै मनोभव की न कटै सल । —बेनी प्रवीन

सलाक—संज्ञा, पु० [सं० शलाका] तीर, बाण ।
उदा० शुद्ध सलाक समान लसी अति रोषमयी दृग दीठि तिहारी । —केशव

सलुंभ—संज्ञा, पु० [सं० लोभ] लालच, लोभ ।
उदा० रतन सुतन अवलोकि लोक पतिमान सलुंभहि । —मतिराम

सलूक—संज्ञा, पु० [सं० सालोक्य] सालोक्य, वह मुक्ति जिसमें मुक्त जीव ईश्वर के साथ एक लोक में वास करता है ।
उदा० बरी ही वियोग बिरहागिन-भभूकन में, ता पर सलूक लूक लाखन दियौ चहै ।
—ग्वाल

सलोट—दे० सरोट ।

सलोनो—संज्ञा, पु० [बुं०] श्रावण पूर्णिमा का दिन, रक्षाबंधन, कजली का त्योहार ।
उदा० आजु शुभ सावन सलोनो की परब पाय, अंग, अंग सुभग सिंगारन बनैहौं मैं । — ठाकुर

सवागनि—वि० [सं० सौभाग्य] सौभाग्यवती सोहागिनी ।
उदा० जब तें इन सौत सवागनि ने मुखसों मुख जोरि लियो रस री । —रसखानि

ससना—क्रि० स० [सं० श्वास] दुख की सांस लेना, सुसकना, आहें भरना, उसास लेना ।
उदा० जैसे मीन बिनु जल क्यौंहूँ न परति कल सुंदर विकल भई वेसुधि ससति है ।
—सुन्दर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ससहरि—वि० [फा० शशदर] भयभीत, संत्रस्त।
उदा० होत उदय सीस के भयो मानो ससहरि सेत। —बिहारी

ससिसन– वि० [सं० स+शिश्न] १. सशिश्न लिंग सहित २. चन्द्रमा की भाँति।
उदा० अबला लै अंक भरै रति जो निदान करै ससिसन सोभावंत मानिये जोधन मैं।
—सेनापति

ससेट—संज्ञा, पु० [हिं० सरसेट] डर, भय संकुचन।
उदा० कंप कुबेर हिये सरसो, परसे पग जात सुमेरु ससेट्यौ। —नरोत्तमदास

सहजोर—संज्ञा, पु० [सं० सह=साथ+हिं० जोड़] साथ देने की क्रिया, साथ जोड़ना, साथ देना।
उदा० गावत मलारें, सुनि मुख की पुकारें जोर, झिल्ली झनकारें, धुनि करें सहजोरे की।
—ग्वाल

सहन—संज्ञा, पु० [अ०] आँगन, मकान के बीच में या सामने खुला हुआ भाग।
उदा० ऊपर महल के सहन परजंक पर बैठी पिय प्रेम की पहेलिका पढ़त भौं।
—बेनी प्रबीन

सहबात—संज्ञा, स्त्री० [सं० सह+वार्ता] मेल की बात, संधि की बात।
उदा० क्योंहूँ सहबात न लगै, थाके भेद उपाइ
बिहारी

सहर—क्रि० वि० [हिं० सहारना] धीरे, रुक रुक कर, मंद।
उदा० सहर सहर सोंधों, सीतल समीर डोलै, घहर घहर घन घेरिकै घहरिया। —देव

सहरना—क्रि० अ० [सं० सह] सहन करना, धैर्य रखना।
उदा० मुरली बजाइ बन पुर सुर लीन करै, वृन्दावन वासिन को वृंदु क्यों सहरि है।
—देव

सहल—वि० [सं० सरल] १. तुच्छ, नगण्य, साधारण २. मलने की क्रिया [संज्ञा, पु०]
उदा० १. दोऊ अनुराग भरे आये रंग भौन भाग, मघवा सची को लखि लागत सहल है।
—देव
२. गारि राखै केसरि प्रवीन बेनी मृगमद, अगर तगर अंग चंदन सहल मैं।
—बेनी प्रबीन

सहसपान—संज्ञा, पु० [सं० सहस्र + पर्ण] सहस्रदल, कमल।
उदा० सहसपान निद्रा तज्यो, खुले पीत मुख बंदि। —दास

सहसह—वि० [सं० सहस्र] सहस्रों, हजारों।
उदा० सह सह समर की बह बह बीजु मई तहँ तहँ तिय प्रान लीबे की खबरि है।
—दास

सहाबी—संज्ञा, स्त्री० [अ० शहादत] साक्षी, गवाही।
उदा० हँसि कै हँसाय दीन्हो मुख मोरि सिवनाथ सखी सों सहादी दै दै साँवरी हहा करी।
—शिवनाथ

सहाब—संज्ञा, पु० [फा० शहाब] लालरंग, रक्त वर्ण।
उदा० कोमल गुलाब से सहाब से अधिक आब गोल गोल सोभित सुबेस स्वच्छ हेरे हैं।
—पजनेस
मनि पजनेस जपा जायक सहाब आब स्वच्छता अनूप लसै छाजत छटा की है।
—पजनेस
साहिब सहाब के गुलाब-गुड़हर-गुर, ईंगुर-प्रकास दास लाली के लरन हैं।
—दास

सहिदानि—संज्ञा, स्त्री० [सं० सज्ञान] चिह्न, निशान।
उदा पायो कछू सहिदानी सँदेस तैं आइ कि प्यारो मिल्यो सपने में। —दास

सहिया—संज्ञा, पु० [बुं०] कीड़ा।
उदा० अधिरात भई हरि आये नहीं हमें ऊमर को सहिया करिगे। —ठाकुर

सहु—वि० [हिं० सब] सब पूर्ण।
उदा० नागरि आगरि हौ सहु भाँति तुम्हैं अब कौन सी बात पढ़ैये। —घनानन्द

सहेट—संज्ञा, पु० [सं० संकेत] वह संकेत या निर्दिष्ट स्थल जहाँ नायक और नायिका मिलते हैं, एकान्त स्थल।
उदा० आपनी ठौर सहेट बदौ तहं हौं ही भले नित भेंट कै ऐहौं। —दास

सहेटी—वि० [हिं० सहेट] संकेत स्थल, या मिलन-स्थल पर जाने वाला, घुमक्कड़, शैलानी।
उदा० ढीठि भई मिलि ईठि सुजान न देहि क्यों पीठि जु दीठि सहेटी। —घनानन्द

साँक—वि० [सं० शंकित] शंकित, भयभीत।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० जम्बुवती पति सों सतभामिनि, कामिनि साँक ह्वै नाक मरोरी । ——देव

साँकरे——संज्ञा, पु० [सं० संकट] १. संकट, कष्ट २. जंजीर ।

उदा० यह कैसो निसाकर मोहि बिना पिय साँकरे कै जिय लैन लग्यो । ——दास

साँका——संज्ञा, स्त्री० [सं० शंका] शंका २. संत्रस्त [वि०], भयभीत, शंकित ।

उदा० झाँका करै नंदराम त्यों घूंघट सांका करे लखि नेक न जीको । ——नंदराम

साँझी——संज्ञा, स्त्री० [?] देवालयों में जमीन पर सावन मास में की गई फूल-पत्तों आदि की सजावट ।

उदा० पुजावति साँझी कीरति माय, कुँवरि राधा का लाड़ लड़ाय । ——घनानंद

साँट——संज्ञा, स्त्री० [?] सौदा बेचने की बात चीत ।

उदा० लोभ लगे हरि रूप के करी सांट जुरि जाइ । ——बिहारी

रूप की साटि कै तौलति घाटि बदै अनवाद ददै फल जूठे । ——देव

सांथर——संज्ञा, स्त्री० [?] बस्ती ।

उदा० देस नगर साँथर गढ़ ग्राम । सेख विना मेरे किहि काम । ——केशव

साँधना——क्रि० स० [सं० संधान] खोज करना, संधान करना ।

उदा० साँझ समै न रहै रफ भानु की तासमै या को सुखाइबो साँधै । ——बेनी प्रवीन

साँवरोइन्दु——संज्ञा, पु० [सं० श्याम = कृष्ण + इंदु = चन्द्र] कृष्णचन्द्र ।

उदा० 'दास' कियो छंदारनव, सुमिरि साँवरो इंदु । ——दास

साउथ——संज्ञा, पु० [सं० सामंत] वीर, योद्धा, सामंत ।

उदा० रणसूर मयूर घनै चिहरैं । घुरवा झुक साउथ से बिहरैं । ——बोधा

साक——वि० [सं० शंका] शंकित, भयभीत ।

उदा० जम्बुवती पति सौं सतिभामिनि, कामिनि साक ह्वै नाक मरोरी । ——देव

साकरना——क्रि० स० [सं० स्वीकरण] स्वीकार करना, मंजूर करना ।

उदा० या मुख साकरे लाज की साकरै नाकरै नै नग साँकरै मौहे । ——देव

साकूत——वि० [सं० स + आकूत = आशय] आशय युक्त, तात्पर्य सहित ।

उदा० सूदम परासै जानि इंगित साकूत करै, कोस मैं चलायो कर कमल को कोस है । ——दूलह

साखन——संज्ञा, पु० [सं० शाका + हिं० न] प्रसिद्धि, धाक, रोष ।

उदा० कीजत फिराद सुनि लीजिये हमारी गंगा साखन के साथी दुख दिग्गज डिगाए तूं । ——पद्माकर

साखाबिलासी——संज्ञा, पु० [सं० शाखाविलासी] शाखामृग, बन्दर, मर्कट ।

उदा० उठ्यो सो गदा लै जदा लंकबासी । गये भागिकै सर्ब साखा बिलासी । ——केशव

साग——क्रि० वि० [सं० संग] संग, साथ ।

उदा० किधौं राम लछिमन द्वै साग । मन क्रम बचन किधौं अनुराग । ——केशव

साचली——वि० [हिं० सच्ची, साँच + ली] सच्ची सत्य ।

उदा० काली नाग नाथ्यो संखचूर चूर कियो अघ अजगर मार्‌यो पूतना की बात साचली । ——देव

सातकुंभ——संज्ञा, पु० [सं० शातकुंभ] स्वर्ण, सोना ।

उदा० राजत अरुन सरोज हैं, मानहुँ रंगे कुसुंभ । जोबन मद गज कुंभ के, सातकुंभ से कुंभ ।। ——मतिराम

साथ——संज्ञा, पु० [सं० सार्थ] समूह, संघ ।

उदा० दीजै चित सोई, तरे जिहिं पतितनु के साथ । ——बिहारी

साथर——संज्ञा, पु० [देश०] विस्तर, बिछौना २. कुश की बनी चटाई ।

उदा० साथर ही दृग-पाथ रही घुरि पाथर ही तन हाथ रही है । ——देव

साद——वि० [अ०] १. पुनीत, श्रेष्ठ २. शुभ मुबारक ।

उदा० १. बाद कियो वहि चंदहि मैन मनोहक चंदहि साद कियो है । ——तोष

साधनाँ क्रि० स० [सं० साधन] शोधना, शुद्ध करना, सुगन्ध आदि से शरीर को शुद्ध करना ।

उदा० आओ चलौ देखियै जू लेखियै जनम धन्य, केसर गुलाल सों सरीर साधियतु है । ——ठाकुर

साधि——क्रि० वि० [हिं० साध] सौत्साह सोल्लास, इच्छापूर्वक, प्रेमपूर्वक ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० भोरही तैं उठि साँझ लौं साधि करे गृह काज सबै मन भाये । —प्रतापसाहि

साना—संज्ञा, पु० [सं० सानु] चोटी, शिखर

उदा० लुके भूड़ माना गई आसमाना बड़े विंध्य-साना भए धूरि धाना । —केशव

सामर—संज्ञा, पु० [सं० सम्बल] राह खर्च, कलेवा ।

उदा० ताको तू लै जाय नियारे सामर दूध महेरो । —बकसीहंसराज

सामां—संज्ञा, पु० [सं० श्यामा] १. श्यामा नाम का पक्षी जो बहुत मधुर वाणी बोलता है २. सामान ।

उदा० सामां सेन, सयान की सबै साहि कै साथ । बाहुबली जय साहिजू, फते तिहारैं हाथ । —बिहारी

सामा—संज्ञा, स्त्री [सं० सामर्थ्य] १. सामर्थ्य, २. सामान ३. व्यवस्था ।

उदा० १. हम तो हैं बामा औ न जोग की है सामा ऊधौ । उन्हैं जोग जोग है जु कांख लीनी कूबरी । —सूरतिमिश्र

२. छांडि न आयो मै एकहुवार की भौन में भोजन की कछु सामा । —नरोत्तमदास

३. धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पाय उपाहन की नहिं सामा । —नरोत्तमदास

चिन्तामनि कामधेनु औरन के दैन काजैं । सामा करिबै कौं आये धामा दसरथ के । —सूरतिमिश्र

सामुहे—अव्य० [सं० सन्मुख] सामने, प्रत्यक्ष ।

उदा० पीछे-पीछे डोलत हैं सामुहें ह्वै बोलत है । —देव

सायक—संज्ञा, पु० [सं०] १. खड्ग तलवार २. बाण ।

उदा० सायक एक सहायकर जीवनपति पर्यन्त तुम नृपाल । पालत क्षमा जीति दुश्मन बर्बत । —कुमारमणि

सायबान—संज्ञा, पु० [फा० साय:बान] मकान के आगे की छप्पर या छाजन जो छाया के निमित्त बनाई जाती है ।

उदा० कढ़ि गयो मान अब माँगती हौ सायबान मैन-मद पोखी तेरी नोखी रीति जानिये ।

—दूलह

दूहूँ ओर चवँर चलावैं सखी चौंरदार सायेबान संग सो झुकावैं हीं जुलावहीं । —नागरी दास

सारंग—संज्ञा, पु० [सं०] १. वीणा २. घोड़ा ३. चंदन, ४. पुष्प ५. दीपक ।

उदा० गाउ पीठ पर लेहु अंगराग अरु हार करु । गृह प्रकास करि देहु, कान्ह कहयो सारंग नहीं । —काशिराज

सार—संज्ञा, पु० [?] १. एक प्रकार का रेशमी वस्त्र २. तलवार खड्ग ३. लकड़ी का ही पक्की लकड़ी ।

उदा० १. सार की सारी सो भारी लगै धरिबे कहँ सीस बघम्बर पैया । —रसखान

बगरे बार झीने सार मैं झलकति अधर नई अरुनई सरसानि । —घनानन्द

१. सादे मोती कंठ सोहैं पंचरंग अंग चारु, सुरग तरौटा सोहै सारी सार सेत की । —आलम

२. देव गुमान गयंद चढ़यो जग सौं अहंकार को सार ले जूझयो । —देव

३. सुरतरु सार की सँवारी है बिरंचि पचि कंचन रचित चिन्तामणि की जराइ की । —सेनापति

सारतार—संज्ञा, पु० [सं०] श्रेष्ठ मोती ।

उदा० सेनापति अतर, गुलाब, अरगजा साजि, सार तार हरि मोल ले लै धारियत हैं । —सेनापति

सारदसिरी—संज्ञा, स्त्री० [?] बसौंधी दूध की बनी वस्तु ।

उदा० खारिक खरी को मधुह की माधुरी कों सुभ सारदसिरी को मीसरी को लूटिलाई सी । —पद्माकर

सारना—क्रि० स० [हिं० सरना] १. सुन्दर बनाना, सुशोभित करना २. समाप्त करना ३. बताना, याद दिलाना [सं० स्मरण]

उदा० १. सारद सिंदूर सिर सौरभ सराहैं सब सेन साजि संकुल प्रभा सी सारियत है । —गंग

२. केस पर सेस, दृग चलन पर खंजनी भौंह पर धनुष धरि सुरति सारीं ।—गंग

३. अति लंगर अति निठुर ढीट यह हसि हँसि बातन टारै । कहत बनाय पाँच की सातक अपनो नांव न सारै ।

—बकसीह सराज

सारस—संज्ञा, पु [सं०] १. कमल २. एक बड़ा पक्षी ३. चन्द्रमा ४. वि० [सं० स+आलस्य] आलस्य बलित ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० सारसनि सारस ने, सारस निरास, हंस सारस तुसार गिरि सार गुनियत हैं।
—देव

४. सारस सारस नैनि सुनि, चन्द्र चन्द्रमुखि देखि। —केशव

सारिख—वि० [सं० सदृश] सदृश, समान, तुल्य बराबर।

उदा० सोई लगी शशि के मुख कारिख औ तेहि सारिख कौन बतायो। —गुमान मिश्र

सारी—संज्ञा, स्त्री [सं० सारि] गोट, पासा।

उदा० सेजमैंन सारी सीहें सारीहूँ बिसारी सी है। —आलम

सालमंजी—संज्ञा, स्त्री०, [सं० शालमंजी] शालमंजिका, मूर्ति, गुड़िया।

उदा० तरुन तमाल तरु, मंजुल प्रबाल मींजि-मंजरी रसाल बाल मंजी सालभंजी सी
—देव

सासल्य—वि० [सं० स+शल्य] पीड़ा सहित, शल्य युक्त।

उदा० भक्ति भाव भक्तनि विषे, लघुनि प्रीति वात्सल्य। कार्पण्यं निजजन कृपण, सांति सोक सासल्य। —देव

सासौ—संज्ञा, पु० [हिं० सांसत] संकट, घोर कष्ट।

उदा० अरु तुम कमलजोनि तैं छूटौ। श्राप ताप कौ सासौ तूटौ। —जसवंतसिंह

साहि—संज्ञा, पु० [फा० शाहीं] १. एक प्रकार का बाज २. शाहजहाँ बादशाह।

उदा० सामौं, सेन, सयान की सबै साहि कै साथ।
—बिहारी

सिकलना—क्रि० स० [हिं० सकेलना] एकत्रित होना, इकट्ठा होना।

उदा० अकबर साहि जू के महाबली दानसाहि, रावरे सिकार ए तो दल सिकलत है।
—गंग

सिखंड—संज्ञा, पु० [सं० शिखंड] १. मोरपंख, मयूर की पूंछ २. चोटी।

उदा० १. सोई घनआनँद सुजान रूप को पपीहा, सोभा सींव जाके सीस मंडित सिखंड है। —घनानन्द

सुखचीनी—संज्ञा, पु० [सं० चीनांशुक, चीनी + सुख] एक प्रकार का रेशमी वस्त्र जो चीन देश से आता था।

उदा० चषमति सुमुखी जरद कासनी है सुख, चीनी स्याम लीला माह काविली जनाई है। —बेनीप्रवीन

सुखदायक—संज्ञा, पु० [सं०] १. देवराज, इन्द्र २. सुख देने वाले।

उदा० गणपति सुखदायक पशुपति लायक, सूर सहायक कौन गनै। —केशव

सुगथ—वि० [सं० सुग्रथ] सुन्दर तरह से गुथे गये, सुन्दर ढंग से जोड़ मिलाये गये।

उदा० इहिं द्वैहीं मोती सुगथ तूं, नथ, गरबि निसाँक। —बिहारी

सुचंद—वि० [?] श्रेष्ठ, उत्तम।

उदा० गुन-ज्ञान-मान सुचंद है। नित करत खल-मुख मंद है। —पद्माकर

सिखावान—संज्ञा, पु० [सं० शिखावान] अग्नि, आग।

उदा० सिखावान-कर-कलित जलज अच्छत सिर सोहै। —केशव

सिखिचंद—संज्ञा, पु० [सं० शिखि चन्द्र] मयूर चंद्रिका, मोर चंद्रिका।

उदा० कवि 'आलम' भाल के उरध यों उपमा सिखि चन्द्र की पंति धरी। —आलम

सिखी—संज्ञा, पु० [सं० शिखिन्] अग्नि, पावक २. मोर ३. कामदेव।

उदा० सिखी को जार्‌यो जियै सिंह को विदार्‌यो जियै बरछी को मार्‌यो जियै वाको भेद पाइयै। —बोधा

सिख्या—संज्ञा, स्त्री० [सं० शिष्या] शिष्या, चेली।

उदा० चेदिपति खेदिपति राख्यौ ब्याह वेदिक, हौं अन्तर निवेदि, देव दासिनु की सिख्या हौं। —देव

सिगरफ—संज्ञा, पु० [१. ईगुर।]

उदा० केसरि सुरंग सिंगरफ सों रँगीले डील, डहडहे सील के जे आनद सुहेले में।
—सोमनाथ

सिजित—संज्ञा, स्त्री० [स०] करधनी, कमर में पहनने का एक आभूषण २. आभूषणों की ध्वनि।

उदा० भ्रू व मटकावति नैन नचावति। सिंजित सिसिकिन सोर मचावति॥ —दास

सिदूख—संज्ञा, स्त्री० [अ० संदूक] अंबारी, हाथी की पीठ पर रखने का हौदा जिसके ऊपर एक छज्जेदार मंडप होता।

उदा० सोने की सिदूख साजि सोने की जलाजले

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जु सोने ही की घांट घन मानहु बिभात के।
—केशव

सिंधूप—संज्ञा, पु० [सं० सिंदूर पुष्पी] एक प्रकार का पौधा जिसमें लाल फूल लगते हैं वीर पुष्पी।

उदा० आछो फूल सिंधूप को आछे पिय के हाथ चले बाम के धाम को मोतन चितवत जाथ। —मतिराम

सिंहोदरि—वि० [सं० सिंह + उदर] सिंह के समान क्षीण कटि वाली।

उदा० सकल सिंगार करि सोहै आजु सिंहोदरि, सिंहासन बैठी सिंहबाहिनी भवानी सी।
—देव

सिता—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १. चीनी, खांड़, शक्कर २. मिश्री।

उदा० सुनि मुनि नारि, उठि धाई मनुहारि करि, सिता दधि पायस परसि ल्याई थार में।
—देव

सिताब—संज्ञा, स्त्री० [सं० सिता=मल्लिका + फा० आब=मकरंद कांति] मोतिया या १. मल्लिका का मकरंद।

उदा० माधवी न मालती में, जुही में न जोयत में, केतकी न केवड़ा में, सरस सिताब में।
—ग्वाल

सिताबी—संज्ञा, स्त्री० [फा० शिताब] जल्दी, शीघ्रता।

उदा० कूबरी को कूब काटि लाय दे सिताबी हमैं, टोपी कर ताकी तब गोपी जोगनी बनैं।
—ग्वाल

सिपर—संज्ञा, स्त्री० [फा०] ढाल, वह अस्त्र जिससे तलवार की चोट या प्रहार रोका जाता है।

उदा० सार के प्रहार सांग सिपर ललार पेलि, ऐसे ठौर सिरदार सोर हूय हर के।
—गंग

सिप्पै—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार की छोटी तोप २. निशाना [फा०]।

उदा० छुटे सब्ब सिप्पे करैं दिग्ध टिप्पे सबै सत्रु छिप्पे कहूँ हैं न दिप्पे। —पद्माकर

सिफाकंद—संज्ञा, पु० [सं०] कमलकंद।

उदा० किधौं पद्महीं में सिफाकंद सोहै। किधौं पद्म के कोष पद्मा विमोहै। —केशव

सिय—संज्ञा, स्त्री० [सं० श्रिया] शोभा, प्रभा २. मंगल, कल्याण।

उदा० पांवड़े डराये द्वार कलस धराए चारु अमित कराए सोभा तोरन के सिय की।
—रघुनाथ

सिरकटा—संज्ञा, पु० [हिं० सिर + कटना] १. शृगाल, २. दूसरे का अनिष्ट करने वाला (वि०)

उदा० १. साहस की ठौर भीर परे तैं सिरकटा है, सकतिन हू सौं लरिकानि कौं तजत हैं।
—सेनापति

सिरकत—संज्ञा, स्त्री० [प्र० शिर्कत] साझेदारी, भागीदारी २. सहयोग, सम्मिलन।

उदा० माला यह लीजै मंत्र दीजै दंडवत करौ मंत्र लै रहौ न गुरुदेव सिरकत हौ।
—देव

सिरगा—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का घोड़ा।

उदा० सिरगा झुकि झरत बैरि बिदारत निपट निकारत अति न्यारी। —पद्माकर

सिरदच्छी—वि० [सं० सदृश] समान, सदृश।

उदा० तेरी सी आंकि तुही नहि आनत काम की कामिनी तो सिरदच्छी। —गंग

सिरनेत—संज्ञा, पु० [सं० शर=चिंता + नियति=संकल्प] १. चिंता में जलने का संकल्प, इरादा २. साफा, पगड़ी।

उदा० १. त्यौं सिरनेत सती धरि कै घर के फिरिबे कहें चित्त धरैं ना। —बोधा
२. कढ़ि खेत में ठाढ़ो भयो सिरनेति धरि तेहि बार। —बोधा

सिरिफ—वि० [अ० सिर्फ] १. शुद्ध, २. पवित्र केवल, मात्र।

उदा० १. घांघरो सिरिफ मुसुरू को सो हरित रंग अंगिया उरोज डारे हीरन के हार को। —तोष

सिरी—वि० [सं० शीत] शीतल, ठंडा।

उदा० तुमही अकेली और संग न सहेली कहि तोष तूं नवेली कासो होती सिरी तासि हौ। —तोष

सिरे—वि० [हिं० सिर] श्रेष्ठ, बढ़कर।

उदा० पद्माकर स्वादु सुधा तें सिरै मधु तें महा माधुरी जागती हैं। —पद्माकर

सिलसिली—वि० [सं० सिक्त] १. चिकना २. आर्द्र गीला ३. फिसलनदार।

उदा० १. ऐसी सिलसिली ओप सुंदर कपोलनि की खिसिल खिसिल परै डीठि जिन पर ते।
—सुन्दर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिलहखाना—संज्ञा, पु० [अ० सिलाह + खाना] १. शस्त्रागार २. जिरह बकतर, कवच ।
उदा० सूकर सिलह खाने फकत करीस हैं ।—भूषण
सिलाह—संज्ञा, पु० [अ०] कवच, २. हथियार ।
उदा० सिरमौर गौर गराजि कै सोभित सिलाहैं साजि कै । —पद्माकर
सिलाही—संज्ञा, पु० [अ० सिलाह] कवचधारी, शस्त्रधारी, सैनिक ।
उदा० झमकत आवै झुंड झलनि झलान झप्यो, तमकत आवै तेगबाही औ सिलाही ।
—पद्माकर
सिहाना—क्रि० अ० [सं० ईर्ष्या] १. हर्षित होना, २. ईर्ष्या करना ३. प्रतिस्पर्धा करना ।
उदा० १. अब तातें धरौ हमारे उर निज इक कर कमल सिहाने । —सोमनाथ
सिहारना—क्रि० स० [देश०] १. ढूंढ़ना, तलाश करना २. जुटाना ।
उदा० संकमरी परजंक पलोटति अंक भरो किन स्याम सिहारी । —चन्द्रशेखर
सी—संज्ञा, स्त्री० [सं० श्री] श्री, शोभा, कांति, छवि ।
उदा० रति तो धरू कै है, रमासी एक टूकै, सो मरू कै हौं सराहौं हौंस राधे के सुहाग की । —देव
नैसिक सी पै निकाइन की निधि ऐसी रसी बिधि कैसी ढरैगी । —देव
सीक—संज्ञा, स्त्री० [फा० सीख] लोहे की पतली लम्बी छड़ ।
उदा० बीच बीच सुबरन की बनी । सीकैं गज-दंतन को घनी । —केशव
सीचन्द—वि० [?] बढ़कर उत्तम श्रेष्ठ ।
उदा० चन्द ते सिचन्द मुख उमल उमंद अति, बैठे चंद ब्रजचंद पूरन सरद में । —ग्वाल
सीझना—क्रि० अ० [सं० सिद्ध] १. पूरा होना २. पकना, चुरना ।
उदा० सीझी यहै बात जाते राख पीरे गात भये सीझी नहीं कान्ह तुम्हें रीझी यह बाधु है ।
—केशव
सीठी—वि० [सं० शिष्ट] फीकी, स्वाद रहित नीरस ।
उदा० मोतें उठी है जो बैठे अरीन की सीठी क्यों बोलौ मिताइल्यौ मीठी । —दास
जा छवि आगे छपाकर छांछ बिलोकि सुधा बसुधा सब सीठी । —देव
सीथ—संज्ञा, पु० [सं० सिक्थ] भात का दाना ।
उदा०—बंस की बिसारी सुधि कोक ज्यौं चुनत फिरौ जूठे सीठे सीथ सठ ईठ दीठ ठाये हौ ।
—केशव
सीमंत—संज्ञा, पु० [सं० सीमन्तोन्नयन] सीमन्त संस्कार, ब्राह्मणों के दस संस्कारों में एक संस्कार, जो स्त्री के प्रथमतः गर्भवती होने पर मूल शांति के निर्मित चौथे, छठवें या आठवें महीने में होता है । २. स्त्रियों की मांग ।
उदा० कन्त चौक सीमन्त की, बैठी गांठि जुराय पेखि परोसिनि कौं प्रिया, घूंघट में मुसकाय
—मतिराम
सीर—संज्ञा, पु० [फा० शीर] १. खीर दूध २. शीतल [वि०, सं० शील] ३. जल ।
उदा० १. कोऊ एक ऐसो होहु मेरो ज्यो लैतो में देहु, सीर सी सिराई राति जाति है दई दई । —गंग
२. बीर सीर कहत न बनै, धीर कौन ठहराय जो जानै जाकै लगैं, दृग बिसहारे हाय । —नागरीदास
३. बाढ़ी प्रेम घटानि, नैन सीर को झर लग्यौ । —ब्रजनिधि
सीरे—वि० [सं० शीतल], शीतल क्षीण, नष्ट ।
उदा० ग्वाल कवि कहैं कीर कैदी में किये हैं केते तीर पंचतीर के तके ते होत सीरे से ।
—ग्वाल
सीराजी—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का कबूतर
उदा० गोरे तन कारे चिकुर, छुटे पीठ छवि देत । सीराजी राजी मनौ न्हाय फुरहरी लेत ।
—नागरीदास
सीवी—संज्ञा, स्त्री०, [अनु० सीसी] सिसकारी, रुदन की आवाज सीत्कार ।
उदा० मन में विराम, तब बन मै विराम कैसो, छांड़यो जब घाम सीत घाम तब सीवी कहा । —देव
सीवैं—संज्ञा, स्त्री०[सं० सीमा], सीमा हद, निकट पास ।
उदा० ताल तें बागिन बाग तें तालनि ताल तमाल की जात न सीवैं । —केशव
सुंडाहल—संज्ञा, पु० [सं० सुंडाल] हाथी ।
उदा० सुन्दर चाल निरख सुंड़ाहल धूर सीस पर डारै । —बकसी हंसराज
मृगपति देखि ज्यों, भजत झुंड सुंडाल को ।
—दास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुंडान—संज्ञा, पु० [सं शुंडिन] हाथी ।
उदा० भूपर भूप हुते जिते ते सब फिर्‌यो बखान
राना हय दीन्हैं, तिन्हैं दाना देइ सुंडान ।
—गंग

सुकति—संज्ञा, स्त्री० [सं० शुक्ता] शुक्ता, सीपी २. सूलि, सुन्दर उक्ति ।
उदा० किधौं रसबातनि कौं रसायन राखे भरि
सोने की सुकति किधौं सुवन सुबाम है ।
—केशव

सुकैचो—वि० [सं० संकुचन] सिमटी हुई संकुचित ।
उदा० लौद सी लंक लचै कचनार संभारत चूनरी
चारु सुकैंची ।
—पद्माकर

सुकैसी—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुकेशी] १. इन्द्र की एक अप्सरा २. सुन्दर केशों वाली नायिका
उदा० पेखे उरबसी ऐसी और है सुकैसी देखी दुति
मैनका हू की जो हियरैं हरित है ।
— सेनापति

सुख—वि० [बुं०] सहज, स्वाभाविक ।
उदा० जाके सुख मुखबास ते बासित होत दिगन्त ।
—केशव

सुखपाल—संज्ञा, पु० [सं०] एक प्रकार की पालकी ।
उदा० गरुड़ विमान त्यागे हय गय रथ त्यागे
सुखपाल त्यागि सुखमानन अतोलते ।
—ब्रजनिधि

सुखमीलो—वि० [सं० सुषुमा] सुषुमा से युक्त, सौन्दर्यपूर्ण, सुन्दरी ।
उदा० निरखि नवीन बैस बारिज बलित माल
सेखर सुबैन पान कंज सुखमीली के ।
—चन्द्र शेखर

सुखबक्ता—संज्ञा, पु० [सं० सुख + वक्ता] मीठा बोलने वाला, चाटुकार, खुशामदी ।
उदा० जोई अतिहित की कहै, सोई परम अमित्र
सुख वक्ताई जानिये, संतत मंत्री मित्र ।
—केशव

सुखसात—संज्ञा, पु० [सं० सप्त + सुख] सात प्रकार के सुख, यथा—खान, पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा तथा संयोग ।
उदा० बहबह्‌यो गंध, बहबह्‌यो है सुगंध, स्वास
महमह्‌यो, आमोद विनोद सुख सात के ।
—देव
एकहि बेर न जानिये केसव, काहे ते छूटि
गये सुख सातौ ।
—केशव

सुखासन—संज्ञा, पु० [सं०] सुखपाल नाम की सवारी ।
उदा० सुखद सुखासन बहु पालकी । फिरक
बाहिनी सुख चाल की ।
—केशव

सुखित—वि० [सं० शुष्क] १. शुष्क, सूखा २. आनंदित ।
उदा० जाही के अरुन कर पाइ अब नित पति,
सुखित सरस जाके संगम कौं पाइ कै ।
—सेनापति

सुखिर—संज्ञा, पु० [देश०] साँप का बिल ।
उदा० सुखिर आनंद घन जंत्र संचरित रव संकु-
लित सुर चकित थकित चित तुमुल मचि ।
—घनानन्द
याकी असि साँपिनि कढ़त म्यान सुखिर
सों, लहलही श्याम महा चपल निहारी है ।
—गुमान मिश्र

सुगनराय—संज्ञा, पु० [सं० सुगंधनराज] गंध-राज नाम का एक पुष्प, सुगंधन राज, चमेली ।
उदा० बैठी हुती जु बिरहनी फिरकै देहु मनाय ।
मेरे आए हे सखी लिये सुगंधनराय ।
—मतिराम

सुगाना—क्रि० अ० [देश०] संदेह करना, शक करना ।
उदा० औगुन गनैया लोग सौगुन सुगातु हैं ।
—आलम

सुगुनाना—क्रि० अ० [?] उद्‌बुद्ध होना, जगना ।
उदा० कहि ठाकुर भागि सँजागिन की उनही के
हिये सुगुनान लगे ।
—ठाकुर

सुगैया—संज्ञा, स्त्री० [बुं०] चोली, कंचुकी ।
उदा० मोहिं लखि सोवत बिथोरिगो, सुबेनी बनी,
तोरिगो हिये को हार, छोरिगो सुगैया को ।
—पद्माकर

सुघराई—संज्ञा, स्त्री० [ब्रज] चतुराई, निपुणता, २. सुन्दरता ।
उदा० १. वाही घरी तें न सान रहै न गुमान
रहै न रहै सुघराई ।
—दास

सुचै—वि० [सं० शुचि] स्वच्छ, साफ, निर्मल, पवित्र ।
उदा० तहाँ रस के बसि आरस में सु गये तजि
संगम सैन सुचैते ।
—आलम

सुचै—संज्ञा, पु० [सं० सु + चय] राशि, समूह ।
उदा० नखनाहर बंक हिये हरि के जटित म्यनि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैं उपमाहिं सुचै । — आलम

सुजनी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सजनी] प्रियतमा, सुन्दरी, सजनी नायिका ।

उदा० कहीं लख चौपरा हरखें । कहीं सुजनीन कों परखें । — बोधा

सुठार—वि० [सं० सुष्ठु] १. सुडौल, सुंदर ।

उदा० छूटे बार टूटे कण्ठसिरी ते सुठार मोती ऐसे कुच बीच युगलोल ढुरि ढुरि जात । बेनीकवि

सुठैवा— वि० [हिं० सुठार, सं० सुष्ठु] सुडौल, सुन्दर, अँगुली के उपयुक्त नापवाली ।

उदा० रेवा नीकी बान खेत मुंदरी सुठैवा नीकी, मेवा नीकी काबुल की सेवा नीकी राम की । —श्रीपति

सुतहार संज्ञा, पु० [सं० सूत्रकार] बढ़ई, कारीगर ।

उदा० हीरन मनि मानिकन चुनी दै केहि सुतहार बनायो । बकसी हंसराज

सुथरी—वि० [सं० स्वच्छ] स्वच्छ, निर्मल २. सुन्दर ।

उदा० हा सुथरी पुतरी सी परी उतरी चुरि चूमि लगी चटकावन । —पजनेस

सुदेस—वि० [सं० सु + देश] श्रेष्ठ, उत्तम, सुन्दर, श्रेष्ठ पद वाले, उच्च पद वाले ।

उदा० संपति केस, सुदेस नर नवत, दुहुनि इक बानि । —बिहारी

सुधरमा—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुधर्मा] देव-सभा ।

उदा० जाति न बरगनी प्रभा, जनक नरिंद सभा, सोभा ते सुधरमा तैं सौगुनी बिसेखियै । — सेनापति

सुधा—संज्ञा, पु० [सं०] चूना २. अमृत ।

उदा० फटिक सिलान सौं सुधार्‌यो सुधामंदिर । — देव

कित्ति सुधा दिग मित्त पखारत चंद मरीचिन को करि कूचो । — भूषण

सुधि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सुध] १. चेतना २. स्मृति ।

उदा० फिरि सुधि दै, सुधि द्याइ प्यौ, इहिं निरदई निरास । बिहारी

सुनानं—संज्ञा, पु० [सं० सु + अन्त] सुअन्त ।

उदा० चली लक्ख च्यारं सु संगं मिठारो पकावैं सुनानं सबै काम वारो । —जोधराज

सुनैना—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुलोचना] सुलोचना, मेघनाद की स्त्री ।

उदा० नीर भरे नैना बात काहू को सुनैना अति रोवत सुनैना नाह बाह को चितै चितै । —नंदराम

सुपास—संज्ञा, पु० [देश०] आराम, सुभीता ।

उदा० चेटकु देइ भुलाइ करै जु सुपास कौं । तौन विदूषक जौन करै परिहास कौं ।। — दास

सुबटना—क्रि० स० [सं उद्वर्त्तन] सुगंधन आदि का लेप करना, सरसों और चिरौंदी आदि के लेप को शरीर में मलना ।

उदा० खोलि कै कपाट दीने अन्तर कपट रंग रापटी मै ओट ह्वै सुगंध सुबटत ही । — देव

सुबुक वि० [फा० सुबुक] . सुन्दर, खूबसूरत २. हलका ।

उदा० सुबुक है कौनकार बूबू कहो लाख बार लाखहू के दीन्हें आंखि आंखि मैं मिलावो नार । —नंदराम

सुभंग—वि० [सं० सु भंग] बक्र, टेढ़ी ।

उदा० सिहरैं नव जोबन रंग अनंग सुभंग अपांगनि की गहरैं । —रसखानि

सुभवना क्रि० अ० [सं० सु + भ्रमण] घूमना, चक्कर काटना ।

उदा० अरी जाको लगी तन सो सुभवै कहा जानै प्रसूत बिथा बझरी । — तोषनिधि

सुभावक—वि० [सं स्वाभाविक] स्वाभाविक, प्राकृतिक ।

उदा० प्रीतम मीत अमीतनि सो मिलि प्रातहि आय हैं प्रीति सुभावक । —देव

सुमना—संज्ञा, स्त्री० [सं०] मालती का पुष्प ।

उदा० तासों मन मान्यो मधुप, सुमना सुमन बिसारि । —मतिराम

सुरंग— संज्ञा, पु० [सं०] . एक प्रकार का घोड़ा २. लाल रंग ।

उदा० आली तूं कहति है कुरंग दृग प्यारे के, सु आले हैं सुरंग अवलोकि उर आनिये । —दास

सुरकि—संज्ञा, पु० [सं० सुर] भाल की आकृति का तिलक जो नाक पर लगा होता है ।

उदा० हनत तरुन मृग तिलक सर सुरकि भाल भरि तानि । —बिहारी

सुरगना—क्रि० अ० [सं० सु + हिं० लगना] किसी वस्तु में लग जाना, चिपट जाना, आसक्त होना ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० उरग्यौ सुरग्यौ त्रिबली की गली गहि नाभि की सुन्दरता सँधिगौ। —ठाकुर

सुरतरंगिनी—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुरतरंगिणी] १. सरजू नदी २. आकाश गंगा।

उदा० बहु शुभ मनसाकर, करुणामय अरु सुरतरंगिनी शोभसनी। —केशव

सुरदारनि—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुर + दारा] देवाङ्गनाएँ २. सुन्दर स्वर वाले [सं० स्वर + फा० दार (प्रत्य०)]

उदा० त्योंही सुरदारनि मैं त्योंही सुरदारनि में, उदित उदार सुरदार विकसत हैं। —देव

सुरनै—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुर=देव + प्रा० नइ =नदी] देवनदी, गंगा।

उदा० अरु कंचन के गिरि ते सुरनै जुग धार धसी झुकि झूमत है। —तोष

सुरसिंधु—संज्ञा, पु० [सं०] १. क्षीर सागर २. देव नदी (स्त्री० लि०)

उदा० १. कहै पदमाकर बिराजै सुरसिंधु धार कैधौं दूध धार कामधेनुन के थन की। —पद्माकर

२. देखैं सुरसिंधु रन चढ़ैं सुरसिंधु रन, कूल पानिहू पियैं त्रिसूल पानि हूजियैं। —सेनापति

सुरूख—वि० [सं० सु + फा० रुख] १. उत्तम, २. सदय, अनुकूल ३. घुंघची ४. लाल।

उदा० अमल अमोलिक लालमय पहिरि विभूषन भार। हरखि हिये पर तिय धर्‌यो सुरुख सीप को हार। —पद्माकर

सुरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुर] देवत्व, देवत्व को प्राप्ति २. देवता जैसा अधिकार ३. देवाङ्गना।

उदा० १. सोचहू में सुख में सुरी में साहिबी में कहूँ। गंगा गंगा गंगा कहि जनम बिताइये। —पद्माकर

सुरुखाई—संज्ञा, स्त्री० [सं० रुचता] १. रूखापन २. सुर्खता, लालिमा।

उदा० मुख की रुखाई सनमुख सरुखाई परुखाई यौं न पाई सुरुखाई सुरुखाई सी। —देव

सुरोखे—वि० [सं० सु + रुष्ट] रुष्ट, नाराज।

उदा० आली के धोखे हौं आनी अनोखे, सुरोखे परी, पलका न परौंगी। —देव

सुरोचि—संज्ञा, स्त्री० [सं० सुरुचि] सुन्दरता, छबि।

उदा० विहँसी सब गोपसुता हरि लोचन मूँदी सुरोचि दृगंचल की। —केशव

सुलफ—वि० [सं० सु + हिं० लफना] लचकीला, लचनेवाला २. कोमल, मुलायम, सुंदर।

उदा० १. अंग सुगंध लगाय प्रीति सों जुलफैं सुलफ सँवारे। —बक्सी हंसराज

२. कंचुकि कसी ललित घनबेली मंडित सुलफ किनारी। —बकसी हंसराज

सुलाखन—वि० [सं० सुलक्षण] १. सुलक्षण, सुन्दर लक्षणों वाला २. सुराख, छिद्र ३, लक्ष, लाख।

उदा० देव सुसील सुलाखन ह्वै के, सुलाखन ही लहिये घर बैठे। —देव

सुवा—संज्ञा, स्त्री० [सं० सु + वास] सुवास, सुगंध २. शुक, तोता।

उदा० १. दीप की यों तन दीपति की अरु धूम सुवा दुहु हूँजन लागी। —तोष

सुसुमित—वि० [सं० सस्मित] मुसकराहट युक्त, हँसीयुक्त।

उदा० देव दुरीगाइ आकुलाइ सुसुमित मुखी, कुसुमित बकुल कदंब कुल कुंज में। —देव

सुसो—संज्ञा, पु० [सं० शश] खरगोश, खरहा।

उदा० सुसो एक उठि भागौ तबै। ता परि कूता छोड़े सबै। —जसबंतसिंह

सुहाग—संज्ञा, पु० [सं० सौभाग्य] सिंदूर, बंदन।

उदा० अबही तें उबटि अन्हाई बैठी पाटी पारि आँखें आँजि एड़ी माँजि पूरि कैं सुहागु है। —सुन्दर

सुहागी—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार का पुष्प।

उदा० प्यारी न न्यारी एक छिन देखौ थाको भाग। सदाँ सुहागी मोहनी तातैं सदा सुहाग। —मतिराम

सुहारे—संज्ञा, पु० [हिं० सुहाल] मैदा से निर्मित पापड़, एक प्रकार का नमकीन खाद्य पदार्थ।

उदा० फेनी गूझा गजक मुरमुरे सेव सुहारे। जोर जलेबी पुंज कंद सो पगे छुहारे। —सोमनाथ

सुहैं—वि० [सं० शुद्ध] शुद्ध, ठीक, उचित।

उदा०—घनआनँद जान सजीवन सों, कहियै तौ समै लहियै न सुहैं। —घनानन्द

सुहेल—वि० [सं० शुभ] १. सुखदायक २. सुहावना ३. मंगलगीत ३. अगस्त तारा [अ०]

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० १. साहिबी की हद्द तू ही, साहिब सुमति तू ही, साह को सुहेलो तू ही संपति को धाम है। —गंग

सूका—संज्ञा, पु० [सं० सपादक] चवन्नी, चार आना।

उदा० बाजे सूम सूका देत पाथर लगाय छाती बाजे सूमसाहिब सुपारी सी अँचै रहैं। —अज्ञात

सूटना—क्रि० स० [?] फेरना।

उदा० हथियारनि सूटैं नेकु न टूटैं खलदल कूटैं लपटि लरैं। —पद्माकर

सूत—संज्ञा, पु० [सं० सूत्र] रसना, मेखला, करधनी, क्षुद्रघंटिका।

उदा० कुंज-गृह मंजु मधु मधुप अमंद राजैं तामैं काल्हि स्यामैं, बिपरीति-रति राँची री। द्विजदेव कीर कल-कंठन की धुनि जैसी, तैसिये अभूत भाई सूत-धुनि माँची री। —द्विजदेव

सूती—वि० [सं० सूत्र] अच्छी, सुन्दर।

उदा० सूती सी नाक उसीती सी भौंह सुधारे से नैन सुधारस पीजै। —केसवकसवराय

सून—संज्ञा, पु० [सं०] १. पुष्प, सुमन २. शून्य ३. पुत्र।

उदा० १. सेवती कुसुम हू तैं कोमल सकल अंग सून सेज रत काम केलि कौं करति है। —सेनापति

सूप—संज्ञा, पु० [राज०] एक प्रकार का काला कपड़ा २. रसोइया [सं०]

उदा० १. और सब जे वे देस सूप सकलात हैं। —गंग

तनोसुख सूप पटोर दर्याइ खीरोदक चैनी पीतंबर ल्हाइ। —मान कवि

सूम—वि० [फा० शूम] अशुभ, खराब।

उदा० बाँके समसेर से सुमेर से उतंग सूम स्यारन पै सेर टुनहाइन के टुक्का से। —पद्माकर

सूरज—संज्ञा, पु० [सं० सूर्य+ज] सूर्य पुत्र, सुग्रीव।

उदा० सुनि सूरज ! सूरज उवत ही करौं असुर संसार बल। —केशव

सूहा—संज्ञा, पु० [हिं० सोहना] १. लाल रंग २. एक राग।

उदा० गौरी नवरस रामकरी है सरस सोहै सूहे के परस कलियान सरसति है। —सेनापति

सेक—संज्ञा, पु० [सं०] १. विचार, मत २. उद्गार, प्रवाह ३. सींचने का पात्र, झरना ४. सिंचाई ५. उपहार ५. गर्म [हिं० सेकना]।

उदा० १. बरनत कबि मतिराम यह रस-सिंगार को सेक। —मतिराम

३. प्यारे को परस उर सेकु सो सुहात ताको जानि बूझि बैरिन न नेकु नियराती है। —देव

४. वही बीज अंकुर वही, सेक वही आधार। —रसखानि

सेज—संज्ञा, स्त्री० [?] १. समता, बराबरी २. शय्या।

उदा० १. सेनापति कहै अचरज के बचन देखौ, भावती की सेज अनभावती करति है। —सेनापति

सेंट—संज्ञा, स्त्री० [बु०] गाय के थन से निकलती हुई दूध की धारा, धैया।

उदा० बिना दोहनी दोहत गैया मुख में मेलत सेंटैं। —बकसी हंसराज

सेन—संज्ञा, पु० [सं० श्येन] श्येन, एक प्रकार का बाज पक्षी।

उदा० सामां सेन, सयान की सबै साहि कै साथ। बाहुबली जयसाहि जू फते तिहारैं हाथ। —बिहारी

सेनापति—संज्ञा, पु० [सं०] १. स्वामि कार्तिकेय षडानन २. नायक, हवलदार।

उदा० सेनापति बुधजन, मंगल गुरु गण, धर्मराज मन बुद्धि घनी। —केशव

सेर—संज्ञा, पु० [सं० शिला] पत्थर का टुकड़ा।

उदा० होत सुमेरहु सेर स्यंघ हू स्यार कहावत। —ब्रजनिधि

सेरबच्चे—संज्ञा, स्त्री० [?] एक प्रकार की बंदूक।

उदा० छुटे सेरबच्चे मजे बीर कच्चे तजैं बाल-बच्चे फिरैं खात दच्चे। —पद्माकर

सेलनि—संज्ञा, पु० [सं० शल] १. बाण, २ माला, बर्छी।

उदा० तुम तौ निपट निरदई, गई भूलि सुधि, हमैं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूल सेलनि सों क्योंहू न भुलाय है ।
घनानंद

सेली—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सेला] १ छोटा दुपट्टा २. गाँती ३. वह माला जिसे योगी लोग पहनते हैं

उदा० १. जोग तुम्हैं न इतो कहिकै हँसि सेली ते खोलिके सींगी देखाई । —रघुनाथ

३. अंसुआ फटिक माल लाल डोरे सेली पैन्हि भई हैं अकेली तजि चेली संग सखियाँ । —देव

सेवट—संज्ञा, पु० [?] बालू का ढेर, सेउटा ।

उदा० लौंग फूल दल सेवर लेखौ । एल फूल दल बालक देखौ । —केशव

सै—संज्ञा, स्त्री० [सं० शय] प्राण, प्रतिज्ञा, शय २. डटना

उदा० अब तौ रति कीजत सै करिकै, तब पाँय परेहूँ न मानियै तौ । — गंग

बीती न धरीक या सरीकनि सखी के कहे, सै करि हौं रही सोक संक मैं सकरि कै—देव

सैकरि अधिक मूँदि कै आँखझुकी- सीकरी-पलकै चयलायकै —कृष्ण कवि

सैक—वि० [स०शत + एक] शतक, एक सौ

उदा०तेरे ही परोस कोस सैक के सरोस ह्वै ह्वै कैसी कैसी सेना कीनी कतलू पठान की—गंग

सैंतुक—क्रि० वि० [सं० सम्मुख] आँख के सामने, आगे, प्रत्यक्ष ।

उदा० सांचहू स्याम मिले तुमैं सैंतुक सैंतुक नाहिं अरी सपने में — पद्माकर

सैंधौं—संज्ञा, पु० [सं० सैंधव] सिन्धु देश का घोड़ा मुहा० सैंधव पलानना—घोड़े आदि पर पलान कसना, भागना, प्रस्थान करना, जाना ।

उदा० मानिये बेनी प्रवीन कही औ न मानिये तौ क्यौं पलानत सैंधौ । —बेनी प्रवीन

सैन—संज्ञा, पु०[सं० संज्ञापन] पलक २. इशारा, संकेत, चिन्ह ३.शयन

उदा० १. बिलखी लखै खरी खरा भरी अनख बैराग मृगनैनी सैन न मजै, लखि बेनी के दाग — बिहारी

सैफ—संज्ञा, स्त्री० [अ० सैफ़] तलवार, खड्ग

उदा० सैफन सों तोपन सों तबलरू ऊनन सों, दक्खिनी दुरानिन के माचे झकझोर हैं । —कवीन्द्र

सैलूस - वि० [फा० सालूस] छलिया, नक्काल ।

उदा० नहिं दाड़िम सैलूस यह, सुक न भूलि श्रम लागि । —दीनदयाल गिरि

सैवी—संज्ञा, प्र० [सं शैव] शिवोपासक, शंकर का भक्त ।

उदा० सैवी जानि मौको लोग कासी को पठावत हैं आवत न मेरे मन कान न धरत हैं । —ग्वाल

सैसो—संज्ञा, पु०[सं०शङ्का] शङ्का, संदेह, संशय ।

उदा० एक दिन ऐसो जामें सिबिका है गज बाजि एक दिन ऐसो जामें सोइबे को सैसो है । —गंग

सोंधो—संज्ञा, पु० [सं० सुगन्ध] इत्र आदि, सुगंधित पदार्थ जिसके लेप से शरीर सुवासित हो जाता है ।

उदा० आई हुती अन्हवावन नायनि सोंधो लिये कर सूधे सुनायनि । —देव

मिहेंदो रँग पायनि रंग लहै सुठि सोंधो सु अंगिन संग बसै । —घनानन्द

आवै आस-पास पुहुपन की सुबास, सोई सोंधे के सुगंध माँझ सने रहियत है ।
—सेनापति

सोकना—क्रि० अ० [हिं० सूखना] सूखना, शुष्क पड़ना ।

उदा० जान कह्यौ पिय आन पुरी कों डरी तिय प्रान अचानक सोका । — भूषण

सोधि - क्रि० वि० [सं० शोध] अच्छी तरह, भली भांति ।

उदा० सिंधु बाँधत सोधि कै नल छीर छींट बहाइयो । —केशव

सोन—संज्ञा, पु० [सं शोण] १. रक्त, लाल २. स्वर्ण, ३. धतूरा ।

उदा० १. देव मनोज मनो जु चलायो चितौनि मैं सोन सरोज को चावक । —देव

३. मंग गंग सोन हित मसम भुजंग सोन अंग लागे अंगराग अंगना के अंग के ।
—देव

सोनचिरी—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सोना + चिड़िया] नटनी, तमाशा दिखाने वाली ।

उदा० आजु सखी लखो सोन चिरी, वृषभानु के द्वार जुरे जुर गेदन । —बेनी प्रवीन

सोनी—संज्ञा, पु० [सं० स्वर्णकार] स्वर्णकार, सोनार ।

उदा० छिति कैसी, छोनी रूप-रासि की पकोनी गढ़ि, गढ़ी बिधि सोनी गोरी कुंदन-से गात की । —देव

सोबर—संज्ञा, पु० [सं० सुवर्ण] सुवर्ण, स्वर्ण, सोना ।

उदा० रावर की छबि बरनौं कैसें । सोबर को घर सोहत जैसें । —घनानन्द

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सोर—संज्ञा, पु० [फा० शोर] १. ख्याति, प्रसिद्धि २. कोलाहल । मुहा० सोर पारना = प्रसिद्धि फैलाना ।
उदा० पार्‌यो सोर सुहाग को इन बिनही पिय नेह ।
उनिदौहीं अखियाँ ककै कै अलसौंहो देह ।।
—बिहारी

सोरई—वि० [सं० श्याम] काला, श्याम ।
उदा० आपु जरि गयो, जग जारत जरेऊ पर, सुमननि दुमन सुमन सर सोरई । —देव

सोस—संज्ञा, पु० [फा० अफसास] शोच, चिंता ।
उदा० नेक निसि नासिहै तौ नारि न सकैगी सहि, मनसिज सोस संक मेरे संग नासु रे ।
—आलम

सोसिनी—वि० [फा० सौसन] सोसन के फूल के रंग जैसा, नीला रंग जो लाली लिए हो ।
उदा० सारी सनी सोसिनी सँभारि कै करार पै ।
—ग्वाल

सोहर—संज्ञा, पु० [सं० सूतगृह] वह स्थान जहाँ प्रसूता नवजात शिशु को लेकर रहती है ।
उदा० बंचति न काहू, लचि रंचि तिरछाई डीठि संचति सुजस, मचा संचति के सोहरे ।
—देव

सौंतनि—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सैंतना] संचय, संग्रह ।
उदा० सफल होइ सौंतनि सब दिन की एकै बेर बिरह दुख टारौ । —घनानन्द

सौंरई—संज्ञा, स्त्री० [हिं० सौंड़] चादर, ओढ़ना ।
उदा० भोरी भोरी मई कान्ह पूछति है कान लागि, साँवरे के अंग लागे सोइहौं न सौंरई । —गंग

सौतुक—क्रि० वि० [सं० सम्मुख] प्रत्यक्ष, प्रकट, सामने, आँखों के आगे ।
उदा० पिय-मिलाप को सुख सखी, कह्यो न जात अनूप ।
सौतुक सो सपनो भयो, सपनो सौतुक रूप ।
—मतिराम

सौन—संज्ञा, पु० [?] गुलाल ।
उदा० कित कौं भोरहीं आई जमुना जल तुम घर तैं लै निकसे सौन । —घनानंद

सौंरना—क्रि० स०[सं० स्मरण] स्मरण करना
उदा० साँवरो सँवारे सैन सुनि री सवारे हू सों, ऐसी सैन सौंरि क्यौं न आप को सँवारिये ।
—आलम

लरिकाई के सौंरियत, चोर मिहचनी खेल ।
—मतिराम

सौहजार मन—संज्ञा, पु० [हिं० सौहजार—लक्ष + मन (मण)] लक्ष्मण ।
उदा० है दुपंच-स्यंदन-सपथ, सौ हजार मन तोहि । —दास

सौहर—संज्ञा, पु० [सं० शोभन, हिं० सुघर] सुन्दरता, सुघरता ।
उदा० तरवा मनोहर सु एड़ी मृदु कौहर सी सौहर ललाई की न ह्वै है लाल गन मैं ।
—दास

स्यान—संज्ञा, पु० [सं० सज्ञान] चतुराई, होशियारी ।
उदा० कन्त बिन विषम बसन्त रितु तामे अति विषम विषमसर बेध तन स्यान कै ।
—देव

स्यामा—संज्ञा, स्त्री० [सं० श्यामा] षोडशी, सालह वर्षी युवती, नवयौवना ।
उदा० सुंदरि स्यामा सलोनी त्रिसारि, बसे ससुरारि सनेह सने हौ । — बेनी प्रवीन

स्यौं—अव्य० [बुं०] सहित, साथ ।
उदा० सायक सो अहिनायक साँध्यो । सोदर स्यों रघुनायक बाँध्यो । —केशव

स्रवन—संज्ञा, पु० [सं० श्रवण] १.श्रवण नामक बाईसवाँ नक्षत्र जिसमें गन्ना पकता है २. कान, कर्ण
उदा० मानहु पियूष बाढ़ै स्रवन की भूख माह पूख कैसे ऊख बोल रावरे मिठात है ।—सेनापति

स्वच्छ पच्छ—संज्ञा, पु० [सं०] सफेद पंखों वाला, हंस पक्षी ।
उदा० पद पद हरिबास जगमगै । स्वच्छ पच्छ-पच्छ सी लगै । —केशव

स्वर—संज्ञा, पु० [सं०] कंठ ध्वनि, काकु ।
उदा० बक्रउक्ति स्वर स्लेष सों अथफेर जौ होई रसिक अपूरब हौ पिया बुरो कहत नहि कोइ
—जसवंतसिंह

स्वाहेस—संज्ञा, पु० [स०स्वाहा + ईश] अग्नि, पावक, आग ।
उदा० पन्नगेस,प्रतेस सुद्धसिद्धेस देखि सब । विहगेस स्वाहेस देव देवेस सेस सब । —केशव

स्वै—सर्व० [सं० स्व] स्व, अपना ।
उदा० लैकर कागद कोरो लाला लिखिबे कहँ बैठी वियोग कथा स्वै —द्विजदेव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ह

हंसक—संज्ञा, पु० [सं०] पैर के अँगूठे में पहनने का एक भूषण, बिछुआ २. हंस तथा जल [हंस=पक्षी विशेष+क=जल]।

उदा० तिन नगरी तिन नागरी प्रति पद हंसक हीन।
जलज हार शोभित न जहँ प्रगट पयोधर पीन। —केशव

हँकरना—क्रि० अ० [हिं० हाँक] चिल्लाना, पुकारना, जोर-जोर से बुलाना, दर्प के साथ बोलना।

उदा० माइ झकै हरि हांकरिबो रसखानि तकै फिरि कै मुसकैबी। —रसखानि

हकनाहक—अव्य० [अ० हक़+फा० नाहक़] जबरदस्ती, २. निष्प्रयोजन, व्यर्थ।

उदा० १. तजि कै हकनाहक हाय हमैं सजनी उनने कुबरी को बरी। —भुवनेश

हकाहक—संज्ञा, स्त्री० [अ० हक्क=काटना] घोर युद्ध, घमासान लड़ाई।

उदा० तहँ मची हकाहक भई जकाजक छिनक थकाथक होइ रही। —पद्माकर
हरषित हथ्यारन सों जु मिलि करि रन हकाहक कीजिये। —पद्माकर

हचकाना—क्रि० स० [हिं० हचक] दृढ़ता से पकड़ना, जोर से दबाना।

उदा० लंक लचकाइ परजंक मचकाइ भरि अंक हचकाइ लपिटाइ छपटाई री।
—'हजारा' से

हजूर—अव्य० [फा० हुजूर] सामने, समक्ष, प्रत्यक्ष।

उदा० आपनी बिपति कों हजूर हौं करत, लखि रावरे की बिपति-बिदारन को बानि है।
—दास
दारिद्र दुख्ख नासंत दूरि, ह्वै रिद्ध सिद्ध संपति हजूरि। —मानकवि

हटपटाना—क्रि० अ० [अनु०] जबर्दस्ती करना, बलात् किसी को दबाना।

उदा० अरु पुनि सब जग कहत है, को मरदे मजबूत। हटपटाय के लगत हैं ओछे पिंडै भूत। —बोधा

हटवारी—संज्ञा, स्त्री [हिं० हट+वार] दूकानदारी।

उदा० त्यौं भरि पारी करै हटिवारि को लावै बटोही ददै मन रूठे। —देव

हथओड़ा—संज्ञा, पु० [हिं० हाथ+ओड़ना] हाथ फैलाने वाला, माँगने वाला, याचक भिक्षुक।

उदा० हाथी पै न हाथी माँगै घोरा पै न घोरा माँगै, वे ही काज हथओड़ा होत नर नर को। —गंग

हथनारि—संज्ञा, पु० [हिं० हाथी+नाल] गजनाल, वह तोप जो हाथी पर चलती थी।

उदा० कहुँ सुनारि हथनारि कहुँ, कहुँ रथ सिलह समार। —मानकबि

हथलेवा—संज्ञा, पु० [हिं० हाथ+लेना] पाणिग्रहण, विवाह के समय दूलह और दुलहिन के परस्पर हाथ ग्रहण कराने की विधि।

उदा० दियौ हियौ सँग हाथ कै, हथलेयैं ही हाथ। —बिहारी

हथौटि—संज्ञा, पु० [सं० हस्त कौशल] हस्त कौशल, हाथ की चतुराई।

उदा० काहे कों कपोलनि कलित कै देखावती है मकलिका पत्रन की अमलह थौटि है।
—दास
रसना को भाग, साँचे स्रौननि सुभूषन है, जगमगि रहे महा मोहन हथौटी के।
—घनानन्द

हदरी—क्रि० वि० [हिं० जल्दी] जल्दी, शीघ्र।

उदा० तौ लगि लाज बढ़ी हदरी, चहुँ ओर मनौ बदरी मढ़ि आई। —बेनी प्रवीन

हबकारना—क्रि० स० [हिं० हबकना] खाने या दांत काटने के लिए मुँह खोलना।

उदा० कोटि कोटि जमदूत बिकराल रूप जाके, हबकारे हेरैं जासो बचै कौन नर है।
—गंग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हमाम—संज्ञा, पु० [अ० हम्माम] स्नानागार, स्नान करने की कोठरी जो गरम कर दी जाती है।

उदा० मैं तपाइ त्रयताप सौं राख्यौ हियौ हमामु। —बिहारी

हमाल—संज्ञा, पु० [अ० हम्माल] मजदूर, बोझ ढोने वाला।

उदा० दीबे की बड़ाई देखौ ऊदावत रामदास, तेरे दिये माल को हमाल हेरियत है। —गंग

हमेल—संज्ञा, पु० [अ० हमायल] १. एक आभूषण जो हाथियों के गले में पहनाया जाता है। २. स्त्रियों के गले का वह आभूषण जिसमें माला की भाँति सिक्के गुहे रहते हैं।

उदा० १. वारिद से, गिरि से गरुवे, सुप्रसिद्ध भुसुंड मयानक भारे हेम हमेल विभूषित भूषन, गंडनि भौंर भ्रमैं मतवारे। —गंग

२. लूटती लोक लटैं सफूल हमेल हिये भुज टाँड़ न होती। —देव

हरकाना—क्रि० अ० [अनु०] हड़काना, ललकारना।

उदा० करुदै सुदामा सीस बरुदै बरिंगिनि कौ थरु दै अक्रूरे हिये हरषि हराकि दै। —देव

हरजै—संज्ञा, पु० [फ० हर्जः] हानि, क्षति।

उदा० सेज परी सफरी सी पलोटति ज्यों ज्यों घटा घन की गरजै री। त्यौं पद्माकर लाजन तें न कहे दुलही हिय को हरजैरी। —पद्माकर

हरट्ट—वि० [सं० हृष्ट] मोटे, हृष्ट-पुष्ट।

उदा० हैबर हरट्ट साजि गैबर गरट्ट सबै पैदर के—ठट्ट फौज जुरी तुरकाने की। —भूषण

हरदी—संज्ञा, स्त्री० [सं० हरिद्रा] निशा, रात्रि २. एक पौधा जिसको जड़ मसाले में काम आती है।

उदा० राधे पै माधौ पठै हरदी अलि सों कहियों इहि को रस चाखै। —रघुनाथ

हरमखाना—संज्ञा, पु० [अ०] जनानखाना, अन्तःपुर बेगमों का रहने का महल।

उदा० हिरन हरमखाते स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े पीलखाने औ करंजखाने कोस हैं। —भूषण

हरहाइन—संज्ञा, स्त्री० [हि० हरहाई] नटखट या बदमाश गाय।

उदा० कपिला नाहिं न कूटिये हरहाइन के दोस। —बोधा

हरबल—संज्ञा, पु० [तु० हरावल] सेना का पहले अग्रभाग।

उदा० साजि चमू मधुसाह-सु। हरबल दल करि अग्र। —केशव

हरबाइल—संज्ञा, स्त्री० [देश०] चंचल या बदमाश गाय।

उदा० जिन दौरियो उपनये हरुबाइल के पाछे। —बकसी हंसराज

हरसिद्धि—संज्ञा, स्त्री [सं० हर+सिद्धि] शंकर की विजया, भाँग।

उदा० गंग धकानि धुकी हर-सिद्धि, कबंध के धक्कन सोंधर धूके। —गंग

हरहर—संज्ञा पु० [सं० हरहृत] शंकर सेहृत, शंकर द्वारा पराजित, कामदेव, मनोज

उदा० हरि बिनु हर्योई हरषु हरहर हठि, हौं ही हारी हेरि सूधो मगुन चहति है। —आलम

हरा—संज्ञा, स्त्री [सं०] हर की स्त्री, पार्वती हर क्रयौ तिलक हराहू कियो हारु है। —केशवदास

हराहर—संज्ञा, स्त्री० [१] छीना-झपटी ऊधमबाजी २. सर्प [हर+हार]

उदा० दिन होरा-खेल की हराहर मरयौ हो सु तौ, भाग जागें सोयौ निधरक-नैत ढाँपि कै। —घनानन्द

हरि—संज्ञा पु० [सं०] घोड़ा, अश्व।

उदा० हरिदल खुरनि खरी दलमली। खचरहिं धूरि पूरि मनु चली। —केशव

हरिन—संज्ञा, पु० [सं० हिरण्य] हिरण्य सोना।

उदा० लाड़िली कुँवरि की भुलानी अकुलानी। जाकी तौलियत मानिक के तुला सो हरिन के —देव

हरिमास—संज्ञा, पु० [सं०] अगहन मास।

उदा० प्रान सग हरि लै गये मास हरत हरि मास —रसलीन

हरिलांकी वि० सं० [हरि=सिंह+लंक=कटि] १. सिंह के समान कटिवाली।

उदा० १. तू हरिलंकी चलांकी करै वह बाँकी बड़ी बडरी अखियां की। —तोष

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हरिवधू— संज्ञा, स्त्री० [सं०]एक लाल कीड़ा । जो पावस काल में दिखाई देता है । बीरबधूटी
उदा० हरित तृणनि हरिवधू सुंदरी ।
मनु महि ओढ़े सबुज चुंदरी । —रघुराज

हरिहरि—अव्य० [हि० हरूस] धीरे-धीरे, शनैः शनैः
उदा० हरिहरि हेरतहू बरिबरि उठै अंग धरि धरि
धेनु, धन, कनक दिवाइयत । —देव

हरीफ— संज्ञा, पु० [अ० हरीफ] प्रतिद्वंदी, शत्रु, दुश्मन ।
उदा० उन बासुरी बजाया उन गाया बेस-
रागिनी वा पक्का है हरीफ लखि
लक्का सा दुनै गया । —तोष

हरूकें— क्रि० वि० [हि० हरूआ=फुर्ती] शीघ्रता से जल्दी-से ।
उदा ० घन की चमूकें संग दामिनी हरूकें टूकें,
गरज चहूँ के, दूंके नाहर सी पारती ।
—ग्वाल

हरुवा—वि० [हि० हलका] हलका, तुच्छ, ओछा
उदा० गुरुवे से गुरुजन, हरुवे न हूजो अब, ।
हितकरि मोसे, महा हरुवे को ओर सो ।
—देव

हरेवे—संज्ञा, पु० [हि० हरा] हरेवा । हरे रंग की एक चिड़िया, हरी बुलबुल ।
उदा० परे वे अचेत हरेवै सकल चिरु चेत,
अलक-भुजंगी-डसे लोटन लोटाएरी । —दास

हरौली—संज्ञा, स्त्री० [हि० हरौल] सेना के अग्रभाग की सरदारी ।
उदा० अब की बेर फेर सँग लागौ लिय
बलराम हरौली । —बक्सीहंसराज

हरौ-हर संज्ञा, पु० [?.]लूटालूट ।
उदा० प्रान हरौहर है घनाआनँद लेहु न
तौ अब लेहिंगे गाहक । —घनानंद

हलकना—क्रि० अ० [स०हल्लन] हिलना, डोलना, विचलित होना, ।
माते माते हाथिन के हलका हलक डारो—गंग

हलका—संज्ञा, पु० [अ०] हाथियों का झुंड
माते माते हाथिन के हलका हलक डारो ।
—गग
सत्ता के सपूत भाऊ तेरे दिए हलकनि,
बरनी उँचाई कबिराजन की मति मैं ।
—मतिराम

हलब्बी—संज्ञा, स्त्री० [हलब देश] १. तलवार विशेष २. हलब देश का शीशा ।
उदा० हेरीजु हलब्बी सुंडनि गब्बी सीस हलब्बी
सी चमकैं —पद्माकर
२. मैही-बेस वाफदा की कंचुकी कसी है श्वेत,
नारंगी लसी है मनो संपुट हलब्बी के ।
—तोष

हलमलाना—क्रि० अ० [हि० हलबली] हलबलाना, खलबली पैदा होना, घबरा जाना ।
उदा० दिसि की उजियारी जानी जोन्ह भीति
महरानी, हलमले द्विजराज जाम सीम छूटि है
—आलम

हला—संज्ञा, पु० [अ० हाल]१. हाल, समाचार खबर २. शोर , हल्ला, ३. आक्रमण ।
उदा० लई छलु कै हरि हेत हला मिलई
नबला नव कुंजनि माहीं । —आलम
२. बेनी बडे बड़े बूंदन ते यक बारहि वारदि
कीन हलासी । —बेनी

हलाक—वि० [अ०हलाकत] मारा हुआ, हत, घायल
उदा० ऊँची नासा पर सजल, चमकत मुकता
चार । करत बुलाक हलाक मन, रहिहैं नाहिं
संभार । — नागरीदास

हलाका - वि० [अ० हलाक]घातक, मारने वाला
उदा० सुथरी सुसीली सुजीसीली सुरसीली
अति, लंक लचकीली काम-धनुष हलाका
सी । —तोष

हलूका—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] कै, हलक ।
उदा० दांतन कि किरचन रंग रँगे । बहु बिधि-
रुधिर हलूका लगे । —केशव

हवाई—संज्ञा, स्त्री० [अ०] एक प्रकार की आतिश बाजी, बान ।
उदा० पूस को भान हवाई कृसान सो मूढ़ को ज्ञान
सो मान तिहारो —दास

हसंती—संज्ञा, स्त्री ० [सं०] अँगीठी, । आग सुलगाने का लोहे का चूल्हा ।
उदा० हैंउत हसंती सी बसंत में बसंती, ।
रितु ग्रीषम की ऊषम पियूष सुखकारो सी ।
—देव

हसम—संज्ञा, पु० [अ० हशम]स्वामी के लिए । लड़ने वाले । नौकर-चाकर, सेना, ।
२. वैभव, ऐश्वर्य [अ० हशमत]
उदा० १. करि अग्ग साह नीसान भुल्लि ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लखि भूप हसम हर कह्यो फुल्लि ।
जँह तँह हसम खसम बिनभये —केशव
२. हसम सकल चहुवान ने, लीनो तबै छिनाय ।
—जोधराज

हहराना—क्रि० अ० [अनु०] ठट्ठा मारना, । हा हा शब्द करके हँसना २. कापना, थरथर राना ।
उदा० १. राधिका, को रस रंग की दीपति,
संग की हेरि हँसी हहराइकै । —देव

हाँक—संज्ञा, स्त्री० [सं० हुंकार] गर्जन ध्वनि, वंशी की आवाज ।
उदा० लगी-साँकरी सी गरै हाँकरी बैनु की,
सांकरी-खोरि में हाँ करती । —द्विजदेव
टूटिगो पिनाक ऐसी हांक परी कानन मै ।
आवत अधर दल दन्तन दर्‌यो परै —नंदराम

हाँगो- संज्ञा, स्त्री० [हि० हाँ०] हामी, स्वीकृति
उदा०झारि डार्‌यो पुलक प्रसेदहु निवारि डार्‌यो
रोकैं रहनाहूँ त्यों मरो न कछू हांगीरी ।
— पद्माकर

हाइल—वि० [हि० घायल लालायित २. मूच्छित शिथिल, बेकाम
उदा० किय हाइल चितचादूलगि, बजि पाइल तुवपाइ । —बिहारी

हाई—संज्ञा,स्त्री० [देश०]दशा, हालत, ढंग, तौर ।
उदा० नातरु उसास लागै मुकुर को हाई है ।
—आलम

हातो—वि० [स०हात] दूर, अलग, पृथक् ।
उदा० तुम बसौ न्यारे, यह नेकहू न हातो होय ।
—घनानन्द

हार—संज्ञा, पु० [सं०] खेत, जङ्गल ।
उदा० हरित हरित हार हेरत हियो हरत,
हारी हौं हरिननैनी हरि न कहूँ लहीं ।
—केशव
काम करावैं हार में विषबनियाँ पर खाय ।
— बोधा

हारद—संज्ञा, पु० [सं०] १. कृपा, दया २. हाल समाचार ।
उदा० १. शारद के मृदु हारद देव सनारद ब्यास बिहारनि हू में । —देव
२. सो सब हारद, नारद सों सुनि, भोज सौं भोज महीप हठाए । —देव

हालगोला—संज्ञा, पु० [?] गेंद, कंदुक ।
उदा० किधौं चित्त चौगान के मूल सोहैं । हिये हेम के हालगोला बिमोहैं । —केशव

हाली—संज्ञा पु० [सं० हालिक] १. कृषक, किसान २. शीघ्र, जल्दी । (क्रि० वि०)
उदा० हालो कौं द्विज दियो सराप । होई राकस भुगतो पाप । —जसवंतसिंह

हिक्करी—संज्ञा, स्त्री० [हि० हेकड़] १. हेकड़ी, अक्खड़पन, उग्रता २. जबरंदस्ती ।
उदा० १. फिरै चक्करी से गली सक्करी में ।
लियैं अक्करी ऐंड ज्यों हिक्करी में ।
—पद्माकर

हिंडोरना—क्रि० अ० [हि० हिंडोल] आन्दोलित करना, हिलाना, प्रकंपित करना ।
उदा० प्रथमागम संक छुटी कुछु पै चित में रस रीति हिंडोरति है । —आलम

हिन—संज्ञा, पु० [हि० हिरन] हिरन ।
उदा० महा सुछ्छ पुछ्छैं रही हैं उनै सी । नरी पांतरी आतुरी हिन कैसी । पद्माकर

हिंगलाज—संज्ञा, स्त्री० [सं० हिंगुलाजा] दुर्गा या देवी की एक प्रतिमा जो सिंध में है ।
उदा० मंगला के मंगल तें मंगल अनेग भये,
हिंगलाज राखी लाज याहि काज नयो हौं ।

हियैल—संज्ञा, स्त्री० [?] हाथ का एक आभूषण, कंकण ।
उदा० नीलमनीनि हियैलै बनी रुचि-रूप सनी सुघनीन छयो है । —घनानन्द

हिताब—वि० [सं० हित] प्रिय, अच्छा लगने वाला ।
उदा० 'ग्वालकवि' ललित लवंग में न बेलन में,
चंदन न चंद्रकन केसर हिताब में ।
—ग्वाल

हितबंछी—संज्ञा, पु० [सं० हिताकांक्षी] हितैषी, हिताकांक्षी, हितवांछी ।
उदा० फेरि फेरि हेरि मग बात हित बंछीं पूँछै,
पच्छीहू मृगंछी जैसे पक्षी पिंजरा पर्‌यौ ।
—देव

हियो संज्ञा, पु० [हिं० हिय, हियाव] हियाव, साहस, हिम्मत ।
उदा० हियो कर मैन, लियो सर मैन, दियो मरमै न सम्हारि कै सं चल । —देव

हिरसी संज्ञा, पु० [सं० ईर्ष्यालु हिं० हिड़सहा] १. ईर्ष्यालु, [फा० हिस] २. लालची ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदा० भकुआ भरंगी अरु हिरसो हरामजादे,
लाबर दगैल स्यार आंखिन दिखाये तें ।
—ठाकुर

हिलना—क्रि० अ० [देश०] मिलना, परचना ।
उदा० बंशन के बशन सराहै शशि वंशीवर
बंशोधर संसो हंस बंशन हिलति है ।
—देव

हिलाक—संज्ञा, पु० [फा०] मृत्यु ।
उदा० मुआ है हिलाक बीच मारना क्या मारे का ।
—आलम

हिवाला—संज्ञा, स्त्री० [सं० हिम] बर्फ, पाला ।
उदा० हिमकर आननी हिवाला सो हिये तें लाय
ग्रीषम को ज्वाला के कसाला काटियतु है ।
—ग्वाल

हो—सहा० क्रि० [बु०] थी ।
उदा० आई ही गाय दुहाइबे कों, सु चुखाइ चली न बछान को घेरति ।
— देव

होक—संज्ञा, पु० [सं० हृदय] १. हृदय, दिल २. हिचकी [सं० हिक्का]
उदा० १. धरकत होक नखलीक कुच कंदुकनि,
अजहूँ अलीक झलकति पीक पलकनि ।
—सोमनाथ

होर—संज्ञा, पु० [?] १. हर्ष, प्रसन्नता २. मुख्यांश, तत्व, सार ।
उदा० १. ठाकुर कहत दुख सुख हीर पीर जानैं
जान्यौई परत यह अकह कहान्यो री ।
—ठाकुर

हीरा—संज्ञा. पु० [सं० हृदय हि० हियरा] १. हृदय २. एक बहुमूल्य रत्न ।
उदा० जोबन बजार बैठयो जोहरी मदन सब लोगन को हीरा वाके हाथ ह्वै बिकात है ।
—देव

हींसख—संज्ञा, स्त्री० [सं० ईर्ष्या] ईर्ष्या, जलन, स्पर्धा ।
उदा० केसोदास मुखहास हींसख ही कटितट छिन ही छिन सूछम छबीली छबि छाई है ।
—केशव

हुटना—क्रि० अ० [हिं० हटना] मुड़ना, पीठ फेरना ।
उदा— छुटे वार देखे हुटे मोर पाखैं । बिना डीठि को ह्वै गई बृन्द आखैं । —दास

हुतासनमीत – संज्ञा, पु० [सं० हुताशन = आग + मीत = मित्र] आग का मित्र, हवा, पवन ।
उदा० कान्ह के आसन बासनहीन हुतासनमीत को प्रासन कीजै ।
—केशव

हुति—अव्य० [प्रा० हितो] लिए, वास्ते, सम्प्रदान कारक की विभक्ति, कारण और अपादान कारक का चिह्न, ओर से, तरफ से ।
उदा० सब दिन तिनसौं लाल, तुम बन जाहुति फिरत हौ । किती न बिथा बिसाल, उरनि हमारे होति हैं । —सोमनाथ

हुलकना—क्रि० अ० [हिं० हुलक] वेग से गिरना.
उदा० हुलक हुलक्का से सुतुक्का से तरारिन में ललित ललाम जे लगाम लेत लक्का से ।
—पद्माकर

हुलसना—क्रि० अ० [सं० उल्लसित] हिलना-डुलना, २. उल्लसित होना ।
उदा० साँवरे अंग लसैं पटपीत, हिये हुलसै बनमाल सुहाई ।
—देव

हूँछ—संज्ञा, पु० [सं० उंछः] सीला, फसल कट चुकने पर खेतों में जो अन्न अवशिष्ट रह जाता है और जिसे बीन कर मजदूर गुजर करते है, उसे सीला कहा जाता है ।
उदा० हूँछ बृत्ति मन मानि, समदृष्टी इच्छा रहित ।
करत तपस्वी ध्यान कंथा को आसन किए ।
— ब्रजनिधि

हूखनि—संज्ञा, पु० [?] एक प्रकार का मीठा फल ।
उदा० ऊख पियूख मयूखनि हूखनि, लाग अहूख लखै सुरूखै ।
—देव

हूटना—क्रि० अ० [सं० हुड् = चलना] १. हटना, टलना २. मुड़ना, पीठ फेरना ।
उदा० हूटिगो सुमन संग छूटि गो सहेलिनि को भूलि गयो औरे बनितान को निदरिबो ।
—प्रतापसाहि
रामनरपाल सों जुरत जंग बजरंग,
धीर वैरी-वीरन की हिम्मति हुटति है ।
—कुमारमणि

हुठ्यो देना—क्रि० स० [हिं० अँगूठा दिखाना] अँगूठे दिखाना, अशिष्ट व्यवहार करना, गँवरपन दिखाना ।
उदा० मूढ़नि में गनिबी कितौ हूठ्यौ दै अठिलाहि ।
—बिहारी

हूतकार—संज्ञा, स्त्री० [अनु०] हुंकार, गर्जना ।
उदा० गरज्जे गयंदौ ये जंजीर झारैं ।
मनो हैं हनूमंत की हूतकारैं ।
—पद्माकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हूनी—संज्ञा, पु० [सं० हूण] १. अशरफी, मोहर २. स्वर्ण ।
उदा० इसी वासते आपने मोहिं भेजा, उसे दीजिए बेग मंगाये हूनी । —चंद्रशेखर

हूल—संज्ञा, स्त्री० [सं० शूल] १. तलवार या बरछी की घोंप । २. पीड़ा, शूल ३. हर्ष, उल्लास ।
उदा० १. उर लीने अति चटपटी सुनि मुरली धुनि धाय । हौं हुलसी निकसी सु तौ गयो हूल सो लाय । —बिहारी
२. फूलनवारी मनोज की हूलन भूलनवारी नई यह को है । —चातुर कवि

हूलना—क्रि० स० [हिं० हूल] ढकेलना, भाले आदि की नोक का ठेलना, गड़ाना ।
उदा० फैलि-फैलि, फूलि-फूलि, फलि-फलि, हूलि-हूलि, झपकि-झपकि आई कुंजैं चहूँ कोंद ते । —देव

हे—सहा० क्रि० [ब्रज०] थे ।
उदा० हे निपट सगबगे, हिये प्रेम सों, जाहर सजी रुखाई । —सोमनाथ

हेट्ठट्ठाणे—अव्य० [हिं० हेठा = नीच, निम्न + ठाणे (सं० स्थाने)] निम्न स्थान, नीचे ।
उदा० पढमं गुरु हेट्ठट्ठाणे लहुआ परिठ्ठवेहु । —दास

हेडो—संज्ञा, पु० [?] भोज, विरादरी का भोजन ।
उदा० हेडो कियो हितू किधौं गान माँहि बूड़यो चित्त सुन्दर कवित्त माँहि कहा जी में धरी है । —सुन्दर

हेति—संज्ञा, स्त्री० [सं०] १, आग की लपट, प्रकाश ।
उदा० १. मदन की हेति, डारै ज्ञान हू के कन रेति, मोहे मन लेति, कहे देति बात्त हिय की । —सेनापति

हेबा—संज्ञा, स्त्री० [अ० हैबत] भय, दहशत ।
उदा० कहत ही बातैं की गोपाल लाल जू सों बाल सूने खरिका में खरी माधुरी लसनि सों । इतने में आइ गई औचक कहूँ सों एक गाउँबासी गोपबधू हेबा की हसिनि सों । —रघुनाथ

हेरी—संज्ञा, स्त्री० [सं० हे + हिं० री] पुकार, आवाज । मुहा० हेरा देना—जोर से पुकार, आवाज देना ।
उदा० कौऊ मटकत कूदत आवत कोऊ गावत हेरी । —बकसी हंसराज

हेलना—क्रि० अ० [सं० हेलन] १. क्रीड़ा करना, विनोद करना २. हँसी करना ३. प्रवेश करना, घुसना ।
उदा० १. कंचन सरोज से उरोज उमगेहे ओज खोज से मनोज के मनोज हेलियत है । —देव
२. मोहिं न भावत ऐसो हँसी दिजदेव सब तुम नाहक हेलति । —द्विजदेव
३. सीतल समीर अति फूंक सी लगत तन, कोकिल की हूक हिये हूक हेलियत है । —गंग

हेला—संज्ञा, पु० [हिं० हल्ला] शोर, प्रकार, हाँक ।
उदा० पारावार हेला महामेला में महेस पूछैं, गौरन में कौन सी हमारी गनगौर है । —पद्माकर

हेली—संज्ञा, स्त्री० [सं० हे + अलि] सखी, सहेली ।
उदा० कोटि जतन करि हारी हेली दिल की बात न खौलै । —बकसी हंसराज

हेकलैं—संज्ञा, पु० [सं० हय + हिं० गल] घोड़े के गले का आभूषण ।
उदा० सारवत पेसबंद अरु पूंजी । हीरन जटित हैंकलैं दूजी । —चन्द्रशेखर

हैफ—संज्ञा, पु० [अ०] खेद, अफसोस ।
उदा० हैफ मान जीव बसुधा के जसुधा के जसी टेर टेर तोंहि नीर पीर सो पिरत हैं । —चातुर

हो—स० क्रि० [देश०] था, भूत कालिक सहायक क्रिया ।
उदा० बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाहयो कटार कठैठो । —भूषण

होरिहारन—संज्ञा, पु० [हिं० होरी] होली खेलने वाले, रंग डालने वाले ।
उदा० बीर जो द्वार न देहुँ केवार तो मैं होरिहारन हाथ परीती । — ठाकुर

होल—संज्ञा, पु० [अ० हौल] भय, डर ।
उदा० धरकि धरकि हिय होल सो भभरि जाता । —ग्वाल

होसना—क्रि० अ० [अ० हवस] उल्लसित होना, उमंगित होना ।
उदा० रावने के लीन्हें तयो गली बन बाग.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फिरी बाबरी ह्वै बूझि सो कहौ धौं कैसे होसोंगी । —रघुनाथ

हौद—संज्ञा, पु० [अ० हौज] हौज, तालाब ।

उदा० कहर को क्रोध किधौं कालिका को कोलाहल हलाहल हौद लहरात लबालब को ।
—पद्माकर

हयाई—संज्ञा, पु०[हिं० हियाब १.साहस, हिम्मत २. धैर्य ।

उदा० चुरैल ह्वै लागी अजौं लगि लाज, सुकौलगि बाँधे हिये मह हयाई । —देव

हयाऊ—संज्ञा, पु० [हिं० हिय = हियाव] साहस, धैर्य ।

उदा० देवजू सराहिये हमारो न्याउ हयाऊ करि नाहित अहित चेत करतो जु चीततो ।—देव

श

शंबर—संज्ञा, पु० [सं०] १. एक प्रकार का मत्स्य २. एक-राक्षस जिसे काम देव ने मारा था ।

उदा० १. विषमय यह सब सुख को धाम । शम्बर रूप बढ़ावै काम । —केशव

शत्रुहंता—संज्ञा, पु० [सं०] शत्रुघ्न ।

उदा० बिदा ह्वै चले राम पै शत्रुहंता । चले साथ हाथी रथी युद्धरंता । —केशव

शिशुमारचक्र—संज्ञा, पु० [सं०] सौर जगत, ग्रहों सहित सूर्य ।

उदा० मानो सनक्षत्र शिशुमार चक्र कुंडली में संकर्षन अनल अभूक महराति है । —पजनेश

शुभोदर— वि० [शुभोदर] भाग्य शाली,

उदा० शुभतन मज्जन करि स्नान दान करि पूजे पूरण देव । मिलि मित्र सहोदर बंधु शुभोदर कीन्हे भोजन भेव । —केशव

श्रोन—संज्ञा, [पु० स० शोण] रक्त, शोणित खून

उदा० कान्ह बली तनस्रोन की छंछु लसैं अति, जग्योपवीत सों मेलि ज्यों । —आलम

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहायक ग्रन्थ सूची
काव्येतर ग्रन्थ

For Private and Personal Use Only

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहायक ग्रन्थ-सूची

कोशग्रन्थ

अभिधान चिन्तामणि	सं० हेमचन्द्राचार्य
अवधीकोश	रामाज्ञा द्विवेदी "समीर"
अमरकोश	सं० अमरसिंह
उर्दू, हिन्दी और अँगरेजी कोश	सं० प्लेट्स
उर्दू अँग्रेजी कोश	प्रकाशक: रामनारायणलाल कटरा, प्रयाग
उर्दू हिन्दी शब्द कोष	सं० मुहम्मद मुस्तफा खाँ "मद्दाह"
खालिक बारी	सं० श्रीराम शर्मा
प्राकृत शब्द महार्णव	सं० पं० हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ
वृहत् शब्द सागर	सं० डा० श्यामसुन्दर दास आदि
मानक हिन्दी कोश	सं० आचार्य रामचन्द वर्मा
मेदनी कोश	सं० मेदनीकार
संक्षिप्त शब्द सागर	सं० आचार्य रामचन्द्र वर्मा
संस्कृत अँग्रेजी कोश	सं० मोनियर विलियम्स
संस्कृत अँग्रेजी कोश	सं० वी० एस० आप्टे
सूर ब्रजभाषा कोश	सं० डा० दीनदयाल गुप्त एवं डा० टण्डन
हिन्दुस्तानी अँग्रेजी कोश	सं० एस० डब्ल्यु फैलन

काव्य--ग्रन्थ

अंग-दर्पण	रसलीन
अंगादर्श	रंगपाल
अष्टयाम	देवकवि
अलकशतक	मुबारक
आलमकेलि	आलम : सं० ला० भगवानदीन
आँख और कविगण	सं० पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी
इश्कनामा	बोधाकवि
कवि हृदयविनोद	ग्वालकवि
कविकुलकल्पतरु	आचार्य चिन्तामणि
कविकुल कण्ठाभरण	दूलह कवि
काव्य कलाधर	रघुनाथ बंदीजन
काव्य कलानिधि	गुमान मिश्र
कवित्त रत्नाकार	सेनापति : सं० पं० उमाशंकर शुक्ल :
काव्य प्रभाकर	बाबू जगन्नाथ प्रसाद "भानु"

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केशव पंचरत्न	सं० लाला भगवानदीन
केशव ग्रन्थावली	सं० आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
ग्वालकवि	सं० श्री प्रभुदयाल मीतल
गंग कवित्त	सं० बटेकृष्ण
घनानन्द ग्रन्थावली	सं० आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
घनानन्द कवित्त	,,
चित्र चंद्रिका	काशीराज
छंदोर्णव पिंगल	आचार्य भिखारीदास
जमुना लहरी	ग्वालकवि
जसवन्तसिंह ग्रन्थावली	आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
ठाकुर ठसक	सं० लाला भगवानदीन
ठाकुर शतक	सं० बाबू काशीप्रसाद
ठाकुर ग्रन्थावली	सं० आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
तिल शतक	मुबारक
देव सुधा	सं० मिश्रबन्धु
दिग्विजय भूषण	आचार्य गोकुल सं० डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह
दीनदयाल ग्रन्थावली	सं० डा० श्यामसुन्दर दास
नखशिख	ग्वाल कवि
नखशिख	बलभद्र मिश्र
नवरसतरंग	बेनीप्रवीन: सं० पं० कृष्णबिहारी मिश्र
पद्माकर पंचामृत	सं० आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
पद्माकर ग्रन्थावली	,,
प्रयागनारायण विलास	सं० बन्दीदीन दीक्षित
प्रेमलतिका	रङ्गपाल
पावस कवित्त रत्नाकर	सं० परमानन्द सुहाने
पजनेश प्रकाश	पजनेश
प्रिया प्रकाश	सं० लाला भगवानदीन
ब्रजनिधि ग्रन्थावली	सं० पुरोहित हरिनारायण
बिहारी सतसई	टी० कृष्णकवि
बिहारी बोधिनी	टीकाकार लाला भगवानदीन
बिहारी रत्नाकर	बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर
बोधा ग्रन्थावली	सं० आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
भूषण	आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
भिखारीदास ग्रन्थावली	
(प्रथम एवं द्वितीय खण्ड)	सं० आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
भाव विलास	देवकवि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भवानी विलास	देवकवि
मतिराम ग्रन्थावली	सं० पं० कृष्णबिहारी मिश्र
मनोज मंजरी	सं० नकछेदी तिवारी
मनरंजन संग्रह	सं० पं० गौरी शंकर भट्ट
मुनीश्वर कल्पतरू	लछिराम कवि
महेश्वर विलास	,,
रसखान ग्रन्थावली	सं० पं० आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र
रस चन्द्रोदय	उदयनाथ कवीन्द्र
रस रहस्य	कुलपति मिश्र
रसिक मोहन	रघुनाथ बंदीजन
रसिक रसाल	कुमारमणि
रसिक विनोद	चन्द्रशेखर बाजपेयी
रस प्रबोध	रसलीन
रस विलास	देवकवि
रस कुसुमाकर	स० प्रतापनारायण सिंह :ददुआ साहब:
रहीम रत्नावली	सं० माया शंकर याज्ञिक
रहिमन विलास	सं० ब्रजरत्न दास
रावणेश्वर कल्पतरु	लछिराम कवि
रुकमणि परिणय	महाराज रघुराज सिंह
व्यंग्यार्थ कौमुदी	प्रसाप साहि
बिरह वारीश	बोधा कवि
शृंगार संग्रह	सं० सरदार कवि
शृंगार निर्णय	आचार्य भिखारी दास
शब्द रसायन	देवकवि
शृंगार सतसई	राम सहाय
शृंगार दर्पण	नन्दराम
शृंगार लतिका	द्विजदेव
शृङ्गार बत्तीसी	द्विजदेव
शृङ्गार मंजरी	आचार्य चिन्तामणि सं० डा० भगीरथ मिश्र
शृङ्गार सुधाकर	सं० मन्नालाल द्विज
षट्ऋतु काव्य संग्रह	सं० हफीजुल्ला खाँ
षट्ऋतु हजारा	सं० परमानन्द सुहाने
सुखसागर तरंग	देवकवि सं० बालदत्त मिश्र
सुधानिधि	तोष कवि
सुंदरी सर्वस्व	सं० मन्नालाल द्विज
सुन्दरी तिलक	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुन्दर शृङ्गार	सुन्दर कविराय
साहित्य प्रभाकर	सं० रामशंकर त्रिपाठी
सेलेक्शंस फ्राम हिन्दी लिट्रेचर	सं० लाला सीताराम
सोमनाथ ग्रन्थावली	सं० पं० सुधाकर पांडेय
हफीजुल्ला खाँ का हजारा	सं० हफीजुल्ला खाँ
हम्मीर हठ	चन्द्रशेख बाजपेयी सं० जगन्नाथदास रत्नाकर
हिततर गिणी	कृपाराम :सं० जगन्नाथदास रत्नाकर :

काव्येतर-ग्रन्थ

आइने अकबरी	एच० ब्लाचमैन
ब्रजभाषा व्याकरण	डा० धीरेन्द्र वर्मा

पृष्ठ संख्या २४० + १२ = २५२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

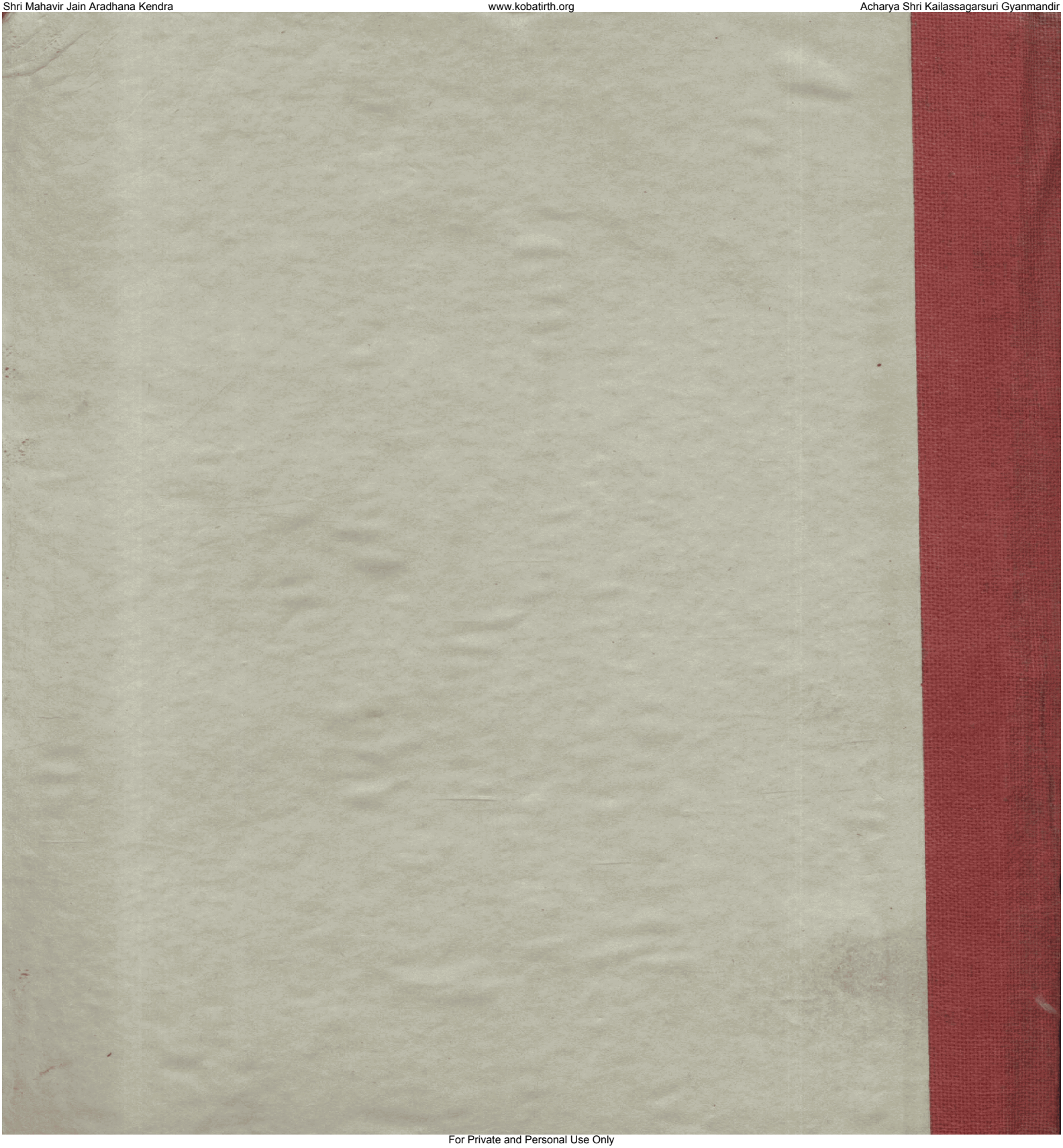

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रीतिकालीन काव्य, कठिन अप्रचलित शब्द और अर्थ की दुरूहता के कारण, अध्येताओं के लिए सदैव से एक श्रम साध्य कार्य रहा है। विद्वान लेखक ने रीतिकालीन काव्य में प्रयुक्त विशिष्ट शब्दों का अर्थ उनके प्रयोग के साथ प्रस्तुत किया है। रीतिकालीन काव्य को समझने के लिए प्रस्तुत कोश का अपना एक विशेष महत्व है।

●

For Private and Personal Use Only